[illegible]

[illegible]

[illegible]

280 पत्राणि

[illegible]

[illegible]

ॐस्वस्तिश्रीगणेशायनमः ॐश्रीगुरुचरणकमलपरा
गपुंजेभ्योनमः श्रीविद्याभगवत्यैनमः अथश्रीमहा
भारतेशांतिपर्ववार्तिकंप्रारभ्यते तत्रादौराजधर्मास्त
च्यंते योहायंतावक्तापि पुरुषार्थचतुष्कदः विश्वा
पन्नमुमुक्षूणां कृष्णोदयान्मतिंशुभां १ वर्णाश्रम
युगानांच धर्मराजनयाश्रिताः इतिहेतोराजधर्मे
भाषावार्तिकमारभे २ अनयोरर्थः महाभारतना
मवाले इतिहासविषे कृष्णत्रय वर्णन कियाहै ए
क अर्जुनका कृष्णनामहै सो तो नरका अवतारहै
सो जीवात्माहै अपनी अज्ञता करकै युद्ध करताहै
उसकी अज्ञताको निवृत्त करणे हारा कृष्णभगवान
है सो उसके सारथी भयेहै जैसे सारथी रथीको
खोटे मार्गसे फेरकर्के ज्ञान मार्गमो प्रवृत्त कर
णे हारेहै तीसरा कृष्णनाम वेदव्यासजीकाहै
सो व्यासजी वर्णाश्रम धर्मके वक्ताहै जिन्होनेवे
दोंको शाखा विभागकर्के पुराण धर्मशास्त्रकहे
है यह तीन प्रकारके कृष्णभगवानजोहै सो
राजधर्मकर्के विश्वकी पालनाको और आपदाकी
निवृत्तिको और मुमुक्षु जनोकी मुक्तिको करते
है ताते उत्तम अधिकारीको धर्म अर्थ काम मो
क्षरूपी चार पुरुषार्थको सिद्धकरदेतेहै सोई ती
नरूपवाले कृष्णभगवानजी हमलोकोको शुभ
कर्म करणेहारी बुद्धिको देवे १ प्रथमतो राजध
र्मके प्रयोजनको कहतेहै चारवर्णोके और चार
आश्रमोके और चारयुगोके जो वत्वेद प्रणीतधर्म
है सो सभही राजधर्मको आश्रितहै राजाकी रक्षा
विना धर्मलोप होताहै राजदंडके भयकर्के सर्व
धर्मोकी स्थिती होतीहै इसी हेतुसे प्रथम राज

धर्मको वर्णनकरतेहैं १ अबमहाभारत शास्त्रके
प्रयोजनको टीकाकार कहतेहैं यत्साधनेपुरुषा-
र्थ मितिहासोयमीरितः धर्मार्थकाममोक्षास्ते स
म्यगत्रनिरूपिताः २ यह महाभारत नामवाला
इतिहास जिन्हो साधनोकी रुचिवाले कहाहै सो
जो धर्म अर्थ काम मोक्षरूपी चारपुरुषार्थहैं सो
इस भारतशास्त्रके आदि पर्वसे स्त्रीपर्वपर्यंत सम्य
क प्रकारसे कहेहैं ३ वहोउ टीकाकार इसविषे
शुभ अशुभ अधिकार भेदकों कहतेहैं धर्मादित्रय
मर्थ काम करण प्रीत्यर्थमित्यल्पकाः धीशुद्धिकृत
जीवनार्थकतया मुक्त्यर्थमित्युत्तमाः एतत्पांडवधार्त
राष्ट्रचरित व्याख्यामिषाद्दर्शितं येनासौनिजवाक्यजा
तहृदयं मत्प्रंददात्वादरात् ४ इहां भोगवांछाकी
निवृत्तिवास्ते प्रथम अधम अधिकारीकी निंदाकरीहै
अल्पबुद्धि जोजनहैं सोकहतेहैं धर्मसे अर्थहोताहै
अर्थसे कामभोगप्राप्तिहोतीहै कामभोगसे इंद्रियों
की तृप्तिहोतीहै ताते स्वर्गादि अखंड भोग होवे-
वास्ते धर्मादि तीनो कर्तव्य कहेहैं यह दुर्योधना-
दि धृतराष्ट्रके पुत्रोका चरित्र कहाहै और जोनसे
उत्तम अधिकारीहैं सो अंतकरण शुद्धिवास्ते धर्म
कर्म करतेहैं और प्राणधारणवासते अर्थकी वांछा
को करतेहैं और यज्ञादि देवकर्मकेवास्ते अन्नादिभो
गमात्रकामभोगकी वांछावालेहैं इसप्रकार पांडवो
के चरित्रकी व्याख्याकीनीहै और धृतराष्ट्रके पुत्रोके
चरित्रकीभी व्याख्याकीनीहै इसीदारकर्के अपनेवा-
चन समूहके अर्थको जिन्होने सूचन कियाहै सो
भगवान् कृष्णद्वैपायन व्यासजी अपने वचन समू
हके अभिप्रायको कृपा आदरेसे मेरे ताईभी देवें ४

रा. ध.
टी.
२

तत्रादौ शांतिपर्वविषे राजधर्म आपद्धर्म मोक्षधर्म
नामवाले तीनकांडहै सो तीनोंही क्रमकर्कै ती
नोंके उपकारीहै राजधर्मजोहै सो सर्वविश्वके प्रा
णीगणको रक्षाकर्कै उपकारकारीहीहै औ आ
पद्धर्मजोहै सो आपदाग्रस्त प्राणीको उपकारका
रीहै और मोक्षधर्मजोहै सो संसारदुःखसे विर
क्तपुरुषको उपकारकारीहै जौनसाधर्म सर्ववि
श्वको उपकारकरे सो राजधर्म परमश्रेष्टहै ऐ
से राजधर्मकी प्रशंसावासते प्रथमराजाके कर्म
को और अर्थको कहतेहै राजा जोहै सो रक्षापा
लनकर्कै संपूर्णप्रजाको सुखदेनेसे रंजन कर
ताहै अपनेविषे प्रीति करावताहै इसहेतुसे
मनुप्रजापतीनेभी कहाहै अबहम नृपतीके धर्म
को कहतेहै नरोंको यथाविधी दंडकर्कै और पाल
नकर्कै रक्षाकरताहै सो राजा कहाहै जोराजा
होकर सर्वधर्मोको संपूर्ण प्रजासे यथाविधीक
रावे सोभासे क्षत्रियजाती होवे भासे ब्राह्मण
वैश्यादि अवर जातीहोवे कामलोभादि रहित
होकर केवल प्रजापालनमात्र अपने मुख्यधर्म
को माने सोई राज्यकरणेका अधिकारीहै उसी
वास्ते राजधर्मोका व्याख्यानहै इसविषे राजायुधि
ष्ठिरकी कथाकी उदाहरण कहतेहैं प्रथम पौ
राणिक संप्रदायके मंगलाचरणको कहतेहै
ओंजो पुरुष जयनामवाले इतिहास वेदशास्त्र
पुराणकथाको पाठ परायण अर्थ पारायणको
प्रारंभकिया चाहताहै सो प्रथम सर्वभूतोंके
अंतर्यामी जलशायी नारायणभगवानको पारा।
यणसमाप्तिकी निर्विघ्नतावास्ते और फलकी अ

ॐनारायणं नमस्कृत्य नरंचैव नरो
त्तमं देवीं सरस्वतीं व्यासं ततो
जय मुदीरयेत् ॥ १ ॥

खंडनावास्ते प्रणाम करलेवे और जौनसानर
उसको आराधना करताहै और जौनसा उत्तमन
र उपासनाके संप्रदायको उपदेशकरे सो उत्त
म सतगुरुहै तिन दोनोको प्रणाम करलेवे ब
ह्मोडवाणीको प्रसन्नकरणेहारी सरस्वती देवी
को प्रणाम करलेवे बह्मोड वेदशास्त्र पुराणके
वक्ताजो व्यासजी तिनको प्रणामकरके ग्रंथपरा
यणके संप्रदायपरिपाटीको जानकरके प्रारंभ
को करे सोग्रंथका पारायण सर्वप्रकारकरके ज
यकारी होताहै ॥ १ ॥

वैशंपायनउवाच कृतोदका स्ते
सुहृदां सर्वेषां पांडुनंदनाः वि
दुरो धृतराष्ट्रश्च सर्वाश्च भरतस्त्रि
यः ॥ १ ॥

वैशंपायनउवाच वैशंपायन मुनि व्यासजीके शि
ष्यहै सो राजा जनमेजयको कथाकहतेभये कृ
तोदकाइति हे राजन् जनमेजय महाभारतके
युद्धभये उपरंत पांचो पांडव और विदुर और धृत
राष्ट्र राजा और भरतवंशीयोंकी इस्त्री याजोहै
सो सबही अपने जो संबंधीहै पुत्र भ्राता पती
तिन्होके देहसंस्कारकरके सबही जलकरके प्रेत
तर्पणको करतेभये मरणांतवैरहोताहै ताते
पांडवजोहै सो दुर्योधनादि अपने शत्रुगणको

भी अपनेभ्राता जानकर्कै जलतर्पणादिप्रेतक्रि॥
याको विधीसे करतेभये १

तत्र तेस्म महात्मानो न्यवसन् पांडु
नंदनाः शौचंनिवर्तयिष्यंतो मास
मात्रं पुराद्बहिः २

तत्रतेइति तहक्या हस्तिना पुरके बाहिर गंगा॥
तीरविषे सर्वपरिवारसंयुक्त पांडव जोहै सो अशौ
चदिनोको वितानेचाहतेहै एकमासभर नगरसे
बाहिरही निवासकरतेभये हे राजन् पांडवऔ
रसभही कुरुवंशी क्षत्रीलोकहै उनको शूद्रके
समान मासभर अशौचनहीहै और योधा जो
रणविषे मरजाताहो उसकी ततकालही शुद्धि
होतीहै ताते उनको मासमात्र अशौचनहीहै
परंत सांग्रामिक पर्वविषे जो रात्रिविषे पशुके स
मान मरेहै उनका अशौच द्वादश दिनमात्र
बनाहै और अष्टादशादिन युद्धकालके भयेहै
इसकारणसे मासभर अशौच कहाहै २

कृतोदकं तं राजानं धर्मराजं युधि
ष्ठिरं अभिजग्मुः महात्मानः सि
द्धाब्रह्मर्षिसत्तमाः ३ ॥

कृतोदकमिति जबराजा युधिष्ठिर[illegible]को जलत
र्पणको करचुका तब धर्मराज युधिष्ठिरको बुला
वनेको सिद्धलोक और महात्मा श्रेष्ठ ब्रह्मऋषि
आनप्राप्तहोतेभयेहैं ३

द्वैपायनो नारदश्च देवलश्च महा
ऋषिः देवस्थानश्च कण्वश्च तेषां
शिष्याश्च सत्तमाः ४ ॥

तिन्हको नामसंज्ञाकर्के कहतेहे प्रथम तो व्यासजी
और नारद और देवल महाऋषि और देवस्थानमु
नि और कण्वमुनिः इत्यादि सभऋषिगणआवतेभ
ये और तिन्होंके उत्तम उत्तम शिष्यभी आवतेभये ५

अन्येच वेद विद्वांसः कृतप्रज्ञाः द्विजा
तयः गृहस्थाः स्नातकाः संतो ददृ
शुः कुरुसत्तमं ५

इन्हसे भिन्न औरभी वेदवेत्ता शास्त्रज्ञानकी बुद्धिवा
ले पंडितब्राह्मण गृहस्थलोक और ब्रह्मचारी लो
क जो जो श्रेष्ठमहात्मा संतलोक तीर्थोविषे आ
श्रमोविषे सुखरहे सो सभही कुरुराजको आइ
कर देखतेभये ६

तेभिगम्य महात्मानः पूजिताश्चयथा
विधि आसनेषु महार्हेषु विविशुस्ते
महर्षयः ७

जो जो अपने समीप आनप्राप्तभये सो सभही
राजाने आगे आपजाइ कर्के यथाविधि पूजितकि
ये तब सभही महाऋषि उत्तम आसनोविषेबैठ
जातेभये ७ ॥

प्रतिगृह्य ततः पूजां तत्कालसदृ
शीं तदा पर्युपासन्यथान्यायं प
रिवार्य युधिष्ठिरम् ८

सो सभही मुनिलोक उसकालविषे उचितराजा
से पूजाको ग्रहणकर्के तत्कालहि राजाके चारो
तरफ यथाविधि बैठजातेभये ८ ॥

श्री॰
रा॰य
४

पुण्ये भागीरथ्ये तीरे शोक व्याकुल चेतसं आश्वासयंतो राजेंद्रं विप्राः शत सहस्रशः ४

राजायुधिष्ठिर जोहै सो बंधु शोककर्के व्याकुल चित्तभयाहै उसको गंगातीरविषे शतसहस्र अनेक मुनि विप्रगण आश्वासन करते भये ४

नारदस्त्व ब्रवीत्काले धर्मपुत्रं युधिष्ठिरं संभाष्य मुनिभिः सार्धं कृष्ण द्वैपायनादिभिः ९ ॥

हे राजन् जनमेजय उसकालविषे प्रथमतो नारदमुनि जोहै सो व्यासादि महामुनि गणोके साथ प्रसंगवार्ताकर्के धर्मराज जो युधिष्ठिर तिसको वचन कहताभया ९

भवतो बाहुवीर्येण प्रसादान्माधवस्य च जितेयं मवनिः कृत्स्ना धर्मेणैव युधिष्ठिर ११

नारदउवाच हेराजन् यहसमग्रपृथिवी बलातजयसे एवं अधर्मकर्के व्याप्तभईरही अब तुमने अपने भुजा बलकर्के ओर कृष्णभगवानके प्रसादसे सबही जीतलीनीहै सो तुम्हारे धर्मकर्के सबधर्म युक्तही भईहै ११

दिष्ट्या मुक्तस्त्व संग्रामा दस्माल्लोक भयंकरात् क्षात्रधर्मरतश्चासि तस्मात्मोदसि पांडव १२ कच्चिच्च निहतामित्रः प्रीणासि सुहृदो नृप

कश्चित्प्रियमिमं प्राप्य नत्वा शोकः प्रबाधते १४

यह संग्राम सर्वजनोंको महाभयकारी भयाहे इस संग्रामसे आपजीवते छुटगयेहो यह हम को महाआनंदभयाहे और तुम अपने तत्वध र्मविषे रतभयेहो यहभी परम आनंदहे हम तुमको यह कुशल प्रश्नकरतेहे अब प्रमो दको प्राप्तभयेहो कुछ औरभी इछाकरतेहो तुमशत्रुकरणेको मारणकर्के इष्टसंबंधीज नोको प्रसन्न करतेहो वहीहउ ऐसी विजय संप दाको पाइकर तुमको शोकबाधाको नही करा ताहे हम तुम्हारी विशोकताकी इछा करते हे १४ ॥

युधिष्ठिरउवाच विजितेयं महीकृत्स्ना कृष्णबाहुबलाश्रयात् ब्राह्मणानां प्रसादेन भीमार्जुनबलेनच

युधिष्ठिरउवाच हे भगवन् नारदजी यह संपूर्ण पृथिवी हमने कृष्णजीके बाहुबलकर्के जीतल ईहे ब्राह्मणाके प्रसादकर्के जीती हे और भीम अर्जुनके बाहुबलकर्के जीतीहे १५

इदंतु मे महादुःखं वर्तते हृदि नित्यदा कृत्वा ज्ञातिक्षयमिमं महांतं लोभकारितं १६

परंतु यह महादुःखमेरे हृदयमें सदावर्तमान हे हमने यह विजय महाघोर अपनी जाती के संबंधीजनोके वधकर्के प्राप्तभयाहे यह

श्री
गी.अ.
५

अपने कुलकानाश हमसे महालोभने करवा
याहै १६ ॥

सौभद्रं द्रौपदेयांश्च घातयित्वा सु
तान्प्रियान् जयाय मजयाकारो
भगवन्प्रतिभाति मे १७

इसवास्ते हमने सुभद्राके पुत्रको अभिमन्यु
को मरवायदियाहै इसीकर्के और अतिप्रेम
वाले पुत्रादिक मरवाइ कर्के यह हमारेको
अपना जय पराजय जैसा भासताहै १७

किंनु वक्ष्यति वार्ष्णेयी वधूर्मे म
धुसूदनं द्वारका वासिनी कृष्ण
मितः प्रतिगते हरिं १८

और मे क्या करुं मेरे कनिष्ठभ्राताकी वधूजो सुभ
द्राहै सो अपने भ्राताको श्रीकृष्णको क्या कहेगी
तेने ईश्वरहोकर मेरेपुत्रको अभिमन्युको अप
ने भानजाको कैसे रणमो अपने निकट मर
वायाहै वहोउ जब कृष्णजीको द्वारकावासी
लोक क्या कहेंगे तेने अपनी भगिनीके पुत्र
को मरवायकर्के इहां सुख कैसे आनदिखा
याहै ॥ १८ ॥

द्रौपदी हतपुत्रेयं कृपणा हतबां
धवा अस्मत्प्रियहिते युक्ता भूयः
पीडयतीव मां १९

वहोउ अवरभी तमसनो यह द्रौपदी हतपुत्रा
है अतिशोकसे दीन भईहै इसके भ्राता पिता
भी मारेगयेहै और यह हमारे हितविषे नित्य
ही प्रयोग करणे हारीहै अबशोक आकुलता

कर्के मोको अतिपीडाको करतीहै १९

इदं मन्यच्च भगवन्यत्वां वक्ष्यामि नारद मंत्रसंवरणेनास्मि कुंत्या दुःखेन योजितः २०

हे मुने अबमें अपने मनके दुःखको कहताहूं कुंतीने अपनागूढमंत्र प्रकट कियाहै इसकर्के मोको अति दुःखकर्के युक्त कियाहै २०

यस्य नागायुतबलो लोके प्रतिरथो रणे सिंहखेलगति र्धीमान् घृणी दाता यतव्रतः २१

जौनसा हमारे युद्धविषे कर्ण महारथी रहा सो अयुतहस्तीके समान बलवानरहा और इस लोकविषे रणमें जिसके सन्मुख कोई महारथी नहीं होताहै और सिंहके समान जिसकी भयरहित मंदगतिहै और महाचतुर जिसकी बुद्धिहै और महादाता होताभया और यतीव्रतवाला होताभया २१

आश्रयो धार्तराष्ट्राणां मानी तीक्ष्णपराक्रमः अमर्षी नित्यसंरंभी क्षेप्तास्माकं रणे रणे २२

और धृतराष्ट्रके जो पुत्रहैं दुर्योदनादिक उनको जिसका बडा आश्रय बनारहा और बडामानी रहा और उग्र पराक्रमवालारहा और दृढक्रोधीरहा और नित्यही पराये उत्कर्षको नहीं सहारे बहोड जहां जहां रणहोवे तहां तहां

हमारेको पराक्रमकर्के हरकरणे हारा रहा २२

शीघ्रास्त्रश्चित्रयोधीच हंतीवा दु
न विक्रमः गूढोत्पन्नः सुतः
कुंत्या भ्रातास्माकमसौ किल

रहोडकैसाहोताभया अस्त्रविषे शीघ्रकारीहोता
भया रहोड नानाप्रकारके विचित्र करणेहारा
हो और प्रतिकुशलयोधाहोताभया और प्रति
अद्भुत पराक्रम जिसकाहै ऐसा कर्णजोहै सो
कुंतीका गूढउत्पन्निवाला पुत्रभयारहा सो ह
मारा निश्चयकर्के ज्येष्टभ्राता होताभया २३

तोयकर्मणिनंकुंती कथयामास
सूर्यजं पुत्रं सर्वगुणोपेत मव
कीर्णं जलेपुरा २४ ॥

जिसकोजलांजलिदानके समयविषे कहतीभ
ई यह जो कर्णके सामने सूर्यसे उत्पन्नकिया
है यह तुमारा ज्येष्टभ्राताहै इसकोभी तुम
जलदान करो कुंतीने अपनापुत्रकहासे प्रथ
म जिसको जलविषे प्रवाह कियाहै और का
ष्ठकी संदूषकेविषे स्थितकर्के गंगाप्रवाहवि
षे डुबाइदियाहै २४

मंजूषायां समाधाय गंगास्रोतस्यमज्जयत
यं सूतपुत्रं लोका
यं राधेयं चाप्यमन्यत सज्येष्ठपु
त्रः कुंत्यावै भ्रातास्माकं च मातृ
तः २५

जिसको लोक सूतपुत्र कहतेहे ओर राधासुतकोभी मानतेहे सो कुंतीका ज्येष्ठपुत्रहे हमारी मातासे उत्पन्नभयाहे कुंतीका ज्येष्ठपुत्र हमाराभ्राताहे २४

अजानता मयाभ्राता राज्यलुब्धेन घातितः
तन्मे दहति गात्राणि तूलराशि मिवानलः २५

इसको अपना भ्राता नहीजाना राज्य लोभ करके हमने आपही माराहे यह संताप हमारे अंगोको दाह करताहे जेसे रूईके पर्वतको अग्निदाह करताहे २५

नहितं वेद पार्थोपि भ्रातरं श्वेतवाहनः नाहं नभीमो नयमौ सत्वस्मा न्वेदसुव्रतः २६

ऐसे कर्णको अर्जुनभी नही जानता जिस अर्जुनके श्वेत तुरगहे ओर भीमसेनभी नही जानता ओर नकुल सहदेवभी अपना भ्राता नही जानते सो तो हमको अपने भ्राता जानता भया २६

गता किल पृथा तस्य सकाशमितिनः श्रुतं
अस्माकं शमकामावै त्वंचपुत्रो ममेत्यथ २७

हमने पश्चात् सुनाहे कुंती इसके पास जरूरगयेहे हमारेसाथ वैरकी शांतिको वांछा करतेभईहे कर्णमे तेरी माताहूं तू मेरा पुत्रहे वैरको त्याग कर २७

पृथायाः नकृतःकाम स्तेनचापि महात्मना
अथपश्चा दिदं मातर्युवाचदि तिनःश्रुतं २८

कर्णने कुंतीकी कामना नही कीनी तब हमारी माताको पीछे कर्णने ऐसा जो वचन कहा सो हमनेभी श्रवण कियाहे २८

नहि शक्या म्यहं त्यक्तुं नृपं दुर्योधनं रणे
अनार्यता नृशंसंच कृतघ्नत्वं हिमे भवेत् २९

हेमातः मे दुर्योधन राजाको रणकालविषे नही त्याग करसकता त्यागकरके मेरेविषे तुच्छता होतीहे ॥

खोटाई होतीहै कातरता होतीहै निर्दयताहोतीहै
और कृतघ्नताभी होतीहै २९

युधिष्ठिरेण संधेहि यदि कर्ण मते तव भी
तो रणे श्वेतवाहा दिति मां मंस्यते जनः ३०

अवर हेतुभी श्रवण कर जो मै तेरे मतकर्कै युधि
ष्ठिरसे संधिकरो तोमोको लोक कहेगो कर्ण अर्जु
नसे भयभीत भयाहै ३० ॥

सोहं विजित्य समरे विजयं सह केशवं सं
धास्ये धर्मपुत्रेण पश्चादिति च सोऽब्रवीत् ३१

तातै योनसा मैदुर्योधनका मित्र भयाहू सोईमै
अर्जुनको कृष्णसमेत जीतकर्कै पश्चात् धर्मपुत्रके
साथ संधानकरोंगा ऐसे कर्ण जब कहताभया ३१

तमुवाच किल पृथा पुनः पृथुल वत्सं च
त्वर्णो मे भयं देहि कामं युध्यस्व फाल्गुणं

तब कुंतीविशालहृदयवाले कर्णको बहोड वचन
कहती भई हे कर्ण जो तूं अर्जुनके साथ वैर त्याग
करता तो अर्जुनसे भिन्नजो चारे मेरे पुत्र तिनके
अभयदानको मेरे प्रतिदेवो अर्जुनके साथ अपने इ
च्छासे युद्धकर ३२ ॥

सोऽब्रवीन्मातरं धीमा न्वेपमानां कृतांजलिः
प्राप्तान्विषह्यां श्चतुरो नहनिष्यामि ते सुतान्

हे भगवन् सो कर्ण बहोड माताको वचन कहता
भया माताकेसीदै भयभीनतासे कंपमानसे और
अंजली बांधकर्कै स्थितहै हेमाता जोतीरे चारपु
त्र रणविषे अतिकष्टको प्राप्तहोवेंगे तो उनकोनर
ही मारोंगा ३३ ॥

पंचैव हि सुता देवि भविष्यंति तवध्रुवाः
सार्जुना वा हते कर्णे सकर्णा वा हते र्जुने ३४

हेदेवि तेरेसदा पांचपुत्र बनेरहेगे यह निश्चयक

कै मान कर्णके मारणेविषे अर्जुनसहितपांचहोवे गे और अर्जुनके मारणेमो कर्णसहितपांचहोवेगे २४

तेपुत्र गृहिनी भूयो माता पुत्र मथाब्रवीत् भ्रातृणां स्वस्ति कुर्वीथा येषां स्वस्तिचिकी र्षसे २५ ॥

हे मुने पुत्रलोभवाली कुंतीमाता कर्णपुत्रको बहो तकहतीभई हे कर्ण जोनसे भ्राताचारोको तु स्व स्तिक्षेम करयाहताहै इनको निश्चयकर्के क्षेमकल्या नकी तेने कर्तव्यहै २५ ॥

एवमुक्त्वा किलपृथा विसृज्य प्रययौ गृहान् सोर्जुनेन हतोवीरो भ्राता भ्राता सहोदरः २६

सो कुंती ऐसे कर्णको निश्चयवाक्य कहिकर्के बहो त विदाकर्के अपनी निवास गृहको जातीभई सो हमारा भ्राता कर्ण अपने भ्राताने अर्जुनने महावीर ही मारा है २६ ॥

नचैव विवृतो मंत्रः पृथाया स्तस्यवाविभो अ थशूरो महेष्वासः पार्थे नाजौ निपातितः २७

कुंतीमाताने इसके साथ मंत्रजो किया जो इसने मंत्र कहा सो कुंतीने हमारी प्रतिनहीं कहा इसीसे सो म हा सूरवीर महारथी अर्जुनने रणविषे माराहै २७

अहं ज्ञात्वा द्विजश्रेष्ठ स्वसोदर्यं द्विजोत्तम पूर्वजं भ्रातरं कर्णं पृथाया वचनात्प्रभो २८

हे महाप्रभो तैसे देखकर्के भ्रातघाती जो मेराहृद य अतिदुःखी होताहै जो तो कर्णको नहीं मारते अ र्जुनकोभी कर्णनहीं मारता तो कर्ण अर्जुनके सहा यकर्के हम इंद्रकोभी रणमो जीतलेते २८

तेनमे हृयते तीव्रं हृदयं भ्रातृ घातिनः कर्णा र्जुन सहायोहं जयेय मपि वासवम् २९

हे भगवन् जब सभाविषे दुरात्मा धृतराष्ट्रके पुत्र
दुर्योधनादिको करके हमक्लेशको प्राप्तहोतीहै तो
हमको जब क्रोध तत्काल उदय होतारहा उसी
कालविषे कर्णको देषकर हमारा क्रोध शांतहोजावे
सभायां क्लिश्यमानस्य धार्तराष्ट्रै दुरात्मभिः
सहसोत्पतितः क्रोधः कर्णं दृष्ट्वा प्रशाम्यति
वहोउ जब कर्ण दुर्योधनके हितकी वांछाकरके द्यूत
क्रीडाविषे सभाविषे प्रतिकटु ग्रह प्रतिकूल वाणी
जालको कहताभया ५० ॥
यदाह्यस्य गिरोरूक्षाः शृणोमि कटुकोदयाः
सभायांगदतो द्यूते दुर्योधन हितैषिणः ५१
तदा नश्यति मे क्रोधः पादौतस्य निरीक्ष्य ह
कुंत्याहि सदृशौ पादौ कर्णस्येति मतिर्मम ५२
मेरेको कर्णकी वाणी सुनकर क्रोधशांत होताभया
क्रोधशांतिके हेतुको कहतेहै कर्णके चरणजोहै
सो कुंतीके चरण समान दृष्टहोवे तब क्रोधशांत
होजातारहा ५२ ॥
सादृश्य हेतु मन्विछन् पृथायास्तस्य चैवह
कारणं नाधिगच्छामि कथंचि दपिचिंतयन् ५३
मेरेके कर्णविषे कुंतीके चरणोकी समानता दृष्टहो
वे तबमे समानताके कछुनही जानताभया इस
विचारकोमे बहुनकरताभया इस कारणसे मोको
क्रोध शांति होजावे ५३
कथंनु तस्य संग्रामे पृथिवी चक्रमग्रसत् का
थंच शप्तो भ्राता मे तन्मे त्वं वक्तु मर्हसि ५४
हे भगवन् मे आपको अवर संशयकी इछाकरताहुं
कर्णके रथ चक्रको रणविषे कैसे ग्रसलेतीभई व
होउ मेरा भ्राता कर्ण शापको कैसे प्राप्तभया इस
हेतुको आपमोको कहने योग्यहो ५४ ॥

श्रोतुमिच्छामि भगवं स्त्वत्तः सर्वं यथा तथं भ
वान्हि सर्वविद्विप्रो लोके वेद कृता कृते ४५
इस हेतुको मे आपसे श्रवणकरा चाहताऊं आप
मोको यथा तथा प्रकारसे कहो आपतो सर्ववेत्ता
विप्रवरहो जो कछुलोक विषे प्राणी गणोको त्रैका
लकाकृत अकृतहै उसको सर्वप्रकारसे जानतेहो
इतिश्रीमहाभारते राजधर्मे कर्णाभिज्ञानेप्रथमः
इतिश्री महाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मे कर्णाभि
ज्ञाने प्रथमोध्यायः ॥ १ ॥
वैशंपायनउवाच ॥ सएवमुक्तस्तु मुनि
र्नारदो वदतांवरः कथयामास तत्सर्वं यथा
शप्तः सूतजः १ ॥ नारदउवाच ॥
वैशंपायनउवाच हे जनमेजय सो नारदमुनि इसप्रका
र राजाने कहा सो तो राजाको उसके सर्ववृत्तांतको
कहताभया मुनि सर्व प्रकारके वचनकहनेवाले
वक्ता जनोके श्रेष्ठहै जैसे सूर्यपुत्र कर्णशापको प्राप्त
भया उसकथाको कहताभया १॥
एवमेतन्महाबाहो यथावृत्तमिदंभारत ॥
कर्णार्जुनयोः किंचि दविषह्यं भवेद्रणे २ ॥
नारदउवाच हे महाबाहो आपजैसे पूर्ववृत्तांतक
हाहै सो तैसे हीहै अर्जुनको और कर्णको रणविषे
कोईकार्य अशक्य नहीहै ३ ॥
गुह्यमेतत्तु देवानां कथयिष्यामि तेनघ त
न्निबोध महाबाहो यथावृत्त मिदं पुरा ३
जो प्रश्न तुमने किया सो देवतागणोंका गोप्यमंत्रहै
हे महाबाहो आप पाप प्रसंगसे रहितहो सो इस।
का हेतुहै उसको आपभी समझलेवो जैसा यह
पूर्ववृत्तांतभयाहै उसको तू श्रवणकरो ३ ॥

श्री
शं टी ५

9

क्षत्रं स्वर्गं कथं गच्छे च्छस्त्र पूत मिति प्रभो
संघर्षजननस्तस्मा त्कन्यागर्भो विनिर्मितः ४
कर्ण अर्जुनके वैरका मूल कारणको कहतेहै देव
ता गणको परस्पर यहमंत्रभया यह क्षत्रीलोक
शस्त्रसे पवित्र होकर स्वर्गको कैसे प्राप्तहोवेगा
ऐसा उनकामंत्र संकल्प जोहै सो वैरके वास्ते
कन्यागर्भ भयाहै सोई क्षत्रियोके वंशरूपी वनको
परस्पर संघट्ट करणेहारा भयाहै जैसे वांसोके संघ
र्षणसे अग्निउत्पन्नहोतीहै तैसे क्षत्रवंशोके संघर्ष
णोसे कन्यागर्भरूपी वैरकी अग्निदेवता मंत्रसेव
तीहै ४ ॥
सबाल तेजसा युक्त सूतपुत्र त्वमागतः च
कारांगिरसां श्रेष्ठ धनुर्वेदे गुरुंस्तदा ५
सो कन्यागर्भ कुंतीसे सूर्यकापुत्र भयाहै बालभाववि
षेही अति तेज संयुक्त भयाहै धनुर्वेदकी प्राप्तिवास्ते
अंगिरावंशविषे श्रेष्ठब्राह्मणको गुरु करताभया उस
गुरुसे धनुर्वेदको प्राप्तहोताभया वहोड दुर्योधनका
सखाहोता भया ५
सबले भीमसेनस्य फाल्गुनस्यच लाघवे बु
द्धिंच तवराजेंद्र यमयो र्विनयं यथा ६
सो कर्ण भीमसेनके अतिबलको देखकर और अर्जु
नकी धनुर्वेदविषे लाघवताको देखकर अर्जुनकी
वासुदेवके साथ सखाभाव देखकर्के ६
सख्यंच वासुदेवेन बाल्ये गांडीव धन्वनः
प्रजाना मनुरागंच चिंतयानो विदह्यत ७
हे राजन् तेरी महाउत्तम बुद्धिको जानकर और नकुल
सहदेवोविषे अतिविनय देखकर्के और तुह्मारेविषे
सर्वप्रजाके अनुरागको देखकर परमचिंताकर्के
अंतः करणमो दग्ध होताभया ७ ॥

ससख्य मकरोद्बाल्ये राज्ञा दुर्योधनेन च यु
धिष्ठिराभि नित्यसंदिष्टो देवाश्चापि स्वभावतः ८
हे राजन् सो कर्ण बालभावविषेही दुर्योधन राजाके
साथ सखाभावको करताभया और देवमंत्रके स्वभा
वसे तुह्मारे साथ सदाही द्वेषकरताभया ८
सर्वाधिकं मथालक्ष्य धनुर्वेदे धनंजयम् द्रो
णं रहस्युपागम्य कर्णोवचन मब्रवीत् ९
वहोउ अर्जुनको धनुर्वेदविषे सभसे अधिक चतुर
देषकर्के द्रोणजीको एकांत प्रणाम कर्के वचनको
कहताभया ९ ॥
ब्रह्मास्त्रं वेत्तु मिच्छामि सरहस्य निवर्तनं अर्जु
नेन समश्चाहं युद्धेय मितिमे मतिः १०
हे ब्रह्मन् मे आपसे ब्रह्मअस्त्रको प्रयोगनिवृत्ति सहि
त जानाचाहताऊं जिसकर्के मे अर्जुनकेसाथ बराब
र युद्धकरो यह मेरीमती चाहतीहे १०
समः शिष्येषु वः स्नेहः पुत्रे चैव तव ध्रुवं त्वत्प्र
सादात्र मां ब्रूयु रकृतास्त्रं विचक्षणाः ११
हे प्रभो मे जानताऊं तुमारा स्नेह पुत्रविषे और शिष्यो
विषे एक समानहे तुह्मारेसे ब्रह्मास्त्रकी प्राप्तिकर्के
मोको धनुर्वेदको चतुर वेत्ता लोक तुह्मारे प्रसाद
से अकृतास्त्र नही कहे इसवास्ते मोको आप ब्रह्मा
स्त्रको उपदेशाकरो ११
द्रोण स्तथोक्तः कर्णेन सापेक्षः फाल्गुणं प्रति
दौरात्म्यं चैव कर्णस्य विदित्वा तमुवाचह १२
हे राजन् कर्णने जबद्रोणको ऐसा कहा द्रोणजीने
जानायह अर्जुनके साथ वैर करताहे इसप्रकार
कर्णकी दुष्टता जानकर कर्णको वचन कहतेभये १२
ब्रह्मास्त्रं ब्राह्मणोविद्या द्यथावच्चरितव्रतः क्ष
त्रियोवा तपस्वीयो नान्यो विद्या त्कथंचन १३

हे तातपुत्र ब्रह्मास्त्रको महाव्रतवाला ब्राह्मणजानेगा वहोड जो तपस्वी क्षत्रेहोवे सो भी जानेगा और जाती ब्रह्मास्त्र जानकेयोग्यनहीहै १३

इत्युक्तो गिरसां श्रेष्ठ मामंत्र्यप्रति पूज्यच जगाम सहसा रामं महेंद्रं पर्वतंप्रति १४

कर्णको द्रोणजीने ऐसा जबकहा तब कर्ण द्रोणको पूजाकर्के विदाहोकर शीघ्रही परशुरामजीकेप्रति महेंद्र पर्वतको जाता भया १४

सतुरामं उपागम्य शिरसाभि प्रणम्यच ब्राह्मणो भार्गवोस्मीति गौरवेणाभि गच्छत १५

हे राजन् सोकर्ण परशुरामजीको प्राप्तिहोकर शिरकर्के प्रणामकर्के । हे पिताजी हे गुरुजी मे भृगुवंशी ब्राह्मणहूं इस प्रकार गुरुकुलके गोत्रको कहताभया वहोडीभी शिरकर्के प्रणाम करताभया १५

रामस्तं प्रतिजग्राह पृष्ट्वा गोत्रादि सर्वशः सउष्यतां स्वागतंचेति प्रीतिमान भवद्भृशं १६

परशुरामजी उसको अपनागोत्री जानकर शिष्यभाव कर्के अपनी शुश्रूषा करणेको ग्रहणकरतेभये उसको आगत स्वागत कहतेभये वहोड उसविषे अतिप्रीतिवाले होतेभये १६

तत्रकर्णस्य वसतो महेंद्रे स्वर्गसंमिते गंधर्वै राक्षसै र्यक्षै र्देवैश्चासी त्समागमः १७

कर्णको महेंद्रपर्वतविषे निवासकर्ते स्वर्गकेसमान सुखप्राप्तभयाहै तहां कर्णको गंधर्वोके साथ राक्षसोके साथ यक्षोके साथ देवगणोके साथ समागम होताभया १७ ॥

सतत्रेष्वस्त्र मकरोत् भृगुश्रेष्ठा द्यथाविधः प्रियश्चाभवदत्यर्थं देवदानव रक्षसां १८ ॥

कर्णजोहै सो सभको कर्ण अतिप्रियहोताभया तहां

परशुरामजीसे अस्त्रविद्याके अभ्यासको करताभया
स कदाचित्समुद्रांते विचचार आश्रमांतिके एकः
खड्गधनुष्पाणिः परिचक्रामसूर्यजः १९
सो कर्णतीरमें गुरुके आश्रम समीपविषे किसीका
लमे धनुष खड्गको हाथविषे धारकर्के इकेला
विचारता भया १९
सोऽग्निहोत्र प्रसक्तस्य कस्यचिद्ब्रह्मवादिनः ज
घाना ज्ञानतः पार्थ होमधेनुं यदृच्छया २०
वहाँउ मृगया प्रसंगसे अज्ञानकर्के अग्निहोत्री
किसी ब्रह्मवादी धेनुको दैवगतीकर्के मारताभया २०
तदज्ञानकृतंमत्वा ब्राह्मणस्य न्यवेदयत्
कर्णः प्रसादयंश्चैव मिद मित्य ब्रवीद्वचः २१
हे राजन् कर्णजोहै सो अपने अपराधको अज्ञानकृत
जानकर्के ब्राह्मणको प्रसन्नतावासते ऐसे वचनको
कहताभया २१ ॥
अबुद्धि पूर्वं भगवन् धेनुरेषा हता तव मया
तत्र प्रसादंच कुरुष्वेति पुनः पुनः २२
हे भगवन् मैने यह तुह्मारी धेनु अज्ञातपूर्वमारी
है तुम अपराधको क्षमाकर्के मेरेविषे प्रसादह
ष्टिकरो ऐसे वार वार कहताभया २२
तं सविप्रो ब्रवीत्क्रुद्धो वाचा निर्भर्त्सय न्निव
दुराचार वधार्हस्त्वं फलंप्राप्नुहि दुर्मते २३
सो ब्राह्मण क्रोधकर्के अत्यंत अनादरके समान वाणी
कर्के वचनको कहताभया हे दुर्बुद्धे तू इस कर्मकर्के
वधके योग्यहै इसके फलको अवश्यही पावेगा २ ३
येनविस्पर्धसे नित्यं यदर्थं घटसे भृशं युध्य
ने तस्तेन पार्थे चक्रं भूमि र्ग्रसिष्यति २४
जिसके साथ तू स्पर्धा करताहै जिसको जीतनेवास्ते

यत्न करनाहै हे पाप इसके साथ जबतेरा युद्ध हो
वेगा तब तुम्हारे रथके चक्रको भूमिग्रसलेवेगी
ततस्त्वके महीग्रस्ते मूर्धानं ते विचेतसः
पातयिष्यति विक्रम्य शत्रुर्गच्छ नराधम २५
जब तुम्हारा रथचक्र भूमिग्रस्त भया तब रथचक्र
उठानेके समयमो तुम्हारा शत्रु तेरे शिरको अपने
पराक्रमकर्के पृथिवी विषे गिराइदेवेगा हे नीच
अब इहांसे चलाजा २५ ॥
यथेयं गौ र्हता मूढ प्रमत्तेन त्वयामम प्रम
त्तस्य तथा रातिः शिरस्ते पातयिष्यति २६
जैसे तेने हमारीयेनु प्रमादकर्के मारीहै तैसेही
तेरे प्रमादकर्के तेराशत्रु तेरे शिरको छेदकर
के पृथिवीविषे गिराइ देवेगा २६
शमः प्रसादयामास ततस्तं द्विजसत्तमं गोभि
र्धनैश्च रत्नैश्च सचैनं पुनरब्रवीत् २७
हे राजन् विप्रने इसप्रकार कर्णको शापदिया त
ब कर्ण विप्रवरको गोदान धनधान्यरत्नदानक
र्के प्रसन्नतावासते यतनकरताभया सो ब्राह्मण
बहोड़ कर्णको वचन कहताभया २७ ॥
नहिमे व्याहृतं कर्ण त्वयैवा लोकोऽपि वेम्यथा
गच्छवा तिष्ठवा यद्वा कार्यं तत्ते समाचर २८
हे नीच इसलोकविषे मेराकहावचन कदापि
मिथ्या नहीहोता अबतूं अपने इच्छासे चलेजाओ
अथवा ठाढेरहो जो तुमको और कार्यकरणाहै
उसको अपने इच्छासे करो ॥ २८ ॥
इत्युक्तो ब्राह्मणेनाथ कर्णो दैन्यादधोमुखः
राममभ्यागमद्भीतस्तदेव मनसा स्मरन् २९
हेराजन् कर्णको ब्राह्मणने ऐसावचन कहा कर्णदी

श्री॰
रा॰प॰
टी॰
११

ननासे प्रयोगयुक्त होकर भय भीत जैसा परशुराम
जीको अस्त्रविद्याकी मनसा करके ज्ञाताभया ३५
इतिश्री महाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मे क
र्णशापो नाम द्वितीयोध्यायः २ ॥ नारदः
कर्णस्य बाहुवीर्येण प्रणयेन दमेनच तस्तो
ष भृगुशार्दूलो गुरुशुश्रूषया तथा १
ॐनारदउवाच हे राजन् परशुरामजी कर्णके भुजपरा
क्रमकरके और शुक्रप्रेमकरके और इंद्रियजयकरके
गुरुसेवा करके अति संतुष्ट होतेभये १
तस्मै स विधिवत्कृत्स्नं ब्रह्मास्त्रं स निवर्तनं प्रो
वाचा खिलमव्यग्रं तपस्वी तत्तपस्विने २
कर्णको प्रयोग संहारविधि संयुक्त ब्रह्मास्त्रमंत्रको क
हदेतेभये आपभी परशुराम महातपस्वी हे सो क
र्णको तपस्वी जानकरके अस्त्रकहतेभये २
विदित्वास्त्रं ततः कर्णो रममाणो श्रमे भृगोः च
कारैवं धनुर्वेदे यत्नमद्भुत विक्रमः ॥ ३
कर्णजोहे सो ब्रह्मास्त्र ज्ञानको पाइकर भृगुश्रेष्टजो
परशुराम उनके आश्रमविषे रमताभया वहांउभी
अमविदको त्यागकर धनुर्वेदके अभ्यासमें यतनक
रताभया ताते अति अद्भुत पराक्रमी होताभया ३
ततः कदाचि द्रामस्तु चरन्नाश्रम मंतिकात
कर्णेन सहितो धीमा नुपवासेन कर्षितः ४
हे राजन् इसकालके अनंतर परशुरामजी कर्ण
के साथ अपने आश्रमकेपास अपनी इछासे विचा
रतेभये परंतु महातपस्वीहे उपवास व्रतकरके अ
तिकृश होगयेहे ४ ॥
सुष्वाप जामदग्न्यो वै विस्रंभोत्पन्नसौहृदः क
र्णस्योत्संग आदाय शिरः क्लांतमना गुरुः ५
कर्णको अपने परम विश्वासके पात्रशिष्य सुहृदये
जानकरके कर्णके उत्संगमें शिरकरके अति खेदवा

श्री॰
रा॰ य॰
टी॰
१२

ले मनकर्के गुरूजी निद्राको करते भये ५

अथ कृमिः श्लेष्ममेदो मांसशोणितभोजनः
दारुणो दारुणस्पर्शः कर्णाभ्याशमागतः
जब परशुरामजी कर्णके उत्संगमें निद्रामें प्राप्त भये
इसीकालविषे एक महा कृमी मांस रक्तके भोजन
वास्ते कर्णके समीप प्राप्त भया सो कृमि महादारु
ण है महादारुण स्पर्शवाला है ६ ॥

स तमूरुं समासाद्य बिभेद रुधिराशनः न
चैनमशकत्क्षेप्तुं हन्तुं वापि गुरोर्भयात् ७
रक्तपान करणे द्वारा सो कृमी कर्णके ऊरू देशको
प्राप्तकर भेदकरता भया कर्ण जो है सो गुरु के निद्रा
भंगके भयसे दूर करणेको और मारणेको नहीं यत
न कर सकता भया ७ ॥

संदश्यमानस्तु तथा कृमिणा तेन भारत
गुरोः प्रबोधनाशंकी तमुपैक्षत सूर्यजः ८
हे राजन् कर्ण इस कृमीके दंशकर्के प्रतिपीडित
भया है गुरु की बोध शंकाकर्के इसके पीडाको
कर्णस्तु वेदनां धैर्यादसह्यां विनिगृह्य तां
सहारलेता भया ८ ॥
अकम्पनयथाव्यथ धारयामास भार्गवं ९
इसके असह्य पीडाको कर्ण अपने धैर्यकरके रोक
लेता भया कंपितभी नहीं भया परशुरामजीको अ
पने उत्संगमेही पीडारहित धारण करता भया ९
यदास्य रुधिरेणांगं परिस्पृष्टं भृगूद्वहः तदा
बुध्यत तेजस्वी संतप्तश्चेदमब्रवीत् १०
जब परशुरामजीका शरीरविषे कर्णके रुधिर
का स्पर्श भया तब भृगुश्रेष्ठ परशुरामजी प्रबुद्ध
भये इनके प्रति तेजके त्रासको कर्ण प्राप्त भया
इसको परशुरामजी यह कहते भये १० ॥

अहोसख श्रवितो प्राप्तः किमिदं क्रियते त्वया
कथयस्व भयंत्यक्त्वा यथातथ्य मिदंमम ११
अहोमूढ हे कर्णमेतो रुधिर स्पर्शीकर्के अशुद्धताको
प्राप्तभया तेने यह क्याकिया भयत्यागकर त्वमयथा
र्थ वृत्तांत हमको कहो ११
तस्यकर्णो स्तदावष्ट क्रमिणा परिभक्षणं ८
दर्शे राम स्तंचापि क्रमिं स्तकरसंनिभं १२
तव कर्णने कहा हे प्रभुजी मोको इस कृमीने दंशकि
याहे हे तब परशुरामजी उसी कृमीको सूकर समान
आकार वालीको देखतेभये १२
अष्टपादं तीक्ष्णदंष्ट्रं सूचीभि रिव संवृतं रोमा
भिः सनिरुद्धांग मलर्कं नाम नामतः १३
कैसाहे सो कृमी अष्टपादहे और तीक्ष्णदंष्ट्रावानहे व
होउ सूची समूह करके वेष्टितहे और रोमजालकरके प
रिपूर्ण उसके अंगहे नामकरके अलर्क नामसे प्रसिद्धहे १३
सदृष्टमात्रो रामेण कृमिःप्राणानवासृजत् त
स्मिन्नेवा सृजिक्लिन्नः तदद्भुत मिवाभवत् १४
हे राजन् रामजीने जब उसको दृष्टिगोचरमात्रकिया त
बही सो कृमिः रामजीके रुधिरविषे प्राणोंको त्यागकर
देताभया सभलोकोंको महाअद्भुत आश्चर्यहोताभया १४
ततोंतरिक्षे ददृशे विश्वरूपः करालवान् राक्ष
सो लोहितग्रीवः कृष्णांगो मेघवाहनः १५
वहोउ तत्कालही आकाशविषे महाविकरालभारी श
रीरवाला राक्षसरूप दृष्टहोताभया रक्तवर्ण जिसकी
ग्रीवाके रोमजालहे और सभही शरीर जिसका कृष्णांग
हे महामेघ घटाके समान उसका स्वरूप दृष्टहोताभया १५
सरामं प्रांजलिर्भूत्वा बभाषे हर्ष मानसः स्व
स्तिते भृगुशार्दूल गमिष्यामि यथागतम् १६
सो राक्षस आकाशमें स्थितहोकर अंजली दोनो हस्तो
की बांधकर परशुरामजीको कहताभया हे भृगुवंश

श्री॰
रा॰य
टी॰
११

13

के शाईल अब मेरी मनसा पूर्णभईहै तमको स्वा
स्तिकल्याण होई मे तह्मारे प्रसादसे अपने यथा
योग्य अपने देशको जाताहूं १६ ॥

मोचितो नरकादस्मा द्भवतामुनिसत्तम भद्रं
व तेस्तु वंदेत्वां प्रियं मे भवता कृतम् १७

हे मुनि श्रेष्ठ इस नरकसे मोको आपने मुक्त किया
है तमको अतिकल्याण प्राप्तहोवे मे आपको वंद
न करताहूं तमने मेराबहुत प्रियकल्याणकार्य कियाहै

तमुवाच महाबाहु र्जामदग्न्यः प्रतापवान् क
स्त्वं कस्माच्च नरकं प्रतिपन्नो ब्रवीहितत् १८

हे राजन् महाप्रतापवाले महाबाहु परशुरामजी उ
सको कहते भये हे साधो तूं कौनहै इस नरकयोनी
को कौनहेतूसे प्राप्तभयाहै अपना जो वृत्तांत है
उसको तमकहो ॥ १८

सोब्रवीदहं मासन्वा दंशोनाम महासुरः
पुरादेवयुगे तात भृगो स्तुल्य वया इव १९

तब सो राक्षस परशुरामजी को कहता भया हे
भगवन् मे पूर्वकालविषे दंशनामकरके प्रसिद्ध
महा असुर होताभया पूर्वले सत्ययुग भृगुमहा
ऋषीके समान अपने शरीरकी अवस्थाकोकरलेताभया

सोहंभृगोः सुदयितां भार्यामपहरे बलात्
महर्षेरभिशापेन कृमिभूतो पतंभुवि २०

भृगु महाऋषीकी अतिप्रेमवाली भार्याको अपने
मायाबलसे हरलेताभया तब भृगु महाऋषीके
शापकरके कृमी रूप होकर पृथिवीविषे पड़ताभया २०

अब्रवीत्तु समांक्रोधा त्तवपूर्व पितामहः मू
त्रश्लेष्माशनः पाप निरयं प्रतिपत्स्यसे २१

हे रामजी भृगु महाऋषि तह्मारे वंशके पूर्वले पिता
महहै सो मेरेको शापसे पतितभये देषकरके क
हतेभये है पाप तूं श्लेष्मामूत्र भोजनवाले नरकको प्रा
महोवेगा २१

शापस्यांतो भवेद्ब्रह्मन् नित्येवं तमथाब्रुवं भ
विताभार्गवो रामो दितिमामब्रवीद्भृगुः २२
वहोइ मेने भृगुजीको कहा हे प्रभो मेरे शापका अं
त केसेहोवे सो कृपासे कहो वहोइ मोको भृगुजी
ने कहा तेरे शापका मोक्ष जोहे सो मेरे वंशमे भा
र्गवरामहोवेगा उसके दर्शनसे तेरा शापका मोक्ष
होवेगा २२ ॥
सोह मेतांगतिं प्राप्तो यथाद्य कुशलं त्वया
त्वया साधु समागम्य विमुक्तः पापयोनितः
सोमे शापककें अपने पापजेसी गतीको प्राप्तभया
आपके दर्शन जेसा मोको कुशल प्राप्तभयाहै
हे साधो तुमारे समागमको पाइकर मे पापयो
निसे मुक्त भयाहूं तुमको मेरी प्रणाम हे २३
एवमुक्त्वा नमस्कृत्य ययौ रामं महासुरः रा
मः कर्णं च सक्रोध मिदं वचन मब्रवीत् २४
हेराजन् सो अलर्क राक्षस परशुरामजीको ऐसे क
हिकर प्रणामकर्के जाताभया उसके अनंतर पर
शुरामजी कर्णको क्रोधकर्के यह वचन कहतेभये
अतिदुःख मिदं मूढ नजातु ब्राह्मणः सहेत्
क्षत्रियस्यैव ते धैर्यं कामया सत्यमुच्यतां २५
हे मूढ तूं अपनेको मोसे भार्गव गोत्र ब्राह्मणकहा
हे मे जानताहूं ऐसे अतिभारी पीडाके दुःखको
ब्राह्मणजाती कदापि सहार नही सकता तेरेको
धैर्यक्षत्रिके समानहे अपनी कामना कहो अपनी
जातीको सत्यकहो २५
तमुवाच ततः कर्णः शापभीतः प्रसादयन्
ब्रह्मक्षत्रांतरे जातं सूतं मां विद्धिभार्गव २६
हे राजन् कर्णऐसे गुरुवचनको सुनकर शापसे भय
भीत होकर गुरुकी प्रसन्नताकी वांछाकर्के कहताभ
या २६ ॥

श्री॰
रा॰प॰
टी॰
१४

14

राधेयः कर्ण इतिमां प्रवदंति जना भुवि प्रसादं कुरु मे ब्रह्मन्सत्वस्य भार्गव २१

हे प्रभुजी मे ब्राह्मण क्षत्रिजातीकी संकरता विषे पैदाभयाहूं आपमोको सूतजातीका जानो अपराध क्षमाकरो शिष्य जानकर मोपर प्रसादकरो २१

पिता गुरु र्नसंदेहो वेदविद्या प्रदः प्रभुः अतो भार्गव इत्युक्तो मयागोत्रं तवांतिके २८

पिता गुरुही होतेहे इसमो संदेह नहीहे पिताकेवल जन्मदाता होताहे विद्याके दाता गुरुजोहे सो उभय लोकविषे कल्याणदाताहे ताते परमपिता गुरुही होतेहे इसहेतुसे मेने अपनागोत्र भार्गव कहाहे तुह्मारा गोत्रही तुह्मारा समीप कहाहे २८

तमुवाच भृगुश्रेष्ठः सरोषः प्रहसन्निव भूमौ निपतितं दीनं वेपमानं कृतांजलिं २९

हे राजन् कर्णऐसे कहिकर अतिदीनतासे साष्टांग प्रणाम करताभया पृथिवी विषे पडता भया हाथोकी अंजली करताभया ऐसे कर्णको देषकर भृगुश्रेष्ट परसुरामजी सक्रोध होकर हसते जैसे वचनको कहतेभये २९ ॥

यस्मान्मिथ्योप चरितो ह्यस्त्र लोभादिह त्वया तस्मा देतन्नतेमूढ ब्रह्मास्त्रं प्रतिभास्यति ३०

हे मूढ जिसब्रह्मास्त्रके लोभसे तेने हमारे साथ मिथ्यावचनका आचारकियाहे सो ब्रह्मास्त्रतोको तेरे अंतकालविषेनही फुरेगा ३०

अन्यत्रवधकालात्ते सदृशेन समीयुषः अब्राह्मणे नहिब्रह्म ध्रुवं तिष्ठेत्कथंचन ३१

तेरे वधकालसे विनातेरेको यह रणविषे तोको फुरेगा जब तेरेसमान परमयोधा तोको मारेगा तब तोको यह नही फुरेगा काहेते यह ब्रह्मास्त्र गायत्री रूप

परब्रह्म मंत्रहै सो ब्रह्मरूपता विना चिरकालकहीं
स्थितनहीं होगा ३१

गच्छेदानीं नतेस्थानं मन्तस्येह विद्यते न
त्वया सदृशो युद्धे क्षत्रियो भविता भुवि ३२

अब इहांसे तूं चलाजा ऐसे मिथ्यावादी कपटीको
हमारे स्थाननहीं है तेने शुश्रूषा कीनी है इसका
वर तोको देता है तेरे समान रणविषे शूरमा
और क्षत्री नहीं होवेगा ३२

एवमुक्तः स रामेण न्यायेनोप जगाम ह दुर्यो
धन मुपागम्य कृतास्त्रोस्मीति चाब्रवीत् ३३

इति श्री राजधर्मे कर्णास्त्रप्राप्तिस्तृतीयः ३

हे राजन् परशुरामने ऐसे कर्णको कहा तो कर्णभी
प्रीतिसे प्रणामकरके जाताभया बहोड आनकर
के दुर्योधनको कहताभया मे अस्त्रविद्याको सिद्ध
कर आयाहूं ३३ इति श्री महाभारते राजधर्मेक
र्णास्त्रप्राप्तिस्तृतीयोध्यायः ३ ॥

नारद उवाच कर्णस्तु समवाप्यैवं शस्त्रं भार्ग
वनंदनात् दुर्योधनेन सहितो मुमुदे भरतर्षभ

नारद उवाच हे भरतवंशोमें श्रेष्ठ हे राजन् युधिष्ठि
र इसप्रकार कर्णशास्त्रविद्याको भृगुश्रेष्ठ परशुरामसे
पाइकर दुर्योधनके साथ प्रेमकरके बहोत आनंद
पाइकर प्रसन्नहोताभया १

ततः कदाचिद्राजानः समाजग्मुः स्वयंवरे
कलिंग विषये राजन् राज्ञश्चित्रांगदस्य च २

तबसे किसीकालमें कलिंगदेशविषे जो चित्रांग
द राजासे उसकी कन्याके स्वयंवर विषे अनेक
राजालोक आवते भये २ ॥

श्रीमद्राजपुरंनाम नगरं तत्र भारत राजा
नः शतशस्तत्र कन्यार्थं समुपागमन् ३

इसके राज्यविषे अति संपदायुक्त राजपुरनामक

कै प्रसिद्ध नगरहै उसविषे अनेक शतसंख्याके
राजालोक कन्या आभिवासते आवतेभये ४
श्रुत्वा दुर्योधनस्तत्र समेतान्सर्वपार्थिवान्
रथेन कांचनांगेन कर्णेन सहितो ययौ ४
दुर्योधनजोहै सो उसनगरविषे संपूर्ण राजालोको
का आगमभये सुनकर्के कांचनके अंगोपांगवाले
रथकर्के कर्णको साथ लेकर तहां जाताभया ४
ततः स्वयंवरे तस्मिन् संप्रवृत्ते महोत्सवे समा
पेतुर्नृपतयः कन्यार्थे नृपसत्तम ५
जबतहां महाउत्सववाला स्वयंवर समाज प्रवृत्तभ
या तब स्वयंवरके समाजविषे सभही राजालोक
कन्याके अर्थ निमित्त आनवैठतेभये ५
शिशुपालो जरासंधो भीष्मको वक्र एवच
कपोतरोमा नीलश्च रुक्मीच दृढविक्रमः ६
तहां शिशुपालराजा आयाहै जरासंध आयाहै भीष्म
कराजा आयाहै दंतवक्र आयाहै कपोतरोमाआयाहै
नीलराजा आयाहै दृढपराक्रमी रुक्मीभी आयाहै
शृगालश्च महाराजा स्त्रीराज्याधिपतिस्तथा
अशोकः शतधन्वाच भोजो वीरश्च नामतः ७
और स्त्रीराज्यकास्वामी महाराजा शृगालराज्याभी
आयाहै अशोकराजाभी आयाहै शतधन्वाभी आ
याहै और महावीर नरकासुरराजाभी आयाहै ७
एतेच्यमीच बहवो दक्षिणांदिशि माश्रिताः
म्लेच्छाचार्यश्च राजानः प्राच्योदीच्याश्चभारत ८
हे राजन् यह राजालोक सर्वदिशाके है औरभी
राजालोक दक्षिणादिशाके आयेहै औरभी सर्वदिशा
के म्लेच्छाचार्य राजालोकहै औरभी पूर्वके उत्तर दि
शाके राजालोक तहां आयेहै ८
कांचनांगदिनःसर्वे शुद्धजांबूनदप्रभाः स
र्वे भास्वरदेहाश्च व्याघ्राइव बलोत्कटाः ९

यह सबही राजालोक कांचनके बाजूबंधादि भूषणों
करकै शुद्ध सुवर्णकी प्रभासंयुक्तहै सबही सुवर्णकी
प्रभाकरकै विराजमानहै जैसे महाबलकरकै सिंहको
अमदमत्त दृष्टहोतेहै तैसे महापराक्रमके तेजकरकै
उद्धतहै ॥ ९ ॥

ततः समुपविष्टेषु तेषु राजसु भारत विवे
श रंगं साकन्या धात्रीवर्ष वरान्विता १०

उसके अनंतर सबही राजालोक सिंहासनोविषे उप
विष्टभये तब सो राजकन्या स्वयंवरकी राजसभाको प्रवे
शकरतेभये कैसेहै धात्री जो अपनी दाई और वर्षवरजो
है अंतःपुरचारी नपुंसकलोक तिन्हकरकै संयुक्तभईहै

ततः संश्राव्यमानेषु राज्ञांनामसुभारत अत्यक्रा
मद्धार्तराष्ट्रं साकन्या वरवर्णिनी ११ ॥

हे राजन् उसके अनंतर राजालोकोके कुलनामोको क
न्याको जबश्रवण करावणोका बहुतकोलाहलभया त
बसो राजकन्या अपनी इच्छाकरकै अनेकराजा लोकोंको
छोडगई जब उसकन्याने धृतराष्ट्रके कुलको श्रवण
करकै दुर्योधनकोभी छोडदिया ११

दुर्योधनस्तु कौरव्यो नामर्षयत लंघनं प्रत्यषे
धच्च तांकन्या मसत्कृत्य नराधिपान् १२

कुरुवंशका अभिमानी दुर्योधनराजा अपनी अनादरको
नही सहारता भया उसकन्याको सबही राजालोको
को अनेक क्रूरवचनोकरकै अनादर करताभया १२

सवीर्यमदमत्तत्वा द्भीष्मद्रोणा वुपाश्रितः र
थमारोप्यतां कन्या माजुहाव नराधिपः ॥ १३

अपने बलकरकै मदमत्तहै भीष्मद्रोणादिकोकी सहा
यता संयुक्तहै उसकन्याको अपने रथपर चढाई क
रकै हरलेता भया १३

श्री॰
रा॰य॰
टी॰
१९

10

तमन्वया हस्ती रक्षी बद्धगोधांगुलित्रवान् क
र्णः शस्त्रभृतांश्रेष्ठः प्रहृतः पुरुषर्षभः १४
उस दुर्योधनकी सहायता वास्ते कर्णभी अपने हाथ
विषे बाणवर्षाको करणे वास्ते अंगुलीकी रक्षावा
स्ते गोधाचर्मको बांधकर्के धनुषको चढायकरयी
द्धे जाताभया सभही शस्त्रधारी शूरमाओंनोंविषे
कर्ण अतिश्रेष्ठहै बडा महारथी पुरुषश्रेष्ठहै १४
ततो विमर्दः सुमहा राज्ञामासीत्प्रमुख्यतां स
न्नह्यतां तनुत्राणि रथान्यां जयतामपि १५
तत् कालही युद्धकरणेहारी सभही शूरमानी
राजालोक अपने अपने कवचोंको धारतेभये र
थोंको तियारकरतेभये तिन्होंका महासंघट्ट कोलाहल
होताभया ॥ १५ ॥ ॥
तेऽभ्यधावंत सक्रोधाः कर्णदुर्योधनावुभौ शर
वर्षाणि मुंचंतो मेघाः पर्वतयोरिव १६
सो सभही राजा सक्रोधहोकर कर्णदुर्योधनके पीछे वे
गकर्के धावतेभये रथोंको तियारकरतेभये औरपर्व
तोंके उपर मेघोंकी जलधाराकी वर्षाजेसी वेहातप्र
कारकी बाणवर्षाको करतेभये १६
कर्णस्तेषा मापतता मेकैकेनशरेणह धनूंषिच
शरांश्चान्यात्यातयामास भूतले १७
हे राजन् कर्ण जोहै सो शत्रुगणोंके सर्वप्रकारसे
जेते राजालोक अपने आगे युद्धकरणेको आयाहैं
तिन्होंके धनुष और बाणोंको अपने एक एक बाण
कर सभहीको छेदकर्के भूतलमें गिरादेताभया
ततो विधनुषः काश्चि त्कांश्चिदुद्यत कार्मुकान्
कांश्चिदुद्वहतोबाणा न्रथशक्ति गदांस्तथा १८
तदनंतर कर्ण जोहै सो शत्रुगणोंको सर्वप्रकारसे जी
ततेताभया केसेहैं शत्रुगण कटेहुए धनुषोंको छोडकर

प्रवर धनुष धारणे होवेहे वहोत केते शत्रुगण वाण
वर्षा करतेहे केते सारथी विना आपही रथको वाहते
हे केते शक्तिको धारणे होवेहे केतो तो गदायुद्ध कर
णे होवेहे १८ ॥
लाघवा दाकुलीकृत्य कर्णः प्रहरतांवरः हत
नस्तांश्च भूयिष्ठा न्सविजिग्ये नराधिपान् १९
कर्ण रणमे प्रहार करणेहारे महारथीयो विषे श्रेष्ठ
हे उसकर्के वहोत शत्रुगणोंकी सारथी मारगयेहे
इसप्रकार सभको आकुल कर्के जेते राजालोकहे
सभकोही कर्णजीतलेता भया १९ ॥
तेस्वयं वाहयंतोश्वा न्पाहिपाहीति वादिनः
अपेयुस्ते रणंहित्वा राजानो भग्नमानसाः २०
जिनके रणविषे सारथी मारेहे सो कर्णको पाहि
पाहि त्राहि त्राहि अपनी रक्षावास्ते पुकारतेहे रण
को त्यागकर पलायनकाते कन्याप्राप्तिका मनोरथ
सभकाही भग्नहोगयाहे दुर्योधन राजाको कर्णने र
क्षणकियाहे स्वयंवरकी उसकन्याको ग्रहणकर्के ह
ष्टपुष्ट भयाहे हस्तना पुरको प्राजाताभया २१
दुर्योधनस्तु कर्णेन पाल्यमानो ययौतदा हृ
ष्टः कन्यामुपाधाय नगरं नागसाह्वयम् २१
इति श्री महाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मे दुर्योधनस्व
यंवरः चतुर्थोध्यायः ॥ ४ ॥ नारदउवाच
आविष्कृत बलंकर्णं श्रुत्वाराजा समागधः आ
ह्वय द्वैरथेनाजौ जरासंधो महीपतिः १
नारदउवाच हेराजन् कर्णने जब अपना रणमे प्र
गटकिया तब राजा जरासंधने श्रवणकिया सो म
गधदेशका महीपति राजा जरासंद जोहे सो अप
नेसाथ युद्धवास्ते कर्णको बुलावताभया १
तयोः समभवद्युद्धं दिव्यास्त्र विदुषोर्द्वयोः ॥

युधिनाना प्रहरणै रन्योन्य मभिवर्षतो: २
सो दोनो दिव्यअस्त्रेंके वेत्ताहै तिनोंका परस्परविषे
युद्ध होताभया सो दोनोंही द्वंद्व युद्धविषे नानाप्रका
रके अनेक शस्त्रोंकर्के परस्पर वर्षा करतेभये २
क्षीणबाणौ विधनुषौ भग्नखड्गौ महीगतौ बा
हुभि: समसजेतां उभावपि बलान्वितौ ३
दोनोके परस्पर युद्धमे तूणीरमे बाणक्षीणहोगये
हैं धनुषभी छिन्नगयेहै बहोड खड्गयुद्धमो ख
ड्गभी टूटगये तो पृथिवी मों दोनो प्राप्तभयेहै
अन्योन्य परम उग्रबल संयुक्तहै बाहुयुद्ध करतेभये
बाहुकंटक युद्धेन तस्य कर्णोथ युध्यत: विभे
द संधिं देहस्य जरया श्लेषितस्यच ४
कर्णजोहै सो बाहु युद्धकरते राजा जरासंधके देह
की दोखंड संधीको छिन्न भिन्न करताभया कैसाहै
उसकादेह प्रथम दो खंडही उत्पन्न होताभया ब
होड जरानामक राक्षसीने उसके संधी कीतीहै ४
सविकारं शरीरस्य दृष्ट्वा नृपति रात्मन: प्री
तोस्मीत्य ब्रवीत्कर्णं वैर मुत्सृज्य भारत ५
हे राजन् सो राजा जरासंध अपने शरीर भेदवाले वि
कारको जानकर्के कर्णके साथ वैरको त्यागकर्के क
हता भया मे अब तुम्हारेको युद्धकुशलता देषक
र प्रसन्नभयाहु ५ ॥
प्रीत्याददौ सकर्णाय मालिनी नगरीमथ
अंगेषु नरशार्दूल सराजासीत्सपत्नजित् ६
बहोड कर्णको प्रीतिकर्के मालिनी नगरीको देताभ
या तब कर्णजोहै सो अंगदेशविषे सर्वशत्रुगण
को जीतनेहारा राजाहोताभया ६
पालयामास चम्पांच कर्ण: परबलार्दन:
दुर्योधन स्यानुमते तवापि विदितं तथा ७

सो कर्ण शत्रुबलको पीड़ा करणेहारा भया दुर्योधनके
मतकर्के वेणाग्रीकोभी पालना करताभया यह हे
मंत तमकोभी विदितहै ७ ॥
एवं शस्त्र प्रतापेन प्रथितः सोभवत्क्षितौ त्व
हितार्थं सुरेंद्रेण भिक्षितो वर्मकुंडले ८ ॥
हे युधिष्ठिर सो कर्ण इसप्रकार अपने शस्त्रविद्याके
प्रतापकर्के पृथिवीविषे प्रसिद्धहोताभया इसी हेतुसे
तुम्हारे हितवासते इंद्रने कवच कुंडलोंकी भिक्षाको
विप्ररूपकर्के याचन कियाहै ८
स दिव्ये सहजे प्रादात् कुंडले परमार्चिते सहजं
कवचंचापि मोहितो देवमायया ९
ऐसा कर्ण दानमानकारी भयाहै जिसको विप्ररूपी इं
द्रने याचनाकरी तो अपने शरीरसाथ उत्पन्न भये
जो दिव्यकवच और कुंडलहैं तिन्होंकाभी देदेता भया
इसप्रकार देवमायाकर्के मोहित भयाहै ९
विमुक्तः कुंडलाभ्यांच सहजेनच वर्मणा निह
तो विजयेनाजौ वासुदेवस्य पश्यतः १०
सो कर्ण अपनी शरीरकी साथ उत्पत्तिवाले कुंडलो
से रहितभया बहोड़ अपनेसाथ उत्पत्तिवाले दिव्य
कवच कर्केभी मुक्तभया तो अर्जुनने माराहै बहोड़
रणविषे वासुदेवजीकी कृपादृष्टिसे माराहै १०
भीष्मावमानात्संख्यायां रथस्याधोंत्र कीर्तनात्
शल्यात्तेजो वधाच्चापि वासुदेवनयेनच ११
बहोड़ ब्राह्मणके शापकर्के और परशुराम गुरुजीके
शापकर्के बहोड़ कुंतीके शापकर्के और इंद्रकी मा
याकर्केभी माराहै ११
रुद्रस्य देवराजस्य यमस्य वरुणस्यच कुबेरद्रो
णयोश्चैव कृपस्यच महात्मनः ॥ १२

और भीष्मनेभी शाप देषकर्के इसका अपमान कियाहै यह कर्ण अर्धरथी कहाहै और शल्यने इसका तेजोवध कियाहै और कृष्णभगवानके शिलाकर्के माराहै यह अर्जुन जोहै सो रुद्रके अस्त्रको जानताहै देवराज इंद्रके अस्त्रको जानताहै यमके अस्त्रको जानताहै वरुणके अस्त्रको जानताहै कुबेरके अस्त्रको जानताहै द्रोणाचार्यकी अस्त्रविद्याको जानताहै वहोउ कृपाचार्यकी अस्त्रविद्याको जानताहै॥ १३

अस्त्राणि दिव्यान्यादाय युद्धे गांडीव धन्वना
हतो वै कर्तनः कर्णो दिवाकर समद्युतिः १४

राजन्

हे अर्जुनने इसप्रकार दिव्यअस्त्रको लेकर सूर्यकेसमान तेजवाला सूर्यपुत्रजो कर्णहै सो अपने दिव्यअस्त्र विद्यावलकर्के माराहै १४

एवंशप्त स्तवभ्राता वहुभिश्चापिवंचितः नशोच्यः सनरव्याघ्रो युद्धेहि निधनंगतः॥ १५

इसप्रकार सो तेरा भ्राता कर्ण जोहै सो बहुत शापोको प्राप्तभयाहै और वहोत उत्तमलोकोने तुम्हारे हितवास्ते उसको वंचनाकरीहै ताते तत्त्वधर्मकर्के रणविषे मृत्युको प्राप्तभया हे उसको तुमभी नही शोचना जो पुरुष धर्मयुद्ध कर्के रणविषे शत्रुसन्मुख मरताहै सो परम उत्तमगतिको प्राप्तहोताहै॥ १५ इतिश्री महाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मे कर्णवीर्यकथने नाम पंचमोध्यायः॥ ५ ॥

वैशंपायनउवाच ॥ एतावदुक्त्वादेवर्षि विरराम सनारदः॥ युधिष्ठिरस्तु राजर्षि र्दध्यौ शोकपरिप्लुतः॥ १॥

वैशंपायनउवाच हे राजन् जनमेजय नारदमुनी ।

जोहे सो ऐसे राजायुधिष्ठिरको कहिकर्के तूसीधू
त होताभया युधिष्ठिर राजा तो बहोडभी शोक
मगन भयाहे फेरभी शोक आकुलतासे ध्यानस्थि
त होताभया ॥ १ ॥

तंदीनमनसंशूरं शोकोपहतमानसम् निः
श्वसंतं यथानागं पर्यश्रुनयनंतथा २ ॥

इस प्रकार राजा शोककर्के दीनमन भयाहे बहोड
चेतवर्णा भयाहे शोकसे हृतचित्त भयाहे महा
आतुरभयाहे भगनदंत सर्प समान उश्वासकरा
ताहे शोकके अश्रुदोषकर्के नेत्रजिसके उलटे जैसे
भयेहे ॥ २ ॥

कुंतीशोक परीतांगी दुःखोप हतचेतना अ
ब्रवीन्मधुरांभाषां कालेवचन मर्थवत् ३

ऐसे राजाको देखकर कुंतीशोककर्के पीडितअंग
भयेहे दुःखकर्के जिसकी चेतनाहत भईहे सो
मधुरवचनकर्के उसकालविषे पुत्रको वचनकर
तीभई ॥ ३ ॥

युधिष्ठिर महाबाहो नैनंशोचित महर्सि
जहिशोकं महाप्राज्ञ शृणुचेदं वचोमम ४

हे युधिष्ठिर तू महाबाहू राजाहे राजधर्मको जान
कर इसकर्णको शोच्यकरणे योग्यनहीहे इसशो
कको त्यागकर हे महाबुद्धिवाले मेरे इसप्रकार
के वचनको श्रवणकर ४ ॥

यतितःसमयापूर्वं भ्रात्यंज्ञापयितंतव भा
स्करेणच देवेन पित्राधर्मभृतांवर ५

सो कर्ण प्रथम कालमें मेने तुह्मारेको भ्राता ब
नावने वास्ते यत्नकरवायाथा और उसका पिता
जो भास्कर सूर्य उसनेभी उसके प्रतियत्नकिया
हे धर्मधारी पुरुषो विषे श्रेष्ट उसकर्णने नही
माना ॥ ५

श्री. वा. य. टी. २२

19

यद्वाक्ये हितकामेन सुहृदा हित मिच्छता
तथा दिवाकरेणोक्तः स्वमाते मम चाग्रतः ८
जो कोई सुहृदय संबंधी होताहे उसने अपने
प्रिय संबंधीके हितकी वांछा कर्के हितवचनक
हने योग्यहे सो दिवाकर देवजीने मेरे आगेहि
स्वमांतर जैसा कहाहे पांडव तेरे कनिष्टभ्राताहे
उनके साथ तेने मिलकर पालना करणे योग्यहे ८
नचैन मशकन्मातु र्स्नेहा त्स्नेह कारणः प्रा
प्रत्यत्र नेतवा गंतुं वाध्यकतो लया ७
इस प्रकार उसकर्णको तुमारे स्नेहप्रेमके संबंध
करणेको आतदेवता नहीसमर्थभया तुमारे साथ
प्रांतिकरणी और एकता करणी जिसकर्णने नहीमानी
ततः कालपरीतः स वैरस्योद्धरणेरतः प्रतीप
कारी युष्माक मितिचोपेक्षितो मया ८ ॥
इसीकारणसे सोकर्ण आपही कालके वशभया वै
रको अत्यंतप्रकटकरणेलगा तुमारेही विपरीत
ही करणेलगा इसी वास्ते मेनेभी उसको त्यागकि
याहे ॥ ८ ॥
इत्युक्तो धर्मराजस्तु मात्रावाष्पाकुलेक्षणः
इदं वचनं धर्मात्मा शोकव्याकुल चेतनः ९
हे जनमेजय इसप्रकार माताने जबकहा तबरा
जा युधिष्ठिर जोहे सो शोकाश्रु जलकर्के पूर्ण
नेत्रभया बहोत शोक कर्के आकुल चेतनावा
लाभया महाधर्मात्माहे इसीसे उसको धर्मराज
कहतेहे सो कुंतीमाताको वचन कहताभया ९
भवत्या गूढमंत्रत्वा त्पीडितास्मी त्युवाचतं
शशापच महातेजाः सर्वलोकेषु योषितः
नगुह्यं धारयिष्यंती त्येवं दुःख समन्वितः १०
हे माता तेने मोको अपनी गूढमंत्रताकर्के अति
पीडित कियाहे ऐसे कहिकर सर्वलोकोके देश

ते अतितेजकर्के इस्त्री लोकोंको शापदेताभया आजसे
जो जगतविषे इस्त्री जनहे सो गूढकार्यको मनविषे
नही चिरकाल धारण करेगी ऐसे शापकर्के बहोत
दुःख संयुक्त होताभया १० ॥
सराजा पुत्र पौत्राणां संबंधि सुहृदांतथा
स्मरन्नुद्विग्न हृदयो बभूवोद्विग्नचेतसः ११
हे जनमेजय सो राजा फेरभी पुत्र पौत्रके सुहृतसे
बंधियोंके स्मरनकर्के उदासीन हृदय होताहे
बहोत विक्षिप्त चित्त जैसा होताहे ११
ततः शोकपरीतात्मा सधूमइवपावकः
निर्वेद मगमद्धीमान् राजा संतापपीडितः १२
उसके अनंत बहोतभी शोक आकुल चित्तकेसा भ
याहे जेसे धूमकरा व्याप्त अग्निमंद प्रकाशवाला
होताहे ऐर राज्यभोगादिको विषे वैरागको प्राप्त
भयाहे अत्यंत संतापकर्के पीडितहोताभया १२
इति श्री महाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मे स्त्री
शापः षष्ठोध्यायः ॥ ६ ॥ ६ ॥
इतिश्री राजधर्मे स्त्रीशापोनाम षष्ठोध्यायः ॥ ६ ॥
वैशंपायनउवाच युधिष्ठिरस्तुधर्मात्मा शोकव्या
कुलचेतनः शुशोच दुःखसंतप्तः स्मृत्वा कर्णं महा
रथम् ॥ १ ॥
वैशंपायनउवाच हे राजन् जनमेजय युधिष्ठिरराजा
जो अतिधर्मात्माहे सो शोककर्के व्याकुल चित्तभयाहे
कर्ण महारथीको स्मरण कर्के दुःखसे संतप्तभयाहे
बहोत शोककरताभया ॥ १ ॥
आविष्टोदुःखशोकाभ्यां निःश्वसंश्च पुनःपुनः
दृष्ट्वार्जुन मुवाचेदं वचनं शोककर्षितः २
सो राजा दुःखशोक पीडितभयाहे वार वार दुर्य श्वास
होताहे शोककर्के अतिकृश भयाहे पास अपने अर्जुन

नको देखकर्के ऐसे वचनको कहताभया २
युधिष्ठिरउवाच यदैहूप मात्ररिष्याामो ह्रस्यधक
पुरेवयं ज्ञातीनिः पुरुषात्कृत्वा नेनांप्राप्स्याम ड
गतिम् ॥ ३ ॥ युधिष्ठिरउवाच ॥
हे अर्जुन जो हमवनवासको तरके हस्तिमादव अंध
कयादवोके पुरोविषे भिक्षाहत्तीको करजीवतेतो
इसप्रकार पृथिवीको तिम पुरुषाकर्के ऐसे परमड
गतिको नही प्राप्तहोते ॥३॥
अमित्रानः समृद्धार्थाः हतार्थाः कुरवः कृताः
आत्मानमात्मनाहत्वा किंधर्मफलमाप्नुमः य
हमको पूर्वकालमे ऐसी कल्पनाबनीहै हमारे जो अ
मित्रशत्रुहै सो पुरुषार्थ संपदावाली भयेहै और
हमतो हतार्थहै क्या संतिम पुरुषार्थ संपदावाली
है इसी कल्पनाकर्के कुरुवंशके सभही इसप्रका
र संहारको प्राप्तभयेहै जो तू कहै हमको यह अ
पने जातीकेही शत्रुवनेहै इनका वधही धर्महैतो
सन हमने अपने जातिरूप आत्मा आपही माराहै
इसधर्मका फलइहां यशनहीहै तो परलोकको
कैा प्राप्तहोवेगा हमारा उभयलोक नष्टभयाहै ध
धिगस्तुक्षात्र माचारं धिगस्तु बलपौरुषं धिग
स्त्वमर्षं येनेमां मापदं गमिता वयम् ५
जो शास्त्रमे क्षत्रीको उग्रकरम कहाहै तो भी य
ह महा मलिनतासे निंदायोग्यहै इस हेतसे ऐ
से यह क्षत्रधर्मके आचारको धिगहै और ऐसे बल
पौरुषको धिगहै ऐसे सकल साधन समाजको
भी धिगहै जिसकर्के ऐसे शोक आपदाको प्राप्त
भयेहै ५ ॥
मार्दवमा दमः शौचं सर्ववैराग्यं त्वमत्सरः
अहिंसासत्यवचनं नित्यानि वनचारिणां ६

जो हमारेको धर्म आचार कर्तव्यहै उसको कहतेहै अब है
मकोतमा अछीहै इंद्रियोंकादम अछीहै देहकामल
काशोच अछाहै वैराग्य अछाहै किसीकी स्पर्धा नही
करणी अछीहै अहिंसा अछीहै सत्यवचन अछाहै
यह धर्म वनवासी पुरुषको नित्य कर्तव्यहै इसको
हमने त्यागकियाहै ६

वयंतु लोभान्मोहाच्च दंभमानंच संश्रिताः
इमामवस्था मापन्ना राज्यलाभ बुभुत्सया ७

हमतो आपही लोभसे मोहसे दंभको और मानको
आश्रितभयेहै इसीसे ऐसी शोकमूल आपदाको प्रा
प्तभयेहै हमको राज्यलाभकी भोगतृष्णाने ऐसाडः
खी कियाहै ॥ ७ ॥

त्रैलोक्यस्यापि राज्येन नास्मान्कश्चित्प्रहर्षयेत्
बांधवान्निहतान्दृष्ट्वा पृथिव्यां विजयैषिणः ८

हमको अब त्रैलोक्य राज्यभी होवे तोभी कोई हर्षको
नही करता याते हम अपने बांधवोको मरे देषकर
विजयकी वांछाही हमको हेतुबनीहै ८

तेवयं पृथिवीहेतो रवध्यान्पृथिवी समान्
संपरित्यज्य जीवामो हीनार्थाः हतबांधवाः ९

इसीसे हमने पृथिवी लाभके हेतुसे अवध्य जो पृ
थिवी समान हितकारी बंधुजनोको रणविषे त्या
गकै जीवतेहै अब संपूर्ण भोगार्थोसे हीनभयेहै
हमारे बांधव सकलमारेगयेहै ९

आमिषे गृध्यमानाना मशुभंनः शुनामिव
आमिषंचैवनोहीष्ट मामिषस्य विवर्जनम् १०

हमने श्वानहति समानमांसकी तृष्णाकीनीहै ऐसा
राज्यरूपी मांस हमको इष्टनहीहै अशुभहै बंधुजन
रूपी मांसवनाहै नो हमको इष्टहै और बंधुजनोका
अर्थरूपी राज्यादिक मांस वधकरकै प्राप्तहोवे सो

इष्टनहीहै उसकावर्जनाही हमको इष्टहै १०

नपृथिव्या सकलया नहिरण्यस्य राशिभिः
नगवां श्चेन सर्वेण नेत्याज्याय इमेहताः ११

अब इसी अर्थको भिन्नकर्कै स्पष्ट कहतेहै हे अर्जु
न जो यह बंधुजन मरिगयेहै सदारक्षा योग्यहै
जो सकल पृथिवीका राज्यप्राप्तहोवे और स्वर्ण
की मेरुसमान राशिप्राप्तहोवे और सर्वप्रकारका
गोधन और अश्वादिवाहन संपदाप्राप्त ऐसेराज्य
लाभके वदले बंधुजनोका त्यागनही और मारणे
कीवार्ता कहाहै ॥ ११

काममन्यु परीतास्ते क्रोधहर्ष समन्विताः
मृत्युयानं समारुह्य गता वैवस्वतक्षयम् १२

यह हमारे बंधुजन आपही क्रोध व्याप्त होकर्कै रणवि
षे क्रोधहर्षके वशभयेहै आपही मृत्युकी सवारीच
ढके अपने अपराधकर्कै आपही यमलोककोगये
तोभी इनके वधकादोष हमको सदावनाहै १२

बहुकल्याणसंयुक्ता निच्छंति पितरः सुतान्
तपसा ब्रह्मचर्येण सत्येनच तितिक्षया १३

हे अर्जुन इसलोकविषे मातापिताजो है सो बहुतक
ल्याण संयुक्तवांछा करतेहै तपकर्कै ब्रह्मचर्यकर्कै ।
सत्यवचनकर्कै और स्वाव दुःखादि द्वंद्वोके सहारणेकर्कै

उपवासै र्व्रतैर्ज्याभि र्व्रतकौतुक मंगलैः
लभंते मातरो गर्भा स्तान्मासा न्दश विभ्रति १४

और उपवासादि व्रतोंकर्कै यज्ञादि व्रतकर्कै कौतुकादि
मंगलोकर्कै जब मातागर्भको प्राप्तहोतीहै तब दश
मासभर गर्भको कष्टकर्कै धारण करतीहै १४

यदि स्वस्ति प्रजायंते जाता जीवंति वायदि
संभाविता जातबला स्तेदद्यु र्यदिमः स्वाचे १५

जो स्वावसे जन्मलेतेहै वहोउ जन्मकर्कै जो जीवतेहै फेर

नव गुणसंपदावाले पुत्रहोवेंगे इमकोसबदेवेंगे १५

इच्छवापुत्रवैवेति कृपणाः फलहेतवः तासां

मयं समारंभो निहतः केवलो फलः १६

इसलोकविषे परलोकविषे पुत्रसंतानकर्के कल्याण होताहै ऐसी आशाकर्के फलकी आशाअतिदीनहो तीहै इसी आशाकर्के पुत्र संतानका यत्नकरतीहै इन्हके यत्नका आरंभ अब निसफलभयाहै १६

यदासौ निहताः पुत्राः युवानो मृष्टकुंडलाः

अभुक्त्वा पार्थिवान्भोगा नृणान्यनपहायच १७

ऐसी जो पुत्रोंके मातांहै तिन्होकेपुत्र युवाभयेहैं शुद्धसुवर्ण कुंडलोकर्के उज्वल शोभावालेहै तिन्हो ने पृथिवीके राज्यभोग नहीभोगे १७

पितृभ्यो देवताभ्यश्च गतावैवस्वत क्षयं १८

और देवऋण पितृऋण जिन्होनेभी नही समाप्त किया इसप्रकार अपने जन्मके फलको त्याग कर्के यमराजके घरके गयेहैं १८

यदेषा मेव पितरौ जातका मा वुभावपि

संजात बलदृपेषु तदेव निहता नृपाः १९

अबराजा अपनी माताजो उसकोभी कहतेहै हेअंब हे माता जोनसे यह धृतराष्ट्रके पुत्रहै दुर्योधनादि क इन्हके माता पिता जोहै गांधारी धृतराष्ट्र इन्ह को यवपुत्र कामनाके सब फलका समय आनया उसीकालविषे दुर्योधनादिराजा रणविषे मा रेगयेहै १९ ॥

संप्रक्ताः काममन्युभ्यां क्रोधहर्षा समंजसा

न तेजयफलं किंचि द्रोणभो जातकर्हिचित् २०

समही यहकामजो ऐश्वर्यकी अभिलाषा मन्यजो उ सकी अप्राप्तिमो दीनता और कामकी प्रतिबंधविषे क्रोधहोना अति संताप कामकी प्राप्तीमो अतिहर्

श्री॰
रा॰य॰
टी॰
२२

बैना इन्होंके संबंधकर्के परस्पर विषम वृत्तिभयेहै
तिन्होंको जयकाजो फल पृथिवीभोग अथवा स्वर्ग
भोग तिसको देवही नही भोगेगे जीवना मरणाही
सभको बनाहै जीवते को मिले सोई अच्छाहै जो मर
गया उसका सभही नष्टभयाहै उसका परलो
कभी कुछ नही बनता २०

पंचालानां कुरूणांच हतानामवशिष्टमेहताः नचे
त्सर्वानयं लोका अपश्येत स्वकर्मणा २१

ताते जोजो हमारे संबंधी कौरवोंके पांचालोंके मर
गयेहै सो मरीहीहै मरकर्के स्वर्गभोग कहाहै किस
ने देखाहै बहोड कहा कछु बनताहै मेरे उपरंत स
भमिथ्याहै मरणकालविषे कामादिको कर्के मलि
न अंतकरणवाले होनेकर्के ॥२१॥ अर्जुन इसकालवि
षे इसलोकके विनाशकारण हमही भयेहै और

वयमेवास्य लोकस्य विनाशे कारणंस्मृताः
धृतराष्ट्रस्य पुत्रेण निकृत्या वंचिता वयं २२

हमारे दुःखका कारण धृतराष्ट्रका पुत्रहै जिसने हमा
रेभागका राज्य द्यूत बलसे हरलियाहै २२

सदैव निकृति प्रज्ञो द्वेष्टा मायोप जीविनः
मिथ्याहनश्च सततं मस्मास्व अपकारिषु २३

दुर्योधन सदाहमारे विषे छल बुद्धि करताभया माया
केही साधनकरताभया उसके वास्ते राजाधृतराष्ट्रभी
सदा मिथ्यावृत्ति बनारहा इसके साथ हमने कछु
विरोधकार्यनहीकरा हमइसको पिताही मानतेभये

नसकामा वयंतेच नचास्माभिर्नतैर्जितं
नतैर्भुक्तेयमवनि र्नतार्यो गीतवादितं २४

इन्होंने प्रथम हमको काम भोगसे मुक्त किया पश्चा
त् आपभी काम भोग संयुक्तभये हमने कछुभोगान
ही भोगा कछु जेता न इन्होंने हमसे जीता न हमने
कछुजीता यह पृथिवी भोग सावधानी किसीने ।

नही भोगी नातो स्त्रियोका गीतवातनादि मंगलाया
देखा ॥ २४

नामानि सुहृदांवाक्यं नच श्रुतवतो श्रुतं
नरत्नानि परार्ध्यानि नधूर्नहविणागमः २५

दुर्योधनने अपनी मात्यमंत्री सुहृदोंका वाक्यमाना ना
तो बहुश्रुत पंडितोका वाक्यसुना हमारे उत्तमरत्न
उसको सुहारा न पृथिवीका लाभसुहारा नातो द्रव
का आगम हमारा सुहारा २५

अस्माद्वेषेण संतप्तः स्वर्वंनस्थेषु विंदति ॥
वृद्धिमस्मास्तु तां दृष्टा विवर्णो हरिणः कृशः २६

केवल हमारे द्वेषकर्के संतप्तभया अपने सुखविषे उस
ने सुखनही पाया हमारे विषे जब संपदाकी वृद्धिदेखी
तबही उसको वर्ण विकारभया पीतवर्ण होगया चिं
ताकर्के अतिकृशभया २६

धृतराष्ट्रस्य नृपतिः सौवलेन निवेदितः तेपिता
पुत्र गृह्णित्वा दत्तमेते नयेस्थिते २७॥

धृतराष्ट्रराजा इसदृत्तांतको शकुनिने निवेदन किया त
व पुत्रके प्रीतिकर्के द्यूतक्रीडादि अवनीतिको स्थितीके
मानलेताभया २७॥

मतवैत्येव विदुरं गांगेयंच महामतिम्
असंशयं नृपराजा यथैवारं तथागतः २८

इसको विदुर हित कहताभया उसको नहीमाना वहो
उ महामति भीष्मपितामह हित कहते भई उसको
भी नहीमाना इस हेतुसे निश्चयकर्के यह नृपको प्रा
प्तभया जैसे हमहृतप्रत्रभयेहे तैसे यहराज्याभी हत
पुत्रभयाहे २८॥ ॥

अनियम्या शुचिं लुब्धं पुत्रं कामवशानुगम्
पतितो यशसो दीप्ता द्वातयित्वा सहोदरात २९

यह राजा पापकारी अतिलोभी अपने पुत्रको कामनो
भके वशभयेको नही रोका ताते सदा प्रकाशमान

श्री॰
रा॰ प॰
टी॰
३३

अपने राजधर्मके यशसे हीण होकर पडाहै दुर्योध
नभी अपने सहोदर भ्राता जोहै तिनोको घातकरा
इकर्के यशोकी प्राप्तिसे पतित भयाहै २९

इमौहि वृद्धौ शोकाग्नौ प्रक्षिप्य स सुयोधनः
अस्मत्प्रद्वेषसंतप्तः पापबुद्धिः सदैवहि ३०

यह जिसके मातापिता वृद्धहै इन्होको शोकाग्निविषे
गेरकर हमारी संपदाको दर्शनकर्के संतप्तभयाहै
सदाही पापबुद्धी इस खोटी दशाको प्राप्तभयाहै ३०

कोहि वंशे कुलीनस्सं ल्लोभाद्वा स्वसुजने
यथास उक्तवान्वाक्यं युयुत्सुःकृष्णसंनिधौ ३१

हे अर्जुन ऐसा कौनहै जो वंशजनहै अपनी हितका
री सुहृदलोकोविषे तैसे खोटेवचनकहै जैसे खो
टेवचन दुर्योधन कृष्णके सन्मुखयुद्धकी इछाकर्के
कहताभया ॥ ३१ ॥

आत्मनोहि वयंदोषा द्विनष्टाःशाश्वतीः समाः
प्रदहंतो दिशःसर्वा भास्करा इव तेजसः ३२

सो दुर्योधन हमारा शत्रुनहीहै अपनाभाताहै अपना
ही आत्माहै मोको यह शोचबडाहै जो अपनेही दोष
कर्के आप विनष्ट भयेहै सदाही अनेक वरष दग्धभ
येहै सभही दिशा हमारेको ऐसे पश्चातापकर्के औरे
शोककी अग्निकर्के प्रचंड सूर्यकी न्याई अपने तेज
कर्के दाहकरतीहै ३२ ॥

सोस्माकं वैरपुरुषो दुर्मतिः प्रग्रहंगतः ॥
दुर्योधन कृतेह्येतत् कुलंनो विनिपातितं ३३

सो दुर्योधन हमारे वंशके विनाशका आपही वैरका
पुरुष बनाहै आप दुर्बुद्धिहै वैरकर्केही महावंधन
को प्राप्तभयाहै यह हमाराकुल दुर्योधनके निमि
त्तसे विनाशकी अग्निविषे पडाहै ३३

अवध्यानांवधंकृत्वा लोके प्राप्स्यामिवाच्यतां
कुलस्यास्यांतकरणं दुर्मतिं पापकारिणम् ३४

५३

हमजोहे सो भीष्मद्रोणादि पितृपितामह गुरु तिन्होका
वधकर्के लोकविषे गुरुघाती कुलघाती इत्यादि अप
यशकी संज्ञाको प्राप्तभयेहे इसकुलका अंतकारी
दुर्मति पापकारी दुर्योधनको कहतेहे २४

राजाराष्ट्रैस्सर्वं हत्वा धृतराष्ट्रस्य शोचति ॥
हताः शूराः कृतं पापं विषयः स्वो विनाशितः

यह राजा धृतराष्ट्र ऐसे पुत्रको अपने देशराज्यके स्वामी
कर्के हमारे साथही अव शोचता अपने कुलके महा
शूर अनेक मारेहे महापापकियाहे और अपना देश
विषय सभविनाश कियाहे २५ ॥

हतानो विगतो मन्युः शोको मां कंधयत्यसो
धनंजय कृतं पापं कल्याणे नोपहन्यते २६

हे अर्जुन सभको मारकर्के हमारे सभका दुर्योधन
के प्रतिजो क्रोधरहा सो अब निवृत्त होगयाहे यह
शोक केवल ऐकेले मोकोही पीडाकरताहे यह
शोक किसी कल्याण कर्मके उपकारके नही माराजाता

व्यापने नवतापेन दानेन तपसा पिवा निवृ
त्या तीर्थगमनात् श्रुति स्मृति जपेनवा २७

अपना पापकर्मके कीर्तनकर्के नही निवृत्तहोता म
हादानकर्के नष्टनही होता ब्रह्मचर्यादि तपकर्के न
ही जाता त्यागकर्के जाताहे श्रुति स्मृति पुराण पारा
यण श्रवणकर्के जाताहे वहोउ मंत्रजापकर्के भी
यह पाप निवृत्त होताहे २७

त्यागवांस्तु पुनः पापं नालं कर्तुमितिस्थितिः
त्यागवान् जन्म मरणे नाप्नोतीति श्रुतिर्यदा २८

हे भाई त्यागवान् पुरुष जोहे सो वहोउ पापकरणेको
उद्यमनही करता त्यागीपुरुष संसारविषे वहोउ जन्म
मरणकोभी नहीपावता यह श्रुतिका अर्थ प्रसिद्धहे २८

श्री
ग. य.
टी.
२४

२५

प्राप्तवत्सो हृत मति ब्रह्मसंपद्यते तदा ३५
जब यह पुरुष त्यागकरताहै तब ज्ञानयोगके मा
र्गको प्राप्तहोताहै और श्रवण मननादि यत्नकर्कै
अहं ब्रह्मास्मि ऐसी कुशलबुद्धिको करताहै तो अ
खंडानंद ब्रह्मतत्वको होताहै ३५
सधनंजय निर्द्वंद्वो मुनिर्ज्ञान समन्वितः ३५
ताते हेधनंजय सोमे अवत्यागी होकर निर्द्वंद्व होताहूं
ग्रहण त्यागबुद्धिसे रहितहोइ ध्याननिष्ठाकर्के मुनि
वृत्तिहोताहूं ब्रह्मात्म एक निष्ठा संयुक्त हेनेचाहता
हूं ब्रह्मज्ञान संयुक्त इच्छाकारी होताहूं ३५
वनमामेत्य वः सर्वान् गमिष्यामि परंतप
नहि कृत्स्न ततोधर्मः शक्यः प्राप्त मितिश्रुतिः
हे परंतप अर्जुनमे अव तुमको सबको कहिकर्के व
नको जाताहूं गृहस्थ होकर्के यज्ञकार्यकरना और
अपना आचार इंद्रियोकादमन अहिंसा दान स्वाध्या
य कर्मयह गृहविषे नहीहोते सर्वधर्मोविषे ज्ञान
आत्म दर्शनहि परमधर्म याज्ञवल्क्य जीने कहाहै ४०
परिग्रहवता तन्मे प्रत्यक्ष मरिसूदन
मया हृष्टंत पापंहि परिग्रह मभीप्सता ४१
गृहस्थ वृत्तिकर्कै मेने यह प्रत्यक्षपाप सुनाहै मेरे
को गृहस्थाचारकी वांछाका फलभयाहै ४१
जन्मक्षय निमित्तंच शक्यंप्राप्त मितिश्रुतिः
सपरिग्रह मुत्सृज्य कृत्स्नंराज्यं तथैवच ४२
ताते जन्मबंधनके क्षयनिमित्तमोको त्यागहि प्रच्छा
साधनहै सोमे अवगृहस्थ धर्मको त्यागकर्कै संपूर्ण
राज्यकोभी त्यागकरजाताहूं ४२
गमिष्यामि विनिर्मुक्तो विशोको विज्वरस्तथा ४२
सभसे मुक्तहोकर जैसे विशोकता होवेगी और शोक

चिंताकी निवृत्ति जैसेवने तैसीवांछाकर्के वनकोजानाऊं

प्रशाधि त्वमिमामुर्वी क्षेमांनिहतकंटकां।
नममार्थोस्ति राज्येन भोगैर्वा कुरुसत्तम ५२

अबयह पृथ्वी पापबाधासे रहितभयाहै और कंटकशत्रु
एसभमारेगयेहै ऐसीपृथिवीका तूंही शासनकर ५२

इत्येव मुक्ता वचनं धर्मराजो युधिष्ठिरः
अुपारमत तंपार्थः कनीया प्रत्यभाषत ५४

मोको अबराज्यके साथ अर्थ नहींहै और भोगोंकर्केभी
अर्थसिद्धि नहींहै हेजनमेजयराजन् धर्मराज युधिष्ठि
रऐसी कहिकर तूप्लीहोताभया तब उसका कनिष्ठभ्राता
अर्जुनराजाकेप्रति वचनकहताभया ५४

इति राजधर्मे युधिष्ठिर परिदेवनं सप्तमोध्यायः ७

इतिश्री राजधर्मे युधिष्ठिर परिदेवनं सप्तमः ।७ ॥

वैशंपायनउवाच अथार्जुन मुवाचेद मधिक्षिप्त मि
वाक्षमी अभिनीततरं वाक्यं दृढवाद पराक्रमः १

वैशंपायनउवाच हेराजन जनमेजय इसके अनंतर
अर्जुनराजाको वचनकहताभया कैसाहै राज्यशासना
की आज्ञाके राजाके वचनकर्के अपनेको अनादरके
आक्षेप जैसा मानताभया कैसावचन कहताभया
जिसमो सर्वप्रकारकी नीतिहै और दृढहै युक्ति और प
राक्रमके वादउदाहरण जिसमों १

दर्शयन्सतदात्मान मुग्रमुग्र पराक्रमः स्मय
मानो महातेजा सृक्किणी परिसंलिहन् २

उग्रहै पराक्रम जिसका ऐसा अर्जुन सभको अपना अति
उग्र स्वरूपदिखावताहै और मंदहसकावताहै महाते
जवान् भयाहै और अपने ओष्ठ तटोंको रसनाकर्के चा
टता जैसा राजाको कहताभया २

अर्जुनउवाच अहोदुःख महोकृच्छ्र महोवैक्लव्य
मुत्तमं यत्कृत्वा मानुषंकर्म त्यजेथाःश्रियमुत्तमां ३

२५

अर्जुनउवाच अहो हमारेको महाआश्चर्यरूपी दुःखभया और महाआश्चर्यरूपी कष्टभयाहै स्वजनवधसे दुःखभया है शत्रुसेनाके पराजयसे कष्टभयाहै यहराजा ऐसे मानताहै और महाकायरता भईहै जो अपने क्षत्रधर्मक के राज्यप्राप्तभया उसको त्यागकरणा प्रतिमूढताहै जो हमको अमानुष कर्मकियाहै ऐसे करके हमउत्तम राज्य संपदाको त्यागदेवेंगे ३ ॥

शत्रून् हत्वा महींलब्ध्वा स्वधर्मेणोपपादितां
एवं विधं कथं सर्वं त्यजेथाः बुद्धिलाघवात्

हमने अपनेको दुःखदेवने हारे शत्रूकोमारकर्के । और अपने पुत्रादिकोंको शत्रूसे मरवाइकर्के अपने क्षत्रधर्म कर्के समग्र पृथिवीको प्राप्तहोइ कर्के बहो उ सर्वत्याग करणे यहकार्य हमारी बुद्धिकी लघुतासे बनताहै ४ ॥ ॥

क्लीबस्यह कुतोराज्यं दीर्घसूत्रस्य वा पुनः
किमर्थंच महीपाला नवधी क्रोधमूर्छितः ५

हे राजन् कायर पुरुषको राज्यकहां होताहै और दीर्घ सूत्रकोभी राज्यकहां होताहै जो तुमको वनवास जै सी कायरता और दीर्घसूत्रताकर्के राज्यत्यागकी वांछा रही तो क्रोधकर्के मूढहोकर्के नानादेशकी राज्य लोकोंको रणविषे क्यों मरवायाहै ५

याच्यात्तिजीविष भैक्ष्यं कर्मणा येनकेनचित्
समारंभान् बुभूषेत हृतस्वस्ति रकिंचनः ६

हे महाप्रभो यहवाक्य हमारा प्रसिद्ध आपसुनो जो पु रुष आपही अपने कायरता कर्के नष्टकल्याण गुणहो ताहै सो अकिंचन होताहै गुण पराक्रम संपदाहीन होताहै सो लोकविषे ऐसे क्रमकर्के विख्यातनहींहोता बहोउ पुत्रादि संयोग संबंधसे रहित होताहै पश्चात् भिक्षावृत्तिकर्के येनकेन उपायेन अपना जीवना वा

हुताहै तो महापौरुष पराक्रमकर्के जिन्का प्रा
रंभकर्म बनताहै ऐसे महासंपदावाले राज्यसं
पदाकी इछाकरणेवाहै ६
सर्वलोकेषु विख्यातो नपुत्र पशुसंहितः ॥
कापाली नृपपापिष्ठां वृत्ति मास्थाय जीवितः ७
तू तो सर्वलोको विषे ओर पुत्र पशुभ्रातादि संप
दायुक्तहै बहोड पराक्रम संपदायुक्तहै जो का
पाली वृत्तिकर्के भिक्षाजीवनको करेगा ७
संत्यज्य राज्यमृद्धं ते लोकोयं किं वदिष्यति
सर्वारंभान् परित्यज्य हतस्वस्ति रकिंचनः ८
परम संपदा संपन्न राज्यको त्यागदेवेगा तो लोक तो
को क्या कहेगा जो राजा सर्व आरंभको त्यागकर्के
नष्टकल्याणभयाहै अकिंचन दरिद्रभयाहै भिक्षा
वृत्ति करताहै यह तो महामूढहै ऐसे महामूढ जै
से कार्यको किसहेतुसे करताहै ८
कस्मादाशांससे भैक्ष्यं कर्तुं प्राकृतवत्प्रभो ॥
अस्मिन्राजकुले जातो जित्वाकृत्स्नांवसुंधरां ९
हे राजन् सर्वलोक विख्यात ऐसे उत्तमकुलविषे जन्म
पाइकर्के समग्रपृथिवीको अपने क्षत्रधर्मसे जीत
कर्के ओर त्यागकर्के धर्म अर्थको सभको त्यागक
र्के वनको जाताहै सो तूं अपनी मूढतासे जाताहै ९
धर्मार्थो वखिलौ हित्वा वनं मौढ्यात्प्रतिष्ठसे
यदिमानि हवींषीह विमथिष्यंति साधवः १०
तेने मोको राज्यकरणे कहाहै तो मोको राज्यकरणा न
हीहै जो तमने राज्यत्यागकिया राजाविना इसपृ
थिवीमो तस्करादि लोक परद्रव्यादि हरण करेंगे
धनहीन लोकोंके होमयज्ञादि धर्मखंडित होजावेगे
सो पाप निश्चयकर्के तमकोही प्राप्तहोवेगा १०

भवता विप्रहीनानि ग्रामे त्वामेव किल्विषं
अकिंचनामनाशंस्य मितिवै नहुषोब्रवीत् ११
तेने त्यागकर्के अकिंचनताहृति शुभमानीहै इसकी
राजा नहुषने अप्रमाणकियाहे जो धनका अभाव
होताहै सोही पापहोताहै जबराजा नहुष अगस्त्य
शापकर्के अजगर सर्पभयाहै तब दरिद्रभावकर्के
भीमसेनको ग्रासकरताभया तब्लाव समागमकर्के
उसको शापमोक्षभयाहै तब उसने मनुष्यग्रासहृप
अपने कर्मको धिग कहाहै यहपाप अकिंचनतासे
अधनतासेभयाहै ताते दरिद्रकर्के अधनताहोतीहै
इसहृत्तिको धिगहै ताते यह अधनता अनिहृत्ति
है राजधर्मके हृत्तिनहीहै ॥ ११
दृष्टान्तशंस्य त्वधने धिगस्तु धनतामिह अश्व
त्तन मृषीणांहि विद्यते वेदतद्भवान् १२
तमने जो असंग्रहहृत्ति अछी मानीहै सो ऋषी लो
कोके हृत्तिहै जिसको लोकधर्म कहतेहै सो धर्मभी
धनसेही होताहै १२ ॥
यं त्विमं धर्ममित्याहु र्धनादेव प्रवर्तते धर्मं संह
रते तस्य धनं हरति यस्य सः १३
जो पुरुष जिसके धनको हरताहै उसके धर्मकर्म
को सोई हरताहै हमही इसपापके हेतुभयेहै ता
हे तो प्रथम हमाराधनही धृतराष्ट्रके पुत्रोने हराहै
तो हम उह्नको कैसा क्षमाकरेगे १३
क्रियमाणेधने राजन् वयंकस्य क्षमेमहि अ
भिशस्तं अपश्यंति दरिद्रं पार्श्वतः स्थितं १४
जो पुरुष दरिद्रहोताहै उसको धनीलोक अपनेपास
भयेको देषकर सभही उसको चोर जैसी अपराधी
को जैसे देषते ताते दरिद्रलोकविषे महापापका फ
लहै उसको तमकौ उत्तममानतेही १४

दारिद्र्यं पातकं लोके न तत् शंसितुमर्हसि
पतितः शोचते राजन् निर्धनश्चापि शोचते १५
हे राजन् जो पापकर्म करके पतित होता है सो अपने
पापकर्मको शोचता है और निर्धन पुरुषभी अपने
पापकर्मको शोचता है हम निर्धन पुरुषका और पा
पी पतित पुरुषकी हीनताविषे विशेषता कछु न
ही जानते १५
विशेषं नाधिगच्छामि निर्धनस्यावरस्य च अर्थे
भ्यो हि विवृद्धेभ्यः संभृतेभ्यस्ततस्ततः १६
जो अर्थ समृद्ध होवे और संग्रह कियेहोवे सभही धर्म
क्रिया सर्वप्रकारसे होती है जैसे नदीआं पर्वतोंसे प्र
वृत्त होती है ॥ १६
क्रियास्सर्वाः प्रवर्तन्ते पर्वतेभ्य इवापगाः
अर्थाद्धर्मश्च कामश्च स्वर्गश्चैव नराधिप १७
हे राजन् अर्थसे धर्म होता है कामसंकल्पभी सिद्ध
होता है स्वर्गलोकभी सिद्ध होता है और लोकोंकी
प्राणयात्राभी अर्थ विना नही होती १७
प्राणयात्रापि लोकस्य विनार्थं न प्रसिद्ध्यति
अर्थेनेह विहीनस्य पुरुषस्याल्पमेधसः वि
च्छिद्यन्ते क्रियाः सर्वा ग्रीष्मे कुसरितो यथा १८
जो पुरुष धनसंपदा रूपी अर्थसे हीन है सो अल्पबुद्धि
होता है उसकी सभही धर्मक्रिया विछिन्न होती है
जैसे ग्रीष्मकालविषे छुद्रनदीआं स्वल्पजल होती है
शुष्क होजाती है १८॥
यस्यार्थास्तस्य मित्राणि यस्यार्थास्तस्य बांधवाः
यस्यार्थाः स पुमांल्लोके यस्यार्थाः स च पंडितः १९
जिस पुरुषके पास अर्थ है उसके सभ है मित्र होते हैं
जिसको अर्थ है उसके सभहि बांधव होते है जिस

श्री॰
रा॰थ॰
टी॰
२०

27

के अर्थहै सोई इसलोकविषे पुरुषकहावताहै प्र
सिद्धभी होताहै जिसको अर्थहै सोई लोकविषे म
हा प्रतिष्ठावान् पंडित होताहै १९

अधनेनार्थकामेन नार्थः शक्योविधित्सता अ
र्थैरर्थानिबध्यंते गजाइव महागजैः २०

हे राजन् जो पुरुष अधनहै किसी अर्थको सिद्धक
रणाचाहै उससे किसीकार्यका अर्थभी सिद्धकरणा
शक्यनही होता अपने पास अर्थहोवे तबही सर्वका
र्योके अर्थ समद्ध होताहै जैसे अपनीपास किसी
का गजहोवे तो उनके प्रसंगसे वनके महागजभी
वशहोताहै २०

धर्मः कामश्च हर्षश्च धृतिः क्रोधः श्रुतंमदः अ
र्थादेतानि सर्वाणि प्रवर्तंते नराधिप २१

हे नराधिप धर्म और काम और हर्ष और धैर्य और क्रो
ध और शास्त्रश्रवण और और मदके कार्य यह सभ
ही अर्थसेही प्रवृत्तहोतेहै २१

धनात्कुलं प्रभवति धनाद्धर्मः प्रवर्तते नाध
नस्यास्त्ययंलोको नपरः पुरुषोत्तम २२

आप पुरुषोविषे उत्तमहो यह निश्चयकरो धनसे
कुल उत्तमहोताहै धनसे धर्म बढताहै अधनपु
रुषको इहलोकनही बनता २२

नाधनो धर्मकृत्यानि यथावदनुतिष्ठति धना
द्धर्मः प्रभवति शैलादभि नदीयथा २३॥

अधन पुरुष जोहै सो धर्मकार्योको यथाविधिनही
करसकता धनसेही धर्महोताहै जैसे पर्वतसेन
दी प्रवृत्त होतीहै २३

यः कृशाश्वः कृशगवः कृशभृत्यः कृशातिथिः
सवै राजन्कृशोनाम नशरीर कृशः कृशः २४

हेराजन् जो पुरुष कृशाश्व है स्वल्प घोडेवालाहै जिस की स्वल्पगोधनहै सो कृशगवहै जिसके स्वल्पभृत्यहै सो कृशभृत्यहै जिसके अतिथियाचक स्वल्पलोकहै सो कृशातिथिहै ऐसे पुरुषको सबलोक कृशमानते है जो शरीरसे कृशहै उसको कृशनही मानते २४

अवेक्षस्व यथान्यायं पश्यदेवासुरं यथा
राजन् किमन्यत् ज्ञातीनां वधाद्दृश्यति देवताः २५

आप यथायोग्य दृष्टांत न्यायकर्के विचारो जैसे देवासुर न्यायको देखो देवता जोहै सो अपने ज्ञातिबांधवोके वधविनाकहा राज्यवृद्धिको प्राप्तभयेहै २५

नचेद्धर्तव्य मन्यस्य कथंतद्धर्म माचरेत् एतावा
नेव वेदेषु निश्चयः कविभिः कृतः २६

जो किसीको नहि हिंसा करणी सो वेदधर्मको कैसे आचरणकरने वेदोविषे यज्ञादिकर्मधर्मका हिंसा मा नही आचार कविलोकोंने प्रमाणकियाहै २६

अधीतव्यात्रयीनित्यं भवितव्यं विपश्चिता सर्व
थाधनमाहार्यं यष्टव्यं चापियत्नतः २७

धर्म अर्थ कामको सिद्धकरणेहारी वेदत्रयी अव अध्य यन करणे योग्यहै उसके साधन सामग्री के उपाय करणेको चतुरता करणे योग्यहै उसके वास्ते सर्व प्रकारसे धनसंग्रह करणे योग्यहै बहोड धनकर्के यज्ञकर्तव्यहै २७॥

द्रोहादेवैरवाप्तानि दिविस्थानानिसर्वशः
द्रोहात्किमन्यत् ज्ञातीनां गृध्यंते येनदेवताः २८

द्रोहात्किमन्यत् ज्ञातीनां असुरोके द्रोहसे स्वर्गमो सबही स्था देवतालोकोने अपने बंधुजनोसे इतर और क्या किया नपाईहै और अपने बंधुजनोसे इतर और क्या किया है जिसकर्के देवता वृद्धिको प्राप्तभयेहै २८

इतिदेवा व्यवसिता वेदवादाश्चशाश्वता:

अधीयंते धापयंते यजंते याजयंतिच २९

इसप्रकार देवता असुरोके द्रोहको सदाउद्यम करतेहै वेदवादभी इसीप्रकारसदासिद्ध वनीहै इसी वासते वेदशास्त्रोको पढतेहै और पढावतेभी है द्रोहवासते यज्ञकरतेहै और याजनभी करावतेहै २९

क्षान्ते नदेव तच्छ्रेयो यदस्माद धतेन्यतः नपश्यामो ऽन्यपक्षते धनं किंचि त्क्वचिद्वयं ३०

सर्वप्रकारका सर्वप्रयत्नसे सर्वत्र हमने सर्वकल्याण देखाहै जो अन्यजातीसे अन्यपुरुषसे जो कछुधनमात्र ग्रहणकरता ऐसा धनका उपायनही देखा जिसमो प रकेप्रीति हानि अपकार जिसमो नहीहै ३०

एवमेवहि राजानो जयंति पृथिवीमिमाम् जित्वा ममेयं ब्रुवते पुत्राइव पितुर्धनम् ३१ ॥

इसीप्रकार राजालोक परधनके हरणवासते पृथिवी को दिगविजय करतेहै परभूमिको हरकर्के कहतेहै हमने यहभूमिजीतीहै इसविषे अपने पिताके धनस मान अपनी ममता करतेहै ३१

राजर्षयोऽपि तेस्वर्गा धर्मोह्येषां निरुच्यते यथैव पूर्णादुदधेः स्यंदंत्यापो दिशोदश ३२

इसप्रकार पृथिवीके जयवाले राजास्वर्गको प्राप्तभ येहै यही धर्ममार्गका अर्थकहाहै इसी कर्मसे स र्वत्र धर्मकर्म प्रवृत्तहोतेहै जैसे पूर्णसमुद्रसे दश दिशाको जलसमूह जातेहैं ३२

एवं राजकुलात्वित्तं पृथिवींप्रति तिष्ठति आसीदिदं दिलीपस्य नृगस्य नहुषस्यच ३३

ऐसे विजयरूपी धर्मकर्के राजकुलसे पृथिवीको प्र तिष्ठा करतेहै इसीप्रकार राजा दिलीपको धनभया है नृगराजाके धनभयाहै नहुषराजाके धनभयाहै ३३

इसी प्रकारसे अंबरीष राजाके धनभयाहे और मांधाता केभी इसी प्रकार धनभयाहे सोई पृथिवी शत्रुजयक र्के तोको प्राप्तभईहे सोई यह पृथिवीरूप द्रव्यमय य ज्ञ तोको प्राप्तभयाहे केसाहे सर्वप्रकार द्रव्यदक्षिणा इसको फलहे २४ ॥

अंबरीषस्य मान्धातुः पृथिवी सात्वयिक्षिता सतांद्रव्यमयो यज्ञः संप्राप्तः सर्वदक्षिणः २४ ते चेन्न यजसे राजन् न्याप्तस्त्वं राज किल्बिषं २५

हेराजन् इसका पालनरूपी यज्ञको तूं नहीकरे तो इसविषे रक्षाविना जो पापकर्म होवेगा उसका दो षतोको होवेगा २५ ॥

येषां राजाश्वमेधेन यजते दक्षिणावता उपे त्य तस्यावभृथं पूताः सर्वे भवंतिते २६

जिसपृथिवीका राजा प्रजासे धनलेकर अश्वमेधक र्के यज्ञकरताहे सभही सो प्रजालोक यज्ञांतस्ना न विषे अपने अपने धनार्जन दोषसे पवित्र होतेहे २६

विश्वरूपो महादेवः सर्वमेधे महामखे जुहा व सर्वभूतानि तथैवात्मान मात्मना २७

विश्वरूपकर्के सत्यमहादेव ब्राह्मण भयाहे सो सर्व प्राणी वधवाले सर्वमेध यज्ञकरताभया उसयज्ञ विषे सर्वप्राणिवधविषे ब्राह्मणवधभी करता भया पश्चात् अपने शरीरकोभी होमकरता भया सो ब्राह्मण हत्याको और आत्महत्या दोषको तरगया हे तो शत्रुवधकर्के वियका द्रव्यहरणेसे तोको क्या दोष भारी होताहे २७

शाश्वतोयं भूतिपथो नास्यांतम नुशुश्रुम म हान्दाशरथः पंथा माराजन् कुपथंगतः २८

हे राजन् यह यज्ञादि धर्म कर्मका मार्ग सनातन व

29

नाहे कैसाहे दाशरथहे इसके दश अंगहे एकतो य
ज्ञका पशुहे १ एक यजमान २ यजमानकी पत्नी ३
तीनवेद ४ ऋत्विज १० द्रव्यसंपदाकी उपार्जना उ
सकासुख मार्गहे इसके सुणके अंतको हमनही
श्रवणाकरती ऐसे यज्ञकर्मकर्के सर्वपापोके दोषकी
शांति होतीहे इसको त्यागकरके तमवनवासवास्ते
सर्वत्यागरूपी कुमार्गको मतसेवनकरो ७

इति राजधर्मे अर्जुनवाक्यमष्टमोध्यायः ८ ॥

युधिष्ठिरउवाच मुहूर्तंतावदेकाग्रो मनःश्रोत्रे
तरात्मनि धारयस्वतिततश्रुत्वा रोचेत वचनं मम १

हे अर्जुन तं एक मुहूर्तमात्र प्रथम एकाग्रस्थितिकर
मनको श्रोर श्रोत्र इंद्रियोको अपने अंतरीय आत्मा
विषे विचारवास्ते स्थितकर्के मेरे वचनको धारण
कर जवतोको अंतर्मुख दृष्टिहोवेगी तबहमारारु
चिकरेगा अंतर्मुखकोही निष्कर्ममार्गरुचिकरताहे
बहिर्मुखको नहीप्रीतिकरता १॥

साधुगम्यमहं मार्गं नजातु त्वत्कृते पुनः ॥
गच्छेयंतं गमिष्यामि हित्वाग्राम्य सुखान्युत २

साधुजनोको जो गंतव्यमार्गहे इसको त्यागकर्के त
मारे कहे वचनवासते राज्यभोगके मार्गमे मे न
हीजाता राज्यभोगके इंद्रियसुखोको त्यागकर्के
मे वनको नही जावोगा २

क्षेम्यश्चैकाकिनागम्यः पंथाःकोस्तीतिपृच्छमां
अथवानेच्छसिप्रष्टु मपृच्छन्नपि मे शृणु ३

हे अर्जुन जोतोको मेरावचन श्रवणाकरणेकी वांछा
हे तो मोको ऐसी इच्छाकर एकाकी पुरुषने कोन॥
सामार्ग गंतव्यताको प्राप्तहे जो तं मोको अश्रद्धा
कर्के बहिर्मुखतासे इच्छाकरता तो तेरे वचनके उ

नरवासने मे आपकहताऊं उसको श्रवणकर र

हित्वा ग्राम्य सुखाचारं तप्यमानो महत्तपः अर
ण्ये फलमूलाशी चरिष्यामि मृगैः सह ४

मेतो ग्राम्य भोगोके सुखाचारको त्यागकरके महातप
करताऊं और वनके फलमूल भोजनकरके मृगोके
साथ विचारोंगा ४

जुह्वानो ग्निं यथाकाल मुभौ कालावुपस्पृशन्
कृशः परिमिताहारः चर्म चीर जटाधरः ५

अग्निहोत्रके समयमों अग्निकों होमकरताऊं प्रातःकाल
सायंकालमों स्नानकरोंगा तपकरके कृशशरीरकरके
स्वल्पआहारकरताऊं मृगचर्म भूर्जपत्रके वस्त्र जटाधा
रणकरोंगा ५ ॥

शीतवाता तपसहः क्षुत्पिपासा श्रमक्षमः
तपसा विधिदृष्टेन शरीर मुपशोषयन् ६

शीत वात घामको सहारण हारा और क्षुधापिपासा
के श्रमको सहारोंगा विधीसे कहे तपकरके शरीरको
शोसकरताऊं ६

मनःकर्णसुखानित्यं शृण्वन्रम्यावनागिरः
मुदितानां मरण्येषु वसतां मृगपक्षिणाम् ७

और वनचारी मुनिजनोकी कथाहै सुत्तविस्तारवाली
यों मनको कर्णको सुखकरणोहारी उनको श्रवण
करताऊंआ नानारूपधारी मृगपक्षियोके मधुर आ
लापोकोभी श्रवणकरोंगा ७

आजिघ्रन् पेशलान् गंधान् फुल्लानां वृक्षवीरुधां
नानारूपान् वनेपश्यन् रमणीयान् वनौकसः

और वनके जो वृक्षबूटाहै सो प्रफुल्लितभयेहै तिन्कों
के मंद सुगंधहै तिन्कोको सेवताऊंआ नानारूपधा
री वनवासी वानप्रस्थ लोक तिन्कोकोभी देखताऊं ८

श्री॰
रा॰ ५
टी॰
३॰

30

वानप्रस्थजनस्यापि दर्शने ऽकुलवासिनो ॥
नप्रियाण्याचरिष्यामि किंपुनर्ग्रामवासिनो ९
वानप्रस्थ जो वनवासि जनहै तिन्हके दर्शनको क
रताहुं बहोड उन्हके अप्रियनहीं करता तो ग्रामवासी
जनोका अशुभ कैसी करेगा ९
एकांतशीली विचरन् पक्वापक्वेन वर्तनं पि
तॄन् देवांश्च वन्येन वार्भि रद्भिश्च तर्पयन् १०
अथवा मे इकेलाहि एक एक वृक्षके तले एक एक
रात्र सेवनकर्कै फल मूलादि पक्व अथवा अपक्व
उसकर्कै देहपाषण करोगा पितरोको देवगणोको
वाणी यज्ञकर्कै जलादि तर्पण रूमकरेगा १०
एवमारण्य शास्त्राणा मुग्र मुग्रतरं विधिम् से
वमानः प्रतीक्षिष्ये देहस्यास्य समापनं ११
इसप्रकार अरण्यवासकी शास्त्रोकी अतिउग्रविधिको
सेवनकरके इसदेहकी समाप्तीहै उसको देखलेवों
गा ॥ ११ ॥
अथवा सोह मेकाह मेकैकस्मि न्वनस्पतौ
चरन्भैक्ष्यं मुनिर्मुंडः क्षपयिष्ये कलेवरम् ११
अथवा मे एकाकी होकर एक एक वृक्षविषे भिक्षाद्व
तिकरतामया मौनधारी मुंडितहोकर देहकी का
लक्षेपन करोगा १२
पांसुभिः समभिच्छन्नः शून्यागार प्रतिश्रयः
वृक्षमूल निकेतोवा त्यक्तसर्व प्रियाप्रियः १३
अथवा भूमिशायाकी बहुनधूलीकर्कै लिपटाहुआ शू
न्यमंदिरके आश्रयकरोगा अथवा वृक्षमूलविषे वा
सकरोगा सर्वकालविषे सभके प्रिय अप्रियको त्या
ग करोगा १३ ॥
नशोचन्नप्रहृष्यंश्च नलभ्यनिंदात्म संस्तुतिः
निराशी निर्ममोभूत्वा निर्द्वंद्वो निष्परिग्रहः १४

नमे शोचकरेगा नहर्षकरेगा निराश निर्मम होकर नि
र्द्वंद्व और निस्पृह होकर काललेपना करेगा १४
आत्मारामः प्रसन्नात्मा जडान्ध बधिराकृतिः अ
कुर्वाणः परैः कांश्चि त्संविदं जातकैरपि। १५
आत्मविचार विषे रममाण होवेगा
बहोउ आत्म योगकर्के आत्मविचार विषे रममाण होवेगा
गा सदाप्रसन्न चित्तहोकर जडोकी अंधोकी बहरेकी
तुल्यरूपताको करेगा किसी निमित्तकर्के किसेकी
साथभी गोष्ठीनही करेगा किसीका कोई कार्यभीको
नहीकरेगा १५
जंगमाःजंगमान्सर्वा नविहिंसे श्चतुर्विधान्
प्रजाः सर्वाः स्वधर्मस्थाः समः प्राणभृतः प्रति १६
स्थावर जंगमयेते चतुर्विध प्रजासो अपने स्वभावके
धर्मविषे स्थितप्राणधारी प्रजाहे तिह्नको समदृष्टि करते
धोगा १६
नचाप्यवहसन्केंचि न्नकुर्वन् भृकुटीःक्वचित्
प्रसन्नवदनो नित्यं सर्वेंद्रियसुसंयतः १७
ना किसेविषे हास्यकरेगा नकोपकर्के भृकुटीसवेही
वेगा सदाप्रसन्न वदनताकर सर्वइंद्रोके संयम संयुक्त
रहोगा १७
अपृच्छन् कस्यचिन्मार्गं प्रव्रजन्नेव केनचित्
नदेशं नदिशं कांश्चि ज्जंतु मिच्छन्विशेषतः १८
किसीको किसी मार्गप्रश्नको नही करेगा येनकेन
मार्गकर्के अटन करेगा न किसी देशको न किसीदि
शाको गमनेच्छा करेगा विशेष इच्छा कही नही करेगा
गमने निरपेक्षस्य पश्चादनव लोकयन्
आस्तेः प्राणिहितोगच्छे त्त्रसस्थावर वंजकः १९
भयरहित होकर भयादि रहित सूक्ष्मशरीरकी
निरपेतनही गमनकरेगा पश्चात् दृष्टि नकरेगा सूधेमा
गेही अंतर्मुख होकर भयादि रहित सूक्ष्मशरीरकी
अवस्था करेगा और शारीरकी चेष्टाको विस्मरणकर्के
अहंता ममता शून्य होवेगा॥ १९

१०

श्री॰
म॰पं॰
टी॰
२१

अल्पंवा स्वादुभोज्यंवा पूर्वलाभेन जातवित्
अन्येष्वपि चरे ल्लाभ मलाभे समपूरयन् २१
हे अर्जुन स्वल्पहोवे बहोतहोवे स्वादिष्टहोवेवा नही
स्वादिष्टहोवे पूर्वले गृहस्थ गृहमो जैसा प्राप्तहोवे भो
ज्यपदार्थ उसके कर्के देह पोषण मैं करोंगा जो पूर्वले
गृहमों नहि मिलातो अवर गृहविषे विचरोगा जोकदा
चितनही प्राप्तभयातो शमसंतोषकर्के उदरपूरणाकरोंगा
विधूमेन्यस्तमुसले अंगारे भुक्तवज्जने अतीतपात्र
संचारे कालेविगत भिक्षुके ॥ २२ ॥
अबभिक्षा कालके निश्चयको कहतेहे जब गृहस्थोंका ।
गृह पाक शालाके धूमरहित होवेगा और उखल मुशल
को अन्नको स्वधारके त्यागदेवेगे पाकाग्निके अंगारभी
शांतहोजावेगा गृहवासी जन भोजन करलेवेंगे और पा
कपात्रोका संचारग्रहण त्यागसे रहित होजावेगा २२
एककाले चरन्भैक्ष्यं त्रीनथ द्वेच पंचवा स्वहापा
णं विमुच्याहं चरिष्यामि महीमिमाम् २३
और भिक्षुलोकभी भिक्षालेजावेगे उसकालविषे एक
ग्रास तीनग्रास अथवा पंचग्रास पर्यंत भिक्षाकरोगा सर्व
प्रकारकी तृष्णात्यागकर्के इसपृथिवीका पर्यटन करोगा
अलाभे सतिवालाभे समदर्शी महातपाः नजि
जीविषु र्वर्किंचि न्नमुमूर्षु र्वदाचरन् २४
भिक्षाके लाभविषे अथवा अलाभविषे दाता अदाता जन
विषे समदर्शी मनका संयमरूपी महातप करोगा
नजीवनकी इच्छाकरोगा मरणकी इच्छारहित जैसे आचा
रको करोगा २४
जीविते मरणे चैव नाभिनंद न्नच द्विषन् वासै
कं तक्षतो बाहुं चंदने नैक मुक्षतः २५
जीविनेको मरणेको नस्तुति करोगा न निंदाकरोगा
एकभुजाको तक्षाजो काष्टछेदनेहारा उसकर्के छेदा
जावे एकभुजाके चंदनकर्के सिंचनकरे तो भयभा

२१

क आनंद हर्षरहित होताहूं २५

नाकल्याणं नकल्याणं चिंतयन्नुभयोस्तयोः याः
काश्चिज्जीविताशक्याः कर्तुमभ्युदयक्रियाः २६

न अकल्याणको त्यागना कल्याणकी वांछा दोनोकी
चिंतन रहित होताहूं जो जीवनेकी उत्सवक्रिया कर्त
व्यतामो शक्यहै उनके संगको त्याग करताहूं २६

सर्वांस्ताः संपरित्यज्य निमेषादि व्यवस्थिताः २७

सर्वप्रकारकी जेती क्रियाहै तिन्हको त्यागकरके ह
र्षशोक लाभ अलाभादि सर्वकलनादि अवस्थाको त्या
ग करताहूं २७ ॥

तेषु नित्य मसक्तस्य त्यक्तसर्वेंद्रियक्रियः अ
परित्यक्त संकल्पः मुनिर्मुक्तात्म कल्मषः २८

जेते खानपानादि संकल्प विकल्पहै जिन्होविषे शरीर
निर्वाहमात्र कर्मविषे स्थितभया और सर्वप्रकारकी
क्रियाविषे असंग और सकल इंद्रियोंके क्रियाके प्रसंग
को त्यागकर्के बहोड मनको इंद्रियोंकी वृत्तिमो संक
ल्प रहित करताहूं मुनिहोकर सर्वप्रकारका वास
नारूपी पापजिसने हरकियाहै २८

विमुक्तः सर्वसंगेभ्यो व्यतीतः सर्वरागतः
नवशः कस्यचित्तिष्ठन्सधर्मो मातरिश्वनः २९

सर्वप्रकारके पापकर्मोसे विमुक्त होताहूं और प्रकार
की स्नेह शृंखला जिसकी वितीत भईहै इसप्रकारकी
किसीकाभी वशवर्ती नही होता पवनके समान स
भसे असंग और सर्वगतहै २९

वीतरागस्चरन्नेवं तुष्टिं प्राप्स्यामि शाश्वतीम
तस्माद्याहि महत्पाप मज्ञानादस्मिकारितः ३०

परम उत्तम अ
वीतराग होकर लोकविषे विचारताहूं
खंड तुष्टिको प्राप्तहोताहूं यह ऐसा महापाप मूल
है इसने जो मेरे पापकरवायाहै सो अज्ञानसे पापकर्म

श्री
रा॰य॰
टी॰
३२

विषे मोको जो प्रवृत्त कियाहै ३०

कुशलाकुशलान्येके कृत्वाकर्माणि मानवाः
कार्यकारणसंश्लिष्टं स्वजनं नाम बिभ्रति ३१

हे अर्जुन एकप्रकारके जो मूढलोकहैं कुशलक
र्मको अकुशल कर्मको करके जिन्होने अपने सुख
वासते स्नेहकियाहै पराये सुखवास्ते नहि स्नेहकि
या स्त्री पुत्रादि अपने संबंधी जनोको पोषण पालन
वासते यतन करतेहैं स्त्री पुत्रादि जो प्रेम करतेहै
अपनेसुखवासते करतेहै भर्तादिकोके सुखवासते
नहि करते ३१ ॥

आयुषोंते प्रहायेदं क्षीणप्राणं कलेवरम्
प्रतिगृह्णाति तत्पापं कर्तुःकर्मफलेहितत्

जब इसप्राणीकी आयुषाका अंतहोताहै तब यह
प्राणी प्राणशक्तिकी क्षीणतावाले कलेवरको त्याग
करके स्त्री पुत्रादि पोषणवासते पापकियाहै उसको
पापकर्ताही ग्रहण करताहै उसीको पापकर्मोका
फलहोताहै ३२

एवंसंसार चक्रेस्मिन्व्याविद्धे रथचक्रवत् ॥
समेति भूतग्रामोयं भूतग्रामेण कार्यवान् ३३

इस प्रकार इस संसार चक्रविषे रथचक्रकीन्याई स
र्वप्राणी गणजोहै कर्मजाल मोहजालकर्के बांधाहै
सोसमर्थई भूतग्राम अपनी कार्यवालाहै ३३

जन्ममृत्यु जराव्याधि वेदनाभि रभिद्रुतम् अपा
र मिवचास्वस्थे संसारे त्यजतः सुखम् ३४

जन्ममृत्यु जराव्याधिके उपद्रव वालाहै इससंसारवि
षे दुःखकी व्याकुलता अपार बनीहै इसको त्याग
करणेहारीको परम सुखहोताहै ३४

दिवःपतत्सदेवेषु स्थानेभ्यश्च महर्षिषु कोटि

नाम भवेन्नार्थी भवेत्कारण तत्त्ववित् २४
इसीप्रकारका स्वर्गविषेहे पुण्यकारी भूतोके शरीरभी
स्वर्गभोगके अंतमो स्वर्गसे पडतेहे और महाऋषि
भी ऋषिलोकसे तपस्याके फलके अंतमो पडजाते
हे ताते विचारवान् कौन पुरुषहे उनका अर्थनही
होवे यो विचारभोग पदार्थोका अर्थकोई नहीहोवे
येनकेन प्रकारेण कार्यकारणताके तत्त्वविचारवान्
होवे २४
कृत्वाहि विविधं कर्म तत्तद्विविध लक्षणम्
पार्थिवै र्नृपतिः स्वल्पैः कारणै रेव बध्यते २५
हे अर्जुन जो पृथिवी महाराजहे सोभी क्षुद्रराजा लो
कोने सामदानादि नानाप्रकारके कपटकर्मकर्के
बांधाजाताहे महाराजाने कनिष्ठराजा लोकोका
अवमानादिक कियाहे सोसभही निकृष्टराजालो
क मिलकर्के इकेले महाराजको पकडलेनेहे पि
पीलिका सर्पन्याय जैसा होइ बनजाताहे २५
तस्मा त्प्रज्ञामृत मिदं चिरांमो प्रत्युपस्थितम्
तत्प्राप्य प्रार्थये स्थान मव्ययं शाश्वतंध्रुवं २६
ताते यह विचाररूपी अमृतमोको चिरकालसे
प्राप्तभयाहे इसको पाइकर्के अव्यय अखंड सदा
वर्तमान ऐसे मोक्षस्थानकी वांछाकरताऊं २६
इतया सततं धृत्वा चरन्नेवं प्रकारया जन्म
मृत्यु जराव्याधि वेदनाभि रभिद्रुतम् २७
देहं संस्थापयिष्यामि निर्भयं मार्गमास्थितः
विचारकर्के ऐसे मोक्षस्थानको धैर्यमोको प्राप्तभया
हे इसकर्के सर्वत्यागकरमे विचरताऊं इसकर्के
जन्ममृत्यु जरा व्याधि पीडासे रहित मार्गको पा
इकर दृढस्थितिकर्के देहको आयुषाकी समाप्ति
मों त्यागकरताऊं २७ ॥ इतिश्री महाभारते शां

तिपर्वणि राजधर्मे युधिष्ठिरवाक्यं नाम नवमोध्यायः

भीमसेनउवाच श्रोत्रियस्येव तेराजन् मंदकस्या विपश्चितः अनुवाक हताबुद्धि नैषातत्वार्थदर्शिनी ॥ १

भीमसेनउवाच हेराजन् तेरीबुद्धिकैसीहै वेदपाटी श्रोत्रियकी बुद्धिके समानहै वेदपाठीको अर्थज्ञान नहीहोता ताते मंदबुद्धि होताहै अर्थज्ञानविना केवल मंत्रपाठके अनुवाक विभागज्ञानताहै तत्वविचार विना जैसी उसकी बुद्धि नष्टहोतीहै तैसी तेरी बुद्धिभी नष्टभई जैसीहै १

आलस्ये कृतचित्तस्य राजधर्मान सूयतः विनाशेधार्तराष्ट्राणां किंफलं भरतर्षभ २

तेने आलस्यविषेही चित्तको सदानिपुणकियाहै परमार्थमो प्रवृत्तनही किया जोनसा तूं राजधर्मको अनादर करताहै तो धृतराष्ट्रके पुत्रोको विनाशका क्या फल हमको बताहै २

क्षमानुकंपा कारुण्य मानृशंस्यं नविद्यते क्षात्रमा चरतो मार्ग मपिबंधो स्त्वदंतरे ३

हे राजन् क्षमाजोहै अपराध सहारणा अनुकंपा जोहै परदुःखनिवृत्तिवांछा कारुण्यजोहै परदुःखदर्शनमो मनकी दीनता आनृशंस्य जोहै अक्रूरता यहचारो क्षत्रधर्मके आचरणमो अपने बंधुके प्रतिभी तुमसे भिन्न और किसीमो नहीहै ३

यदीमां भवतो बुद्धि विद्याम वयमीदृशाम् शस्त्रंनैव ग्रहीष्यामो नवधिष्यामि कंचन ४

जो हम तुमारी इसप्रकारकी बुद्धिको प्रथम जानते ते तो हाथमो शस्त्रको ग्रहणनहि करते और किसीकोभी नही रणमो मारते ४

भैक्ष्यमेवा चरिष्यामः शरीरस्या विमोक्षणात् नचेदं दारुणं युद्ध मभविष्यत् महीक्षितां ५

शरीरके प्राणमोक्षपर्यंत भिक्षावरणही करते और ऐसा
सर्वक्षयकारी शुद्रराजा लोकोंका नहीहोता ५
प्राणस्यान्न मिदं सर्व मितिवैकवयो विदुः
स्थावरं जंगमं चैव सर्वं प्राणस्य भोजनम् ६
हे राजन् क्षत्रधर्मके निश्चयवाले कविजनोका यहमत
प्रमाणहै जो बलवान् प्राणधारीहै उसको संपूर्णपृ
थिवी अन्नके समान भोजनरूपहै वीरभोग्या वसुंधरा
ऐसे स्मृतिवाक्यसे स्थावर जंगम जो पदार्थहै सो स
भही बलधारी प्राणीका भोक्तव्य भोजन बनाहै ६
आददानस्य चेद्राज्यं येकेचित्परिपंथिनः
हंतव्यास्त इतिप्राज्ञा क्षत्रधर्म विदो विदुः ७
जो राजा अपने राज्यको ग्रहणकरणेकी वांछाकरताहै
उसके जो जो राज्यापहारी शत्रुहोवे सोउसने सर्वप्रका
रसे हंतव्यहै यह सिद्धांतहै इसको चतुरजो क्षत्रधर्म
के सो जानतेहै ७ ॥
ते सदोषा हताऽस्माभी राज्यस्य परिपंथिनः
तान्हत्वा भुंक्ष्व धर्मेण युधिष्ठिर महीमिमां ८
ताते धृतराष्ट्रके पुत्र हमारे राज्यपहाररूप महादोष
संयुक्तहै महाशत्रुहै उनको मारकर्के अपने धर्म
कर्के हे युधिष्ठिर इसपृथिवीको तुम निःशंक होक
र भोग ८ ॥
यथाहि पुरुषः खात्वा कूपमप्राप्य चोदकं
पंकदिग्धो निवर्तेत कर्मेदं नस्तथोपमं ९
जैसे कोई पुरुष जलकेवासते कूआ खोदकर्के जलकी
प्राप्तिविना पंकसे लिपटकर बहोड जलपानके उ
द्यमसे निवृत्त होजावे तैसा त्यागरूपी तेरायहकर्म
बनाहै ९ ॥ मपहृत्य ततोमधु अप्रा
यथाकृत्य महावृक्ष

पुप निधनं गच्छे त्कर्मेदं नतथोपमम् १०
जैसे कोई पुरुष फलभोजनकी वांछाकर्के महावृक्ष
को आरोहणकर्के उसवृक्षसे मधुग्रहणकर्के पश्चा
त् आपही मरजावे तैसा मेरा यह त्यागरूपी क
र्मखोटाहै १०

यथा महांतम ध्वानं माशया पुरुषो व्रजन्
सनिराशो निवर्तेत कर्मेदं नः तथोपमम् ११
जैसी पुरुषधनकी आशाकर्के महाकठिन मार्गको
जाताहै धनप्राप्ति कालमो आपहि निराशहोकर्के
निवृत्तहोजावे तैसा तेरा यह कर्तव्यबनाहै ११

यथा शत्रून् घातयित्वा पुरुषः कुरुनंदन आ
त्मानं घातयेत्पश्चा त्कर्मेदं न स्तथोपमम् १२
जैसे क्षुधापीडित पुरुष यत्नकर्के अन्नको प्राप्तहोकर
अपने मूढतासे भोजननहीकरे और जैसी कामीपुरु
ष सुंदर युवती स्त्रीको प्राप्तहोकर नहीभोगे
तैसे यह तेरा निश्चयबनाहै १२

यथान्नं क्षुधितो लब्ध्वा नभुंजीया यदृच्छया का
मीच कामिनीं लब्ध्वा कर्मेदं नस्तथोचितम् १३
हे राजन् इहां तेरा दोस नहीहै तुह्मारा ऐसा स्वभाव
पूर्वसे बनाहै दोषइहां हमाराहै हमही निंदायोग्यहै
जो ऐसे मंदबुद्धि तेरेको अपना ज्येष्ठ भ्राताको राजा
मानकर तेरे आज्ञाकारी होतीहै १३॥

वयमेवात्र गर्ह्याहि यद्वयं मंद चेतसं त्वांराज
न्ननुगच्छामो ज्येष्ठाय मिति भारत १४
हमतो अतिबाहुबल संयुक्तहै और शास्त्रवियाकेअ
भ्यासकरणेहारेहै और सर्वपृथिवीके जयकी मनसा
वालीहै कायर जैसे तेरे जैसे राज्याके वाक्यमो निष्ठा
करनेहै जैसी आपभी अशक्तपुरुष असक्त राजाके
वाक्यको प्रमाणकरनाहै १४

अगतीक गतीनस्मा न्नष्टार्थान र्थसिद्धये कथं
वै नानु पश्येयु र्जनाः पश्यत याहशम् १५
हेजना हेलोका हमकेसीहे अगती जो लोकहे अनाथ
तिह्नाके गतीवनेहे रक्षाकरणे हारेहे अनाथ रक्षाक
रताहे अर्थ सिद्धिवासते यतन करणेहारी और देवगा
तीकर्के इस राजाकी कायरतासे नष्टार्थ भयेहे जेसे
हम नष्टार्थ भयेहे ऐसे कायरस्वामीवाले पराक्रमी
जनोको नष्टार्थकोनही देखते ताते जो बलवानसम
र्थ पुरुषहोवे तिह्नोने स्वार्थसिद्धिवासते अवश्य यतन
कर्तव्यहे १५ ॥

अगतीकगतीनस्मा न्नष्टार्थान र्थ सिद्धये
आपत्कालेहि संन्यासः कर्तव्य इतिशिष्यते
जरयाभि परीतेन शत्रुभि र्व्यंसितेनच १६
यह हमारा राजा संन्यास ग्रहणकी वांछाकरताहे सं
न्यासतो अपने यतनकी हानिवाले आपत्कालमो क
र्तव्यहे अथवा जराजर्जर वृद्धपुरुषको आतुर संन्यास
कर्तव्यहे १६ ॥

तस्मादिह कृतप्रज्ञा स्त्यागं न परिचक्षते
धर्मव्यतिक्रमंचैव मन्यंते सूक्ष्मदर्शिनः १७
जोनसा पुरुष शत्रुपीडाकर्के अशक्तहे उसने अपनी
असामर्थ्यमो कपटाचरणसे संन्यासकर्तव्यहे वास्तव
संन्यास राजधर्मविषेनही कर्तव्यहे १७

कथं तस्मात्समुत्पन्ना स्तन्निष्ठास्तदुपाश्रयाः तदे
व निंदां भाषेयु र्धाता तत्र न दृश्यते १८
ताते जो कुशलबुद्धि राजाहे तिह्नको संन्यासनहीकहा
हे राजाके संन्यासकर्के धर्मका उलट पलट होताहे
इसी हेतुसे संन्यासधर्म ब्राह्मणोकी मुख्यहे याते श
मदमादि धर्म ब्राह्मणकोहे क्षत्रीको वेश्यादिकोको

श्री
रा.यं.
टी.
२५

स्वरनादि कृष्णादि अपना धर्महै ताते तन्त्री वैश्यादिकोंको संन्यासरूपविहलव बनता धर्मनहीहै यह सूक्ष्मविचारवा ले पंडितोंका मतहै १८

क्रिया विहीने वधने नास्तिकं संप्रकीर्तितम्
वेदवादस्य विज्ञानं सत्याभास मिवान्ततम् २०

हे राजन् तूं हिंसारूपी अपने धर्मको क्यों निंदाकरताहै हमतो हिंसाप्रधान क्षत्रधर्मसे उत्पन्नभयेहै हिंसाप्रधा नधर्मकी निष्ठावालेहै हिंसाप्रधान क्षत्रधर्म हमारा जीवनका आश्रयबनाहै उसकी निंदाको हमकैसे क हेंगे इसकी निंदायोग्य सृष्टिकर्ता विधाताहै उसकी निंदाक्यों नही करते १९॥ जो तूं कहे संन्यासधर्म हमको क्यों नही कर्तव्यहै जाबालि उपनिषत्विषे सं न्यासकहाहै इसी करके जडभरतादि राजलोकभी सं न्यासकरतेभये तो उत्तर कहतेहैं जो पुरुषधर्मार्थ कामसाधक त्रयी विद्यासे हीनहै और संपदाराज्यरही न अधम पुरुषहै सो नास्तिक जैसेहै तिन्होंने वेदवा दका विज्ञानमानाहै वेदविधिको अर्थवादकरके कहाहै यह ऐसा वादसत्यधर्मका अभासमात्रहै मिथ्यावादहीहै

२

शक्यंतु मौढ्यमा स्थाय विभ्रतात्मान मात्मना
धर्म छद्म समास्थाय च्यवितं नतुजीवितम् २१

जो तुमने कहाहै एकाकी ऋजुमार्ग करके हिंसादि र हित होकर वनविषे ऐसा अपना संन्यास धर्म कहा है सो तो जो पुरुष अपनेदेहको आपही पालनकरा ताहै निश्चल स्थिती करताहै सो तो धर्मत्यागकरके कपटयोगको करताहै केवल त्यागकरके किसीका देह धारण नही वनती उसका उत्सयोगकरके जी वन उपायविना शरीर नाशहोताहै २१

शक्यं पुनररण्येषु सुखमेकेन जीवितम्

अविज्ञाता पुत्रपौत्रा न्देवर्षीन तिथीन्पितॄन् २२

जो तुमने कहाहे एकाकी पुरुषवनविषें सुखकोजीव ताहे शरीरयात्रा स्वभावकर्के बालकेको स्तनपान प्रह त्तिसमान आपही वनजातीहे उत्तर सुनो एकाकी वनवि षे सो जीवे पुत्र पौत्रादि पालनरूपी अपने धर्मकर्के न करशके और देवताऋषि पितर और अतिथि जिससे न ही पाले जावे ऐसी स्थितिकर्के धर्मकर्मका लोपहोताहे

नेमे मृगाः स्वर्गजितो न वराहा न पक्षिणः अ न्यास्तेन प्रकारेण पुण्यमाहुर्नतेजनाः २३

जो वनवासकर्के स्वर्गादिगति होतीहे तो वनविषे मृग जोहे वराह जोहे पंछीभीहे इनको एकाकी वासक र्के क्यो नही स्वर्गादि गतिसिद्धहोवेगी २३

यदिसंन्यासतः सिद्धिं राजन्कश्चिद वाप्नुयात पर्वताश्च द्रुमाश्चैव क्षिप्रं सिद्धि मवाप्नुयुः २४

जो काष्ट मौन संन्यासकर्के मोक्षगति होतीहे तो पर्वत वृ क्षादिक काष्टमौनसमाधी वालीहे सो क्यो मोक्षसिद्धिको न ही पावते २४

एतेहि नित्यसंन्यासा दृश्यंते निरुपद्रवाः अपरि ग्रहवंतश्च सततं ब्रह्मचारिणः २५ ॥

हे राजन् पर्वत वृक्षादिक जोहे सो यह नित्यही संन्यास निष्ठावाले दृष्टहोतीहे और कामादि उपद्रवसे रहितहे और ग्रहणत्यागसेभी रहितहे सदाही ब्रह्मचारीहे मो क्षसिद्धि इनको क्यो नही होती २५

अथचेदात्मभाग्येषु नान्येषां सिद्धिमश्नुते तस्मा त्कर्मैव कर्तव्यं नास्ति सिद्धि रकर्मणः २६

अथवा आप ऐसा कहतेहो पशुवृक्षादि कर्मचेष्टा रहित हे पूर्वसंचित कर्मकर्के जडयोनि बनेहे मैतो चेतनसा क्षात्वालाऊं अपने त्यागरूप सर्वसंन्यास योगकर्के मोक्ष सिद्धिको प्राप्तहोताऊं उत्तरसुनो जो अपने पुरुषार्थका

२२

श्री॰
रा॰ध॰
टी॰
३६

वैं फलसिद्धि होतीहे तो अपना जातिधर्मका कर्महि कर्तव्य हे अकर्म पुरुषको मोक्षसिद्धि कदापि नहीहोती २९

ओदकाः स्थावराश्चैव जंतवः सिद्धि माप्नुयुः येषां मात्मैवभर्तव्यो नान्यः कश्चनविद्यते ॥ २७ ॥

जो तुम कहतेहो मुमुक्षु लोकोंको अपनीहे सो एकाकी पुरुषको बनजातीहे उत्तर सुनो जलवासी मीनमछी। आदिकजीवभी अपनी शरीर पोषण करतेहे सोभी मुक्तहो जावे इनकोभी अपने शरीरसे ओर किसीको पालनानही कर्तव्यहे जैसे अपने शरीरयात्रावासते कर्मकर्तव्यहे तैसे लोकयात्रा वासतेभी कर्मकर्तव्यहे २७॥

अवेक्षस्व यथास्वैः स्वैः कर्मभि र्व्याहृतं जगत् तस्मा त्कर्मैव कर्तव्यं नास्ति सिद्धि रकर्मणः २८

यह तुम आपही विचारकरो जेता यह जगतविषे जीवजाती हे सो सभही अपने कर्मोकर्के सभही जगतविषे व्याप्तहे तो अपने जातिधर्मका कर्म अवश्य कर्तव्यहे अकर्म पुरुषा को कछुसिद्धनहीहोता २८ ॥

इति श्री महाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मे भीमवा क्यं दशमोध्यायः ॥ १० ॥ अर्जुनउवाच ॥

अत्रैवोदा हरंतीम मितिहासं पुरातनम् तापसैः सह संवादं शक्रस्य भरतर्षभ १ ॥

ओ वैशंपायनउवाच राजा युधिष्ठिरसंन्यासको श्रेष्ठमान ताहे भीमसेन गृहस्थधर्मको श्रेष्ठमानताहे इसविषेसं न्यास मतको श्रेष्ठमानकर अधिकारपूर्वक संन्यासकी अपेक्षाकर्के गृहस्थधर्मही श्रेष्ठहे ऐसी युक्तिकी कथा को अर्जुन कहताहे अर्जुनउवाच हे राजन् इस प्रसंग विषे एक पुरातन इतिहासको उदाहरणकहतेहे तपस्वी जनोंके साथ इंद्रका संवादभयाहे उसको श्र वणकरो कोई एक ब्राह्मणके बालक जब द्विज संस्कारको प्राप्तभई तबहे अपने गृहोंका त्यागकर्के वनको जातेभये केसेहे उनके मुखोविषे दाडी मुछके

ते मनही उगेहे मंदवैराग्य वालेहे उत्तम द्विज कुला
मे जनमेहे बहोउ गृहको नही जाना इसप्रकार
वनको जातेभये १ ॥
केचिद् गृहान् परित्यज्य वनम् आगमन् द्विजाः
अजात श्मश्रवो मंदाः कुलेजाताः प्रवव्रज्यः २
यह वनवासही हमारा धर्मेहे ऐसे जानकर्के ब्रह्मचा
री होतेभये भ्राता पितादिकोंको गृहमोही त्यागकर
जातेभये उन्हको देषकर यहवालकके अवही वन
वास योग्यनहीहे ऐसे जानकर इंद्र उन्होंके प्रतिकृपा
संयुक्त होताभया ३ ॥
धर्मोय मिति मन्वानाः समृद्धाः ब्रह्मचारिणः
त्यक्त्वा भ्रातृन्पितृंश्चैव तानिंद्रोन्वकृपायत ३
नानावभाषे भगवा न्पक्षी भूत्वा हिरण्मयः
सुदुष्करं मनुष्यैश्च यत्कृतं विघसाशिभिः ४
इंद्रजी सो स्वर्णपक्षी होकर उन्हको वचन कहताभया
मनुष्योका ग्रासजो अन्नभोजन सो जिन्होने त्यागकिया
हे शुसक तृण पत्रादिक भोजन करणा यह व्रतम
नुष्योको दुसकरहे यह व्रतधारण कियाहे ताते वि
घसाशी इन्हके नामसंज्ञा प्रसिद्धभईहे ४ ॥
पुण्यं भवति कर्मेदं प्रशस्तं चैव जीवितं सि
द्धार्थास्ते गतिंमुख्यां प्राप्ताधर्मे परायणाः ५
यह इन्हका व्रतकर्म पुण्यरूपहे इन्होंका जीवना अतिप्र
शस्तहे यह इस प्रकारके व्रतकर्के सिद्धार्थभईहे सो स
भही धर्मपरायण होकर मुख्य मुनि संज्ञावाली गतिको
प्राप्तभयेहे इसप्रकार इंद्रने स्तुतीकीनी तो तापस
ऋषिवचन कहतेभये ५
ऋषयऊचुः अहोवतायं शकुनि र्विघसाशा न्प्र
शंसति अस्मा न्नूनमयंप्रास्ति नूनंच विघसाशि
नः ६

श्री
रा. य.
टी.
३२

37

ऋषयऊचुः अहो आनंदभयाहे जो यह स्वर्णपत्नी विघ
साशी व्रतकरणेहारी हमको प्रशंसा करताहे इस आ
पही शुसक तृण पत्रादि भोजन करताहे हम आप
ही विघसाशी नामप्रसिद्ध कियाहे हमकोही यहप
ती स्तुतिकरताहे ६

शकुनिरुवाच नाहं युष्मान्प्रशंसामि पंकदिग्धा
न् रजस्वलान् उच्छिष्ट भोजिनो मंदा नवैवो वि
घसाशिनः ७ शकुनिरुवाच स्वर्णपति कहैता
भया हे द्विजामे तुमको स्तुतिप्रशंसा नहीकरता तु
मभावी कर्म दोषरूपी पंककर्के व्याप्तहो अज्ञान
की रजोगुणकर्के युक्तहो बहोउ तुम मृगकीटादि उ
च्छिष्ट शुसक तृणपत्रको भोजनकर्के अपने आपको
विघसाशी नामधारी बनेहो ७

ऋषयऊचुः इदं श्रेयः परमिति वयमेवा भ्युपा
स्महे शकुने ब्रूहि यच्छ्रेयो भृशंवै श्रद्दधामहे

ऋषयऊचुः हेपत्तिन् हमने इसी व्रतको परमकल्याण
जानकर उपासनकरतेहे जो हमारेको इसव्रतसे भिन्न
अवर कल्याणरूपहे उसको कहो हम तुम्हारे वचन
श्रवण करणेको अतिश्रद्धा करतेहे ८॥

शकुनिरुवाच इदं मो नाभिशं कधं विभज्यात्मा
न मात्मना ततोहं वः प्रवक्ष्यामि याथातथ्यं ।
हितंवचः ॥ ९ शकुनिरुवाच हे द्विजो तुत
म अपने अपने आत्माको अपनी कल्पनाकर्के विष
मभावकर्के नही शंकाकरो इसप्रकारके विषमता
आत्माविषे नहीकरो जो श्रवणकरणेवाला और आत्मा
हे वक्ता आत्मा औरहे शंका करणेहारा और आत्माहे
ऐसा भूतकल्पनानहीकरो तोमे तुम्हारे हितपथ्यवच
नको कहताऊं ९ ॥

ऋषयऊचुः शृणुमस्ते वचस्तात पंथानो वि

द्विजा स्तव नियोगे चैव धर्मात्मन् स्थातुमिच्छाम शासिनः १० ॥ ऋषयऊचुः ॥ हे धर्मरूप हे तात तूं हमारा हितकारीहै हमने और मार्गनही जाने तेरे उपदेशमो स्थितहोवणेको वांछा करतेहै तूं हमारेको उपदेशकरो १०

शौनकउवाच चतुष्पदां गोः प्रवरा लोहानां कांचनं वरं शब्दानां प्रवरो मंत्रो ब्राह्मणो द्विपदांवरः ११ शौनकउवाच हे द्विजो चार चरणोंवाले जीवों विषे गौ श्रेष्ठहै और सम्पूर्ण धातुविषे कांचन श्रेष्ठहै और शब्दशास्त्रों विषे मंत्रश्रेष्ठहै और दोपादोंवाले मनुष्योंविषे ब्राह्मणश्रेष्ठहै ११

मंत्रोयं जातकर्मादि ब्राह्मणस्य विधीयते जीवतोपि यथाकाले श्मशान निधनादिभिः १२ मंत्रब्राह्मण कैसे श्रेष्ठहै सो कहते यह मंत्र ब्राह्मणको जातकर्मादि संस्कार विधानको जीवते करताहै जबइसका कालपूर्णहोताहै तो श्मशान संस्कार और मृतक्रियाकोभी विधानको वेदमंत्र करताहै १२ ॥

कर्माणिवैदिकान्यस्य स्वर्ग्यः पंथाः कृतात्मनः कथंमे सर्वकर्माणि मंत्रसिद्धानि चक्रिरे १३ तातें ब्राह्मण शरीरको वैदिक कर्महै स्वर्गका मार्ग सर्वयज्ञोंविषे श्रेष्ठहै द्विजसंस्कारकरके सर्वयज्ञोंका अधिकार होताहै जो वैदिक कर्ममार्ग ब्राह्मणको स्वर्गमार्ग नही होवे तो हमारी पितृपितामहादिक जोहै सो मंत्रसिद्धजातकर्मादि संस्कारको क्यों करतेभये ऐसा आपही विचारकर्तव्यहै १३

आत्मानं दृढवादीति यथासिद्धिर्विहेपाते मार्गाः धर्मामासा ऋतव आदित्य शशितारकम् १४ यह पुरुष दृढनिश्चयवाला अपने आत्माको जैसे मार्गको प्राप्तकरे तैसी सिद्धिहोतीहै जिसदेवताकास्वरूप नि· माने सोई होतीहै जो अपनीको सांव शिवरूप नि·

श्री॰
रा॰ष॰
टी॰
३८

अथ करे तो शिवरूप होताहे जो वासुदेव रूप माने तो वासुदेवरूप होताहे इसको आत्मस्वरूपकी प्राप्तिवा सते तेनमार्गवेदमो कहेहे उनका स्वरूप कहतेहे माघादिमास शुक्लपक्षके अर्धमास और शिशिरादि उत्तरायनकी तीनऋतु इस उपासनाकर्के आदित्यलो ककी प्राप्ति होतीहे यहक्रमकर्के मुक्तिस्थानको प्रा प्तकरणेहारा ब्रह्मलोक प्राप्तिवाला प्रथममार्गहे और तैसेही श्रावणादि षट्मास कृष्णपक्षरूपी अर्धमा स वर्षादि तीनऋतु दक्षिणायन मार्गहे यह स्वर्गप्रा प्तिकरताहे लोगके अंतकालमो पुनर्जन्म करणेहा रा केवल कर्ममार्गहे और इन्द्रोसेउत्तम सद्यो मुक्तिवा ला तारकमार्गहे उसमो अध्यात्म आधिभौतिक ज्ञा न विचारकर्के होताहे उसविषे अविमुक्त क्षेत्रकी उपासना होतीहे जिसविषेरुद्रजी तारक ब्रह्मतत्त्व का उपदेश करतेहे तो एकजन्म कर्के मुक्तिहोतीहे जिसको पाइकर्के बहोडजन्मनहीहोता १४

ईहते सर्वभूतानि तदिदं कर्मसंज्ञितम् सि द्धिक्षेत्र मिदंप्राप्य मयमेवा श्रमो महान् १५

यह तीनमार्ग सूर्य चंद्रमा तारकनाम वालेहे स भही भूत इन्हकी सिद्धिको चाहतीहे तीनोही क र्ममार्गही कर्मफलकर्के कहेहे ताते कर्मके अधि कारकास्थान गृहस्थाश्रम कहाहे सिद्धिक्षेत्रहे सर्व प्रकारसे आश्रमोविषे श्रेष्ठहे और महा आश्रमे इसविषेही सर्व आश्रमोके उत्पत्तिहे १५

अपते कर्मनिंदातो मनुष्याः कापथंगताः ॥ मूढाना मर्थहीनानां तेषामेनत्त विद्यते १६

अथशुद्रकर्के अवर कहतेहे जो पुरुष कर्ममार्ग को निंदाकर्के सर्वत्यागरूपी खोटे मार्गको प्राप्तभ येहे सो मूढहे उन्होको कर्मफल रूपी अर्थसिद्धि नही होती केवल धर्मकर्म त्यागका पापही होताहे १५

देववंशा न्पितृवंशा ब्रह्मवंशाश्च शाश्वतान्
संत्यज्य मूढा वर्तंते ततो यांत्य श्रुतीपथम्
जो पुरुष प्रथमही सर्वत्यागको उत्तम मानकर्के दे
वयानवाले कर्ममार्गको पितृयानवाले कर्म मार्गको
को ब्रह्मप्राप्तवाले वेदोक्त तीन प्रकारके कर्ममा
र्गको त्यागकर्के जो मूढजन केवल त्यागमार्गको
प्रवृत्त होतेहे जिसका उत्तमफल श्रुतीमानहीकहा
ऐसी सर्प कीटादि पापयोनिको प्राप्त होतेहे १७
एतद्वैसत्तं तपोयुक्तं ददामी त्यृषि चोदितं
तस्मा त्तन्नध्यवस्थाने तपस्वि तपउच्यते १८
हे द्विजो यह कर्ममार्ग तमको तपस्याके जो उपास
ना तिसकर्के संयुक्त सिद्ध होवे उपासना दो प्रकार
कहीहे एकदेवताके निमित्त द्रव्यत्याग यज्ञादिक
मकर्के कहीहे जिसकर्के पुत्र गोधन स्वर्गादिफ
ल होताहे और एकतो अविमुक्त क्षेत्रकी उपासना
हे जिसविषे आत्मास्वरूपको कर्मोसे असंगयोगमा
र्गकर्के जानना यह सभही वेदोक्त ऋषिमंत्रकर्के
कहीहे इन्होकी कर्तव्य व्यवस्थाही तपस्वी जनोका
तप कहाहे केवल देह शोषण तप नहीहे १८
देववंशा ब्रह्मवंशा न्पितृवंशांश्च शाश्वतान्
संविभज्य गुरोश्चर्या तद्वै दुष्करमुच्यते १९
देवयानका देववंश मार्गहे ब्रह्मयानका ब्रह्मवंशमार्ग
हे पितृयानका पितृवंशमार्गहे यह तीनो वेदोक्त कर्म
मार्गहे सनातन देवता ऋषिपरंपरा सेवतेहे इन्होका गु
रोकी सेवाकर्के परस्पर विरोध कल्पना त्यागकर्के दिन
घटिकादि कालविभागकर्के व्यवस्थापूर्वक करणा
सोई असाध्यताहे इसको पंडितजनोने दुष्करमित्यं कर्तव्य
एही तप कहाहे १९ विभूतिं परमां गताः त
देवावै दुष्करं कृत्वा विभूतिं परमां गताः २०
स्माद्गार्हस्थ्य मुद्वोढुं दुष्करं प्रब्रवीमिवः

श्री॰
रा॰पं॰
टी॰
३१

31

देवता ऋषिभि इससेभी कर्मको कठिन जानकर्के विभाग व्यवस्था पूर्वक कर्के परम सिद्धिको प्राप्तभयेहै ताते हे द्विजो गृहस्थ धर्म त्यागना महा दुस्करहै इसविना इहलोक परलोक असाध्यहै इसवास्ते तुमको गृहस्थ करणेको उपदेश करताहुं २०

तपः श्रेष्ठं प्रजानांवै मूलमेत न्नसंशयः ॥
कुटुंब विधिनानेन यस्मिन्सर्वं प्रतिष्ठितं २१

तपक्याहै अपनाकर्महै सो प्रजाके सुखका मूलहै सोई कल्याणरूपता कर्के श्रेष्ठहै इसमें संदेहनहीहै कुटुंबी होकर्के गृहस्थ धर्म [illegible] कर्के होनाहै जिसविषे सभही आश्रमोंका धर्म बनाहै २१

एतद्विदु स्तपोविप्रा द्वंद्वातीता विमत्सराः
तस्माद्व्रतं मध्यमंत लोकेषु तप उच्यते २२

ताते ग्रहण त्यागादि द्वंद्व कलना रहित अनिंदक विद्यावान ब्राह्मण इसी गृहाश्रम धर्मको तपोमय कहतेहै याहीते ब्रह्मचर्यादि महाकष्ट संयुक्त वनवासादिव्रत सर्वत्यागकर्के मध्यम कह्याहै और ब्रह्मचर्यादि रहित जो सर्वोपकारी गृहस्थ धर्महै सोई सनातन तपकह्याहै २२ ॥

दुराधर्षं पदंचैव गछंति विघसाशिनः सायं
प्रात र्विभज्यान्नं स्वकुटुंबे यथाविधि २३

हे द्विजो अपनेको विघसाशी मानतेहै घसनाम अन्नकाहै विना अन्नसे जो शुसक तृणपत्रादिक उसको भोजन करतेहो इसप्रकार विघसाशी व्रतनही होता विघसाशी व्रतवाले दुराधर्ष स्थानको प्राप्तहोतेहै इस अर्थको तुमभीसे सुनो जो पुरुष सायंकाल प्रातःकालविषे अपने कुटुंबको विभागदे कर्के घसजो अन्न उसका दानपूर्वक भोजनकरतेहै सो विघसाशी कहेहै ॥ २३ ॥

दत्वा तिथिभ्यो देवेभ्यः पितृभ्यः स्वजनस्यच

अवशिष्टानि येऽश्नंति तानाहुर्विघसाशिनः २४

जो गृहस्थ धर्मवाले पुरुष प्रथम अन्नदान अतिथिजनों को देतेहै और देवता गणोंको देतेहे और पितरोंको विभागदेतेहे अपने स्वजन कुटुंबकोभी विभागकरदेतेहे बाकीके अवशिष्ट अन्नको भोजनकरतेहे इस हेतुसे विघसाशी व्रतवाले गृहस्थधर्मवालेही कहहे २४

तस्मात्स्वधर्ममास्थाय सुव्रताः सत्यवादिनः।
लोकस्य गुरवो भूत्वा ते भवंत्यनुपस्कृताः २५

ताते जो पुरुष अपने वर्णधर्मवाले गृहस्थव्रतको धारतेहे जो सत्यवादी जनहे सो दानमानकर्के लोकगुरु होकर निश्चयकर्के संसारको तरजातेहे २५॥

त्रिदिवं प्राप्य शक्रस्य स्वर्गलोके विमत्सराः
वसंति शाश्वतान्वर्षान् जना दुष्करकारिणः २६

प्रथमतो अपने वर्णधर्मकर्के इंद्रलोक स्वर्ग सुखको पाइकर्के सर्वप्रकारके विद्वेषरहित अनेकवर्षपर्यंत अखंडवास करतेहे जोनसे आश्रमांतरकर्के दुस्कर गृहस्थधर्मको करतेहे सो संसार समुद्रको तरजातेहे २६

अर्जुनउवाच ततस्ते तद्वचः श्रुत्वा धर्मार्थसहितं हितं उत्सृज्य नास्तीतिगता गार्हस्थ्यं समुपाश्रिताः

अर्जुनउवाच हे राजन् इसप्रकार सो द्विजपुत्र पतिरूपी इंद्रकी धर्मार्थ सहित ऐसे वचनको सुनकर प्रथम संन्यासकी वांछाकरते भये बहोड कहतेभये संन्यास अज्ञानही इसप्रकार संन्यासकी वांछाको त्यागकर्के गृहस्थधर्मकी वांछाकर्के अपने घरोंको जातेभये २७॥

तस्मात्त्वमपि धर्मज्ञ धैर्यमालंब्य शाश्वतं प्रशाधि पृथिवीं कृत्स्नां हतामित्रा नराधिप २८

हे राजन् ताते तुंभी धर्मज्ञ होकर्के अपने गृहस्थ धर्मविषे धैर्यधारणकर्के यह पृथिवी शत्रुमारणे करके तुम्हारी भयेहे इसको अपने राजधर्मकर्के पालनकरो २८

श्री॰
रा॰ध॰
टी॰
४०

इति शांतिपर्वणि राजधर्मेषु धर्मार्थ प्रकाशएका
दशोध्यायः ११ ॥ ॥
इति श्री महाभारते शांतिपर्वणि राजधर्म अर्जुनवाक्ये
धर्मार्थ प्रकाशोनाम एकादशोध्यायः ११
वैशंपायनउवाच अर्जुनस्य वचः श्रुत्वा नकुलो
वाक्य मब्रवीत् राजानमभिसंप्रेक्ष्य सर्वधर्म भृ
तांवरम् ॥ १ ॥ वैशंपायनउवाच
इस प्रकार अर्जुनने वाक्यकर्के कर्मोकी अवश्य कर्तव्य
ता सिद्धिभई सोभी अभिमान त्यागसंयुक्त फलाशा त्या
गपूर्वक कर्तव्यहे इस प्रकारके नकुलके वचनको क
हतेहे हे जनमेजय अर्जुनके वचनको श्रवणकर्के
सर्वधर्मधारी जनोविषे श्रेष्ठजो नकुलहे सो राजाके
मुखको देषकर वचनको कहताभया १
अनुरुध्य महाप्राज्ञो भ्रातश्चित्त मरिंदमः व्यू
ढोरस्को महाबाहु स्ताम्रास्यो मितभाषिता २
कैसाहे नकुल महाबुद्धिहे शत्रुगणको जीतने हारहे
दृढहृदयवालाहे विशाल पराक्रम संयुक्त जिसकी
भुजाहे राजाकी त्यागबुद्धिकर्के रक्तवर्ण मुखवालाहे
राजाकी चित्तवृत्तिको रोककर्के वचनको कहताभया २
नकुलउवाच विशाखयूपे देवानां सर्वेषा मग्नय।
श्चिताः तस्माद्विद्धि महाराज देवाः कर्मफलेस्थिताः
नकुलउवाच हे राजन् विशाखयूप नामकर्के प्रसिद्ध
क्षेत्रविषे संपूर्ण देवतागणोने यज्ञवास्ते स्थंडिलविषे
इष्टिका छिन्नकर्के वेदी कल्पना कीनीही उसविषे अ
ग्निस्थापन कियाहे सो अग्निस्थापनकी वेदेकी इष्टिका
अवभी दृष्टहोतीहे ताते देवताभी कर्मफलकी वांछा
करतेहे सकाम कामकर्के पितृलोक प्राप्तहोताहे नि
सकाम कर्मकर्के देवलोक प्राप्तहोताहे ऐसे श्रुतिप्रमा
णसे जो निसकाम कर्मकर्के ब्रह्मलोकमो गयेहे सो
इहां देवता कहेहे ३ ॥

३

अनास्तिकानां भूतानां प्राणदाः पितरश्चये तेपि
कर्मैव कुर्वंति विधिं संप्रेक्ष्य पार्थिव ४
हे राजन् जोनसी प्राणी धर्म कर्म करणेमों नास्तिक
नहीहे तिन्होंको जो अन्न सस्यादि दाताहे सो पितरदेव
ताकहेहे ताते पितरभी फलदानरूपी कर्मके कर्ता
हे ताते तुमभी कर्मकांड विधीकोही शुभजानो ४
वेदवादा पविद्धांश्च तान्विद्धि भृशनास्तिकान्
नहि वेदोक्तमुत्सृज्य विप्रः सर्वेषु कर्मसु ५
जोनसे पुरुष कर्मकांड वेदवाक्योंको अपवाद करतेहे
निषेध करतेहे तिन्होंको तुमनास्तिकजानो वेदोक्त
विधिको त्यागकर्के कोई ब्राह्मण हमने कर्मफल
भोक्ता नहीदेषा ताते अग्निहोत्रादि विप्रधर्म सभहि
कर्म साध्यहे ५ ॥
देवयानेन नाकस्य पृष्ठमाप्नोति भारत अ
थाश्रमान् ऽ धर्मका नित्याक वेदनिश्चयाः ६
हे भरतश्रेष्ठ निसकाम कर्मकर्के देवयानगति होती
हे उसीकर्के कर्मकांड नाकपृष्ठको ब्रह्मलोकको प्रा
प्त होताहे यह गृहस्थाश्रम सकल आश्रमोंको अप
नी कर्मनिष्ठाकर्के जीतलेताहे सभसी परी प्रतिष्ठा
है यह सकलवेदोका निश्चयहे ६
ब्राह्मणाः श्रुतिसंपन्ना स्तान्निबोध जनाधिप
वित्तानि धर्मलब्धानि क्रतुमुख्येषु वासृजन् ७
हे जनाधिप वेदोक्त विधि संपन्न सोई ब्राह्मण जानते
जोनसे अपने धर्मकर्मकी प्राप्तीवाले धनसंग्रहको
यज्ञकर्मकर्के ब्राह्मणोंके मुखविषे अर्पन करतेहे ७
कृतात्मा स महाराज सर्वत्यागी स्मृतोनरः अ
नवेक्ष्य सुखादानं तथैवोर्ध्वं प्रतिष्ठितः ॥ ८
जो पुरुष अपने वर्णके धर्मकर्मको ओर चित्तको अ
हंता ममता त्यागवालेको करताहे सो पंडित जनो
ने सात्विक त्यागी कहाहे ८ ॥

श्री॰
रा॰ यं॰
टी॰
४८

५

आत्मत्यागी महाराज सत्यागी तामसः प्रभो
अनिकेतः परिपतन् हस्तमूला अधोमुनिः ८

जो पुरुष अपनी मूढता करकै स्वखसाध्य गृहस्थधर्म
को त्यागकरताहै दुईगतीकी निष्ठाको करताहै
हे महाराज सो आत्मात्यागीहै आत्मघातीहै उसको
तामस त्यागी कहतेहै इसका प्रमाण मनुमहाराज
ने कहाहै जौनसा द्विज वेदनही पढै और गृहस्थध
र्मकी वृद्धिवासते संतान उत्पन्न नहीकरे और यथा
शक्ति इष्टकरकै यज्ञयागादि नहीकरे केवल त्याग
करकै मोक्षकी वांछाकरे तो अधोगतिको प्राप्तहोता
है ताते तामस त्यागनही करणा ८॥

अपाचकः सदायोगी सत्यागी पार्थभिक्षुकः
क्रोधहर्षा वनाहत्य पैशुन्यंच विशेषतः ९

जिस पुरुषने गृहस्थ धर्मको त्यागकियाहै और भि
क्षावासते पृथिवीको अटनकरता यद्यपि उसने
सर्व इंद्रियोकी वृत्ति योगकरकै जीतिहै तोभी भि
क्षायाचन करकै ब्राह्मणजैसा भिक्षुकहै उसका यह
धर्म शुभहै तोभी जिसक्षत्रीसे प्रजापालनका क्लेश
नही बने उसका त्याग राजसहै ताते दोषमूलक
है यह त्याग क्षत्रिय वर्णको शुभनहीहै इसका
प्रमाण श्रुतीहै जब क्षत्रियसे प्रजापालन नहीबने
तो प्रजारक्षाके अभावसे ब्राह्मणजैसा भिक्षुक्षत्रि
य होताहै उसको याचनाकरणी महादोषहै ९

विप्रोवेदा नधीतेयः सत्यागी पार्थभिक्षुकः
आश्रमो स्वलया सर्वा न्यूताना क्षमिनीषिणः ११

हे राजन् जो पुरुष क्रोधलोभको त्यागकरकै परनिं
दांकोभी त्यागकरकै जो ब्राह्मण वेदको अध्ययन क
रताहै सो भिक्षुभी त्यागी कहाहै इसका प्रति
कारभी ब्राह्मण कोहीहै यहभी
राजस त्यागहै ॥ ११ ॥

एकतस्तु त्रयोराजन् गृहस्थाश्रम एकतः स
मीक्ष्य तुलया पार्थ कामं स्वर्गंच भारत १२
धर्मवेत्ता आचार्य जोहे सो आश्रमोंको तीनवेदोके
साथ तुलना करतेभये एक और तीनवेद तीनो
आश्रमयहे एकतरफ गृहस्थ धर्मभयाहे १२
इयं पंथा महर्षीणां इयं लोकविदां गतिः
इतियः कुरुते भावं सत्यागी भरतर्षभ १३
तुलना करके विचारकिया तो इसविषे स्वर्गभोग
को कामभोगकोभी धर्मरूप देखायाते गृहस्थधर्म
अधिकहे यह गृहस्थधर्म महाऋषीयोंको मोक्षमा
र्गबनाहे स्वर्गादि उत्तम लोकोकी गतीहे १३
नयः परित्यज्य गृहान्वनमेति विमूढवत्
यदा कामान्समीहेत धर्मवैतंसिको नरः १४
जो पुरुष इस गृहस्थ धर्मको अवश्य कर्तव्य मानता
है फलवांछाके प्रसंगसे रहित होताहे सोई
संन्यासी कहाहे जोनसा अभिमानकरके गृहत्याग
करके वनको जाताहे सो अतिमूढहे उसको त्यागी
नही मानता १४ ॥
अथैनं मृत्युपाशेन कंठे बध्नाति मृत्युराट् अ
भिमान कृतं कर्म नैतत्फलव दुच्यते १५
पाखंडकरके त्यागीपुरुष जोहे सो मूढ त्यागीहे जब
कामभोगकी वांछाको करताहे उसीकालविषे उसको
मृत्युपाशकरके यमराज बांधलेताहे अनेक दुःखयो
नीको प्राप्तकरताहे १५ ॥
त्यागयुक्तं महाराज सर्वमेव महाफलं शमो
दमस्तथाधैर्यं सत्यं शौचं मथार्जवम् १६
ऋषिजनोकी यही विधिहे शमदमधैर्य और सत्य।
शौच आर्जव और यज्ञधृति धैर्य्य यह सभ अभिमान
रहित फल प्रसंग रहित करणा अभिमानसे कियाहो।

श्री॰
गी॰प॰
टी॰
४२

सदा अखंड फलकों करताहे २६

यज्ञो श्रुतिश्च धर्मश्च नित्यमाश्रो विधिः स्वतः
पितृदेवा तिथिकृते समारंभोत्र शस्यते अ
त्रैवहि महाराज त्रिवर्गः केवलं फलं १७

हे महाराज पितरोंके देवता गणोंके अतिथिजनके
उपकारवासते गृहस्थविषे धर्म कर्मका प्रारंभ श्रेष्टक
हाहे इसको धर्म अर्थ कामकी प्राप्तिका फल गृहस्थ
धर्मविषेही होताहे १७

एतस्मि न्वर्तमानस्य विधावप्रति षेधिते त्या
गिनः प्रसृतस्येह नोच्छित्ति र्विद्यते क्वचित् १८

यह गृहस्थ धर्मनिषेधरहितहे इसके विधानविषे प्र
वृत्तभयाहे और फलवांछाको त्यागकरताहे धर्मक
र्मको अभिमान त्यागकर्के करताहे इसको धर्महानि
कदापि नही होती १८

असृजद्धि प्रजाराज न्प्रजापति रकल्मषः
मां यक्ष्यतीति धर्मात्मा यज्ञै र्विविध दक्षिणैः
वीरुधश्चैव हृतांश्च यज्ञार्थं वै तथोषधी २१

आदि सृष्टिकर्ता प्रजापती जोहे सो लोकोंको हृतोंको
यज्ञवासते सृजताभया तैसेही औषधी और पशुगण
और पवित्र जैसे अन्नको लोकोंको यज्ञवासते सृजता
भया २१

पशूंश्चैव तथा मेध्यान् यज्ञार्थानि हवींषिच २१

यज्ञकरणे वासते प्रजाको सृजताभया प्रजालोक ना
ना प्रकारकी दक्षिणावाले यज्ञोंकर्के मोको यजनकरेंगे २१

गृहस्था श्रमिणस्तस्य यज्ञकर्म निरोधकं न
स्माद्गार्हस्थ्य मेवेह दुष्करं दुर्लभं तथा २२

हे राजन् गृहस्थाश्रमीको यज्ञकर्म विरोधनही करना ताते
गृहस्थाश्रमही परम दुसकरहे इतर आश्रमोंका दुर्ल
भहे ॥ २२ ॥

तत्संप्राप्य गृहस्थाये पशुधान्य धनान्विताः
नयजंते महाराज शाश्वतं तेषु किल्बिषं २३
जो पुरुष गृहस्थ धर्मको पाइकर धनधान्य पशुसंपदा
युक्तहै तोभी यज्ञनहीं करते उन्होंको अखंड नरकवास
कारी पापसदाही बनाहै २३
स्वाध्याय यज्ञा ऋषयो ज्ञानयज्ञा स्तथापरे अ
थापरे महायज्ञान् मनसैव वितन्वते २४
केते ऋषि स्वाध्याययज्ञवालेहै केते मुनि ज्ञानयज्ञवाले
है अवर केते पंचमहायज्ञवालेहै यह सभही ममता
त्यागकर्के अवश्य करीय मनमों जानकर करतेहै २४
एवं मनः समाधानं मार्गमा तिष्ठतो नृप द्विजा
ते र्ब्रह्मभूतस्य स्पृहयंति दिवौकसः २५
हे राजन् इसप्रकार मनको सावधानकर्के जो द्विजाति
कर्म मार्गको करताहै सो वेदोक्त कर्म मार्गकर्के ब्रह्मरू
पहोताहै उससे देवता यज्ञभागकी वांछाकरतेहै २५
सरत्नानि विचित्राणि संभृतानि तत स्ततः मखे
ष्वनभि संत्यज्य नास्तिक्य मभि जल्पसि २६
प्रथम स्वाध्याय यज्ञहै सो ब्रह्मचर्यमो होताहै द्वितीय द्र
व्ययज्ञहै सो गृहस्थको होताहै तृतीय ज्ञान यज्ञहै सो
संन्यासकर्के होताहै तेरेको ब्रह्मचर्यका कालबीतगया
है अव द्रव्ययज्ञ कर्तव्यहै सो तूं मध्यम जो द्रव्ययज्ञ उस
के साधनहै नानाप्रकारके धनरत्नादिक सो तेरेको सभ
ही प्राप्तहै यहयज्ञ सर्वभूतोंका उपकारीहै इसको त्याग
कर्के केवल ज्ञानयज्ञ मानताहै ताते नास्तिक मतको मा
नताहै २६ ॥
कुटुंब मास्थिते त्यागं नपश्यामि नराधिप राज
सूयाऽश्व मेधेषु सर्वमेधेषु वापुनः २७
सो अव कुटुंब धर्मवालाहै तो को वेद वेदोक्त मार्गका सं
न्यासनहीं बनता तोको राजसूय यज्ञविषे अश्वमेध यज्ञ
विषे सर्वमेधादि यज्ञोंका अधिकारहै २७ ॥

येचान्ये क्रतवः नाना ब्राह्मणैरपि पूजिताः
तैर्यजस्व महीपाल शक्रो देवपतिर्यथा २८
ग्रवरभी जो जो ब्राह्मणोंने वेदमार्गके ग्रतिश्रेष्ठ यज्ञकर्म
कहेहैं तिन्होंको विधिकर्के तूभी यज्ञकर जैसे इंद्र देवता
पति होकर्के यज्ञकरताहै २८

राज्ञः प्रमाददोषेण दस्युभिः परिमुष्यतां ग्रश
रण्यः प्रजानांहि सराजा कलिरुच्यते २९
राजा सर्वप्रजाकी रक्षामें सावधाननहीं होवे तो प्रजाकी
चौरादिक लूटलेतेहैं जो राजा प्रजाकी रक्षावासते शर
णयोग्य नहीं होवे सो राजाकलियुग रूपहोताहै स
र्व प्रकारके पापका मूलहोताहै २९॥

ग्रश्वांश्च गाश्च दासीश्च करेणूश्च स्वलंकृताः ग्रा
मांजनपदांश्चैव क्षेत्राणिच गृहाणिच ३०
जो तूं राज्यत्यागरूपी प्रमादकरै तो ग्रापही कलिरूपहोवे
गा जो राजा ग्रश्वदान गोदान दासीदान गज गजी दा
नोंको सर्वालंकार संयुक्त नहीं करे ग्रैर ग्रामनगर
क्षेत्रगृहादि दान नहीं करेगा ३०

ग्रप्रदाय द्विजातिभ्यो मात्सर्याविष्टचेतसः वयं
ते राजकलयो भविष्याम विशांपते ३१
बंधुद्रोहके दोषकर्के राज्य त्याग करेगा तो हम तेरी भ्राता
भी प्रजापालनविना कलिरूपही होवेंगे ३१

ग्रदातारो शरण्याश्च राजकिल्बिष भागिनः
दोषाणामेव भोक्तारो नसुखानां कदाचन ३२
दानभी हमनहीं करेंगे प्रजाकी रक्षानहीं करेंगे राजध
र्मका त्यागरूपी दोषकर्ता होवेंगे ताते दुःखफलभो
क्ता बनेंगे सुखभोगी कदापि नहीं होवेंगे ३२

ग्रनिष्ट्वाच महायज्ञै रकृत्वाच पितृस्वधां ती
र्थेष्वनभि संस्नात्य प्रव्रजिष्यसि चेत्प्रभो ३३
हे राजन् जो तूं महायज्ञोंको नहीं करेगा ग्रैर पितरोंके
निमित्त स्वधायज्ञ नहीं करेगा ग्रैर तीर्थोंविषे स्नानकर्के दा
न नहीं करेगा गृहस्थ होकर त्यागकर्के वनको जावेगा ३३

छिन्नाभ्रमिव गंतासि विलयं मारुतेरितम् लो
कयो रुभयो भ्रष्टो ह्यंतराले व्यवस्थितः ३४
तो जैसे पवन वेगकर्के मेघमंडल आकाशमोही ल
यहो जाताहै तैसे उभय लोकसे भ्रष्टहोकर नरक
मो पिशाच योनीको जावेगा ३४
अंतर्वहिश्च यत्किंचि न्मनो व्यासंगकारकम्
परित्यज्य भवेत्यागी नहित्वा प्रतितिष्ठति ३५
जो गृहस्थ होकर त्यागकिया चाहो तो शास्त्रज्ञानमो
दानकर्ममो यज्ञयागादि करणेमो युद्धादि राजधर्मविषे
पुत्र पशु आदिकोको समृद्धिमो अहंज्ञाता अहंदाता अ
हंकर्ता अहंहंता अहं सर्वाधिपति इसप्रकारकी अहंता
ममताको अंतर्वाह्यानसे त्यागदेवे तो सर्वत्याग
की प्रतिष्ठाको पावताहै ३५ ॥
एतस्मि न्वर्तमानस्य विधा वप्रतिषेधते ब्राह्म
णस्य महाराज नोच्छित्ति र्विद्यते क्वचित् ३६
हे महाराज इसप्रकारकी निषेध रहित गृहस्थधर्मकी
वेदोक्त राजधर्मविधिमो जो प्रवृत्तहोताहै सो ब्रह्मज्ञान
की ब्राह्मणनिष्ठावालाहै उसको वर्णाश्रम धर्मकी हा
नि कदापि नहीहोती ३६ ॥
निहत्य शत्रूं स्तरसा समृद्धान् शक्रोयथा दैत्य
बलानि संख्ये कः पार्थशोचन्निरतः स्वधर्मे पू
र्वैः स्मृतः पार्थिव शिष्ट जुष्टे ३७
हे कौंतेय जैसे इंद्र अतिबलवाले दैत्यसेनाके म
हाशूरमा जनोंके मारदेताहै तैसे महाक्रमी शत्रू स्त
रमा जनोको रणविषे मारकर्के पूर्वले राजऋषिगणो
कर्के सेवित राजधर्मविषे स्थितभया जो राजाहै सो ते
रे विना औरकौन शोचकरताहै ३७
त्वंपार्थिवं मंत्रवि
द्याबलेन धर्मेण पराक्रमेण जित्वामही मंत्रवि
द्भिः प्रदाय नाकस्य पृष्ठस्य नरेंद्रगंता नशोचि
तव्यं भवता ह्यपार्थ ३८ ॥

श्री॰
रा॰प॰
टी॰
४४

हे पार्थ अपनी क्षत्रीधर्मकरकें पराक्रमकरकें पृथिवीको जीतकरकें ओर वेदमंत्रोंके विधिवेत्ता ब्राह्मणोंको यज्ञादिकोंविषे द्रव्यदानकरकें तूं स्वर्गको अवश्यही जावेंगा इसकालविषे तेने शोचना योग्यनहीहै ३८

इति श्री महाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मे नकुलवाक्यं नामद्वादशोध्यायः १२ ॥

सहदेवउवाच नवाह्यं द्रव्यमुत्सृज्य सिद्धिर्भवति भारत शारीरं द्रव्यमुत्सृज्य सिद्धिर्भवति वानवा १

सहदेवउवाच हे भरतवंशके राजन् व्यावहारिक जो द्रव्यहै उसको त्यागकरकें कोई सिद्धिनही होती शरीरसंबंधी द्रव्यत्यागकरकें त्यागफलकी सिद्धि होतीहै अथवा नही होती इसमें अधिकारकोभेदकी व्यवस्था ज्ञातव्यहैं इसको त्यागविषे अहंता ममताका त्यागकहाहा जो अहंता त्यागकरकें तो शरीरयात्राका निर्वाह नही होता वर्णाश्रम धर्मको व्यहारनष्ट होजाताहै ताते सर्वकालविषे ममता त्यागही कर्तव्यहै १

बाह्यद्रव्य विमुक्तस्य शारीरेषुत्तु गृध्यतः यो धर्मो यत्सुखं वास्यात् द्विषतां तत्तथास्तुनः २

ममता ममताका संबंधी द्रव्यभी दोप्रकारकाहै एक व्यावहारिकहै ओर शारीरहै सो मनकल्पितहै व्यावहारिकहै ममता द्रव्यका त्याग मनसे अवश्यकर्तव्य है जो पुरुष व्यावहारिक बाह्यद्रव्यको त्यागकरकें शुक्रमयादिक मनोमय ममता कल्पित द्रव्यआसक्तिवालाहै उसका जो त्यागधर्महै जो उसके फलका सुखहै मन संताप क्षुधातृषादि । तुर्वचिंता संयुक्त सो तत्सारे शत्रुगणकों होवे २

शारीरं द्रव्यमुत्सृज्य पृथिवी मनुशासतः ॥ योधर्मो यत्सुखंवास्या त्सुहृदां तत्तथास्तुनः ३

ओर मनके ममता कल्पित शोकमोहादि शरीरद्रव्यको त्यागकरकें असंगतासे राजधर्मकरकें पृथिवीको पा

लनेहारे राजाको शोकमोहादि संताप रहितजो अ
खिंडानंद सुखहोताहे प्रजापालनरूपी धर्मफलहोताहे
सो तुम्हारे सुखसंबंधी हमलोकोंको होवे ज्ञानीपुरुष
का पुण्यफल उसके प्रेमवालेको कहाहे पापफल द्वेष
निंदाकारीको होताहे ३ ॥

**व्यक्तरस्तु भवेन्मृत्यु र्नममेतिच शाश्वतं ममे
तिच भवेन्मृत्यु व्यक्तरं ब्रह्मशाश्वतम् ४**

हे राजन् अक्षरोंके कल्पनामो मृत्युकहाहे तीनो अ
क्षरोंकी कल्पनाविषे अखंड ब्रह्मतावनीहे इदं मम इदं
मम ऐसी ममताविषे मृत्युबनाहे इदं नमम इदंन मम
ऐसी ममता त्यागविषे अखंड ब्रह्मप्राप्ति बनीहे ४

**ब्रह्ममृत्यू ततो राज न्नात्मन्येव समाश्रितो अ
दृश्यमानो भूतानि योधयेतो मसंशयम् ५**

ताते हेराजन् ब्रह्मभाव और ममता भाव इस प्रकार अ
दृश्यमानही सर्वभूतोविषे युद्धकरावताहे ५

**अविनाशोस्य सत्वस्य नियतो यदि भारत ह
त्वा शरीरे भूतानां नहिंसा प्रतिपत्स्यसे ६**

जिसने अहंता ममतादि आवेशविना युद्धकियाहे उसको
दोष प्रसंगका अभाव कहतेहे हेभारत जो इस जीवा
त्माको अविनाशी निश्चयकियाहे तो सर्वभूतोके शरी
रको मारकरके हिंसा दोषनही प्राप्तहोता आत्मा
सदा नित्यहै ६ ॥

**यथापिच सहोत्पत्तिः सत्वस्य प्रलयस्तथा
नष्टे शरीरे नष्टस्यात् वृथाचस्या क्रियापथः ७**

जो हिंसाकरणे हारा देहाभिमानहे सो अनित्यहे देह
के साथ उत्पन्न होताहे और देहके साथ लयहोताहे
तो कर्ता हंतादि कल्पना मार्गवृथाहे इसप्राणीको जी
वना मरणा अवश्यबनाहे तातेभी हिंसादोष नहीहे ७

**तस्मादेकांत मुत्सृज्य पूर्वैः पूर्वतरैश्रयः पं
थानिषेवितः सद्भिः सनिषेव्यो विजानतः ८**

नाते कर्ताको नित्यता अनित्यताके निश्चयको जोनमा

श्री॰
रा॰ध॰
टी॰
४५

सर्वलेसे सर्वले आचार्य लोकोने सेवितमार्ग विचार वान पुरुषने अवश्यसेवने योग्यहै ८

लब्धापि पृथिवीं कृत्स्नां सह स्थावर जंगमां
नभुंक्तेयो नृपःसंप निष्फलं तस्य जीवितं ९

जो राजा अपने पराक्रमकर्के स्थावर जंगम द्रव्यसहित संपूर्ण पृथिवीको प्राप्तहोकर अपनी मूढताकर्के राजधर्मके मर्यादासे नहीभोगे उसका जीवनानिष्फलहै

अथवा वसतो राजन्वने वन्येन जीवितः द्रव्येषु
यस्य ममता मृत्योरास्ये सवर्तते १०

अथवा बाह्यद्रव्यको त्यागको कर्के वनवासकर्के वनविषे वनके फलमूलकर्के जीविताहै द्रव्योविषे ममता बनीहै सो मृत्युको मुखमे वर्तमानहै १०

बाह्यांतश्चैव भूतानां स्वभावं पश्यभारत येतुप
श्यंति तद्भूतं मुच्यंते सर्वतोभयात् ११

आपविचारकर्के सर्वभूतोके बाह्य आभ्यंतर द्रव्यके स्वभावकोदेखो यह सभही आत्मसत्ताविषे आत्मसत्ताकर्के आभासमात्रहै मृगतृष्णा सर्मन वास्तवनहीहै ऐसीजो विवेकी जानकर व्यवहारकरतेहै सो बाह्यआभ्यंतर द्रव्य प्रसंगवाले संसारभयसे मुक्तहोतेहै ११

भवान्पिता भवान्माता भवान्भ्राता भवान्गुरुः
दुःखप्रलापा नार्तस्य तन्मेत्वं तंतुमर्हसि १२

हे राजन् तुमही हमारे पिता तुमही माताहो तुमही भ्राताहो तुमही गुरुहो मे अपनी दुःखप्रलापसे कहता हूं आपक्षमाकरणे योग्यहो १२

तथ्यंवा यदिवा तथ्यं यन्मयैतत्प्रभाषितं तद्वि
द्धि पृथिवीपाल भक्त्या भरत सत्तम १३

यह मेरावचन सत्यहै अथवा मिथ्याहै जो मेने कहासे अपनी चतुरतासे नहीकहा आपकी भक्तिकर्के कहासे

इतिश्री महाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मे सहदेववाक्यं त्रयोदशोध्यायः ॥ १३ ॥

वैशंपायनउवाच अथाहरति कौंतेय धर्मराजे युधिष्ठिरे भ्रातॄणां ब्रुवतां तांस्तां विविधा वेद निश्चयान् १ ॥ वैशंपायनउवाच हे राजन् जनमेजय राजा युधिष्ठिरके भ्राता भीम अर्जुन नकुल सहदेव इसप्रकार नानाप्रकार नानाप्रकारके वेदसंमत राजधर्मके अपने अपने कार्य अपने निश्चयोंको कहतेभये धर्मराज युधिष्ठिर उत्तरभी नही कहताभया

महाभिजन संपन्ना श्रीमत्या यतलोचना अभ्यभाषत राजेंद्र द्रौपदी योषितांवरा २

इसीकालमो द्रौपदी राजाको देखती भई कैसीहै अपने कुलके अभिमान संपन्नहै राजधर्मकी संपदावाली है सर्वप्रकारकी विचार संपन्न विशाल जिसके नेत्रहै संपूर्ण स्त्रीगुणोंकर्के श्रेष्ठहै सो राजाको वचन कहतीहै २

आसीन मृषभं राज्ञां भ्रातृभिः परिवारितं सिंह शार्दूल सदृशैर्वारणैरिव यूथपं ३

कैसाहै राजा सकल राजा लोकोंविषे श्रेष्ठहै सिंहशार्दूल समान अपने भ्राता जोहै तिन्होंकर्के संयुक्तहै जैसे मदमत्त गजों कर्के महागज शोभताहै ३

अभिमानवती नित्यं विशेषेण युधिष्ठिरे लालिता सततं राज्ञा धर्मज्ञा धर्मदर्शिनी ४

सभपांडवोविषे उसको अतिप्रेमका अभिमानहै और युधिष्ठिरविषे सभसे अधिक विशेष अभिमानहै राजानेभी प्रेमवचनवाले आज्ञाकर्के बहोतमानीहै आप धर्मज्ञहै सभको राजधर्मका उपदेशकरणेहारीहै ४

आमंत्र्य विपुल श्रोणी साम्ना परम वल्गुना भर्तार मभिसंप्रेक्ष्य ततोवचन मब्रवीत् ५

अति धीर परम मधुर वचनकर्के राजाको बुलायकर्के विस्तारवाले नितंबस्थानकर्के धीर होकर राजाके पासबैठकर्के सन्मुख देषकर्के वचन कहती भई ५

द्रौपद्युवाच इमेते भ्रातरः पार्थ दुःखिते स्तोक का इव वावाश्यमाना तिष्ठंति नचैनान भिनंदसे ६ ॥ द्रौपद्युवाच हे राजन् यहतेरे भ्राता वालीकोंकी न्याई दीनतासे बोलतेहे तेरी आज्ञाविषे सावधानस्थितहे इसको तें प्रसन्नवचनको उत्तर कर्के क्यों नही संभावना करता ६ ॥

नदेयं तान्महाराज मत्तानिव महाद्विपान् उपपन्नेन वाक्येन सततं दुःखभागिनः ७

हे महाराज यहतेरी भ्राता मदमत्त गजोंकी सर्वकार्योंके भारको धारणकरणे हारेहे इन्होंको युक्तिन्यायसे युक्त उत्तरवचनकर्के आनंद संयुक्तकर यहतेरी आज्ञाकर्के सदाही दुःखभागी भयेहे ७

कथं द्वैतवने राजन् पूर्वमुक्त्वा तथावचः भ्रातॄनेतान्स्म सहितान् शीतवाता तपार्दितान् ८

जो तेने सदा सर्वत्याग करणाही शुभ जानाहे जो वनवास कालविषे द्वैतवनमो पूर्वऐसा वचन कैसे कहाहे उसकालविषेभी तेने शीतवातादि क्लेश संयुक्तही है येहे जो इन्होंको वचन कहाहे ८ ॥

वयं दुर्योधनं हत्वा मृधे भोक्ष्याम मेदिनीम् संपूर्णां सर्वकामाना माहवे विजयैषिणः ९

हम वनवास उपरंत प्रतिज्ञाके रणमंडलमों दुर्योधनको मारकर्के सर्वकाम संयुक्त पृथिवीको भोगेगे युद्धमों विजयकी वांछावास्ते [illegible]

विरथांश्च रथान्कृत्वा निहत्य च महागजान् संस्तीर्य च रथै र्भूमिं ससादिभि ररिंदमाः १०

रथोंको रथी रहितकर्के महागजोंको मारकर्के रथोकर्के पैदलोकर्के पृथिवीको छादित करेंगे १०

यजतां विविधैर्यज्ञैः समृद्धै राप्तदक्षिणैः वनवासकृतं दुःखं भविष्यति सुखाय वः ११

जो सर्वपृथिवीका राज्यकरेंगे उसकालविषे दुर्योधनके

अति समृद्धवाले पूर्णदक्षिणा संयुक्त यज्ञोंकर्के यजन करणा इसकालविषे दुर्योधनको यज्ञनिमंत्रणसे मनमो संतापनही करणा यह वनवास कृतदुःख तुमको बहोत सुखकारी होवेगा ११

इत्येतानेव मुक्त्वात्वं स्वयंधर्मभृतांवरः कथ मद्य पुनर्वीर विनिहंसि मनांसिनः १२

आप तुम धर्मधुरंधरोंविषे श्रेष्ठहोकर ऐसे वचन कहिकर्के अब फेर सर्वत्यागकर्के हमारे सभके मनको वीरमानी होकर कादरतासे आसाभंग करके मारता है १२ ॥

नक्लीबो वसुधां भुंक्ते न क्लीबो धन मश्नुते नक्लीवस्य गृहंपुत्राः मत्स्यः पंक इवासते १३

यो रणकार्यविषे कायरहोवे सो पृथिवीको कदापिनही भोगता ऐसे कायरको धनलाभ नहीहोता जैसे कीचमो मत्स्यनही रहते तैसे कायर गृहमों पुत्रभी नही होते १३ ॥

नादंडः क्षत्रियो भाति नादंडो भूमिमश्नुते नादंडस्य प्रजा राज्ञः सुखं विंदंति भारत १४

दंडकार्य विना क्षत्रीको शोभा प्रतिष्ठा नहीहोते दंड विना पृथिवीको राजानही भोगसकता दंडरहित राजाकी प्रजाभी सुखीनही होती १४

मित्रता सर्वभूतेषु दानम ध्ययनं तपः ब्राह्मणस्यैव धर्मस्स्या नराज्ञो राजसत्तम १५

हे राजन् सर्वभूतोंविषे दया और यथाशक्तिदान और वेदशास्त्रो अध्ययन और वनवासादि तपयह धर्म त्यागी ब्राह्मणका धर्महै हेराजसत्तम यह राजाका धर्मनहीहै

असतां प्रतिषेधस्स सतांच परिपालनं एष राज्ञां परोधर्मः समरे चापलायनम् १६

दुष्टोको दंडकरणा संतोकी पालना करणी यह राजेका परम धर्महै और रणसे पलायन नही करणा १६

श्री॰ रा॰ पं॰ टी॰ ४७

47

यस्मिन् क्षमाच क्रोधश्च दानादानं भयाभये नि
ग्रहा निग्रहौचोभौ सवै धर्म विदुच्यते १७
जिस राजाविषे यथाकाल क्षमाहोवे यथाकाल क्रोधः
होवे यथाकाल दानहोवे यथाकाल संग्रहहोवे य
थाकाल भयकार्यहोवे यथाकाल अभयकार्यहोवे
यथाकार्य दंडहोवे यथाकाल अनुग्रह कृपाहोवे सो
राजा धर्मवेत्ता कहाहै १७
नश्रुतेन नदानेन नसांत्वेन नचेज्यया त्वयेयं
पृथिवी लब्धा नसंकोचेन चाच्युत ॥ १८
हे राजन् तेने पृथिवी केवल वेदपाठके श्रवणकर्के
नही प्राप्तभई केवल दानकर्के नहीपाई केवल साम
कर्के नहीपाई केवल यज्ञकर्के नहीपाई और याच
नाकर्के नहीपाई यह पृथिवी तेने जिसप्रकारकर्के
पाइहै उसको श्रवणकर १८
यत्तद्बल ममित्राणां तथावीर समुद्यतम् हस्त्य
श्व रथसंपन्नं त्रिभिरंगै रनुत्तमम् ॥ १९
जौनसा शत्रुगणोंका सेनाबल महावीरोंकर्के उद्यतभ
याहै हस्ती रथ तुरंग संपन्न और प्रभुशक्ति मंत्रशक्ति
उत्साहशक्ति संयुत इसप्रकार त्रिगुण अंगोकर्के संयुक्तहै
रक्षितं द्रोण कर्णाभ्यां मश्वत्थाम्ना कृपेणच तत्त्व
या निहतं वीर तस्मात् भुंक्त्व वसुंधरां २०
द्रोणकर्के कर्णकर्के अश्वत्थामाकर्के कृपाचार्यकर्के र
क्षितहै सो तेने अपने क्षत्रधर्मके रणकर्के माराहै अ
पने धर्मकर्के प्राप्तभये पृथिवीको अब भोग २०
जंबुद्वीपो महाराज नाना जनपदा युतः त्वयाग्र
षभ शार्दूल दांडेन मृदितः प्रभो २१
हे महाराज यह जंबुद्वीप जोहै सो नानाप्रकारकी दे
शादेशांतरकी ग्रामनगरवासी लोकोकर्के संयुक्तहै
सो तेने दिग विजयमो दंडकर्केही मर्दन कियाहै २१
जंबुद्वीपेनसदृशः! क्रौंचद्वीपो नराधिप अपरे
ण महामेरो दंडेन मृदित स्त्वया २२

वहोइ जंबूद्वीपके अनेक संपदायुक्त क्रौंचद्वीपहे मेरुप र्वतके पश्चिमभागमोहे सोभी दंडकर्के अपने वशाकियाहे

क्रौंचद्वीपेन सदृशः शाकद्वीपो नराधिप पूर्वेण तु महामेरोः दंडेन मर्दितस्त्वया ॥ २३

क्रौंचद्वीपके समान अतिसुंदर शाकद्वीपहे मेरुपर्वतसे पूर्वदेशमोहे सोभी तेने दंडकर्के अपने वशाकियाहे २३

उत्तरेण महामेरोः शाकद्वीपेन संमितः भद्राश्वः पुरुषव्याघ्र दंडेन मर्दितस्त्वया २४ ।

शाकद्वीपके समान मेरुपर्वतसे उत्तरदिशामो भद्राश्वद्वीप हे सोभी हे पुरुषव्याघ्र सोभी तेने दंडकर्के माराहे २४

द्वीपाश्च सांतरद्वीपाः हीनाः जनपदाश्रयाः विगाह्य सागरंवीर दंडेन मर्दितस्त्वया २५

औरभी इन्हाद्वीपोके आसपास द्वीपहे सोभी नानाप्रकारकी जनसंपदाके आश्रयवनेहे सोभी तेने सागरोको नगरकोभी दंडकर्के अपने वशाकियेहे २५ ॥

एतान्य प्रतिमेयानि कृत्वा कर्माणि भारत नप्रीयसे महाराज पूज्यमानो द्विजातिभिः २६

एसे भारी पराक्रमवाले कर्म तेने राजसूय यज्ञवासते कियेहे ब्राह्मणलोकोके प्रसाद समस्त प्रजा प्रतिष्ठाको पाईकर्के महाराज भयाहे अव को राज्यभोगसे प्रसन्न नही होता २६ ॥

स त्वं भ्रातॄनिमान्दृष्ट्वा प्रतिनंदस्व भारत ऋषभानिव संमत्तान गजेंद्रान्नूर्जितानिव २७

हे महाराज ऐसा तूं सकल पृथिवीका स्वामी वनाहे यह भीमसेनादि तेरे भ्राता सभ महा धुरंधरहे जैसेपृथिवीको उखाडनेको महावृष होतेहे अथवा जैसे दिग्गजहोतीहे ऐसे महापराक्रमीहे इन्होका मधुरवचनवाले उत्तरदानकर्के प्रसनकर २७

अमरप्रतिमाः सर्वे शत्रुसाहाः परंतपाः एकोपि हि सुखायैषां समर्थो इति मे मतिः २८

श्री॰
राय॰
टी॰
४८

यह सभही लोकपालोकी न्याई शत्रुजेताहै परमप्रता
पीहै इन्होंविषे एक एकभी मोको अतिसुखकारीहै
यह मेरी बुद्धि कहतीहै २८

किंपुनः पुरुषव्याघ्र पतयोमे नरर्षभाः सम
स्तानींद्रियाणीव शरीरस्य विचेष्टने २९
हे पुरुष श्रेष्ठ यह सभही मेरी पति मोको क्यों सुखकारी न
होवे जैसे सभही इंद्रिया शरीरके चेष्टाकरणेको समर्थहोतीहै

२९

अमृतं तं नाब्रवीत् श्वश्रूः सर्वज्ञा सर्वदर्शिनी यु
धिष्ठिरस्त्वां पांचालि सुखेधास्य त्युत्तमे ३०
हे राजन् मेरी सासजोहै तुह्मारी माता कुंती सो सर्वज्ञ
है सर्वनिमित्त ज्ञानवालीहै कदापि मिथ्यावादिनी नही
है सो तोको मेरे वरदान कहतीभई हे युधिष्ठिर यह द्रौ
पदी पांचालराजकी सुताहै तोको सदाउत्तम सुखको
देवेगी ३० ॥

हत्वाराज सहस्राणि बहून्याशु पराक्रमः तन्म
तं संप्रपश्यामि मोहात्तव जनाधिप ३१
तेरे जो भ्राताहै भीमार्जुनादिक इन्होंने अपने पराक्रम ब
लकर्के अनेक सहस्रराजे मारेहै महापराक्रम कियेहै
से ऐसी कहतीहो तेरे शोकमोहसे इन्होंका किया पराक
म सभवृथा भयेहै ३१ ॥

येषा मुन्मत्तको ज्येष्ठः सर्वे ते प्युत्सारिणः तवो
न्मादा महाराज सोन्मादाः सर्वपांडवाः ३२
जिन्होंका ज्येष्ठभ्राता तूं ऐसा विक्षिप्त चित्तभयाहै यह स
भही तेरी आज्ञानुसारीहै तातें सभही पांडवतेरे
मोहसे उन्मादी भयेहै ३२

यदिहिस्यु रनुन्मत्ता भ्रातरस्ते नराधिप बद्धात्वां
नास्तिकैः सार्धं प्रशासेयु र्वसुंधराम् ३३
जो तेरे भ्राता स्वतंत्र उन्मादी होवे तोको बांधकर्के आपना
स्तिकहै तिन्होंका तेरेसाथही बांधलेवे तोको मूढजैसा
करदेवे जोनसा अपने धर्मकर्मके कल्याणको नहीमानताहै

३३

करोति मौढ्य मेवं यः सश्रेयोनाधि गच्छति भूपैवं
जन योगैश्च नस्य कर्मभि रेवच ३४
औषधोकर्के उसके चिकित्सा होतीहे जो वास्तव उन्माद
रोगकर्के उन्मादीहोवे उन्माद रोगवाला भूपोकर्के अंज
नोकर्के और नस्तफस्तादि जतनकर्केभी उसकी चिकि
त्सा होतीहै जो पुरुष अपने चितकर्के उन्मादी होवे उ
सकी चिकित्सा विचार विना नही होती ३४
भेषजैः सचिकित्सः स्या यउन्मार्गेण गच्छति सांदृ
सर्वाधमा लोके हीणां भरत सत्तम ३५
जिसको कुंतीने तलारेको सावका हेतकहाहे सो मे संपू
र्ण इन्द्रियोंविषे अधमभईहे बहोड अवजीवनाचाहतीऊं
तथा विरहिता पुत्रै र्याहृ मिच्छामि जीवितं पते
षां यतमानानां नमेद्य वचनं मृषा ३६
तेरीभ्राता सावके यतनको करतेहे इन्द्रके वचनको
ने हथा करताहे ताते मेरावचन अवमिथ्यानहीहे मेरे
दुःखका आपत्तेही कारण वनाहे पृथिवीको त्यागकर्के
सभको आपदा सजताहे ३६
त्वंतु सर्वां महीं त्यक्त्वा करुषेह्य परापदं यथा
सवां संमतौ राज्ञां पृथिव्यां राजसत्तमौ ३७
हे राजन् जैसे पृथिवीमो मांधाताराजा अंवरीषराजा रा
जधर्मकर्के समस्त राज कुलविषे परमश्रेष्ठ विराजमा
नभयेहे तैसे तूंभी अव शत्रुजयकर्के विराजमानहोा१
मांधाता चांवरीषश्च तथा राजन्य सत्तमः प्रशा
धि पृथिवीं देवीं प्रजाधर्मेण पालयन् ३८
सपर्वत वनद्वीपा माराजन् विमनाभव यज
स्व विविधे र्यज्ञैः पुष्यस्वारी न्प्रयच्छच ३९
प्रजाको पालनकर पर्वत वनद्वीप संयुक्त समग्रपृथिवी
देवीको राजधर्म कर्के पालनकर उदास मनमतहोवे
धनानि भोगा न्वासांसि द्विजातिभ्यो नृपोत्तम ३९
धनानि भोगा न्वासांसि द्विजातिभ्यो नृपोत्तम ३९
नृपोत्तम महोकर्के नानाप्रकारके यज्ञोकर्के वचनकर पु

श्री.
रा.प.
टी.
५९

इकर शत्रुगणोंको रणमें जीतो ब्राह्मणोंको बांधवोंको ध
नसंपदा भोगसंपदाको देवो ३५ ॥

इतिश्रीमहाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मे द्रौपदीवा
क्यंनाम चतुर्दशोध्यायः ॥ १४ ॥

वैशंपायनउवाच ॥ याज्ञसेन्या वचः श्रुत्वा पु
नरेवार्जुनोब्रवीत् अनुमान्य महाबाहुं ज्येष्ठंभ्रा
तर मच्युतं १ ॥ वैशंपायनउवाच हे राजन् द्रौ
पदीके वचनको श्रवणकरकेभी राजाने उत्तरनही कि
या तो अर्जुन महाबाहु ज्येष्ठभ्राताको त्यागनिश्चयसे
अचल जानकरके वहीउवचन कहताभया १

अर्जुनउवाच दंडः शास्ति प्रजाः सर्वाः दंडएवा
भि रक्षति दंडः सुप्तेषु जागर्ति दंडंधर्मं विदुर्बुधाः २

अर्जुनउवाच हे राजन् जो द्रौपदीने वचनकहाहै सो
यथार्थहै राजदंड सर्वप्रजाको शासन करताहै दंड
ही प्रजाकी रक्षा करताहै समस्त लोक जब निद्रा वशहो
तेहै तब दंडही जाग्रत होताहै पंडितलोक दंडको
धर्मका मूल कहतेहै २ ॥

धर्मं संरक्षते दंड स्तथैवार्थं जनाधिप कामं संर
क्षते दंड स्त्रिवर्गो दंड उच्यते ३ ॥

दंडधर्मके रक्षाकरताहै दंड अर्थकीकरताहै दंडकाम
की रक्षा करताहै धर्म अर्थ कामरूप त्रिवर्ग नामकरके
दंडही कहाहै ३ ॥

दंडेन रक्षते धान्यं धनं दंडेन रक्षति एवं विद
न्नुपाधत्स्व भावं पश्यस्व लौकिकं ४ ॥

दंडकरके धान्यरक्षा होतीहै दंडकरके धनकी रक्षाहोतीहै
आप सर्वज्ञके ऐसे जानकरके लौकिकव्यवहारको प्राप्तहोवो ४

राजदंड भयादेव पापाः पापं नकुर्वते यमदंड
भयादेके परलोक भयादपि ५

एक प्राणी राजदंड भयसे पापको नही करते एक प्राणी
यमदंड भयसे पापनही करते एक प्राणी परलोक पी
डासे भयसे नही करते ५

परस्पर भयादेके पापाः पापं नकुर्वते एवं सां
सिद्धिके लोके सर्वं दंडे प्रतिष्ठितम् ६
एक प्राणी परस्पर निंदाभयसे पापनही करते इसप्र
कार लोक व्यवहार सिद्धवनाहै सर्वलोक मर्यादा दंड
मेही प्रतिष्ठितहै ६ ॥
दंडस्यैव भयादेके नाखादंति परस्परं अंधेतम
सि मज्जेयु यदि दंडो नपालयेत् ७ ॥
दंडके भयसे केते प्राणी परस्पर शरीरधनको नही
खोइलेते जो दंड प्रजापालन नही करेतो संपूर्णप्राणी
अंधतमविषे मज्जनहोजावे ७
यस्माद्दांता न्दमय त्यशिष्टा न्दंडयत्यपि दम
नात् दंडनाच्चैव तस्माद्दंडं विदुर्बुधाः ८
प्रजाके भतक जीवोके देहको दंडहि दंडकरके दमनक
रताहै धनापहारी अशिष्ट लोकोको वित्तापहार शास
दंड^ नरूपकरताहै इसीसे इसको बुधजन दंडनामकरके कहतेहै
वाग्दंडो ब्राह्मणानां क्षत्रियाणां भुजार्पणं दानदं
डाः स्मृतावैश्या निर्दंडः शूद्र उच्यते ९
हेराजन् राजाका दंड सर्वजनोके उपरहै तद्वअपराध
विषेभी राजाने दंड करतव्यहै ब्राह्मणोको वाणीकरके अ
नादरकरणा दंडकहाहै क्षत्रीको अधिकारसे उतारके
भोजनमात्रदेना दंडकहाहै शूद्रको मजूरी विनासेवा
कराणी दंडकहासे ९
असंमोहाय मर्त्यानां मर्त्य संरक्षणायच मर्यादा
स्थापिता लोके दंडसंज्ञा विशांपते १०
लोकोको अपनी जातिधर्मका मोहनही होवे और वर्णा
श्रम धर्म बनारहै इसवास्ते जोमर्यादा जो स्थापनकीनी
उसकी दंडसंज्ञा प्रसिद्ध वनीहै १०
यत्र श्यामो लोहिताक्षो दंडश्चरति सूद्यतः प्रजा
स्तत्र नमुह्यंते नेतचेत्साधु पश्यति ११
हे राजन् जिसको दृढप्रहारवाला दंडहोताहै उसके
नेत्रोके आगे अंधकारकी श्यामता होतीहै जो दंडकर

श्री॰
रा॰ धं॰
टी॰
५॰

50

ताहै उसका मुख क्रोधकरिकै रुधिर सरीषा रक्तवर्णहो
ताहै ताते जहां श्यामवर्ण और लोहितमुख दंडविधी
से उद्यत होताहै तहां प्रजा धर्मलोपकरिकै मोहितनही
होतीहै परंतु दंडकरणेहारा दंडमर्यादाको विचार
करिकै देषै तबही दंडधर्म होताहै ११

ब्रह्मचारी गृहस्थश्च वानप्रस्थश्च भिक्षुकः दंड
स्यैव भयादेते मनुष्या वर्त्मनि स्थिताः १२

हे राजन् ब्रह्मचारी गृहस्थ वानप्रस्थ संन्यासी यह स
भही आश्रम दंडभयसे अपने अपने धर्मविषे स्थित
है और मनुष्यभी धर्ममार्गविषे स्थितहै १२

नाभीतो यजते राजन्नाभीतो दातुमिच्छति ना
भीतः पुरुषः कश्चित्समये स्थातुमिच्छति १३

दंडके भयविना राजायज्ञनही करता दंडके भयविना दा
ता दाननही करता दंडकी भयविना कोई मनुष्यभी अ
पनी मर्यादाको स्थिरनही करसकता १३

नाछित्वा परमर्माणि नाकृत्वा कर्म दुष्करं
नाहत्वा मत्स्यघातीव नाप्नोति महतीं श्रियं १४

पराये मर्म अंगोके छेदकिये विना और दुसकर कर्मकि
ये विना और शत्रुगणके घातकिये विना मत्स्यघाती
पुरुषकी न्याये कोईभी महासंपदाको नहीपावता १४

नाघ्नतः कीर्त्तिरस्तीह नवित्तं नपुनः प्रजाः इं
द्रो वृत्रवधे नैव महेंद्रः समपद्यत ॥ १५

जो पुरुष दुष्टजनको नही मारै तो कीर्त्ति उसकी नही
होती संपदानही होती न प्रजा वश होतीहै इसी
कारणसे इंद्रजोहै सो वृत्रको मारणेकरिकै स्वर्गमे
महेंद्र देवराज बनाहै १५

यएव देवा हंतार स्तां लोको र्चयते भृशम्
हंता रुद्र स्तथा स्कंदः शक्रोग्नि र्वरुणो यमः १६

जो देवता दुष्टवधको करतेहै उनको लोक सभ अति
वंदना करतेहै रुद्रजी संहार करताहै सो सर्वलोक
का वंदनीय भयाहै ऐसीहै स्कंदस्वामी लोकका

बंधनीयहै इंद्रभी सर्वपूज्य भयाहै अग्नि और वरुण और यम सभही दुष्टोके बधसे सर्वलोकके पूज्यभयेहै १६

हंताकाल स्तथामृत्यु र्वायुः वैश्रवणो रविः

वसवो मरुतः साध्या विश्वेदेवाश्च भारत १७

कालसंहार कर्ताहै मृत्यु घात कर्ताहै कुबेर घातकर्ताहै अष्टवसु घातकरताहै मरुतगण घातकरताहै साध्यदेवता घातकारीहै विश्वेदेवभी दुष्टोके घातकारीहै

एतान्देवा न्नमस्यंति प्रताप प्रणताजनाः न

ब्राह्मणं नधातारं नपूषाणं कथंचन १८

यह एते देवता दुष्टोके घातकरताहै इन्होके प्रतापकर्के सभही जन नम्र शिर होकर इन्हको पूजा नमस्कार करतेहो ब्रह्मा और दाता प्रजापति पूषा यह देवता घातकारी नहीहै ताते इन्हको पूजानमस्कार नही करते १८ ॥

मध्यस्था न्सर्वभूतेषु दांतां च्छम परायणान्

यजंते मानवाः केचि त्प्रशांताः सर्व कर्मसु

हे राजन् जो देवता ब्रह्मादिक सर्वभूतो विषे मध्यस्थहै विरोध प्रेमरहितहै देवता असुरोके हितकारीहै आप दम शम परायणहै इन्होको कोई मनुष्य यजनकरतेहै जो मनुष्य यज्ञयागादि सांगोपांग सर्वक्रिया कुशलहै ॥ १९

नहि पश्यामि जीवंतं लोके कंचिदहं तमया

सत्वैः सत्वाहि जीवंति दुर्बलै र्बलवत्तराः २०

प्राणधारी जीवनावाला ऐसा इसलोकविषे जीवनही देखा जोनसा हिंसावर्जितवृत्तिहै जीवोंकर्केही जीवोंकी जीवका बनीहै दुर्बल जीवोंको बलवान जीव जीवका करलेतेहै २० ॥

नकुलो मूषकानत्ति बिडालो नकुलं तथा बिडालमत्ति श्वाराजन् श्वानं व्याल मृगस्तथा २१

मूषकेकोनकुलखाताहै नकुलको बिडालखाताहै बिडा

१७

श्री॰
रा॰ प॰
टी॰
५१

51

लको खानबोलेताहै खानको विरुमग बोलेतेहै २१

ताननि पुरुषः सर्वान् पशपकालो यथागतः प्रा
णस्यान्न मिदं सर्वं जंगमं स्थावरं चयत् २२

विरुमगोंको मनुष्यमाव खाताहै देखो समकाकाल
ऐसीही बनाहै यह स्थावर जंगम जगत् सभप्राणोकी
भोजनका अन्नबनाहै २२

विधानं दैवविहितं यत्र विद्वा न्नमुह्यति यथा
सृष्टोसि राजेंद्र तथा भवितु मर्हसि २३

यह प्राणोको भोजनविधान देवगतीकर्के बनाहै इस
विषे बुधजन मोहतनही होता ताने विधाताने हे रा
जन् विधाताने जिसविधिकर्के तोको लची कीताहै तै
से विधिसे तुं अपने लत्रधर्म विधीमो सावधानता
करणे योग्यहै २३ ॥

विनीत क्रोध हर्षादि मंदावन मुपाश्रिताः वि
नावधं नकुर्वंति तापसाः प्र णयापनम् २४

जो तपस्वी लोकहै सो क्रोधहर्ष जीतलेतेहै वनवास
करतेहै ऐसी तपस्वीभी वनविषे हिंसा विना प्राण
धारणको नही करते २४ ॥

उदके बहवः प्राणाः पृथिव्यां च फलेष्वपि न
चकश्चिन्नतान् हंति किमन्यत् प्रणयापनात् २५

जल विषे वहोत प्राणी होतेहै पृथिवीमे फलोविषे
अनेक प्राणी होतेहै उनको कोननही मारता हिंसा
विना और कोन प्राणधारणा बनीहै २५

सूक्ष्मयोनीनि भूतानि तर्कगम्यानिकानिचित्
पक्ष्मणोपि निपातेन येषांस्यात् स्कंदपर्ययः २६

हे राजन् जो कोई सूक्ष्मयोनि भूतहै सो प्रत्यक्षदृष्ट
नही होते विचारसे ज्ञातव्यहै जिनका घात नेत्रो
की पलकमात्रसे होताहै २६ ॥

ग्रामान्निष्क्रम्य मुनयो विगत क्रोध मत्सराः
वने कुटुंबधर्माणो दृश्यंते परमोहिताः २७

जो मुनिलोक गृहसे निकसेकर वनवास करतेहे क्रोधहिं
साको त्यागकरतेहे वनविषेही कुटुंबपोषणकरतेहे
सोभी हिंसाकर्मको मोहितदेषेहे २७
भूमिं भित्वौषधी छित्वा हत्वादीन् अण्डजान् पशून्
मनुष्यां स्तन्वते यज्ञो स्तेस्वर्गं प्राप्नुवंतिच २८
कंदमूलवासते पृथिवीको भेदकरतेहे वनोंको औषधी
तृणोको छेद करतेहे वृक्षोंको छेदकरतेहे पंखीगणो
कोमारतेहे ऐसी मनुष्यों तहां उसी सामग्रीकर्के यज्ञ
करतेहे और स्वर्गको जातेहे हिंसात्याग वनमोभी नहीहोता

दंडनीतौ प्रणीतायां सर्वे सिध्युत्युपक्रमाः कौं
तेय सर्वभूतानां तत्र मे नास्तिसंशयः २९
हे कौंतेय दंडनीतिके विधानमो सर्वभूतोके जीवनादिप्र
रंभ सिद्धहोतीहे इसमो मोको संशयनहीहे २९
दंडश्चेन्न भवेल्लोके भक्षयेयुरिमाः प्रजाः जले
मत्स्यानि वा भक्ष्यान् दुर्बलान् बलवत्तराः ३०
ताते हे राजन् लोकविषे जो दंडनही होवे तो यह सभ
ही प्रजानाशहोजावे जलविषे मत्स्योकी न्याई दुर्बलोको
बलवान प्राणी मार खावेगे ३०
सत्येनेदं ब्राह्मणैः पूर्वमुक्तं दंडः प्रजारक्षति सा
धुनीताः पश्यान्नयश्च प्रतिशाम्यभीताः संतर्जिता
दंडभया ज्वलंति ३१ ॥
ब्रह्मजीने यहवचन सत्यविधानसे कह्याहे जो दंडहे
सो प्रजाको सावधानतासे रक्षाकरताहे यह वार्ता तुम
प्रत्यक्षदेखो अग्निजोहे सो द्वितीयग्रासके दंडभयसे शी
घ्रप्रज्वलित होतीहे ३१ ॥
अंधंतम इवेदंस्यान्न प्रज्ञायेत किंचन दंडश्चेन्न
भवेल्लोके विभजन्साध्वसाधुनी ३२
जो इसलोकविषे दंडनही होवे तो समग्र जगत अंधत
म जैसा हो जावे अपना पराया कछु ज्ञातनही होवे
साधु असाधु मर्यादाभी खंडित होजावे ३२ ॥
येऽपि संभिन्नमर्यादा नास्तिका वेदनिंदकाः ॥

तेपि भोगाय कल्पंते दंडेनाशु निपीडिताः २३
जोनसे दुष्टपुरुष मर्यादाभेद करतेहै नास्तिकहै
वेदनिंदाको करतेहै सोभी दंडकी पीडाकर्के शीघ्रही
मर्यादा पालनसे सकलधर्म मर्यादाके भोगसाधक
होतेहै २३

सर्वो दंडजितो लोके दुर्लभोहि शुचिर्जनः दंडस्य
हि भयाद्भीतो भोगायैव प्रवर्तते २४ ॥
हे राजन् सभही लोकदंडसे जीता जाताहै स्वभावक
के पवित्राचारवाला जन इसलोकविषे दुर्लभहै दंडके
भयसे उग्रस्वभावभी मर्यादा पालनेको प्रवृत्तहोताहै २४

चातुर्वर्ण्यप्रमोदाय सुनीत नयनायच दंडोवि
धात्रा विहितो धर्मार्थो वभिरक्षितं २५
विधाताने दंडजोहै सो चातुर्वर्ण्यके सुखवासे सुंद
र नीतिके प्रभ्यास वास्ते और धर्म ग्रर्थकी रक्षावा
सते कल्पन कियाहै २५

यदिदंडान्न बिभ्येयु र्वयांसि स्वापदानिच प्राङ्
पशून्मनुष्यांश्च यज्ञार्थानि हवींषिच २६
गृध्रादि पंखी सिंहादि मृगजो दंडसे भयभीत नही
होवे तो मनुष्योंको खालेवे और यज्ञके साधन जो
होमद्रव्यादिक तिन्होंकोभी खालेवे २६

नब्रह्मचार्य धीयेत कल्याणी नदुह्येतगाम् नक
न्योद्वहनं गच्छे द्यदि दंडो नपालयेत् २७
जो दंड सर्व प्रकारसे पालन नही करेतो वेदको को
ईनही पढे और सुशील गौका दुग्ध दोहन नही
होवे कन्याविवाहभी धर्मसे नही होवे २७

विश्वलोपः प्रवर्तेत भिद्येरन्सर्वसेतवः ममत्वंन
प्रजानीयु र्यदिदंडो नपालयेत् २८
जो दंडकर्के लोकपालन नही होवेतो सर्वत्र धर्मलो
प होजावे सभही धर्ममर्यादा खंडित होजावे सभ
ही लोक ममताकी मर्यादाको नकरे सर्वत्र बल

वान जाति अपनी ममता कोही करे ४८

नसंवत्सर सत्राणि तिष्ठेयु रकुतोभयाः विधिव
द्दक्षिणावंति यदि दंडो न पालयेत् ४९
जो दंडपालन नही करे तो संवत्सर विधान मंत्र नि
र्भयतासे विधिवत दक्षिणावाले कदापि प्रवृत्त नहीहोते
चवेद्वर्णाश्रमेधर्मे यथोक्त विधिमाश्रितः नविद्यां
प्राप्नुयात्किंचि यदि दंडो नपालयेत् ५० ॥
जो दंडपालना नहीकरे तो अपने आश्रमविषे चारो
वर्ण धर्ममर्यादाकी विधिको नही आश्रयकरे विद्या
भ्यास कबीही नहीबने ५० ॥
नचोष्ट्रा नवलीवर्दा नाश्वाश्वतरगर्दभाः युक्ता
वहेयु र्यानानि यदि दंडो न पालयेत् ५१
जो दंडकी पालना नाबने तो ऊष्ट्र बलीवर्द वृषभ अ
श्व औेर खच्चर गर्दभादिक यथार्थ मर्यादाकर्के भार
को नही उठावे ५१ ॥
नप्रेष्या वचने कुर्यु नवाला ज्ञात कर्हिचित्
तिष्ठेत्पितृमती स्वर्मे यदिदंडो न पालयेत ५२
जो दंडपालना जगतमो नाबने तो भृत्यलोक स्वामीव
चनको औेर बालकभी पिताके मतमो कदापि नही
रहवे ५२ ॥
दंडेस्थिताः प्रजास्सर्वा दंडं सर्वं विदुर्बुधाः दं
डे सर्वा मनुष्याणां लोकायंच प्रतिष्ठितः ५३
दंडमो सर्वप्रजा अपने धर्मसे स्थितहे दंडमो सर्वज
गतस्थितहे दंडविषे मनुष्योकी रक्षहिबनीहे लोक
प्रतिष्ठाभी दंडमो प्रतिष्ठितहे ५३ ॥
न तत्रकूटं पापंवा वंचनापि नदृश्यते यत्रदंडः
सुविहित श्चरत्यरि विनाशिनः ५४
जहा सर्वशत्रु जयकारी दंडदेवता विधिसे विचरताहे
तहां कूटधर्मनहीहोता पापनही होता वंचनानहीहोती ५४

श्री
रा.ध.
टी.
५३

हविश्चापि लिहेद्दृष्ट्वा दंडश्चेन्नोद्यतो भवेत् हरे
त्काकः पुरोडाशं यदि दंडो नपालयेत् ४५
जो दंडका उद्यमनही होवे तो होमद्रव्यको स्वानचाटले
वे जहां दंडनही होवे तहां काकयज्ञ भागको हरलेजावे ४५
यद्येवं धर्मतो राज्यं विहितं यद्यधर्मतः कार्यस्त
त्र नशोकोवै भुंक्ष्व भोगा न्यजस्व च ४६
हे राजन् जोनसा यह राज्यधर्मसे भयाहै जो तुमने इस
को धर्मसे पालनकरो तो इसविषे शोकनही करणा अ
पने धर्मनिश्चयको दृढधारणाकर्के राज्यभोगोंको तुमभोगो ४६
स्वैरं धर्मं श्रीमंत श्चरंति शुचिवाससः संवसं
तः प्रियैर्दारै भुंजाना श्चान्नमुत्तमम् ४७
तुम राज्यधर्मको पालनकरो सर्वसंपदावाले स्वेच्छ
से धर्मकार्यको करतेरहो गेर शुद्धवस्त्र शुद्धनिवासको
पावेगे सभही लोक अपने अतिप्रिय कुटुंबसाथ
उत्तम अन्नको भोजनकरेगे ४७
अर्थे सर्वे समारंभाः समायत्ता नसंशयः सच
दंडे समायत्तः पश्यदंडस्य गौरवम् ४८
एसा करणे कर्के सभही शुभकार्यके प्रारंभवनेगे य
ज्ञप्रारंभवनेगे यज्ञ प्रारंभ भी सावधान होवेगे जो क
छु शुभकार्यहै दंडके अधीन होताहै इसप्रकार तु
म दंडके माहात्म्यको विचारदेखो ४८
लोकयात्रार्थ मेवेह धर्मप्रवचनं कृतं अहिंसा
साधु हिंसेति श्रेयान्धर्म परिग्रहः ४९
हे महाराज धर्मका वचन विस्तार लोकयात्रावास्ते
कियाहै इसविषे अहिंसा दंडधर्म अच्छी नहीहै हिं
साही अच्छीहै अपने धर्मका पालनही श्रेष्टहै ४९
नात्यंतं गुणवत्किंचि न्नचाप्यत्यंत निर्गुणम् उभ
यं सर्वकार्येषु दृश्यते साधुः साधु वा ५०
इसलोक ब्यवहारविषे अत्यंत गुण संयुक्त कछु वनान

ही अत्यंतगुणहीनभी कछुनहीं बना सर्वकार्योविषे गुण अवगुण दोनो दृष्टहोतेहें ५०

पशूनां वृषणं छित्वा ततो भिंदंति मस्तकम्
वहंति बहवो भारा न्बध्नंति दमयंतिच ५१

देषो प्रथम पशुयोनीके वृषणोंकों छेदन करतेहें व होइ शृंगवृद्धि अत्यंतनहीहोवे इसहेतूसे शिरको ग्रहण करतेहें फेर उह्नसेही जलवाहनादिकार्य करा वतेहें वहोड पशुबंधन करतेहें बहोड दंडप्रहार दंडभी करतेहें ५१ ॥

एवं पर्याकुले लोके वितथे जर्जरी कृते तैस्तै
र्न्यायै महाराज पुराणं धर्ममाचर ५२

इस प्रकार यह लोक अवहार हिंसादि दोषकर्के पू र्णहे इसका गुणागुण विचार वृथाहे दंडकर्केही पशुयोनीसे भारवाहनादि कार्यहोतानहे इत्यादि अवर न्याय युक्ति कर्के विचारकरो जैसे पूर्वले लो कपुरातन धर्मको करतेभये तैसे तुमभी अपने धर्म को करो ५२ ॥

यजदेहि प्रजारक्ष धर्मं समनु पालय अमि
त्रान् जहि कौंतेय मित्राणि परिपालय ५३

हे महाराज अपने धर्मकर्के यज्ञकरो दानकरो प्रजा की रक्षाकरो लोकधर्मको पालन करो शत्रुगणको मारो मित्रोकी रक्षाकरो ५३

माचते निघ्नतः शत्रून् मन्युर्भवतु पार्थिव न
तत्र किल्बिषं किंचि त्कर्तुं भवति भारत ५४

नोको दुष्टशत्रु मारणविषे मनविषे क्रोधशंकाका दोषनहीहोवे दुष्टशत्रुके मारणविषे कर्ताकोपापनहीहे

आततायीहि योहन्या दाततायिन मागतं न
तेन भ्रूणहासस्या न्मन्युस्त न्मन्युमृच्छति ५५

जो कोई अपने धर्मको धर्मको हरण करताहे ॥

५४

श्री
शा.प.
टी.
५४

सो आततायी होताहै उसको आपभी आततायी होकर मारै तो उसवधकर्के वधकर्ताको दोषनहींहोता उस-का पापही वधकर्ताको क्रोधरूपतासे मारताहै ५५

अवध्यः सर्वभूतानां मंतरात्मा नसंशयः अव-ध्ये चात्मनिकथं वध्यो भवति भारत ५६

आत्मा सर्वभूतों विषे अवध्यहै इसमें संदेह नहींहै जो अवध्यहै तो किसीसे सो मरता नहींहै ५६

यथाहि पुरुषः शालां पुनः संप्रविशेन्नवां एवं जीवः शरीराणि तानितानि प्रपद्यते ५७

जैसे कोई पुरुष नवी पर्णशाला बनाइकर पुराणीशा-लाको त्यागकर्के प्रवेश करताहै जैसे जीवभी नए शरीरोंको प्रवेशकरताहै पुराणी देहको त्यागकर नये शरीरका अभिमानी होताहै ५७

देहान्पुराणा नुत्सृज्य नवान्संप्रति पद्यते एवं म-त्यु मुखान्याहु र्जनाये तत्वदर्शिनः ५८

हे राजन् जो तत्ववेत्ता जनहैं सो इसप्रकार जन्ममृ-त्यु सब दुःखको प्रवाहरूप जानतेहैं ५८ ॥

इतिश्री महाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मे अर्जुनवा-क्यं नाम पंचदशो ध्यायः ॥ १५ ॥

वैशंपायनउवाच अर्जुनस्य वचः श्रुत्वा भीम सेनो त्यमर्षणः धैर्यमास्थाय तेजस्वी ज्येष्ठंभ्रा-तर मब्रवीत् ॥ १ ॥

वैशंपायनउवाच हे राजन् जनमेजय इसप्रकार अ-र्जुनके वचनको श्रवणकर्के भीमसेन अतिक्रोधवा-लाहै सो महाधैर्यकर्के अति तेजस्वी अपने ज्येष्ठभ्राता-को वचन करता भया १ ॥

राजन् विदित धर्मासि नतेस्त्य विदितं क्वचित् उपशिक्षामते वृत्तं सदैव नचशक्नुमः २

हे राजन् आपधर्म वेत्ताहै तोको अज्ञान कछुनहींहै

हमतेवे चरित्रकी शिक्षाके अनुसार होतेहैं परंतु स
र्वकाल करणेको नही समर्थ होते २
नवक्ष्यामि नवक्ष्यामी त्येवं मनसि संस्थितम्
प्रतिज्ञाःखोतु वक्ष्यामि तन्निबोध जनाधिप ३
ऐसे धर्मज्ञराजाके सामने अपने प्रज्ञाका वचननही
कहना ऐसे मनको बतनेकाहै अब प्रतिज्ञाःविवेक
हनाहै हे प्रभो इसको विचारो ३
भवतः संभ्रमोद्देन सर्वं संशयितं हृतं विक्ल
वत्वेच नः प्राप्तं मवलत्वे तथैवच ४
आपकी धर्मसूक्ष्मताकर्के हमारा सर्वभोग सभही अ
ति संशयको प्राप्तभयाहै बहुत कायरता भईहै अब
लताभी भईहै ४ ॥
कथं हि राजा लोकस्य सर्वशास्त्र विशारदः
मोहमापद्यसे धेन्या यथाका पुरुषस्तथा ५
हे राजन तूं सर्वलोकका राजाहै सर्वशास्त्रोकेविचा
रमो चतुर होकर बुद्धिमोहको काइर जैसा कैसे
प्राप्तहोताहै ५
आगतिश्च गतिश्चैव लोकस्य विदिता तव आ
यत्यांच तदात्वेच न तेस्त्य विदितं प्रभो ६
तैसे लोकोकी गती जानीहै अगतीभी जानीहै का
र्यके अंतकालमो परिणामफल वर्तमानकालमो
मुक्तिमार्गतेको अज्ञाननहीहै ६
एवंगते महाराज राज्यं प्रति जनाधिप हेतु
मत्र प्रवक्ष्यामि तमिहैक मनः शृणु ७ ॥
हे महाराज इसी प्रकार तुह्मारे मनमो सभ वीतग
याहै तब राज्यप्राप्ति कालमो जो हेतु बनाहै इसको
एकाग्र मनकर्के श्रवणकरो ७
द्विविधो जायते व्याधिः शारीरो मानस स्तथा पर
स्परं तयो र्जन्म निर्द्वंद्वं नोप लभ्यते ८ ॥
दो प्रकारकी व्याधि सभको बनीहै एकशारीरकीव्या

धी रोगादिकही एका मानसव्याधी चिंता शोकादिक
है इनका परस्पर जन्मबनाहै इसमे परस्पर जनम
बनाहै इसमे परस्पर साध्य साधकता विनादुःख
की असंभवता दृष्टनही होती ८

शरीरा जायते व्याधि र्मानसो नात्रसंशयः मा
नसा जायते व्याधिः शारीर इव निश्चयः ९

शरीरव्याधीसे मानसव्याधी होतीहै मानसव्याधी
से शारीरव्याधी होतीहै इसमे संशयत्यागकर्के नि
श्चयकर्तव्यहै ९ ॥

शारीरं मानसं दुःखं यो तीत मनुशोचति
दुःखेन लभते दुःखं द्वावनर्थौच विंदति १०

जो पुरुष वीतगई शारीरव्याधीके दुःखको अथवा मा
नसव्याधीके दुःखके शोचताहै सो पुराणे दुखकर्के
नयेदुखको प्राप्तहोताहै उसको द्विगुण दुखप्राप्तहोताहै

शीतोष्णे चैव वायुश्च त्रयः शारीरजा गुणाः
तेषां गुणानां साम्यंच तदाहुः स्वस्थ लक्षणं ११

शारीर व्याधीके भेदको कहतेहै शीत उष्ण जिनकी
प्रकृतीहै सोकफ पित्तहै तीसरा वातहै यहतीन
शारीरव्याधीहै इन तीनोके गुणशरीरमे समान
होवेतो शारीरस्वस्थ वनारहताहै ११

तेषा मन्यतमो द्रेके विधान मुपदिश्यते उ
ष्णेन वाध्यतेशीतं शीतेनोष्णं प्रवाध्यते १२

इन तीनोविषे एक अधिकहोवे तो रोगी शारीर
होताहै उसका विधान कहतेहै उष्ण चिकित्सासे
कफका वाधहोताहै शीतचिकित्सासे पित्तका वाध
होताहै १२ ॥

सत्वंरज स्तमइति मनसः स्युः त्रयोगुणाः
तेषां गुणानां साम्यंच तदाहुः स्वस्थलक्षणं १३

अव मानस व्याधि कहतेहै सत्वगुण रजोगुण तमो
गुण यह तीनोगुण मानस व्याधीके मूलहै तीनगु

णाकी समानता मनकी स्वस्थता होतीहे १३
तेषां मध्यतमो ह्येके विधानमुपदिश्यते हर्षेण
बाध्यते शोको हर्षः शोकेन बाध्यते १४
इन्ह तीनोविषे एककी अधिकता होवे तो तहांभी वि
धान कहतेहे हर्षकर्के शोकका बाध होताहे शोका
कर्के हर्षका बाधहोताहे १४
कश्चित्सुखे वर्तमाने दुःखस्य स्मर्तु मिच्छति
कश्चिद्दुःखे वर्तमानः सुखस्य स्मर्तु मिच्छति १५
कोई मूढपुरुष स्त्रीभोग कालविषे नष्टभये पुत्रस्मर
णकर्के हर्ष शोकेकर्के दुखबाधा करताहे कोईवत
रपुरुष दुःखकालमो सुखसंपदाको स्मरणकरताहो
शोकको हर्षकर्के बाधाकरताहे १५
सत्वं नदुःखी दुःखस्य नसुखीच सुखस्यवा न
दुःखी सुखजातस्य नसुखी सुखजस्यवा १६
हे राजन् ततो सुखदुःखसे प्रसंगसे त्रैकालविषेभी
मानस सुख दुःख शरीर दुख स्मरणकर्के सुखदुख
स्मरणकरणे योग्यनहीहे सुखकालमो दुःख स्मरण
नहीकर दुःखकालमो दुःखको नहीजान जो पूर्व
ले सुख दुःखको स्मरण तोको योग्यनहीहे १६
स्मर्तु मर्हसि कौन्तेय दिष्टंहि बलवत्तरं अथवा
ते स्वभावोयं येनपार्थिव लिप्यसे १७
जो तूं पूर्वले दुःखको स्मरण करताहे तो देवगती
बलवानहे अथवा तेरा स्वभाव दुखको स्मरणकर्के
दुखीहोताहे प्रतिलोमामानताहे तो अवणाकर १७
दृष्ट्वा सभागतां कृष्णा मेकवस्त्रां रजस्वलां मिष
तांपांडुपुत्राणां नतस्य स्मर्तु मर्हसि १८
तेने द्रोपदी एकवस्त्रा और रजस्वला इसको देखतेही
कौरव सभामो आनप्रासकीनीहे इस दुःखको क्यों
स्मरण नही करता १८
प्रव्राजनं च नगरा दजिनैश्च विवासनं महा

श्री॰
वा॰ध॰
टी॰
५८

५६

वासं निवासंच नतस्य स्मर्तुं मर्हसि १९

वसे हमको निकासदिया और मृगाजिन पहिरेहे महावनविषे दीर्घकाल वासभया उसको क्यों नही स्मरनकरता

जटासुरात्परिक्लेशं चित्रसेनेन चाहवं सैंधवात्परिक्लेशं कथं विस्मृत वानसि २०

जटासुरका क्लेशभयाहे चित्रसेन गंधर्वके साथ महा युद्ध भयाहे और जयद्रथकर्के द्रौपदीको दुःखभया उसको क्योंनही स्मरणनही करता २० ॥

पुनरज्ञात चर्यायां कीचकस्य पदाहृतं द्रौपद्या राजपुत्र्याश्च कथं विस्मृत वानसि २१ ॥

वहोउ विराट नगरमो अज्ञात वासभया तहां द्रौपदीको कीचकने पाद प्रहार किया उस दुःखको तेने क्यों विस्मरणकियाहे २१

यच्चते द्रोणभीष्माभ्यां युद्धमासीदरिंदम मनसैकेन तद्युद्ध मिदं घोर मुपस्थितम् २२

जो तेरे साथ भीष्मद्रोणके साथ एक मनकर्के युद्धभया जैसे द्रोणादिक तेरे मनसे पृथक भये तैसे तेरेसे मनभी पृथगहे जो तूं मनको एकाग्रतासे निर्विकल्पकरे तो मनो नाशकर्के निर्विक्षेप सुखहोताहे २२

यत्र नास्ति शरैः कार्यं नमित्रै र्नच बंधुभिः आत्मनैकेन योद्धव्यं तत्ते युद्ध मुपस्थितम् २३

हे राजन् अवतोको मनविषे सर्वशोकका युद्धवनाहे जिसविषे बाणादि शस्त्रोका युद्धनही वनता उसविषे नमित्रोका सहायहे नबांधवोका सहाय वनताहे केवल एक आत्मविचारकर्के युद्धहोताहे सो युद्धतोको उपस्थितभयाहे २३

तस्मिन् निर्जिते युद्धे प्राणान्यदि विमोक्ष्यसे अन्यं देहं समास्थाय ततस्ते रपि योत्स्यसे

जो मनको जीतनेविना तूं प्राणत्यागकरेगा और देहको पायकर्केभी मनके हर्षशोक वासनाका युद्धपूर्व संस्कारसे वनेगा २४ ॥

१९

तस्मा दद्यैव गंतव्यं युध्यस्व भरतर्षभ पर
मव्यक्तरूपस्य व्यक्तं त्यक्त्वा स्वकर्मभिः २५
ताते अवही मनोजयके युद्धकरणेको विचाररूप
यात्रा कर्तव्यहै अपने जो यम नियमादि अष्टांग
योगरूप यतनहै तिन्होकरकें प्रकटदृश्यमान
स्थूलदेहको त्यागकरकें अव्यक्तरूप जो मनहै
इसको जयकरणेका शत्रुहै आत्माकी एकरूप
ताकी प्राप्तिवासते उस मनके साथ युद्धकरणेकी
सावधानताकर २५॥
तस्मिन्निर्जिते युद्धे कामवस्था गमिष्यसि
एतज्जित्वा महाराज कृतकृत्यो भविष्यसि २६
जो तुमने मनको हर्ष शोकादि त्यागकरकें नही जी
ता तो अनिर्वाच्य दुःखदशाको प्राप्तहोवेगा इस
को जीतकरकें कृतकृत्यहोवेगा २६
एतां बुद्धिं विनिश्चित्य भूतानामागतिं गतिं
पितृ पैतामहे वृत्ते शाधिराज्यं यथोचितं २२
जो तुममनदेहसे असंग आत्मविचारकी बुद्धिका
निश्चयकरोगे और भूतोकी सुखदुःखदशाकी मनो
मयकल्पनासे निश्चयकरकें पितृ पितामहके राज्य
को यथाविधि शासनकरो २२
दिष्ट्या दुर्योधनः पापो निहतः सानुगो यदि
द्रौपद्याः केशपाशस्य दिष्ट्यात्वं पदवीं गतः
वहोत शुभभया जो दुर्योधनको सपरिवार रणमे
माराहै द्रौपदीका केशपाशजो दुष्टोने आकर्षण
कियाथा उसकी अऋण पदवीको हम अवप्राप्त
भयेहै २८
यजस्व वाजिमेधेन विधिवद्दक्षिणावता
वयंते किंकराः पार्थ वासुदेवश्च वीर्यवान्
हे राजन् अवतूं वहोत दक्षिणावाले अश्वमेध
यज्ञकरो हम सभही आता किंकर तुम्हारेहै और

महाक्रमी श्रीकृस्नभी तेरी आज्ञाको करणेका वानीहे
इतिश्री महाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मे भीमवाक्यं
नाम षोडशोध्यायः ॥ १६ ॥ ॥ युधिष्ठिरउवाच
असंतोषः प्रमादश्च मदोरागः प्रशांतता बलं
मोहोभिमानश्चा प्युद्वेगश्चैव सर्वशः ॥ १
युधिष्ठिरउवाच हे भीमसेन जो तेने कहाहे मनके
असंतोषको त्यागकर्के हर्ष शोकरहित होकर्के राज्य
करो यह त्याग वचनमात्रकर्के नहीहोता किंतु मन
के निरोधकर्के होताहे चित्तकी एकाग्रता विनय वैरा
ग्यशांति धैर्य विवेक अहंकार त्याग त्याग यह राज्य
मो नही होते राज्यमो इन्होंकी विपरीतता होतीहे
असंतोष होताहे प्रमाद होताहे मदहोताहे राग
होताहे अशांति होतीहे बलहोताहे मोह होताहे
अभिमानहोताहे उद्वेग सर्वप्रकारसे होताहे १
एभिः पाप्मभि राविष्टो राज्यं त्वमभि कांक्षसे
निरामिषो विनिर्मुक्तः प्रशांतः ससुखी भव २
एते यह सभही पापमूलहे इन्होंके आवेशकर्के तै
राज्यकी वांछा करताहे तुं राज्यभोगरूपी मांसभोज
न त्यागकर्के पापकर्मसे मुक्तहोकर सदासुखीहो
संतोषादि निष्टही परम सुखी होताहे २
यइमा मखिलां भूमिं शिष्या देको महीपतिः
तस्याप्युदर मेकंवै किमिदं त्वं प्रशंससि ३
जो राजा इस्से समग्रपृथिवीको एक छत्र कर्के शास
नकरे उसको अपने देहके एक उदरकी पूर्वणा
होतीहे तो राज्यभोगको प्रशंसा करताहे ३
नाह्ना पूरयितुं शक्या नमासै र्भरतर्षभ अपू
र्या पूरयतिच्छा मायुषापि नशक्नुयात् ४
यह तृस्नारूपी उदर एकदिनकर्के पूरण नहीमास
वर्षो नही पूर्ण किया जाता इच्छारूपी समुद्रसदा गं
भीरहे इसकी पूर्ती ब्रह्माकी आयुषा कर्केभी नही
होती ॥ ४ ॥ ॥

यदीद्धः प्रज्वलत्यग्नि रसमिद्धः प्रशाम्यति अ
ल्पाहारत्वयात्वग्निं शामयेत दर्पमुत्थितम् ५
जैसे अग्नि समिधा काष्ठोंकर्के शांतनहीहो समि
धा काष्ठविना प्रशांतहोताहै यह उदरकी अग्निल।
साकर्के उदयभयाहै इसको अल्पाहारताके अभ्या
सकर्के प्रशांतकरो ५
आत्मोदरकृतेः प्राज्ञः करोति विषयं बहु
तथोदरं पृथिव्यांते श्रेयो निर्जितया जितम् ६
यह अज्ञपुरुष अपने उदरपूरणवास्ते अतिकठिन
यत्ननको करताहै इस उदरकी तृष्णाको तुमजीतनेसे
कल्याण होताहै पृथिवी जीतनेसे कल्याण नहीहोता
मानुष्यान्कामभोगांस्त्व मैश्वर्यंच प्रशंससि
अभोगिनो बलाश्चैव यांतिस्थान मनुत्तमम् ७
हे भीम तूं मनुष्य लोकके भोगके स्तुतिकरताहै ऐ
श्वर्यको स्तुति करताहै जो पुरुष भोगत्याग करतेहैं
और तपकर्के क्षीणबलभयेहैं सो अति उत्तम स्था
नको प्राप्तहोताहै ७ ॥
योगो क्षेमश्च राष्ट्रस्य धर्मा धर्मौ त्वयिस्थितो
मुच्यस्व महतो भारा त्याग मेवाभि संश्रय ८
तेरेको अलब्धवस्तुका योगबनाहै लब्धपदार्थका र
क्षणबनाहै धर्मराज संबंधभी बनाहै धर्म अधर्मका
संबंधभी यह तोको महाभारहै इसके त्यागको हे
तूं कल्याण रूपजान ८ ॥
एकोदर कृते व्याघ्रः करोति विषयं बहु तम
थैवान्ये जीवंति मंदा लोभ वशामृगाः ९
देखो व्याघ्रमृगहै सो एक उदरके वास्ते महाउग्र।
पापको करताहै उसके पीछे और क्षुद्र मृगभी
मूढतासे लोभके वशवर्ती होतेहैं ९
विषयान् प्रतिसंगृह्य संन्यासं कुर्वते यदि नव
तृष्यति राजानः पश्य बुध्यंतरं यथा १०
जो पुरुष विषयोंको अंगीकारकर्के संन्यासको करता

६

यह तुम विचारो राजालोक कदापि संतोष नहीं क
रतेहो जैसे बुद्धीका विपर्यय होताहै तैसे तुमविचारदेषो

अत्राहारै रश्मकुटैः दंतोलूखलिकै स्तथा अ
भक्षै वीरिभक्षैश्च तैरयं नरको जितः ११

इसी हेतुको कहतेहै जोनसे मुनि पत्राहार करतेहै
पाषाणकरकै पत्रमूलादिकको कूटखातेहै दंतोको
ही उखलकरकै शाकपत्रादि भोजन शुद्धकरके खा
तेहै केवल जलमात्र आहार करतेहै अथवा केव
ल पवनाहारको करतेहै तिन्होने संसाररूपी नरक हो
ताहै ॥ ११

यश्चेमां वसुधां कृत्स्नां प्रशासेद् खिलांनृपः
तुल्याश्म कांचनो यश्च सकृतार्थो न पार्थिवः १२

जो राजा समग्र इस पृथिवीको दंडकरकै शासनाकर
ताहै जो पुरुष पाषाणके कांचनको त्यागबुद्धिकरकै
एकसमान जानताहै सो कृतार्थ होताहै राजा
कृतार्थ नहीं होता १२

संकल्पेषु निरालंबो निराशो निर्ममो भव
अशोके स्थान माऽतिष्ठ इहचाऽमुत्र चाव्ययम्

हे भीमसेन तू संकल्पोविषे आलंबन मतकरो
और भोगआशा रहितहो और भोगरूपी मांसको त्या
गकर शोकरहित स्थानको आश्रयकरकै इहलो
क परलोकविषेभी जो अखंड पदकहाहै उसमें
प्रतिष्ठाकर १३ ॥

निरामिषा नशोचंति शोचसि किं त्वमामिषं
परित्यज्यामिषं सर्वं मृषावादा त्प्रमादतः १४

हे भीमसेन जो भोगरूपी मांसको त्यागकरतेहै
सो पुरुष शोचनहीं करते अरुतूं भोगरूप मांस
को शोचताहै सर्वप्रकारका भोगआशा मांसको
त्यागकरकै मिथ्यात्यागके दोषसे मुक्तहोवेगा १४

पंथानौ पितृयानश्च देवयानश्च विश्रुतौ इ
जानः पितृयानेन देवयानेन मोक्षिणः १५

इस पुरुषको देवयान पितृयान दो मार्गहै पितृ
यानजो कर्ममार्ग और देवयान जो उपासना मा

गकर्के त्यागीपुरुष मोक्षगामी होताहे १५
तपसा ब्रह्मचर्येण स्वाध्यायेन महर्षयः विसृज्य
देहं ते यांति मृत्योर विषयंगताः॥ १६
तपकर्के ब्रह्मचर्यकर्के स्वाध्याय वेदपाठकर्के महा
ऋषि जोहे सो देहको त्यागजातेहे सो बहोड मृत्युका
सके गोचर नही होते १६
आमिषं बंधनं लोके कर्मेहोक्तं तथामिषं माभ्यां
विमुक्तः पापाभ्यां पदमाप्नोति तत्परम् १७
राज्यभोगरूपी मांस बंधनरूप कहाहे तैसे कर्ममार्ग
के चेष्टाभी बंधन कहाहे यह दोनो पापरूपहे इन्हदो
नोसे मुक्तभयाजो सो दोनो परे जो अव्ययपद इसका
प्राप्तहोताहे १७
अपिगाथां पुरागीतां जनकेन वदंत्युत निर्द्वंद्वे
न विमुक्तेन मोक्षं समनुपश्यत १८
इसके उदाहरणवास्ते जनकराजा गाथा कहेहे
उसको कहतेहें जनक राजा निर्द्वंदभयाहे ताते
बंधमुक्तभयाहे मोक्षमार्गको विचारकरता १८
अनंतं वतमे वित्तं यस्य मे नास्ति किंचन मिथि
लायां प्रदीप्तायां नमे दह्यति किंचन १९
मोको अनंतधन मिलाहे जिसको पाइकर राजाबनाहे
परंतु वास्तव विचारकर्के मेरा कछु नहीहे मिथिला दग्ध
होवेतो मेराकछु दग्धनही होता १९
प्रज्ञा प्रसाद मारुह्य नशोच्यान् शोचतो जनान्
जगतीस्था निवाद्रिस्था मंदबुद्धि नवेक्षते २०
हे भीम तूं आपमूढहे विचार बुद्धिके उच्चस्थानको आ
रोहणविषे अशक्तहे दुर्योधनादिकरण मृत्युकर्के
स्वर्गको गयेहे उन्हका शोचनहीकरणा उन्हको शोचा
नेहोवे उन्हकेही कहुंवहे उन्हको तूं दयाकर्के नहीदेख
ता आपराज्य भोगके आशाकरताहे परदुःखकर्के सव
वांछा करताहे ताते मूढहे २०
हर्षं पश्यति यः पश्य सचक्षुष्मा सबुद्धिमान ॥

अज्ञानतानां च विज्ञाता संबोधा बुद्धि रुच्यते २१
जो कार्य इष्टव्यहै विचार इच्छिकर्के कर्तव्य अकर्तव्यको
देखताहै सो दृष्टिवालाहै और बुद्धिवालाभीहै और कर्तव्य
ज्ञानकी अज्ञानताकों जो बोधकरावतेहै सो बुद्धिवान्है
सर्वप्रकारसे बोधवान् बनाहै २१

यस्तुवाचं विजानाति बहुमान मियात्सवै ब्रह्म
भाव प्रपन्नानां वेद्यानां भावितात्मनाम् २२
जो पुरुष विद्या विचार वाले ज्ञानी गुरु जनादिक उन्हो
की वाणीको जानताहै सो ब्रह्मभावको प्राप्तभये जो आ
त्मज्ञानी लोक तिन्होके मान्यहोतेहै २२

यदाभूत पृथग्भाव मेकस्थ मनुपश्यति तत एव
च विस्तारं ब्रह्मसंपद्यते तदा २३
तत्वको कौनजानताहै जिसकाल विषे पुरुष आकाशा
दि भूतोकी भिन्न भिन्न सत्ताको एक चिदात्मा विषेही
लीनभई जानताहै जैसे घट कुंडादिकोकी भिन्न भिन्न
स्वरूप सत्ताको मृत्सत्ता मात्र होतीहै तैसे शास्त्र सद्गुरो
की उपदेशकर्के साक्षात्कार करताहै बहोर उसी एक चि
दात्मासे उत्पत्तिभी जानताहै तब ब्रह्मतत्वको प्राप्तहो
ताहै तबही तत्ववेत्ता होताहै २३

तेजना स्तांगतिं यांति नाविद्वांसोल्प चेतनः ना
बुद्धयो नातपसः सर्वं बुद्धौ प्रतिष्ठितम् २४
जिनको सर्वत्र चिन्मात्र सत्ताका तत्वज्ञान भयाहै सोई ब्र
ह्मभावको प्राप्तहोतेहै तब्लोरे जैसे केवल शास्त्रज्ञानके
गर्ववाले नही प्राप्तहोते याते सो अल्पबुद्धिहै बहिर्मुख
है इसीसे अबुद्धिहै काहे से अतपस तपसे रहितहै
त्यागरूपी तपसेही बुद्धिविषे तत्वबोध होताहै ताते
सभही परमार्थतत्व विचारवाली बुद्धिविषे प्रतिष्ठितहै

इतिश्री महाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मे समदशोध्या
यः ॥ १७ ॥ युधिष्ठिरवाक्यं ॥ वैशंपायनउवाच ॥
तुष्णीभूतंतु राजानं पुनरेवा र्जुनोब्रवीत् संत
मः शोकदुःखाभ्यां राज्ञोवाक् शल्यपीडितः १

वैशंपायनउवाच हेजनमेजय कहिकर जबराजा तू
ष्णीभया तब अर्जुन राजाको बहोउ कहताभया कै
साहे प्रथमतो शोकसेकै दुखकर्के पीडितभयाहे व
होउ राजाके वाणी रूपशल्य कर्के पीडितभयाहे १

अर्जुनउवाच कथयंति पुरावृत्त मितिहास मिमं
जनाः विदेह राज्ञः संवादं भार्यया सह भारत २

अर्जुनउवाच हे राजन् तैने तत्वबुद्धिवासते तपकरणा ।
वनवास करणा मानाहे इससेराजा जनक वचन प्रमा
ण कियाहे कर्मणैवहि संसिद्धि मास्थिता जनकादयः इ
स प्रकारके इतिहासका राजा जनकका अपनी भार्या
के साथ संबादका पुरातनकहतेहे २

उत्सृज्य राज्यं भैक्ष्यार्थं कृतबुद्धिं नरेश्वरम् विदेह
राज्य महिषी दुःखिता यदभाषत ३

विदेहराजा राज्यत्यागकर्के वनमे एकधाना मुष्टिभोजन
वाले तपकरणेकी बुद्धिवालाभया उसकी भार्या राजा म
हिषी जो कहती भई उसको तूं श्रवणकरो ३

धनान्य पत्यं दारांश्च रत्नानि विविधानिच पंथानं
पावकं हित्वा जनको मौढ्य मास्थितः ४ ॥

विदेह राजाने धनको पुत्रोको स्त्रियोको नानाप्रकारके
रत्नोको त्यागकिया स्वर्गमार्गका मुख्यमार्ग अग्निहोत्र
की अग्निको त्यागकिया कर्ममार्गके मूढता धारणकीनी

तंददर्श प्रियाभार्या भैक्ष्यवृत्ति मकिंचनः धाना
मुष्टिमुपासीनं निरीहं गतमत्सरम् ५

उसको प्राणप्रिया स्त्री भिक्षावृत्ति कर्के अकिंचन देखा
केवल एकधाना मुष्टिको सेवन कर्ताहे निस्पृहभया
हे अभिमान रहितहे ५ ॥

तमुवाच समागम्य भर्तार मकुतोभयं क्रुद्धामन
स्विनी भार्या विविक्ते हेतु मद्वचः ६

उसके पास भार्या प्राप्तहोकर्के कहती भई राजा कैसा
हे अपनेको सर्वत्यागकर्के मुक्त और अभयमानताहे ।

४

श्री॰
रा॰य॰
टी॰
९०

रानी क्रोधकर्के एकांत आइकर्के युक्ति पूर्वक वचन
को कहतीभई ६

कथ मुत्सृज्य राज्यंत्वं धनधान्य समन्वितम्
कापाली वृत्ति मास्थाय धाना मुष्टिर्न तेवर: ७

भार्योवाच हे राजन् तूं राज्यको कैसे त्यागकियाहै रा
ज्यकैसाहै धनधान्य संयुक्तहै इसको त्यागकर्के कपा
ली वृत्ति मानकर्के धाना मुष्टिको याचन करताहै यह
लोको अच्छीनहीहै ७

प्रतिज्ञाते न्यथाराज न्विचेष्टा चान्यथातव यद्राज्यं
महदुत्सृज्य स्वल्पे त्वमसि पार्थिव ८

तेरी त्याग प्रतिज्ञा अन्यथाहै और चेष्टा अन्यथाहै जो ते
ने राज्यत्याग कियाहै भिक्षापात्र जोहै कपाल कंडिका
दिक इन्होको संग्रह सो तोको बनाहै ८ ॥

नैतेना तिथयो राजन् देवर्षि पितर स्तथा अयथा
तथा त्वयाभर्ता मोघस्तेयं परिश्रम: ९

एसी वृत्तिकर्के अतिथि देवता पितर तृप्तिनही करेजा
ते यहतेरे तपका श्रम निसफलहै ९

देवता तिथिभि श्चैव पितृभ्य श्चैव पार्थिव सर्वैर
तै: परित्यक्त: परिव्रजसि निष्क्रिय: १० ॥

तोको देवता त्यागहै अतिथि त्यागहै पितरोका त्यागहै
इन्होके इन्होके त्यागकर्के अकर्म होकर्के तूं संयास करताहै

यस्त्वं त्रैविद्य वृद्धानां ब्राह्मणानां सहस्रश: भर्ता
भूत्वाच लोकस्य सोद्यते भृत्य मिच्छसि ११ ॥

जोनसा वेदत्रयीके धर्मवृद्ध ब्राह्मणोंको पोषण अनेक
सहस्रप्रकार करणे द्वारा होकर अब इन्होसे धान्या मु
ष्टिकी जीवका चाहताहै ११

श्रियं हित्वा प्रदीमान्त्वं श्वायतं प्रतिवीक्षसे अपुत्रा
जननी तेद्य कौसल्या चापतिस्तथा ॥ १२

युक्ति प्रकाशवाली संपदा त्यागकर्के श्वानकी न्याई
परहस्तको देषताहै तेरी माता कौसल्या अपुत्रा तेरेक
र्के भईहै कौसल्या जोनसे हमारानीहै सो भी तेरे

९

कर्के पतिवृह्नित होगयेहे १२
अमीव धर्म कामार्थं त्वां तत्रियाः पर्युपासते त्वत्रा
गा ममिकांक्षंतः कृपणाः फलहेतवः १३
जोनसे धर्म अर्थ कामनाकी सफल कामनावाले क्षत्रि
राजाभी तोको सेवाकरतेभये तेरी वांछाको आज्ञाकरते
भये अतिदीनता फलसिद्धिवासते करतेभये १३
तांश्चत्वं विफलान्कृत्वं क्वंलोकं गमिष्यसि रा
जन्संश्रयते मोक्ष परतंत्रेषु देहिषु १४
सभकी आशा विफल करताहे ऐसी हत्तिकर्के तोकोन
परलोक नहीहे गतिको कौन लोकको जावेगा मोक्ष
सिद्धिको वांछा करताहे मोक्षसिद्धीत्र अदृष्ट कर्मोके
अधीन देहधारी जीवोके वनीहे १४ ॥
नैवतेस्ति परोलोको नापरः पापकर्मणः धर्म्या
न्दारा न्परित्यज्य यस्त्वं मिच्छसि जीवितम् १५
ऐसे हत्तिकर्के तोको परलोक नहीहे ऐसे पापकर्म
कर्के यह प्रत्यक्ष लोकभी जोनसा है यज्ञ यागादिक
धर्मदृष्टिकी धाराऊप कर्ममार्गको त्यागकर्के कपालीह
त्तिकर्के जीविकाको वांछा करताहे १५
स्रजो गंधान लंकारां त्वासांसि विविधानिच कि
मर्थं ममिसंत्यज्य परिव्रजसि निष्क्रियः १६
सुंदरमाला सुगंधद्रव्य अनेक अलंकारभूषण अनेकप्रका
रके वस्त्रोको त्यागकर्के निसकर्म होकर क्यों संन्यासी हो
ताहे १६ ॥
निपानं सर्वभूतानां भूत्वात्वं पावनं महत् आढ्यो
वनस्पति भूत्वा सोऽन्यांस्त्वं पर्युपाससे १७
तू तो सर्वभूतोकी तृष्णा शांतिका महासमुद्र होकर्के
सभको उभय लोकोकी पवित्रता करणे हाराहे औेर सर्व
भूतोका कल्पवृक्षहोकर्के अवर दीन जनोको कपालधार
कर्के क्यों सेवाकरताहे १७ ॥
कर्के क्यों सेवाकरताहे १७ ॥ कुमादा बहवोप्युत बहवो
लोदंति हस्तिनं न्यासैः
न्निमयश्चेव किंमनस्त्वा मनर्थकम् ॥ १८ ॥

हे राजन् जो अपने कर्मको त्यागकर वनविषे हस्तीरहता
हे उसकोभी मांसाहारी बहोत लुट मृग खालेतेहै और
बहोत कृमीभी खालेतेहै तु जो अकिंचन अकर्मा अनर्थ
करणेहारा तोको तेरे दोषकैां नही खावेगे १८ ॥
यद्दमो कुंडिका विष्या त्रिविष्ट धंच योहरेत् वास
श्चाप हरे तस्मि कथंते मानसं भवेत् १९
जो कोई जीवतेरे भिक्षापात्री भन्‌देवे तेरी त्रिदंडी यष्टि
को हरलेवे तेरी चीरवस्त्रको हरलेजावे तो तेरे मनकेसे
शोचकरेगा १९ ॥
यस्त्वयं सर्वमुत्सृज्य धानामुष्टे रनुग्रहः यद्दानेन
समे सर्वं किमिद मवसीयसे २०
जोनसा तु सर्वत्यागकर्के धानामुष्टिको ग्रहण करता
है जिसके दानकर्के सर्वलोक शांतिको पावताहै सो
तु क्या अवक्या करताहै २०
धानामुष्टि रिहार्थश्च न्यतिज्ञाते विनश्यति का
वाहं तव कोमेत्वं कथंते मपारु ग्रहः २१
हे राजन् तेने संन्यासवासते राज्य त्याग कियाहै तेरी
त्याग प्रतिज्ञा मिथ्याहै जो तेने धानामुष्टिका ग्रहण जी
विकामातीहै बाह्य पदार्थ जो है दंड कमंडलु सो नही त्या
गे तो इंद्रियोकी वासना त्यागभी तोसे नही बनता ये
सा मिथ्यात्याग जिसकाहै उसको मेरा संबंधहै और तेमो
को संबंधहै मेरे विषे तेरी सेवाका संबंधभी क्याहै २१
प्रशाधि पृथिवी राज न्यदिते नुग्रहो भवेत् प्रसा
दं शयनं पानं वासांस्या भरणानिच २२
जो तु पृथिवीको राजधर्मकर्के शासन करेतो मेरेविषे
तेरा अनुग्रह होवे अपने मंदिरको अपनी सवारीको
वस्त्रोको भूषणोंको तुं त्याग करताहै २२
क्रियाविहीनै रधनै स्त्यक्तमित्रै रकिंचनै: सेोवि
के: संभृतानर्था न्य:संत्यजति किंतुतत् २३
जोनसे पदार्थ धनहीन पुरुषोने भिक्षादि त्यागकरणेहा
रे अकिंचनोने नहीत्यागे उन्हको नही त्यागे उन्हको
ग्रहणकरताहै और जोनसे सुखसाधनवासते संग्रह कि

ये पदार्थ तिन्हको त्यागकरताहै यह तेरा त्यागकैसे ब
नताहै और असंगता कैसे बनतीहै तोको इसप्रकारसे
असंगताउलभहै २३
योत्यंते प्रति गृह्णीया यश्चदद्या त्सदैवहि तयो
स्त्व मंतरं विद्धि श्रेयां स्ताभ्यां कउच्यते २४
हे राजन् अपने मनविषे विचारकरो जो पुरुष सदादान
प्रतिग्रह करताहै इन्हकी कुशलता विचारो कौनसा इ
न्होविषे कुशलकर्माहै २४॥
सदैव याचमानेषु तथा दंभान्वितेषुच एतेषु दत्ति
णादत्ता दावाग्ना विवि हुईहतम् २५ ॥
जो पुरुष सदैव याचना करतेहै जोनसे सदा दंभ करतेहै
इन्होको दक्षिणा दान करणा बनकी दावाग्निविषे आ
हुती जैसे वृथाहोतीहै २५
जातवेदा यथाराज नादग्धे वोप शाम्यति सदैव
याचमानोहि हदा शाम्यति वोहुनः ॥ २६
जैसे अग्नि प्रज्वलित होताहै संपूर्ण त्तणकाष्ट समूहका
दग्धकिये विना प्रशांतनही होता तैसे द्विजजाति जोहैसो
संन्यासीहै सदायाचना करताहै संपूर्ण लोकोकी शांतिवि
ना उपशमको नही प्राप्तहोता २६
सतांवै ददतो लंच लोकेस्मिन्प्रकृति र्ध्रुवा नवेदाता
भवेदाता कुतः स्यु र्मोक्षकांक्षिणः ॥ २७ ॥
यह दानधर्म गृहस्थ धर्महै संतजन जोहै संन्यासी इन्ह
को अन्नदानदेना जब संन्यासी लोकदेह पोषण विना
संन्यास धर्मकी मर्यादा कैसेकरे और देहधारण विना
जीवन्मुक्ति कैसे पावेगे २७
अन्नाद्गृहस्था लोकेस्मि न्भिक्षव स्ततएवच अन्नात्प्रा
णः प्रभवति अन्नदः प्राणदो भवेत् २८
अन्नदानसे लोक गृहस्थ होतेहै इन्हसेही संन्यासभी जी
वका लेतेहै अन्नसे प्राणस्थिती होतेहै ताते अन्नदाताही
प्राणदाताहोताहै २८
गृहस्थेभ्यो विनिर्मुक्ता गृहस्थानेव संश्रिताः प्रभवं
च प्रतिष्ठांच दाता विंदति आसते २९ ॥
ब्रह्मचारी संन्यासी गृहस्थ धर्मसे प्रथम निकसतेहै बहोर

प्राणधारणा वासते गृहस्थ कोही आश्रय करतेहै इत्यादि
और प्रतिष्ठा सभही दानाही पावताहै २९

त्यागान्न भिक्षुकं विद्या न मौण्ड्यान्न च याचनात्
अजस्रं यो वै यजति तं सर्वं विद्धि भिक्षुकम् ३०

गृह त्यागसेही संन्यासी नही जानना मुंडनकरके संन्यासी न
ही जानना केवल याचना सेभी भिक्षु नही जानना जो पु
रुष अहंता ममताकी कुटिलताको त्यागकरके स्वाधीनही
अर्थको त्यागी इसको सर्वी संन्यासी जानना ३०

असक्तः सक्तवद्गच्छेन्निःसंगो मुक्तबंधनः समोशत्रौ
च मित्रे च सवैमुक्तो महीपते ३१ ॥

हे राजन् जो पुरुष अहंता ममतासे असंगहोवे अवहा
रचेष्टामे आसक्त जैसाहै सो निसंगहै मुक्तबंधनभी सो
ईहै शत्रुविषे और मित्रविषे यथार्थ समवर्तीहै सोई
मुक्त कहाहै ३१

परिव्रजंति हीनार्थाः मुंडाः काषाय वाससः हता
बहुविधैः पाशैः संचिन्वंतो वृथामिषं ३२

मूढसंन्यासी दानवासते गृहत्याग करतेहै मुंडितहोते
है कषायवस्त्र करतेहै अनेक प्रकारके वासनामय पा
शोंकरके सिये गयेहै मठ पुस्तकादि संग्रहकीवांछा क
रतेहै ॥ ३२

त्रयीं च नामवार्तां च त्यक्त्वा पुत्रान्व्रजंति ये त्रिविष्ट
धं च वासश्च प्रतिगृह्णंत्यबुद्धयः ॥ ३३

त्रयीके धर्मको अपने संन्यास धर्मकी नामचिंताको
त्यागदेतीहै पुत्रादिकोकोभी त्यागदेतेहै त्रिदंडको का
षाय वस्त्रको ग्रहण करलेतेहै और तत्वविचार बुद्धिको
त्यागकरतेहै ३३

अनिष्कषाये कषाय मीहार्थ मिति विद्धितम् धर्मध्व
जानां मुंडानां वृत्त्यार्थ मितिमेमतिः ३४

रागादि कषाय त्यागविना कषायवस्त्र करतेहै मठ प्रति
ष्ठा संग्रहवासते उनका संन्यास जानो धर्मध्वजहै पाखंड
मतवाले मुंडित होतेहै लोकरंजनावाले उनका
स्वरूप धारणहै ३४

कषाये रजिनश्चीरै नंग्नान् मुंडान् जटाधरान्

विभ्रत्साधु महाराज जयेल्लोकान् जितेंद्रियः २५
हे महाराज जोनसे वास्तव संन्यास धर्मवालेहै सो अं
तःकरणसे रागादि कषाय रहित और मृगाजिनजी
र्ण पुराणे वस्त्र खंडोककर्के युक्तहै वस्त्रत्यागकर्के नग्नहै
केशो विषे कीटादिवर्जनवासते नग्नहै अथवा वटादि
क्षीराकर्के जटाजूटधारीहै ऐसे साधुवृत्तिवाले तत्ववे
त्ता संन्यासी जनोको अन्नादि दानकर्के पालपोषणकर
आप जितेंद्रिय होकर्के दानधर्मकी फलीभूत लोकोको
राजधर्मकर्के जय करलेवो २५
अग्निदेया निवपुरून्कतत्स पशुदक्षिणान् दधा
दहरहः पूर्वं कोनुधर्मवतस्ततः २६
तो पूर्वकालविषे अग्निविषे देने होमद्रव्यदेताभया वि
धायाधकर्के दक्षिणादेताभया तवकोनधर्मसे देताभ
या यज्ञोविषे पशुओर दक्षिणा देताभया उसीधर्मकर्के
अवभी दानकर क्यों बुद्धि मोहको करताहै २६
अर्जुनउवाच तत्वतो जनको राजा लोकेस्मि न्निति
गीयते सोप्यासी न्मोह संपन्नो मामोह वश मन्वगाः
अर्जुनउवाच राजाजनक लोकविषे तत्वज्ञ सर्वलोकने
कहाहै सोभी इसीप्रकार मोहको प्राप्तभयाहै अवतू
भी इस प्रकार मोहको मतप्राप्तहो २७
एवं धर्म मनुक्रांत सदा दान तपः परैः आनृशं
स्य गुणोपेताः कामक्रोध विवर्जिताः २८
हे राजन् इस प्रकार यह ऐसा राजधर्म दानतप करणे
हारे और राजालोको नेभी आचारण कियाहै इसकी नि
ष्ठा हमभी करतेहै दयादानादि गुण संयुक्त होतेहै
काम क्रोधसे वर्जित होतेहै २८
प्रजानां पालनेयुक्ता दानमुत्तम माश्रिताः इष्टा
लोका नवाप्स्यामो गुरुवृद्धोप सेविनः २९
प्रजापालन संयुक्त होतेहै उत्तम दानकर्मको सेवन कर
तेहै यज्ञादि कर्मोकर्के इष्टलोकोको प्राप्तहोवेगे गुरुज
न वृद्धजनोकी सेवाकरेगे २९ ॥

देवतातिथिभृत्यानां सर्वयंतो यथाविधि। स्थान
मिष्टमवाप्स्यामो ब्राह्मणाः सत्यवादिनः ४०
देवयज्ञ अतिथियज्ञ सर्वभूत यज्ञ द्रव्यदान यथाविधि
करेगे ब्राह्मण होतेहै प्रतिज्ञा पालनेको सत्यवादी
होतेहै ४० ॥ इतिश्री महाभारते शांतिपर्वणि रा
जधर्मे अर्जुनवाक्ये अष्टादशोध्यायः ॥ १८ ॥
युधिष्ठिरउवाच वेदाहं तातशास्त्राणि अपराणि
पराणिच उभयं वेदवचनं कुरुकर्म त्यजेतिच १
युधिष्ठिरउवाच हे तात हेबालक मैभी उभय शास्त्रोको
जानताहूं शास्त्रकोई अपरहै क्या इसलोक कर्तव्यता
परहै और परशास्त्रहै जोनसे परलोकके साधन परहै
शास्त्रोविषे दो प्रकारके वेदवचनहै असंगतासे कर्मक
रो संन्यास मतकर्मकरो सर्वकर्म त्यागकरो १
आकुलानिच शास्त्राणि हेतुत श्चिंतितानिच नि
श्चयश्चैव योमुत्र यथाहंते यथाविधि २
सभही शास्त्र अनेक वचनोकर्कै संकीर्णहै अनेक प्र
कारकी हेतुवाद युक्तिन्यायकर्कै भरेहैं जो शास्त्रोविषे
निश्चयबनाहै उसकोमै यथाविधि जानताहूं २
त्वंतु केवल मस्त्रज्ञो वीरव्रत समन्वितः शा।
स्त्रार्थं तत्वतो गंतु मसमर्थःकथंचन ३ ॥
हे अर्जुन तूं तो केवल अस्त्रविद्याको जानताहै वीरव्रत
संयुक्तहै शास्त्रार्थ तत्वज्ञानकी पदवी प्राप्तहोनेको क
दापि समर्थ नहीहै ३ ॥
शास्त्रार्थ सूक्ष्मदर्शीयो धर्मनिश्चय कोविदः ते
नाप्येवं नवाच्योहं यदिधर्मं प्रपश्यसि ४
जो कोई शास्त्रार्थ तत्वका सूक्ष्मदृष्टाहोवे धर्मतत्वके नि
श्चयका यथार्थ योग्यवेत्ताहोवे उसनेभी मोको एसामै
कल्पनही वक्तव्यहै जो सोभी धर्मतत्वको जानेतोवक्तव्यहै
भ्रातृसौहृद मास्थाय यदुक्तं वचनं त्वया न्यायं
युक्तंच कौंतेय प्रीतोहं तेन तेर्जुन ५ ॥
तेने भ्राताके प्रति भ्राताकी सुहृद मानकर्कै जोवचन।

मोको कहाहे सो न्याय युक्ति संपन्न कहाहे इसकर्के हे अर्जुन
हे कौंतेय मेतेरे प्रति प्रसन्न भयाहूं ५ ॥

युद्ध कर्मेषु सर्वेषु क्रियाणां नैपुणेषु च नत्वया स
दृशः कश्चि त्रिषु लोकेषु विद्यते ६ ॥

जेते सर्व प्रकारके युद्ध धर्महे ओर जेती कियाकी निपुणता
हे इसविषे त्रिलोकीमो तेरी समान कोई विद्यमान नहीहे

धर्मं सूक्ष्मतरं वाक्यं तत्र दुष्प्रतरं त्वया धनंजय नमे
बुद्धि मभि शंकितु मर्हसि ७ ॥

परंतु यह धर्मतत्व अतिसूक्ष्महे अति दुष्करहे अपारहे अ
गाधहे यह तो सेमरानही जाताहे तेरी वक्तवतामो अशा
क्यहे इसकारणसे तेने मेरी बुद्धिको रोकणानही योग्यहे ७

युद्ध शास्त्रवि देवत्वं नवृद्धाः सेविता त्वया समंत
स विस्तरविदां नतेषां वेत्सि निश्चयम् ८ ॥

यह मोको दृढ निश्चयहे जो तूं युद्ध शास्त्रकाही तत्ववेत्ता
हे धर्मवेत्ता परम उत्तम वृद्धजन तेने सेवन नहीकिये जोन
से धर्मतत्वके संक्षेपको विस्तारको जानतेहे उन्हके निश्च
यको तूं नही जानता ८ ॥

तपस्त्यागो विधिरिति निश्चय स्त्वेष धीमतां परं परं
ज्याय एषां तपो नैश्रेयसी मतिः ९

तपकरणा त्यागकरणा यह विधानका निश्चय बुद्धीवान
पुरुषको कहीहे तपकरणेसी त्यागपरोहे सो श्रेष्ठहे यह
उन्हकी बुद्धिका निश्चयहे ऐही परमश्रेष्ठ दृढ निष्ठाहे ९

यत्ते तन्मन्यसे पार्थ नज्यायोस्ति धनादिति तत्रते व
र्तयिष्यामि यथानैतत्प्रधानतः १० ॥

हे पार्थ जो तूं मानताहे धनसे श्रेष्ठ ओरसे ककुनहीहे इस
विषे उत्तर कहतेहे जो धन कैसे श्रेष्टनहीहे इसविषे ओर
तपत्याग कैसे श्रेष्टहे यह वर्णन करतेहे १०

तपः स्वाध्याय शीलाहि दृश्यंते धार्मिका जनाः ऋ
षय स्तपसा युक्ताः येषां लोकाः सनातनाः ११

तपकर्के वेदाभ्यास शीलकर्के संयुक्त धर्मीजन अनेकर
दृष्टहोतेहे ओर अनेक ऋषिलोकभी तपसंयुक्त देखेहे जि
नको सनातन लोकसिद्धि बनीहे ११ ॥

अजात शत्रवो धीरा स्तथान्ये वनवासिनः अरण्ये
बहवश्चैव स्वाध्यायेन दिवंगताः॥ १२

हे पार्थ जिह्नको शत्रुमित्र कलना नहीहै ऐसी धीरता
वाले वनवासी औरभी वनविषेही बहोत स्वाध्यायत
पकर्के देवलोकको प्राप्तभयेहै १२ ॥

उत्तरेणतु पंथान मार्धाविषय नियहात् अत्रुछिन्ने
तमस्यन्का लोका स्यागवंतो गताः १३

उत्तरायण मार्गकर्के योगयुक्ति कर्के कर्मगतिके फलजो
विषयवासना तिसको त्यागकर्के महामूढतमोमय अज्ञा
नकोत्यागकर्के त्यागी जनोके उत्तम लोकोको गयेहै १३

दक्षिण नतु पंथानं यंभास्वंतं प्रवक्षते येतेक्रि
यां वंतोलोका येश्मशानानि भेजिरे १४

और जोनसा दक्षिण मार्गहै सो कर्ममार्गहै उसको चंद्रलोक
ककी प्रकाशतावाला कहतेहै सो कर्मकांड वाले काहै उ
सकर्के जन्म मरण प्रवाह अखंड बनाहै उसको पाइकर्के स
दाही श्मशानको प्राप्तभयेहै १४

अनिर्देश्यगतिः सातु यंप्रपश्यंति मोक्षिणः त
स्मायोगः प्रधानेष्टः सतद्दुःखं प्रवेदितं १५

हे अर्जुन सोगति अनिर्वचनीयहै जिसको मोक्षमार्गवाले जा
नतेहै सो मार्ग योगसाधनते प्रधानताकर्के प्राप्तयहै उस
का जानना अतिकष्टसे होताहै यह तीन मार्गहै एकदेव
यानहै देवरूपताकर्के ब्रह्मलोकको देताहै द्वितीय पितृ
यान मार्गहै सो कर्मकांडकर्के चंद्रलोकको देताहै बहोउ
जन्म मरणके प्रवाहको करताहै तीसरा ब्रह्मयान मार्गहै
सो त्यागादि तपोयोग बलकर्के ब्रह्म साक्षात्कारकर्के मो
क्षसिद्धिको देताहै १५

अनुसरन्पतं शास्त्राणि कवयः समवस्थिताः अ
पीहस्या दपीहस्या त्सारासार दिदृक्षया १६

हे पार्थ इसप्रकार अनेक मार्गके अनेक शास्त्रहै विचार
वान पंडितलोक सारवस्तुकी दर्शनवांछा करतेहै शास्त्र
के अनुसार होकर्के इस मोक्षशास्त्रहै इस शास्त्रमे सारहै पै
सी कल्पनासे सबही स्थितहै १६

वेदवादा नतिक्रम्य शास्त्राण्या रण्यकानिच वि
पाट्य कदलीस्तंभं सारंदृश्टिरेनते १७ ॥
कर्मकांडके वेदवाद वचनोको त्यागकर्के अरण्यवासके
जो तपयोगादि शास्त्रहे तिन्होकोभी कदलीस्तंभको फाड
कर्के अंतर्गत इसके सारको जैसे जानतेहे सर्वशास्त्रोके अ
नेक मतवादोको त्यागकर्के सारको जानरहेहे तोभी अ
कमार्गके सारको नहीदेषशकते १७
अथैकांत मुदासीन शरीरे पांचभौतिके इच्छादेष
समायुक्त मात्मानं प्राहु रिंगितैः ॥ १८
वहोउ क्या करतेभये एकांत जो द्वैतवर्जित अद्वैतमार्गहे
उसको उदासीन द्वैतकलनाको त्यागकर्के शरीरविषे स्थि
त इच्छा रागादियुक्त आत्माजोहे उसको यह मेराहे यहमो
कोहोवे इत्यादि लक्षणकर्के सावशत अपने आत्माको देषतेहे
अग्राह्य च्चत्वयासूत्दमं मनिर्देश्यंच तद्गिरा कर्महेतु
पुरस्कारं भूतेषु परिवर्ततेः १९ ॥
सो आत्मा कैसाहे अरूपता कर्के अतिसूक्ष्महे नेत्रोकर्के
अदृश्यहे अनामताकर्के वाणीके अगोचरहे कर्मचेष्टाहे
तद्रूप पुरुषहे कारण सर्वभूतोविषे वर्तमानहे ऐसीजीव
रूपता वालासो वास्तव आत्मानहीहे १९ ॥
कल्याण गोचरं कृत्वा मनस्तस्मा निगृह्यच कर्मसं
तति मुत्सृज्य स्यान्निरालंबनः साक्षी २०
उसकी वास्तव रूपताका प्रकारकहतेहे सो आत्मा मन
की उपाधीकर्के जीवरूप बनाहे जब मनको स्वरूप ज्ञान
वासते आत्माके सन्मुखकिया तो निरालंबन होताहे
निरहंकारहोताहे ऐसे मनकर्के तस्माको निग्रहकर्के क
र्मपासनाको त्यागकर्के असंगतासे साक्षीहोताहे २०
अस्मिन्नेवं सत्त्वगम्य मार्गेसड्भि र्निषेविते कथ
मर्थ मनर्थाय मर्जुनत्वं प्रशंससि ॥ २१
हे अर्जुन यहमार्ग अतिसूक्ष्महे दुर्गमहे संतजनोने सेवा
हे इसको त्यागकर्के अनर्थ संयुक्त अपने अर्थको कर्ममा
र्गको कैसे प्रशंसा करतेहे २१ ॥

१८

सर्वशास्त्र विदोप्येवं जनाः पश्यंति भारत क्रियासु
निरतानित्यं दाने यज्ञेच कर्मणि २२
इसकालविषे ऐसा कहता तोको दोषनहीहै सर्वले कर्म
कांडशास्त्रके वेत्ता और पंडितजनभी इस अर्थको अनर्थहुए
देषतेहै सो कर्मकांडविषे तत्परहै नित्यहै दानयज्ञादिक
र्मविषे निष्ठावालेहै २२
भवंति सुडगावंता हेतुमंतोपि पंडिताः दृढपूर्व
स्मृता मूढा नैत दस्तीति वादिनः ॥ २३ ॥
उनको सिद्धांत मार्गका उपदेश अति असाध्यहै अपनी
अपनी हेतुकल्पनाकर्के पंडितहै जिन्होका अनेक पूर्वले
जन्मोकी परंपरासे संसारका संस्कार दृढभयाहै सो
त्यागमार्गको कहतेहै यह उत्तमनहीहै २३
अमृतस्या वमंतारो वक्तारो जन संसदि चरंति व
सुधां कृत्स्नां वावदूकाः बहुश्रुताः २४
ऐसा यह अमृतमार्गहै इसको लोक सभामो अवमान और
दिग्विजय करणेको समग्रपृथिवीको विचारतेहै महावा
क वादकरतेहै अपनेको बहुश्रुत मानतेहै २४
पार्थयान विजानीमः कस्तान् ज्ञातु मिहार्हति एवंप्रा
ज्ञान्सतश्चापि महतः शास्त्र वित्तमान् २५
हे अर्जुन जोनसे लौकिक अर्थभी शास्त्रोविषे कहेहै उन
कोभी हमलोक नही जानशकते तो उत्तरजन कर्मकांडकी
प्रवृत्तिवाला अल्पबुद्धिकैसे जानसकेगा इसी प्रकार महाप्रा
ज्ञजो संतजनहै सो महात्माहै अति उत्तम अध्यात्मशास्त्र
है उनसे परमतत्वके ज्ञानबोधको प्राप्तहोकर्के २५
तपसा महदाप्नोति बुद्ध्यावै विंदते महत् त्यागेन
सुखमाप्नोति सदाकौंतेय तत्ववित् ॥ २६
यह पुरुष महातप कर्के महावैराग्यको पाइकर्के त्यागक
र्केही तत्ववेत्ता सदा अखंड सुखको प्राप्तहोताहै २६
इतिश्री महाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मे युधिष्ठिरवाक्यं
नाम एकोन विंशोध्यायः १९
वैशंपायनउवाच तस्मिन्वाक्यांतरे वक्ता देवस्थानो

महातपाः अभिनीततरं वाक्यमित्युवाच युधिष्ठिरं १
वैशंपायनउवाच हे जनमेजय राजा युधिष्ठिरके अनंतरवा
क्यकहनेका अवसर प्राप्तभया तो देवस्थान महातपस्वी
जोहै सो दोनोंको वाक्योंको विचारकरताभया अर्जुनके वा
क्यमें कहाहै क्षत्रीयोंको दंडकर्माहि धर्महै मुंडन धर्मजो
कर्मत्यागसो जौनसासीहै इसकर्के आत्मविचारकी इच्छासे
पूर्वकालमें कर्मकर्तव्यहै और जौनसा सर्वकर्मोंका त्याग
करणा संन्यस्तहोना ऐसा युधिष्ठिरकामतहै सो ब्राह्मणो
कोहै क्षत्रीयको नहीहै ऐसे जानकर्के अत्यंत युक्तिवाले
वचनको देवस्थान मुनि कहताभया १

देवस्थानउवाच यद्वचः फाल्गुनेनोक्तं नज्यायो निध
नानिति अत्रते वर्तयिष्यामि तदेकाग्रमनाः शृणु २

देवस्थानउवाच हे राजन् जो वचन अर्जुनने कहाहै धनसे
और उपाय धर्म कर्म साधनेका नहीहै क्षत्रीको इसअर्थो
विषे तोको हमभी कछु निर्णयकर्के वर्णन करतेहै उ
सको एकाग्र मनहोकर्के आपश्रवणकरो २

अजातशत्रो धर्मेण कृत्स्नेयं वसुधाजिता तांजि
त्वाच वृथा राजन्न परित्यक्तु मर्हसि ३

हे अजातशत्रो महाराज तुमने समग्र पृथिवी क्षत्रधर्मक
र्के जीतीहै उसको तुं वृथा त्यागनेको योग्यनहीहै ३

चतुष्पदी हि निःश्रेणी ब्रह्मण्येषा प्रतिष्ठिता तां
क्रमेण महाबाहो यथावज्जय पार्थिव ४॥

हम लोकोंको चारपादवाली चतुष्पदी आश्रमपंक्तिकही
है सो आश्रमपंक्ति राजा ब्रह्मण्य राजाविषे प्रतिष्ठावाली
है उसको तुम क्रमकर्के जीतो प्रथम ब्रह्मचर्य आश्रम १
बहोउ गृहस्थाश्रम २ उसके अनंतर वानप्रस्थ ३ पश्चात्
आश्रमसंन्यासहै ४

तस्मात्पार्थ महायज्ञैर्यजस्व बहुदक्षिणैः ॥
स्वाध्याययज्ञा ऋषयो ज्ञानयज्ञास्तथापरे ५

इन्हको तुमक्रमकर्के जीतो अव तुमको गृहस्थाश्रम
का धर्मकर्तव्यहै ताते हेपार्थ अवतुम बहोत दक्षिणा

वाले यज्ञोंकर्के यजनकरो अनंतर ओर आश्रमोंके धर्मकोभी
जानो इसमें कोईऋषि ब्रह्मचर्यकर्के स्वाध्याय यज्ञको क
रतेहै केवल वेद पारायण करतेहै केते अवर ऋषि ज्ञान
यज्ञवालेहै सो सर्वत्यागकर्के संन्यास आश्रमको करतेहै
कर्मनिष्ठाश्च बुध्येथा स्तपोनिष्ठांश्च भारत वैखान
सानां कौंतेय वचनं श्रूयते यथा ६ ॥
ते से तुम अवकर्मनिष्टजो गृहस्थ धर्मवाले राजधर्म
इन्हको विधिकर्के जानो इसके अनंतर तपोनिष्टजोहै
वैखान सशृंगयुक्त मृगाजिन धारण करणेहारे वानप्रस्थ
उन्हके धर्मको आश्रयकरणा ६
ईहेत धनहेतोर्यं स्तस्यानीहा गरीयसी
भूयान्दोषोहि वर्धेत यस्तं धर्म मुपाश्रयेत् ७
वैखानसजो वानप्रस्थहै सो जो धर्मवासते धनके उपार्ज
ना चाहताहै उसको धनकी अनिच्छाही अतिश्रेष्टहै प्रक्षा
लनाद्धि पंकस्य दूरादस्पर्शनंवरं इसवाक्य प्रमाणसे वान
प्रस्थका धनत्यागकर्के वनवास कहाहै जो गृहस्थ त्यागी
होकर्के वानप्रस्थ धर्मको सेवनकरे उसको महादोष हो
ताहै ७ ॥

कस्तेच द्रव्य संहारं कुर्वंति विधिकारणात्
आत्मानं हृषितो बुद्ध्या भ्रूणहत्यां नबुध्यते ८
हे राजन् जोकोई पुरुष जिस विधीके करणसे यज्ञके
वासते संपूर्ण धनको संहारको करताहै ओर अपना आ
त्माजो देह उसको अयोग्यकर्मको अर्पण करताहै ओर
योग्य कर्मवासते अर्पण नही करता सो आत्मद्रोहसे
भ्रूणहत्याको नही जानता ८ ॥
अनर्हते यद्ददाति नददाति यदर्हते ॥
अर्हानर्ह परिज्ञाना दानधर्मोपि दुष्करः ९
अयोग्य पात्रविषे अयोग्य कालविषे धनदान करताहै
योग्यपात्रको योग्यकालमो नधनदेना योग्य अयोग्यवि
चारविना दानकर्के दानधर्म दुष्कर होताहै दोषकारी
होताहै ९ ॥ ॥
यज्ञाय सृष्टा निधना निधात्रा यज्ञोहिष्टः पुरुषो

रक्षिताच   तस्मात्सर्वं यज्ञ एवोपयोज्यं धनंततो नं
तर एवकामाः १० ॥
हे राजन् विधाताने धनसंपदा सभही यज्ञविधानवास्ते स
जीहे यज्ञजोहे सो देशकाल द्रव्यदेवता रूपता कहाहे पुरु
षपरमात्मा इसका रक्षाकर्ता कहाहे ताते धनसंपूर्ण यज्ञ
विषेही उपयोग कर्तव्यहे इसके अनंतर अपना भोगमोत्ता
दि कामना कर्तव्यहे १०

यज्ञैरिंद्रो विविधै रन्नवद्भि र्देवान्सर्वा नत्ययाद्
भूरितेजाः तेनेंद्रत्वं प्राप्य विभ्राजतेसौ तस्मा
त् यज्ञे सर्वमेवोपयोज्यम् ११

इंद्रभी बहोतदक्षिणा बहोत रत्नसंपदा संपन्नयज्ञोंकर्के
यजनकर्के सर्वदेव गणोंको वशकरताभया इसीप्रकार
कर्के देवेंद्र पदवीकों प्राप्तभयाहे अतिशोभाको प्राप्तभ
याहे ताते सभही धन संपदा यज्ञविषेही उपयोगकरणे
योग्यहे ॥ ११

महादेवः सर्वयज्ञे महात्मा हुत्वाऽऽत्मानं देव
देवो बभूव विश्वान् लोकान् व्याप्य विष्टभ्य
कीर्त्या विराजते द्युतिमान् कृत्तिवासाः १२

हे राजन् महादेव शिवजीभी सर्वमेध यज्ञविषे अपने श
रीरको अग्निमो होमकर्के देवोकाभी पूज्य महादेवभयाहे
सर्वलोकेश्वर होकर्के कीर्तिकर्के विराजमानहे गजचर्म
कर्केभी अतिशोभाको प्राप्तभयाहे १२

आविक्षितः पार्थिवोसौ मरुत्त स्वृद्ध्याशक्रं योज
यद्देवराजं यज्ञे यस्यश्रीः स्वयंसन्निविष्टा यस्मि
न्भांडं कांचनं सर्वमेव १३

आविक्षित राजाकापुत्र मरुत्त भयाहे सो यज्ञ समृद्धिकर्के
देवेंद्र देवराजाको जीतलेताभया जिसके यज्ञविषे लक्ष्मी
देवी आपप्रत्यक्षभयेहे जहां संपूर्ण भोजनपात्र पाकपा
त्रादि भांडसमूह सभही सुवर्णमय भयेहे १३ ॥

हरिश्चंद्रः पार्थिवेंद्रः श्रुतस्ते यज्ञैरिष्ट्वा पुण्यभा
ग्वीत शोकः स्वृद्ध्या शक्रं योजय न्मानुषः सं

तस्मायज्ञे सर्व मेवोप योज्यं १४ ॥
हे राजन् महाराजा हरिश्चंद्र राजसूय यज्ञकर्कै सर्वराजो का राजाभया सोतेने सुनाहीहे यज्ञोकर्के वीतशोकभ याहे मनुष्यशरीरकर्के भूलोक विषेही इंद्रको जीतले ताभया ताते जिसने त्यागकरणा होवे सो संपूर्णद्रव्य को यज्ञविषेही लगायदेवे १४ ॥ इति श्री महाभार ते शांतिपर्वणि राजधर्मे देवस्थानवाक्यं नाम विंशोध्या यः ॥ २० ॥ देवस्थानउवाच ॥

अत्रैवोदा हरंतीम मितिहासं पुरातनम्
इंद्रेण समये पृष्टो यदुवाच बृहस्पतिः १
देवस्थानउवाच हे राजन् इसप्रसंगमो पुरातन इतिहास उदाहरणकरतेहे एक समयमो इंद्रने बृहस्पतिको पू छाकीनीहे तो बृहस्पतिने जो कहाहे उसको कहतेहे १
संतोषोवै स्वर्गतमः संतोषः परमं सुखम् ॥
तुष्टेन्न किंचित् परतः सासम्यक प्रतितिष्टति २
संतोष जोहे सो स्वर्गसमानहे संतोष परमसुखको करता हे संतुष्ट राजाने प्रजापालन सोमर्यादकर्के प्रतिष्टाको पावतीहे ३ ॥
यदासंहरते कामान् कूर्मोंगानीव सर्वशः
तदात्मज्योति रचिरान् स्वात्मन्येव प्रसीदति ३
जबराजा अपनेविषे कामादि दोषोको विचारकर्के देषताहे कू र्मके अंगोकीन्याई अपने मनविषे लयकरताहे तबस्वयंप्रकाश आत्माको ज्ञानकर निजरूपताविषे परम आनंदको प्राप्तहोताहे ३
नबिभेति यदाचायं यदाचास्मा नबिभ्यति काम द्वेषोच जयति तदात्मानं प्रपश्यति ४ ॥
जब पुरुष अद्वैत भावनाकर्कै किसीसेभी भयको नहीमा नताहे और लोकभी इससे भयको नही मानता इसप्र कार कामक्रोधको जब जय करताहे तबनिजरूपको देषताहे ४
यदासौ सर्वभूतानां नद्रुह्यति नकांक्षति कर्मणा
मनसा वाचा ब्रह्मसंपद्यते तदा ॥ ५
जिसकालविषे सर्वभूतोको कर्मकर्कै मनकर्कै वाणीकर्कै त्यागग्रहण बुद्धिनही करता तबही ब्रह्मरूपहोताहे ५

एवं कौंतेय भूतानि तंतं धर्मं तथा तथा तदा
त्मनः प्रपश्यंति तस्मात् बुध्यस्व भारत ६
हे कौंतेय सभही भूत अपने अपने धर्मको यथा तथा
प्रकार अपने विचारकर्कें आपही प्रशंसा करतेहे ताते
तुमभी अपने धर्मको जानलेवो प्रजापालनकरो सर्व
भूतोको अभय दानकरो ६ ॥

अन्येत्साम प्रशंसंति व्यायाम मपरे जनाः
नैकं नैवापरे केचि दुभयंच तथापरे ७
कोई भूत शीतको अपना धर्मजानके प्रशंसा करतेहे को
ई भूत अपने प्रयत्नको प्रशंसा करतेहे कोई भूतप्रीति
प्रयत्न दोनोके त्यागको प्रशंसाकरतेहे कोई भूतदोनो
के अंगीकारको प्रशंसा करतेहे ७ ॥

दानमेके प्रशंसंति संन्यास मपरेजनाः यज्ञ
मेके प्रशंसंति केचिद्वैव प्रतिग्रहम् ८
एकभूत यज्ञकर्मको मानतेहे एकभूत संन्यासको मान
तेहे एकभूत राज्यधर्मको मानतेहे एकभूत प्रजापाल
नकोभी मानतेहे ८ ॥

केचित्सर्वं परित्यज्य तूर्ष्णीं ध्यायंत आसते रा
ज्यमेके प्रशंसंति प्रजानां परिपालनम् ९
हित्वा छित्वाच भित्वाच केचिदेकांत शीलिनः
एतत्सर्वं समालोच्य बुधाना मेषनिश्चयः १०
कोईभूतद्रव्यको हरकर्कें शत्रुगणको छेदकर्कें दुर्ग
नगरादिकोको भेदकर्कें सर्वत्र जयकर्कें एकांतवासक
रतेहे यह सभही धर्म मार्गके प्रकारहे ऐसे जानक
र्कें बुधजनोको अपने अधिकारका यह धर्म निश्चयहे

अद्रोहेणैव भूतानां यो धर्मः स्वमतो मतः
अद्रोहः सत्यवचनं संविभागो दयादमः ११
जैानसाधर्म सर्वभूतोके अद्रोहकर्कें जीवनताहे संतज
नोका सोई धर्मनिश्चय मानाहे उसका यह विधानहे
द्रोहका त्यागकरणा अपना वचन सत्यकरणा दानध
र्म देवता पितर अतिथिगणको विभागसे करणा
दयाकरणी इंद्रियोंका जयकरणा ११ ॥

श्री॰
रा॰ प॰
टी॰
६८

प्रजने खेषु दारेषु मार्दवं ह्रीर चापले ॥
एवं धर्मं प्रधानेष्टं मनुः स्वायंभुवो ब्रवीत् १२
अपने दाराविषे संतान उत्पन्न करणी सभसे मृदुभावकर णी क्रूरकर्म करणेमे लज्जाकरणी चंचलताका त्यागक रणा इसप्रकारको धर्मकी प्रधानता स्वायंभुव आदिक मनुराजाने कहीहै १२

तस्मादेत त्प्रयत्नेन कौंतेय परिपालय योहि
राज्यस्थितः शश्व हशीतत्व प्रियाप्रियः १३
तातें हे कौंतेय प्रजापालन तुमारा धर्महै इसको यत्न कर्के पालनकर यो राजधर्मविषे स्थितहोताहै सदाजिता त्मा होताहै उसको प्रजापालनविषे प्रिय अप्रिय समानहोतेहै १३

क्षत्रियो यज्ञशिष्टाशी राजशास्त्रार्थ तत्ववित्
असाधु निग्रहरतः साधूनां प्रग्रहेरतः १४
तातें जो क्षत्रियद्रव्यकर्के यज्ञशेष भोजन करताहै सो रा जधर्मके शास्त्रका तत्ववेत्ताहोताहै असाधुजनके निग्रह मे सावधान होताहै साधुजनके संग्रहमे परायण होताहै १४

धर्मवर्त्मनि संस्थाप्य प्रजावर्तेत धर्मतः
पुत्र संक्रामितः श्रीश्च वने वन्येन वर्तयन् १५
उसका औरभी धर्मक्रमहै धर्ममर्यादाविषे प्रजास्थापनकर के आपधर्मकार्यकरे पुत्रके राज्यसंपदा अर्पणकर्के वना विषे वनके फलमूलकरके प्राणधारणकरे १५

विधिना श्रावणेनैव कुर्यात्कर्माण्य तंद्रितः
यएवं वर्तयेद्राजा राजधर्म विपश्चितः १६
उसको यहलोक वनाने परलोकभी सफलताके उदय को करताहै हे राजन् निर्वाणधर्म सहा इसकरहै अनेक विधि वाधाकर्के संकुलहै १६

तस्यायंच परश्चैव लोकः स्यात्सफलोदयः
निर्वाणंहि सदुष्प्राप्यं वहुविघ्नंच मेमतं १७
एवं धर्मं मनुक्रांताः सत्यधर्म परायणाः
आत्मपांस्य शौर्णगुणाः कामक्रोध विवर्जिताः १८
हे राजन् इसी प्रकारजो अपने धर्मको क्रमकर्के करतेहै सत्यवचन करतेहै तपको करतेहै शीलादिगुण संयुक्त

है कामक्रोधको वर्जन करतेहै १८

प्रजानां पालने युक्ता धर्मस्तु नममाश्रिताः
गोब्राह्मणार्थं युध्यंतः प्राप्ता गति मनुत्तमां १९

संपूर्ण प्रजाके पालनधर्म संयुक्त होतेहै ऐसे उत्तम राजधर्म करणेको परम निष्ठावालेहै गोब्राह्मण रक्षावासते युद्ध करतेहै सो उत्तमगतिको प्राप्तभयेहै १९

एवं रुद्राः सवसवा स्तथादित्याः परंतप ॥
साध्या राजर्षि संघाश्च धर्म मेतं समाश्रिताः
अप्रमत्ता स्ततः स्वर्गं प्राप्ताः पुण्यैः स्वकर्मभिः २०
इतिश्री राजधर्मे देवस्थानवाक्य मेकविंशः २१

हे राजन् इसीप्रकार रुद्र प्रजापालन करतेहै वसुप्रजापालन करतेहै आदित्य प्रजापालन करतेहै साध्य और राजाऋषी समूहभी इसीधर्मको समाश्रय कररहेहै यह सभही प्रजापालनवासते अपने अपने धर्मविषे सावधानहोकर्के अपने पुण्यकर्मोकर्के स्वर्गलोकके अधिकारको प्राप्तभयेहै ॥ २० ॥ इतिश्री महाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मे देवस्थानवाक्य मेकविंशः ॥ २१ ॥

वैशंपायनउवाच अस्मिन्नेवांतरे वाक्यं पुनरेवार्जुनोऽब्रवीत् निर्विण्ण मनसंज्येष्ठ मिदं भ्रातर मच्युतम् १

वैशंपायनउवाच हे जनमेजय इसीकालविषे अर्जुन वदीऊ वाक्यको कहताभया अपने ज्येष्ठभ्राताको निर्वाण मनसाविषे स्थितभयेको देखकर अतिदुःखसे कहताभया १

अर्जुनउवाच क्षत्रधर्मेण धर्मज्ञ प्राप्यराज्यं सुदुर्लभम् जित्वाचारी न्नृपश्रेष्ठ काले शस्त्रेणसंयुगे २

अर्जुनउवाच हे धर्मज्ञ क्षत्रधर्म कर्के दुर्लभ राज्यको पाइकर और रणविषे महावीर शत्रुमा योधा गणको मारकर्के महापवित्रकीर्तिको पाइकर तूं क्यो अतिशोककर्के संतापको पावताहै २ ॥ ॥

क्षत्रियाणां महाराज संग्रामे निधनं मतम्
विशिष्टं बहुभिर्यज्ञैः क्षत्रधर्म मितिस्मरतः ३

हे महाराज क्षत्रियोंको संग्रामविषे मरण परम उत्तमहै क्षत्रधर्मवेदोक्त यज्ञदानादिको कर्के अधिक विशेषवालाहै

69

र्मका विधान संग्राम यज्ञकर्के परमश्रेष्ठहै ३

ब्राह्मणानां तपस्त्यागः प्रीतिधर्मं विधिस्स्मृतः
क्षत्रियाणांच निधनं संग्रामे विहितं प्रभो ४

तप ऊेर त्यागब्राह्मणोंको परलोक गतीका विधानकहाहै। ऊेर क्षत्रियोंको संग्राममरणही परलोकगतीकाविधानप्रतिउत्तमहै ४

क्षत्रधर्मो महारौद्रः शस्त्रनित्य इतिस्मृतः ॥
वधश्च भरतश्रेष्ठ कालेशस्त्रेण संयुगे ५

क्षत्रधर्म महाघोरहै शस्त्रप्रहारमेंाही नित्यबनाहै रणका लमें शस्त्रकर्के मरणहोवे इसकर्के यहरण धर्मका यज्ञकरणा परमश्रेष्ठहै ५

ब्राह्मणस्यापि चेद्राजन् क्षत्रधर्मेण वर्ततः
प्रशस्तं जीवितं लोके क्षत्रंहि ब्रह्म संभवं ६

हे राजन् जो ब्राह्मणभी क्षत्रधर्मकी जीवका करेतो उसकोभी रणमें मरणा श्रेष्ठहै ऊेर क्षत्रीको तहां ब्रह्मघातका दोषहोता याते क्षत्रीके उत्पत्ति प्रथम ब्राह्मसेही भईहै ६

नत्यागो नपुन र्यज्ञो नतपो मनुजेश्वर ॥
राज्ञा मनीषीभिश्रेष्ठो लोके हष्ट परावरः ७

हे नरेश्वर क्षत्रियको रणयज्ञको समान ऊेर यज्ञनहीहै त्यागभी यज्ञसमान नहीहै जिसविषे शरीर त्यागकर्के आत्ममेध यज्ञहोताहै सो अश्वमेध यज्ञसेभी अति अधिक फलवालाहै ऊेर याचनाकर्के पराये द्रव्यग्रहणकर्के जीवना क्षत्रियोंको योग्यनहीहै ७

त्यक्त्वा संतापजं शोकं दंसितो भवकर्मणि क्षा।
त्रियस्य विशेषेण हृदयं वज्रसंनिभम् ८

ऐसे क्षत्रीधर्मवाला तू सर्वधर्मवेत्ताहै धर्मकरणे हाराहै राजधर्मका प्रतिपालकहै महाचतुरहै तत्वविचारविषे निपुणहै लोकविषे जो पूर्वकाल वर्तमानपरिणाम फलको देखणेहाराहै ८ ॥

जित्वारीन् क्षत्रधर्मेण प्राप्यराज्य मकंटकम्
विजितात्मा मनुष्येंद्र यज्ञदानपरोभव ९

शोकसंतापके दुःखको त्यागकरके क्षत्रधर्मकी पालनावासते सन्नद्धबद्ध सावधानहो हे मनुष्येंद्र क्षत्रधर्मकर्के श्रा

श्रुओंको जीतकर्के अकंटक राज्य पाइकर्के अपने मन की शोककलनाको जीतकर्के अव यज्ञदान कर्म परा यणहो ९ ॥

इंद्रोवै ब्रह्मणः पुत्रः क्षत्रियः कर्मणा भवत्
सतेषां पापवृत्तीनां जघान नवति र्नव १०

यह वृत्तांत इंद्रका सुनहेको इंद्रकश्यप ब्राह्मणका पुत्र भयाहे अपने लोकपालना वासते क्षत्रधर्म परायणभया। हे अपने भ्राताजोहे दुष्टकर्मवाले दैत्यदानव तिन्नके प्रजा पालना करणेको अटसठेनवे ऊनोको मारताभया १०

तच्चास्य कर्मपूज्यंच प्रशंस्यंच विशांपते तेनें
द्रत्वं समापेदे देवाना मितिनः श्रुतम् ११

सो इसइंद्रका वंधुघातरूपी पापकर्मभी इसक्षत्रधर्मकर्के पूजनीयभयाहे इसी कर्मकर्के देवराजनाम इसका प्रसि द्धभयाहे ताते सो इंद्र देवेंद्र वनाहे यह हमने पुरातन लोकोसे सुनाहे ११

सत्वं यज्ञै महाराज यजस्व बहुदक्षिणैः
यथैवेंद्रो मनुष्येंद्र चिराय विगतज्वरः १२

हे महाराज सो तू क्षत्रिराजा होकर अनंतदक्षिणावाले य ज्ञोकर्के यजनकर जैसे इंद्रदेवेंद्रहे तैसे तू मनुष्येंद्र होक र चिरकाल वीर शोकोज्वरहो १२

मात्वमेवं गते किंचित् शोचेथाः पुरुषर्षभ
गतास्ते क्षत्रधर्मेण शस्त्रपूता परांगतिम् १३

जो भया सो वीतगया पुरुषश्रेष्ठहोकर बहुत शोचमत् तकर जिन्नको शोचताहे सो तो क्षत्रधर्मकर्के रणमें शस्त्रकर्के पवित्र होकर्के परमगतीको प्राप्तभयेहे तेने परम दुर्लभगति ऊन्नको तेनेदीनीहे ऐसा उपकारकिया हे १३ ॥

भवितव्यं तथा तच्च यत्वृत्तं भरतर्षभ दि
ष्टंहि राजशार्दूल नशक्य मतिवर्तितुम् १४

इति श्री राजधर्मे अर्जुनवाक्यं द्वाविंशः ॥ २२

जोवीतगया सो ऐसे भवितव्यथा देवगतीकी भवितव्य

श्री
रा.प.
टी.
७०

७०

ता ऐसी बनीरही है राजशार्दूल भवितव्यताका पलटना किसी प्रकारसेभी किसीकोभी शक्यनहीहै १४
इति श्री महाभारते शांतिपर्वणि अर्जुनवाक्यं द्वाविंशोध्यायः २२ ॥ ॥ वैशंपायनउवाच

एवमुक्तस्तु कौंतेयो गुडाकेशेन पांडवः
नोवाच किंचित्कौरव्य ततो द्वैपायनो ब्रवीत् १

वैशंपायनउवाच हे कौरव्य कुरुवंशी जनमेजय अर्जुनने जब ऐसे वचनकहा कुंतीपुत्र पांडवराजा युधिष्ठिर उत्तर कछुनही देताभया तब द्वैपायन व्यासजी राजाको वचन कहतेभये ॥ १ ॥

व्यासउवाच ॥ बीभत्सो र्वचनं सौम्य सत्यमेतद्युधिष्ठिर शास्त्रदृष्टः परोधर्मः स्थितोगार्हस्थ्य माश्रितः २

व्यासउवाच हे सौम्य हे युधिष्ठिर अर्जुनका यहवचन सत्यहै यह गृहस्थधर्म शास्त्रमो देषाहै परम उत्तमहै गृहस्थको आश्रयकरणा सभको सर्ववर्णोको उत्तमहै २

स्वधर्मंच धर्मज्ञ यथाशास्त्रं यथाविधि
नहि गार्हस्थ्य मुत्सृज्य तवारण्यं विधीयते ३

तं आपभी धर्मज्ञहै शास्त्रविधिकर्के अपने स्वधर्मको कर गृहस्थधर्मको त्यागकरके तेको वनवास विधान उचितनहीहै ३

गार्हस्थ्यंहि सदादेवाः पितरो तिथयस्तथा
भृत्याश्चैवोप जीवंति तान्भरस्व महीपते ४

गृहस्थधर्मको देवताभी उपजीवका करतेहे पितरभी इसको आश्रयकर्के उपजीवका करतेहे अतिथीभी इसको पाइकर उपजीवन करतेहे भृत्यभी इसको प्राप्तहोइकर उपजीवका करतेहे तं इस गृहस्थ धर्मकर्के सभको पोषण कर ४ ॥

वयांसि पशवश्चैव भूतानिच नराधिप गार्हस्थ्येनेव धार्यंते तस्मात् श्रेष्ठो गृहाश्रमी ५

हे महीपते तं संपूर्ण जनोका अधिपहै पंछी जोहैं पशु जोहैं और भूत जोहै सो गृहस्थकर्के प्राणधारणाको

करतेहैं ताते संपूर्ण आश्रमीयो विषे गृहस्थाश्रमी श्रेष्टहै ५

सोहं चतुर्णा मेतेषा माश्रमाणां दुराचरः
तंचराय विधिं पार्थ दुश्चरं दुर्बलेंद्रियैः ६

हे पार्थ सो इह गृहस्थाश्रम चारो विषे आश्रमो विषे करणा महाकठिन जिसवासते धनधान्य संपदाका संग्रहकरणा बनताहै उसवासतेभी यज्ञक्रियादिक महाउद्यमकरणा बनताहै जिन्हको अपने देहकी इंद्रियोकी अधीनता नही है उसको महा दुसकर है ६ ॥

वेदज्ञानंच तेकृत्स्नं तपश्चा चरितं महत्
पितृपैतामहं राज्यं धुर्यवद्वोढु मर्हसि ७

तोको इसके सभ साधन बनेहै और तुसारे पितृपितामहादिकोंका जो परमधर्म है तिसके भारको तूं हलजोतने हारे वृषभकी न्याई धारणकरणे योग्यहै जो तेरे विषे उत्तमज्ञानहै उसकोमै जानताहूं जो तैने तपकियाहै उसकोभी जानताहूं तेरी जैसा कही ज्ञानी नहीहै और तप भी तेरी जैसा किसी नेभी नहीकिया ७

तपोयज्ञः क्षमाविद्या भैक्ष्य मिंद्रिय संयमः ॥
ध्यान मेकांत शीलत्वं तुष्टिर्ज्ञानं च शक्तितः ८

हे महाराज तपकरणा यज्ञकरणा क्षमाकरणी आत्माको असंगजाननेकी विद्या भिक्षाहृत्ति इंद्रियोका संयमकरणा ध्यानधारणाकरणी एकांतवासकरणा और संतोषशास्त्र विचारका ज्ञानयथाशक्ति दानकरणा ८

ब्राह्मणानां महाराज चेष्टाः संसिद्धिकारिकाः
क्षत्रियाणां प्रवक्ष्यामि तवापि विदितं पुनः ९

यह ब्राह्मणोको सिद्धिकरणेहारी धर्मचेष्टाहै अबक्षत्रियो की धर्मचेष्टा कहतेहै सो तोकोभी विदितहै तेरी त्यागबुद्धि देषकर्के बहोडभी कहतेहै ९

यज्ञोविद्या समुत्थान मसंतोषः श्रियंप्रति
दंडधारण मत्युग्रं प्रजानां परिपालनम् १०

यज्ञयागकरणे और विचारकर्के आत्माको असंगजानना यहविद्याहै और यज्ञकरणेको चढाई करणे धन संग्रहकरणेमे संतोष नही करणा अपराधीको दंडधारण

श्री
रा.य.
टी.
७१

७१

और शत्रुजीतनेवास्ते उग्रता करणी और प्रजाका पालनकर
णा १० ॥

वेदज्ञानं तथाकृत्स्नं तपः स्वचरितं तथा
द्रविणोपार्जनं भूरि पात्रेच प्रतिपादनं ११

और वेदोकाज्ञान सभही श्रवणकर्के संग्रहकरणा और त
पकरणा और अपने सुंदर धर्मका आचरण करणा जिस
कर्के राजधर्मकी कीर्ति विख्यातहोवे और द्रव्यके उपार्जना
बहोत करणी और सत्पात्रविषे बहोत दानकरणा ११

एतानि राज्ञां कर्माणि सुकृतानि विशांपते इमं
लोकं मसुंचैव साधयंतीति नः श्रुतम् १२

हे राजन् यहराजा लोकोंके सुकृत कर्महे सो राजाके
इसलोककों और परलोककी परमगतिको सिद्ध करते
हे यह हमने संपूर्ण ऋषि लोकोसे श्रवण कियाहे १२

एवं ज्यायस्तु कौंतेय दंडधारणमुच्यते बलंहि
क्षत्रिये नित्यं बलेदंडः समाहितः १३ ॥

हे कौंतेय जेते यह राजाके सुकृतकर्महे इन्होंविषे श्रे
ष्ट अपराधीको दंडकर्के प्रजापालन करणा एहि परम
श्रेष्टहे इसवासते क्षत्रिको बलहहि चाहिये बलविषे
ही दंडकी सावधानता बनीहे १३

एताः विद्याः क्षत्रियाणां राजन्संसिद्धि कारिकाः
अपिगाथा मिमांचैव बृहस्पति रभाषत १४

हे राजन् एहीश्रो यह विद्याहे सो राजालोकोंको परम
सिद्धि कारकहे इहां एक गाथाभी बृहस्पतिने कही
कहीहे उसको हमकहतेहे १४ ॥

भूमिरे तानि गिरति सर्पो बिलशयानिव
राजानंचा विरोद्धारं ब्राह्मणंचा प्रवासिनम् १५

यह पृथिवी इन्हों दो पुरुषोंको शीघ्रही ग्रसलेतीहे
जैसे सर्पबिलवासी मूषकोंको ग्रसलेतीहे सो दो पुरु
ष कोंनहे जोनसा राजा शत्रुके साथ विरोधनहीकरे और
जोनसा ब्राह्मण वेदांत ज्ञानको पाइकर गृहत्यागनही
करे १५ सुद्युम्नश्चापि राजर्षिः श्रुपते दंडकारणात

प्राप्तवान् परमां सिद्धिं दक्षः प्राचेतसो यथा १६
हे राजन् एक सद्युम्न नामधारी राज ऋषि भयाहे सो प्र
लणको दंडधारणसे परमसिद्धिको प्राप्तभयाहे जैसे प्रचे
ताकापुत्र दक्षराजा परमसिद्धिको प्राप्तभयाहे १६

युधिष्ठिरउवाच भगवन् कर्मणा केन सद्युम्नो वसुधा
धिपः संसिद्धिं परमां प्राप्तः श्रोतु मिच्छामि तं नृपं १७

युधिष्ठिरउवाच हे भगवन् सद्युमनराजा कौनकर्मकर्के सि
द्धिको कैसे प्राप्तभया उसराजाके कर्मको श्रवणकियाचाहताहु १७

व्यासउवाच अत्राप्युदाहरंतीम मितिहासं पुरातनम्
शंखश्च लिखित श्चास्तां भ्रातरौ संशित व्रतौ १८

व्यासउवाच हेराजन् इहाभी एक पुरातन इतिहासको उ
दाहरण कहतीहे शंख और लिखितऐसी नामवाले दो
भ्राता महानपस्वीभयेहे १८

तयोरावसथौ वास्तां रमणीयौ पृथक पृथक
नित्यंपुष्पफलै र्वृक्षै रुपेतौ बहुधामतु १९

दो. उक्कदोनेके अतिरमणीय आश्रम पृथक पृथक होतेभये
नित्यही पुष्पफल जिन्होकोहे ऐसे वृक्षोकर्के संयुक्तहे
और बहुदानाम नदीके तटमो बनीहे १९

ततः कदाचिल्लिखितः शंखस्याश्रम मागतः
यदृच्छयाथ शंखोपि निष्क्रांतो भवदाश्रमात २०

उसके अनंतर कदाचित् कालमो लिखितमुनी शंखनाम
वाले अपने भ्राताके आश्रमको आवताभया उसीकाल
मो लिखतकी खबरविनाही शंखमुनि अपने आश्रमसे
वाहर निकसजाताभया २०

सोभिगम्या श्रमंभ्रातुः शंखस्य लिखित स्तदा
फलानि पातयामास सम्यक्परिणता न्युत २१

सो लिखितमुनि अपने भ्राताके शंखके आश्रमको आइक
र्के परिपक्व फलोको वृक्षासे उतार लेताभया २१

अप्युपादाय विस्रब्धो भक्षयामास सद्विजः
तस्मिंश्च भक्षयत्येव शंखोप्याश्रम मागतः २२

फलको लेकर अपने भ्राताके विश्वासकर्के भक्षणकरताभया
उसके फलभक्षण कालमोही शंखभी आश्रमको आनप्राप्त
होताभया २२

भक्षयंतं तु तं दृष्ट्वा शंखो भ्रातरमब्रवीत्
कुतः फलान्यवाप्तानि हेतुना केन खादसि २३
फलभक्षण करते लिखितको देषकर शंखभ्राता वचनक
हताभया हे भाई यहफल तेने कहासे पाये हे और तू फ
लेंको कोनहेतुसे खाताहे २३
सोऽब्रवीद्भ्रातरं ज्येष्ठमुपसृत्याभिवाद्य च इत
एव गृहीतानि मयेति प्रहसन्निव २४
सो लिखित अपने भ्राताको शंखको बंदनाकरके कहताभया
इहांसेही यहफल लियेहे ऐसे हसताभया जैसा बोलताभया २४
तमब्रवीत्ततः शंखः तीव्ररोषसमन्वितः
स्तेयं त्वया कृतमिदं फलान्याददता स्वयं २५
तब उसको शंखतीव्रकोपकरके कहताभया तेने फलआप
ही अदत्त लियेहे तिने चोरीकीनीहे २५
गच्छ राजानमासाद्य स्वकर्म कथयस्व वै अद
त्ताहार मेवं हि कृतं पार्थिव सत्तम २६
तू अबराजाको जाइकर अपनी चोरीको कह जो मेने अदत्त
फल आपही चोरीसे लियेहे मोको इस चोरीकर्मका दंडकरो २६
स्तेनमानं विदित्वाद्य स्वधर्ममनुपालयन् शीघ्रं
धारय चोरस्य मम दंडं नराधिप ॥ २७
तू राजाको ऐसे कह मै तेरापास आयाहूं मोको तू चोर जा
नकर अपने धर्मको पालनकर मोको शीघ्रही दंडकर २७
इत्युक्तस्तस्य वचनात्सद्युम्नं स नराधिपं अभि
गच्छन्महाभागो लिखितः संशितव्रतः २८
ऐसा कहा तब शंखके वचनसे लिखितऋषि राजासद्युम्नके
प्रतिगया लिखितकैसाहे महाव्रतधारणकरकै महातपस्वीहे २८
सद्युम्नः स तु पालेभ्यः श्रुत्वा लिखितमागतम्
अभ्यगच्छन्महामात्यः पद्भ्यामेव जनेश्वरः ॥ २९
सद्युम्न राजा द्वारपालोंसे लिखितके आगमनको श्रवणक
रके मंत्री परिवार सहित चरणोकरके शीघ्रही लिखितकेपा
स आइप्राप्त होताभया २९
तमब्रवीत्समागम्य स राजा धर्मवित्तमम्
किमागमनमाचक्ष्व भगवन् कृतमेव तत् ३०

सो राजा धर्ममर्यादा वेत्ताको लिखितको मिलकर्के वचन कहताभया हे भगवन् तुह्मारे आगमका क्या कार्य है इस को शीघ्रही कहो जो कहो सो कियाजानो ३०

एवमुक्तः सविप्रर्षिः सद्युम्न मिद मब्रवीत्
प्रतिश्रुत्य करिष्येति श्रुत्वा तत्कर्तु मर्हसि ३१

ऐसा कहा तब ब्रह्मऋषि सद्युमनको कहताभया जोते ने मोको कार्य करणा सुनायाहे जो करोगा इसको सुना कर्के अवश्यतें करणेयोग्यहे ३१

अनिसृष्टानि गुरुणा फलानि मनुजर्षभ भक्ति
तानि महाराज तत्रमां शाधि माचिरम् ३२

हे राजन् मेरा ज्येष्ठभ्राता गुरु हे इसके विनादिये मेनेफल खायेहे मोको चोरीके दंडकर्के मोको शासनाकरो विरका ल नहीकरो ३२ ॥ सद्युम्नउवाच ॥

प्रमाणं चेन्मतो राजा भवतो दंड कारणे अनु
ज्ञाया मपि तथा हेतुः स्या ब्राह्मणर्षभ ॥ ३३

सद्युमनउवाच हे महाराज आपने अपने विषे ब्राह्मणो विषे दंड देनेको शास्त्रमो प्रमाण किया होवे तो आपके प्रति आज्ञाकरणेको प्रमाणहोताहे ताते हे ब्राह्मण सत्त म मेरी आज्ञाकर्के तुमशुद्धकर्म होगयहो आपही तुमम हाव्रत निष्ठहो आपकी आगमन ३३

सभवान भ्यनुज्ञातः शुचिकर्मा महाव्रतः
ब्रूहिकामा नतोन्यास्ते करिष्यामि हितेवचः ३४

कर्के मे पवित्रभयाहुं मेरी आज्ञाकर्के आपभी निर्दोष हो गयेहो आप और अपनी कामनाकी आज्ञाकरो मे आपके वचनको शीघ्रही करताहुं ३४

व्यासउवाच संछिद्यमानो ब्रह्मर्षिः पार्थिवेन महात्म ना नान्यंसंवरयामास तस्माद्दंडा हतेवरम् ३५

व्यासउवाच ॥ हे राजन् लिखित ब्रह्मऋषि राजाने बहो त प्रार्थनाकर्के कामनावासतेकहा दंडकरणेविना और का मना अपनी नहीकहताभया ३५

ततः सपृथिवी पालो लिखितस्य महात्मनः
करौ प्रछेदयामास धृतदंडो जगामसः ३६

तबराजा लिखितकी आज्ञा लेकर लिखितमुनीके दोनो

हाथोका छेद करावताभया लिखितमुनि राजासे दंडधारण
कराइकर्के राजाको आशीर्वाद कहिकर्के जाताभया ३६

सगत्वा भ्रातरं शंखं मार्तरूपो ब्रवीदिदम्
धृतदंडस्य दुर्बुद्धे भवां स्तत्क्षंतु मर्हसि ३७
सो लिखित अपने भ्राताके शंखके पास जायकर दीनरूपता
कर्के ऐसे वचन कहताभया हे भ्रात मेने राजदंड धारण
कियाहै मेरी दुर्बुद्धिको आपक्षमाकरणे योग्यहो ३७
शंखउवाच नकुप्ये तवधर्मज्ञ नत्वं दूषयसे मम
धर्मस्तुते व्यतिक्रांत स्ततस्ते निष्कृतिः कृता ३८
शंखउवाच हे लिखित तूं धर्मज्ञहै तेरी प्रतिकोपनहीकरता
ना तोको दूषण देताहूं तेने धर्म मर्यादाको लोपकिया
उसकी शासनामेने तोको कीनाही ३८
सगत्वा बहुधांशीघ्रं तर्पयस्व यथाविधि देवा
नृषीं पितॄंश्चैव माचाधर्मे मतिं कृथाः ३९
सो तूं अब बहुधा नदीको जाइकर शीघ्रही देवता ऋषीन
को तर्पणकर वहोउ इसप्रकार अधर्मविषे मननहीकर ३९
व्यासउवाच तस्यतद्वचनं श्रुत्वा शंखस्य लिखित
स्तदा अवगाह्यापगांपुण्या मुदकार्थं प्रचक्रमे ४०
व्यासउवाच सो लिखित उस शंखके उसवचनको श्रवणक
र्के तवही बहुधा पुण्यनदीको जलतर्पणवास्ते अवगाहन
करताभया ४०
प्रादुरास्तां ततस्तस्य करौ जलज सन्निभौ
ततः सविस्मितो भ्रातुर्दर्शयामास तौकरौ ४१
तवही उसके साथ नदी जलके स्पर्शनकर्के कमलोके समा
न सुंदर कोमल प्रगट होतेभये तव लिखित विस्मित हो
कर अपने हाथोको शंखको दिखावताभया ४१
ततस्तमब्रवीच्छंख स्तपसेदं कृतं मया मात्र
तत्र विशंकाभू दैव मत्र विधीयते ४२
तदनंतर शंखमुनि लिखितको यह तेरे हाथोका उगनामे
ने तपकरके कियाहै और शंकाको तूं मतकर इसकालवि
षे ऐसाही दैवका विधान बनाहै ४२
लिखितउवाच किंत्वनाहं त्वयापूतः पूर्वमेव महा
द्युते यस्यते तपसो वीर्यं मीदृशं द्विज सत्तम ४३

लिखितउवाच हे भाई शंखतेने ऐसेतपो बलकर्के पूर्वही मो को चौर्य्य कर्मसे पवित्र किया जिसविषे ऐसा बनारहा ते मोको राजाके पासको पाईयाहे ४३

शंखउवाच एवमेत न्मयाकार्यं नाहं दंडधर स्तव
सचपूतो नरपति स्त्वंचापि पितृभिः सह ४४

शंखउवाच सो इसीप्रकार तोको करदेता परंतु दंडकरणे का अधिकार नहीहे तोको यथार्थ दंडकर्के राजा अपने धर्मकर्के पितृपितामहादि समगोत्र सहित पवित्रभयाहे और तूभी अपने समगोत्र वंशसंयुक्त पवित्रभयाहे ४४

व्यासउवाच सराजा पांडवश्रेष्ठ श्रेयानेतेन कर्मणा
प्राप्तवान् परमां सिद्धिं दक्षः प्राचेतसो यथा ४५

व्यासउवाच हे राजन् पांडवश्रेष्ठ सो राजा सुद्युमन ब्राह्मणको हस्तछेदरूपी दंडकर्मकर्के ब्राह्मणसे श्रेष्ठभया इसप्रकार दक्षप्राचेतके समान परम सिद्धिको प्राप्तभयाहे

४५

एषधर्मः क्षत्रियाणां प्रजानां चैव पालनम्
उत्पथोन्यो महाराज मास्मशोके मनःकृथाः ४६

हे महाराज राजा लोकोंको प्रजापालन इसप्रकार और धर्म राजाको असत मार्गहे ताते आपशोक कल्पनामो मनको व्याकुल मतकरो ४६

भ्रातुरस्य हितं वाक्यं शृणुधर्मज्ञ सत्तम दंड
एवहि राजेंद्र क्षत्रधर्मो नमुंडनम् ४७ इति।
श्री राजधर्मे व्यासवाक्यं नाम त्रयोविंशः सर्गः २३

हे धर्मज्ञोविषे श्रेष्ठ राजेंद्र यह अर्जुन तुमारा भ्राताहे इस। कावचन हितकारीहे उसको तुमसुनो क्षत्रधर्म दंडनी तिमेंहीहे मुंडन वनवास क्षत्रधर्म नहीहे ४७

इति श्री महाभारते शतसाहस्र्यां संहितायां वैयासिक्यां शांतिपर्वणि राजधर्मे व्यासवाक्यंनाम त्रयोविंशः सर्गः २३

वैशंपायनउवाच पुनरेव महर्षिस्तं कृष्णद्वैपायनो।
मुनिः अजातशत्रुं कौंतेय मिदंवचन मब्रवीत् १

वैशंपायनउवाच हे जनमेजय अजात शत्रुजेंहे कुंतीपुत्र राजायुधिष्ठिर उसको महाऋषि कृष्ण द्वैपायनमुनि व्यास जी वहोउ इसवचनको कहतेभये १

व्यासउवाच अरण्ये वदतांतात भ्रातृणां ते मनस्विनां

मनोरथा महाराज येतत्रास न्युधिष्ठिर १
व्यासउवाच हे महाराज यह तुह्मारे भ्राता महामनके
कल्पनावालेहैं जब यह तुह्मारे साथ वनवास करतेभ
ये उसकालविषे जो जो मनोरथ मनमो करतेभये २

तानिमे भरतश्रेष्ठ प्राप्नुवंतु महारथाः ॥
प्रशाधि पृथिवीं पार्थ ययाति रिवनाहुषः ३
हे भरतश्रेष्ठ युधिष्ठिर तेरेभ्राता अब अपने मनोरथको
प्राप्तहोवे इसवास्ते तुमपृथिवीको अपने आज्ञाकरके
शासनाकरो जैसे नहुषकापुत्र ययाति पृथिवीको शास
नाकरताभया ॥ ३ ॥

अरण्य दुःख वसती रनुभूत्वा तपस्विभिः
दुःखस्यांते नरश्रेष्ठ सुखान्यनु भवंतुवै ४
इन्होने वनवासकी यात्रा तपकरके प्रथमही भोगलीनी
हे अबदुःखका अंतभयाहै हे नरव्याघ्र तेरेभ्राता राज्यसु
खोको तेरे साथही भोगे ४

धर्म मर्थंच कामंच भ्रातृभिः सहभारत
अनुभूय ततः पश्चा त्प्रस्थातासि विशांपते ५
हे भारत विशांपते अब तुम धर्म अर्थ कामको अपने भ्रा
तेभ्राता संयुक्त अनुभव पूर्वक भोगकरके पश्चात् चतुर्था
श्रम विषे वनवासको जावेगा ५

आनृण्यं गत्वकौंतेय तत्सर्वंच करिष्यसि
अर्थिणांच पितृणांच देवतानांच भारत ६
हे भारत कौंतेय अर्थिजनोंकी पितरनकी देवतागणकी अ
नृणताको पाइकर पश्चात् तूंवनवासादि तपकोभी करेगा ६

भ्रातृेष्व सर्वान् क्रतुभिः संयोज्य वहुदक्षिणैः
संग्रामे कीर्तिमतलां पांडवेय भविष्यसि ७
हे महाराज कुरुनंदन सर्वमेधयज्ञ अश्वमेध यज्ञकरके अ
वयजनकर उसके पश्चात् परमगतिको प्राप्तहोवेगा ७

सर्वमेधाश्व मेधाभ्यां यजस्व कुरुनंदन ॥
ततः पश्चान्महाराज गमिष्यसि परांगतिं ८
हे पांडवेय अपने समही भ्राताओंकरी इन्द्रको बहोत द
क्षिणावाले यज्ञोंकरके पूजनकरके अखंडकीर्तिको प्राप्तहोवेगा ८
विद्यते पुरुषव्याघ्र वचनं कुरुसत्तम ॥

शृणुष्वैवं यथा कुर्व अधर्मात् च्यवसे नृप ९

हे पुरुषव्याघ्र तूं कुरुसत्तम राजाहे तत्रधर्म तलारा हिंसा प्रधान जरूर विद्यमानहे तूं हमारे वचनको सुनजैसे इसधर्मको करताहुआ धर्मकर्मकी मर्यादासे हीननहोवे सो सुन ९

आददानेच विजये निग्रहेच युधिष्ठिर समान
धर्म कुशलाः स्थापयंति नरेश्वरम् १० ॥

हे नरेश्वर युधिष्ठिर पदार्थको ग्रहण करणेमो विजयकरणेमो राजाको समानधर्मकहाहे इसविषे कुशलपुरुष जो हे सो अवश्य कर्तव्यता करके धर्ममर्यादाको स्थापन करेंगे १०

देषकाल प्रतीक्षीयो दस्यून्मर्षयते नृपः ॥
शास्त्रजां बुद्धि मास्थाय युज्यते नैनसाहिसः ११

जो पुरुष राजा होकर देशकालविचारकरके पापकरणेहारे चौरजनोको अपराधक्षमा करताभया दीर्घसूत्री होताहै शास्त्रविचारके बुद्धिको धारणकरके यथापराध दंडको नहीकरता सो उनके पापकरके लिप्तहोताहै ११

आदाय बलिषट् भागं योराष्ट्रं नाभि रक्षति
प्रति गृह्णाति तत्पापं चतुर्थांशेन भूमिपः १२

जो राजा प्रजासे अपने बलिषट् भागरूपी करलेताहै अपने राज्यके देशको यथाविधि रक्षाको नहीकरता सो अपने राज्यके पापका चतुर्थांश लेताहै १२

निबोधच यथातिष्ठ धर्मान्न च्यवते नृपः ॥
निग्रहाद्धर्मशास्त्राणां मनुरुध्य न्नपेतभीः १३

यो राजा यथाविधि दंडकरताहै सो धर्ममार्गसे गलित नहीहोता धर्मउलंघनसे अधर्म प्रसंगसे धर्ममार्गसे गलित होताहै जो धर्मशास्त्रोको मानताहै सो पापभीतिसे रहितहोताहै ॥ १३ ॥

कामक्रोधा वनादृत्य पितेव समदर्शिनः ॥
शास्त्रजा बुद्धि मास्थाय युज्यते नैन साहिसः १४

सो राजा कामक्रोधको त्यागकरके पिताकी न्याई समदर्शीहोकर शास्त्रज्ञानवाली बुद्धिको मानकरके दंडविधिको करताहै सो हिंसा पापकरके युक्तनही होता १४

दैवेना भ्यहितो राजा कर्मकाले महाद्युते

श्री॰
रा॰ प॰
टी॰
७५

न साधयति तत्कर्म न तत्राज रतिक्रमम् १५
सो राजा दैवने वंचनकियाहै जो कर्मकालविषे कर्मकर्के उ।
सकार्यको नहीकरतासो उसकर्मको क्रमफलको नही प्राप्तहोता १५
तरसा बुद्धि पूर्वंवा निग्राह्या एव शत्रवः पापैः
सह नसंदध्या द्राष्ट्रं पुण्यंच कारयेत् १६
हे महाराज दुष्टशत्रुजोहै सो शीघ्रही मारणे योग्यहै अथवा
बुद्धिपूर्वक निग्रहकरणे योग्यहै पापी जनोके साथसंधीन
हीकर्तव्यही और अपने राष्ट्रदेशको पुण्यकर्मको राजा कर
वावे १६ ॥ शूरा श्चार्याश्च सत्कार्या विद्वांसश्च युधि
ष्ठिर ॥ गोमंतो धनिनश्चैव परिपाल्या विशेषतः १७
हे युधिष्ठिर शूरवीरलोकऔर पुण्यकारी उत्तमजन और पंडित
जन दानमान प्रतिष्ठापूर्वक प्रसिद्धकरणे और गोधनवाले औ
रधनसंपदावाले लोकरक्षा संयुक्त विशेषकर्के पालने योग्यहै १७
व्यवहारेषु धर्मेषु योक्तव्याश्च बहुश्रुताः
गुणयुक्तेऽपि नैकस्मिन् विश्वसेत विचक्षणः १८
अरक्षिता दुर्विनीतो मानीस्तब्धोऽभ्यसूयकः
एनसा युज्यते राजा दुर्दांत इति चोच्यते १९
व्यवहारकार्योविषे और धर्मकार्योविषे बहुश्रुत लोक युक्त
करणे योग्यहै एकाकी पुरुष गुणयुक्तभी होवे तोभी बु।
द्धिवान पुरुष उसका विश्वासनहीकरे नीतिमार्गसे रहितहो
वे अभिमानीहोवे और माननीय जनोको अवमानकरे गु
णोविषे दोष दृष्टिवाला होवे ऐसा राजा दुर्मद कहाहै १९
येरक्षमाणा हीयंते दैवेनाभि हतास्तथा
तस्करैश्चापिरुध्यंते सर्वं तद्राज किल्बिषम् २०
हे राजन् जोलोक राजाके रक्षाकर्के रहितहै सो जो दै
वीहि उपद्रवोंकर्के पीडित होतेहै और तस्करोकर्के मारेजा
तेहै सो सभही राजाको पापकर्मका दोषहोताहै २०॥
सुमंत्रिते सुनीतेच सर्वतश्चोप पादिते
पौरुषे कर्मणिकृते नास्त्यधर्मो युधिष्ठिर ॥ २१
हे युधिष्ठिर जोनसाकार्य अपने पौरुषकर्के
सुंदर मंत्रकरणेमा सुंदर नीति विचारमा निश्चयबुद्धिक
र्के संपूर्ण उपायकर्के समर्थ कियाहै
मे संबंध नही होता २१
प्रारंभकियाहै
कियातो कार्यकर्ताको अध

विक्रियंते समारब्धाः सिध्यंते चापि देवताः
कृते पुरुषकारेण नैनः स्पृशति पार्थिवम् २२

जो कार्योंके प्रारंभ विधिसे किये हुए विगडजावे कदाचित् दैवयोगकर्के सिद्धहोवे और उनका यत्न पुरुषार्थ कियाहै जो नहीं सिद्धहोवे तो राजाको पापदोष स्पर्शनहीकरता २२

अत्रते राजशार्दूल वर्तयिष्ये कथामिमाम्
यद्वृत्तं पूर्वराजर्षे ह्यग्रीवस्य पांडव २३

हे राजशार्दूल इसकालमे एककथाको हमप्रवृत्तकरतेहै जौनसा वृत्तांत पूर्वकालके ह्यग्रीव राजाकाभयाहै उसको आपश्रवणकरो २३ ॥

शत्रून् हत्वा हतस्याजौ शूरस्याक्लिष्टकर्मणः ॥
असहायस्यसंग्रामे निर्जितस्य युधिष्ठिर २४

हे युधिष्ठिर राजाहयग्रीव शत्रुगणको मारकर्के आपभी सहायविना संग्रामविषे मारागयाहै कैसारहा आपभी महाशूरमारहा और भारी पराक्रमवाला रहा सो संग्रामविषे जीतागया तहांही मृतगयातो स्वर्गलोकको प्राप्तभयाहै

यत्कर्मवै निग्रहे शात्रवाणां योगश्चाग्र्यः पालने मानवानाम् कृत्वाकर्म प्राप्यकीर्तिं सुपुण्यां वाजिग्रीवो मोदते स्वर्गलोके २५ ॥

जो कर्म शत्रुनिग्रह करणेमो कर्तव्यहै और जौनसा उत्तमयोग मनुष्य पालनाविषे कर्तव्यहै उसकर्मकोकरके और पुण्यकर्मकी कीर्तिको पाइकर्के ह्यग्रीव राजा स्वर्गलोकविषे आनंदको भोगताहै २५

संत्यक्तात्मा समरे आततायी शस्त्रैश्छिन्नोदस्युभिर्वध्यमानः अश्वग्रीवः कर्मशीलो महात्मा संसिद्धार्थो मोदते स्वर्गलोके ॥ २६

सो राजा हयग्रीव संग्राम देह त्यागकरगयाहै शस्त्रोंकर्के छिन्नदेह भयाहै शत्रुमारणेवास्ते आप आततायीभयाहै चोरोंकर्के स्तहगयाहै कर्मकांडी महात्माभयाहै सो अपने कर्मोंकी अर्थसिद्धिपाइ स्वर्गलोकविषे आनंदभोगताहै २६

धनुर्यूपो रशनाज्या शरः स्रुक् स्रुवः खड्गो रुधि

२४

श्री
गी.पं.
टी.
७९

76

रं यत्रचाज्यम् रथोवेदो कामजो युद्धमग्निः
चातुर्होत्रं चतुर्थो वाजिमुख्यो: २७

ऐसा हयग्रीव रणयज्ञविषे पवित्र पशुभयाहै रणयज्ञविषे धनुषका यूपस्तंभभयाहै धनुषकीजेह पशुबंधन रज्जुभईहै बाणस्रुकभयेहै खड्गस्रुवाभयाहै रथकी वेदी बनीहै क्रोधतो युद्धका स्वरूपभया सोई अग्निभयाहै इसप्रकार चातुर्होत्र यज्ञभया उसके चारऋत्विज चारोघोडे भयेहै २७

हत्वा तस्मिन्यज्ञवरे वपारीन्मुक्तोपापात्मा राजसिंह स्तरस्वी प्राणान् हुत्वा चावभृथे रणास्य वाजिग्रीवो मोदते स्वर्गलोके ॥ २८

राजा हयग्रीव क्रोधरूपी अग्निविषे शत्रुगणोको मारकर्कै होमकरताभया आपहिंसारूपी पापसे मुक्तभया राजोविषे महासिंहरूपेहै महावेगकर्कै प्राणोकोभी होमकरताभया अपने शरीरके रुधिरकर्कै यज्ञांत स्नानकर्कै देवलोकविषे आनंद भोगताहै २८

राष्ट्रंरक्षन्बुद्धिपूर्वं नयेन संन्यस्तात्मा यज्ञशीलो महात्मा सर्वाल्लोकान्व्याप्यकीर्त्या मनस्वी वाजिग्रीवो मोदते देवलोके २९ ॥

अपनी राज्यको अपनी बुद्धिपूर्वक नीतिकर्कै रक्षाकरताभया रणयज्ञकी रीतिकर्कै अपने शरीरकी अहंकाररूपी आत्माको त्यागकर्कै अपने कीर्तिकर्कै सर्वलोकोव्यापकर्कै ऐसा महामनवाला हयग्रीव राजा अबभी देवलोकविषे आनंद भोगताहै ॥ २९ ॥

दैवीं सिद्धिं मानुषीं दंडनीतिं योगन्यासैः पालयित्वा महीं च तस्माद्राजा धर्मशीलो महात्मा वाजिग्रीवो मोदते देवलोके ३०

अपने पूर्वले संस्कारोकी दैवसिद्धिको पाइकर मनुष्यलोककी दंडनीतिको अपने पुरुष अभिमान त्यागकर्कै यज्ञादि कर्मकर्कै पृथिवीको पालकर्कै ऐसा धर्मशील राजा हयग्रीव अब देवलोकविषे आनंदको भोगताहै ३०

विद्वांस्त्यागी श्रद्दधानः कृतज्ञ स्त्यक्त्वालोकं मानुषं कर्मकृत्वा मेधाविनां विदुषां संमतानां तनुत्यजां लोकमाक्रम्यराजा ॥ ३१

रुधिरहुतमा

वेदविद्याका महापंडितभयाहे औेर त्यागकरणे औेर श्रद्धासे युक्त यज्ञकर्त्ता औेर उपकार कृत्यका ज्ञाताभया इसलोकको त्यागकरके औेर अमानुष कर्मकरके विद्यावृद्धिवाले पंडितो का मान्यजो पुरुषहे औेर योगकर्के देहत्यागवाले उन्ना को प्राप्तभ्य स्वर्गलोकको लंघकर्के देवलोकविषे आनंद को भोगताहे ३१

जित्वा संग्रामान् पालयित्वा प्रजाश्च सोमंपीत्वा तर्पयित्वा द्विजाग्र्यान् युक्त्यादंडं धारयित्वा प्र जानां युद्धेक्षीणो मोदते देवलोके ३२

राजा हयग्रीव जोहे सो संग्रामको जीतकर्के प्रजाको पाल कर्के सोमयज्ञविषे सोमपान कर्के ब्राह्मण सत्तमोको दक्षि णादानकर्के तृप्तकर्के प्रजाकी रक्षावासते यथाविधिदंडक र्के युद्धविषे क्षीणदेह होकर्के देवलोकविषे आनंदभोग ताहे ॥ ३२ ॥

सम्यग्वेदा नाप्यशास्त्राण्यधीत्य सम्यग्राज्यं पाल यित्वा प्रजाश्च चातुर्वर्ण्यं स्थापयित्वा स्वधर्मे वा जिग्रीवो मोदते देवलोके ३३ ॥

वेदोको अभ्यास विधिसे पाठकर्के शास्त्रोके पठकर्के रा ज्यको धर्मसे पालकर्के एसा महात्मा राजा चारोवर्णोको अपने धर्मविषे स्थापनकर्के हयग्रीवराजा देवलोकविषे आनंदको भोगताहे ३३ ॥

वृत्तं यस्य श्लाघनीयं मनुष्याः संतो विद्वांसश्चा ईयंत्यर्हणीयं स्वर्गं जित्वा वीरलोकानवाप्य सिद्धिंप्राप्तः पुण्यकीर्ति र्महात्मा ३४ ॥ ॥

इतिश्री महाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मे वासवाकी वाक्यं नाम चतुर्विंशः सर्गः २४

जिसराजाका शीलवर्तन स्तुतियोग्यहे जिसको संत पंडित जन सभ्यवांछा करतेहे स्तुतिकरतेहे एसा राजा स्वर्गको जीतकर्के वीरलोकको प्राप्तहोकर्के परमसिद्धिको प्राप्तभ याहे बडा पुण्यकीर्ति महात्माभयाहे ३४ इतिश्री महाभार ते शांतिपर्वणि राजधर्मे वासवाक्ये नाम चतुर्विंशोध्यायः २४

श्री
राथ
टी.
७७

वैशंपायनउवाच हेजनमेजय व्यासजीका वाक्यसुना त
ब अर्जुनकुपितभया तब राजा युधिष्ठिरव्यासजीको आमं
त्रणकर्के बहोउवचन कहताभया १

वैशंपायनउवाच द्वैपायनवचः श्रुत्वा कुपितेच धनं
जये व्यास मामंत्र्यकौंतेयः प्रत्युवाच युधिष्ठिरः १
युधिष्ठिरउवाच नपार्थिव मिदं राज्यं नभोगाश्च १
पृथग्विधाः प्रीणयंति मनोमेद्य शोकोमोहंययत्ययं २
युधिष्ठिरउवाच हे महाप्रभो मोकोयह पृथिवीकाराज्य सु
खनहीकरता अनेक प्रकारकी भोगभी सुखनहीकरते
केवल यह बंधुशोक अतिपीडा करताहे २

श्रुत्वा वीर विहीनाना मपुत्राणांच योषितां
परिदेवयमानानां शांतिनोपलभे मुने ३
हे महामुने यह हमारे कुलके स्त्रियां जोहे सो अपने वी
रपतियोसेहीन भईआहे और पुत्रोसेभी रहितहे अत्यं
तविलापकरतीहे इनके रोदनशब्दके कोलाहलको
सुनकर्के मे शोककी शांतिको नही प्राप्तहोता ३

इत्युक्तः प्रत्युवाचेदं व्यासो योगविदांवरः
युधिष्ठिरं महाप्राज्ञो धर्मज्ञो वेदपारगः ४
ऐसा जबराजाने कहा तब व्यासजी योगवेत्ता जनो
विषे श्रेष्टहे और धर्मज्ञहे वेदपारगामीहे सो राजा
कों उत्तर कहतेभये ४ ॥

व्यासउवाच नकर्मणालभ्यते चेज्यया वा नाप्य
स्तिदाता पुरुषस्य कश्चित् पर्याय योगाद्विहितं
विधात्रा कालेनसर्वं लभते मनुष्यः ॥ ५ ॥
व्यासउवाच हे राजन् इसलोकविषे मनुष्यको सुखदुःखजो
अवश्यप्राप्तहोताहे सो कर्मकर्के सर्वप्रत्यक्ष इष्टहोताहे
यज्ञक्रियाकर्के नहीहोता उसकादाता इसलोकविषे को
ईपुरुषनहीहे विधाताने पूर्वले संस्कार योगकर्के किया
हे उसको सर्वप्रकारसे मनुष्यप्राप्तहोताहे अन्यथा
कदापि नहीहोता ५

नबुद्धिशास्त्राध्ययनेनशक्यं प्राप्तंविशेषं मनुजैरकाले

ले मूर्खोपि वाप्नोति कदाचिदर्था न्कालोहिकार्यं प्रति
निर्विशेषः ॥ ६ ॥

जो मनुष्योने वेदविद्याके अध्ययनकर्के प्राप्तहोनेको अश
क्यहै सो कालचिंताविना विशेषकल्पनासंयुक्त अकस्मात्
दैवयोगकर्के होताहै जिसकारणसे मूर्खभी विनापुरुषा
र्थ विनायत्न विनागुण उत्तम अर्थको प्राप्तहोताहै काल
जोहै सो अकस्मात् कार्यसिद्धकरणेको गुणवुद्धि पुरुषा
र्थ चिंतामो निर्विशेषहै ॥ ६

नाभूतिकालेषु फलंददंति शस्त्राणि मंत्राणि
तथौषधानि तान्येव कालेन समाहितानि
सिध्यंतिवर्धंतिच भूतिकाले ॥ ७ ॥

जो कार्यनही जिसकालमो बनता ऐसे अकालविषे शास्त्रवि
द्यामणिमंत्र औषधके प्रयत्न अपने फलको नहीकरते
जबकार्यसिद्धीका कालप्राप्तहोताहै सभही मिलकर्के सि
द्धहोतेहै अपने फलको सिद्धिकर्के वडतेहै ७

कालेनशीघ्राः प्रवहंति वाताः कालेन वृष्टिर्जल
दानुपैति कालेन पद्मोत्पलवज्जलंच कालेन
पुष्यंति नगा वनेषु ॥ ८ ॥

अपने कालके प्राप्तिकर्के वातभी शीघ्रवेहतेहै औरकालकी
अनुकूलताकर्के मेघवर्षाजलको देतेहै कालकर्के जलकम
उल फलोकी शोभा संयुक्त होताहै कालकर्के वृक्षवनविषे
प्रफुलितहोतेहै ८॥

कालेन कृष्णाश्च सिताश्च रात्र्यः कालेनचंद्रः परि
पूर्णबिंबः नाकालतः पुष्पफलं द्रुमाणां नाका
लवेगाः सरितो वहंति ९

कालकर्के रात्रिभी कृष्णसफेतहोतीहै अंधकारकर्के चांदनी
कर्के युक्तहोतीहै कालकर्के चंद्रमा पूर्णबिंबहोताहै का
लविनावृक्षोको फलपुष्पनहीहोते अकालविषे नदीयां
अपने जलवेगको नहीकरतेथ्रो ९ ॥

नाकालवेगाः खगपन्नगाश्च मृगाद्विपाः शैलमृगाश्च

श्री॰ रा॰ यं॰ टी॰ २८

28

लोके नाकालतः स्त्रीषु भवंति गर्भा नायांत्यकाले शिशिरोष्णवाताः १० ॥

कालवेगविना पंछी सर्पादिकभी अपने वेगको नहीकरते मगहाथी पर्वत इत्यह सभही कालके अधीनहे अकालविषे स्त्रियोके गर्भभी नहीहोते शीत उष्णवर्षा यहभी अपने विना नही होते १०

नकालतो म्रियते जायतेवा नाकालतो व्याहरते च बालः नाकालतो यौवनमभ्युपैति नाकालतो रोहति बीजमुप्तम् ११

अकालसे मरता कोईनही अकालसे जन्मभी किसीका नहीहोता अकालसे बालकभी वचननहीकहिशकता अकालसे शरीरमो यौवननहीआवता अकालसेपृथिवीमो बीजपडावे अंकुरको नहीकरता ११

नाकालतो भानुरुपैतियोगं नाकालतोस्तं गिरिमभ्युपैति नाकालतो हीयते वर्धतेच चंद्रः समुद्रोपि महोर्मिमाली १२ ॥

अकालसे सूर्यभी अपने उदययोगको नहीकरता अकालसी सूर्यभी अस्ताचल पर्वतको नहीजाता अकालसे चंद्रमाभी अपने किरणोकी हानिवृद्धिको नहीपावता अकालसे समुद्रभी महातरंगलहरी मालाकर्के उछलता नहीहे १२

अत्राप्युदाहरंतीम मितिहासं पुरातनम् गीतं राज्ञा सेनजिता दुःखार्तेन युधिष्ठिर १३

हे राजन् युधिष्ठिर कालगती विषे एक पुरातन इतिहासको उदाहरणकर्के कहतेहे जोकष्ट शोकातुर सेनजित राजाने कहाहे १३

सर्वानेवैष पर्यायो मर्त्यान्स्पृशति दुःसहः कालेन परिपक्वाहि म्रियंते सर्वपार्थिवाः १४

यह कालगतीका चक्र सर्व मनुष्योंको स्पर्शकरताहे कालकर्के परिपक्व होकर्के सभही राजालोक मरतेहैं कालगती महाकठिनहे ॥ १४ ॥

घ्नंति चान्यान्नरा राजं स्तानप्यन्ये स्तथा नराः
संज्ञैषा लौकिकी राजन्न हंति न च हन्यते १५

इस जगतविषे मनुष्योंकों कोई और पुरुष मारतेहे जो मारणे हारेहे उन्हको और पुरुष तैसेही मारतेही मरणे मारणेविषे लोकोको नामसंज्ञाही यह बनीहे वास्तव किसीको कोई मारता मरता नहीहे यह सभकालगतीबनीहे १५

हंतीति मन्यते कश्चि न्नहंती त्यपि चापरः ॥
स्वभावतस्तु नियतौ भूतानां प्रभवाप्ययौ १६

कोई मानताहे यह मोको मारताहे कोई कहताहे मारता मरता कोईनही अपने कालसे मराहे वास्तव सर्वभूतो के उत्पति प्रलयदेह स्वभावसे सदाबनीहे १६

नष्टे धनेवा दारेवा पुत्रे पितरि वाम्हते ॥
अहोदुःख मितिध्याय न्दुःखस्या पचितिश्चरेत् १७

जब अपना धननष्टभया अथवा दारानष्टभई अथवा पुत्र नष्टभया अथवा पिता नष्टभया तब कहताहे मोको अतिदुखहे ऐसे ध्यानजो करताहे सो अपनी सुखकी हानिको करताहे जो यह पुरुष दुखप्राप्तिमे दुखचिंतनही करे तो सुखहानी नहीहोती १७

सकिंशोचति मूढःसन् शोच्यान्कि मनुशोचति
पश्यन्दुःखेषु दुःखानि भयेषुच भयान्यपि १८

हे राजन् आपतूं क्षत्रधर्मका वेत्ताहे सो तूं मूढोकी न्याई जिनको शोचताहे तिन्हका शोचना योग्यनहीहे उन्हको शोचना शरीरसाथगयाही सो अशोच्यहे शोचना योग्यनही हे उन्हको शोचना बालविधवा अपनीकन्या समानहे इस विषे माथाफोडनादि दुःखपीडा करणी सो आपही द्विगुण दुःखपीडा करणी और भयकालविषे द्विगुण भयचिंता करणी यहमूढताका स्वभावहे १८

आत्मापिचायं नमम सर्वावा पृथिवी मम
यथा मम तथान्येषा मिति पश्यन्न मुह्यति १९

अब हम मोहनिवृत्तिकी अवधी कहतेहे शोककालविषे ऐसा विचारकर्तव्यहे जिस देहके साथ बांधवोंका संबंध बना हे सो देह हमारा वास्तव नहीहे पृथ्वीका विकारहे और सं

र्गा पृथिवी आदिक प्रपंच आत्मानहीहै अहंता ममता
रूपहै आत्मा सभसे असंगहै ऐसे विचारसे देषेतो बहोड
मोको शमनही होता १९

शोकस्थान सहस्राणि हर्षस्थान शतानिच
दिवसे दिवसे मूढ माविशंति नपंडितम् २०

इस आत्माको संसारके ब्यवहारमो अहंता ममता संबंधसे
शोकस्थानके अनेक सहस्रहोतेहै और मोहस्थानके अने
कशतहोतेहै सो दिने दिने प्रति प्राप्तहोतेहै मूढके चि
तको आवेश करतेहै आत्माकी असंगता ज्ञानवाले पंडित
जनके चित्तको हर्ष शोकका आवेशनही करते २०

एव मेतानि कालेन प्रियद्वेष्याणिभागशः
जीवेषुपरि वर्तंते दुःखानिच सुखानिच २१

इसीप्रकार कालयात्राके स्वभावसे अहंता ममताके आवे
शसे प्रिय अप्रियताके स्वरूप सुखदुःखजीवोविषे प्रवाह
रूपतासे आवते जातेहै यह सभही विद्दिप्र पुरुषके शिर
ताडनादि समान दुःख रूपहै सो मोह कलनासे सुख जै
सा प्रतीतहोताहै २१ ॥

दुःख मेवास्ति नसुखं नस्मात्तदुपलभ्यते तस्मा
र्ति प्रभवंदुःखं दुःखार्ति प्रभवंसुखं ॥ २२

ताते यह सभही दुःखरूपहै इससे कदापि सुखकी उपलब्धी
नहीहोती तस्माकी चित्तचपलासे दुःखहोताहै उसीको दुः
खपीडारूप जाननेसे त्यागकिया तो सुखहोताहै २२

सुखस्थानंतरंदुःखं दुःखस्यानंतरं सुखं
ननित्यंलभतेदुःखं ननित्यं लभतेदुःखम् २३

इस संसार दशाविषे जीवोंको सुखके अनंतर दुःखहोताहै
दुखके अनंतर सुखहोताहै न दुःख नित्यहोताहै न सुख
नित्यहोताहै इनके प्रनागमको परस्पर प्रवाहरूप संसा
रमो सद्दावनाहै २३

सुख मेवहि दुःखांते कदाचित दुःखतः सुखं
तस्मादेतद्द्वयं त्याज्यं यद्दके क्षीयते सुखम् २४

जवसुखका अंतहोताहै तो सुखकी वियोगकर्के दुःखरूप
होताहै कदाचित ओही दुःखअपने अंतकालमो सुखरूप

होताहै ताते यहदोनो अहंता ममताके त्यागकर्के त्या
गदेवे जो कोई सदा अखंड सुखकी वांछाकरे तो दुख
सुख कलनासे मुक्तहोताहै २४

यन्निमित्तं भवेच्छोक स्तापो वा दुःखमूर्छितः ॥
आयासो वापि यन्मूल स्तदेकांग मपि त्यजेत् २५

ताते मनमो ऐसे विचार कर्तव्यहै जिसके निमित्त शोकहो
वे अथवा संतापहोवे जिसकी दुःखमूर्छाकर्के महाखे
द अथवाहोवे उसको दुःखमूलजानकर्के जैसे सर्पदंश
वाले एक अंगुष्टमात्र अंगके त्यागकर्के शेषदेहको सुख
होताहै उसकी अहंता ममताको त्यागदेवे इसीप्रकार
राज्यादि वियोगविषेभी विचारकर्तव्यहै २५ ॥

सुखंवा यदिवा दुःखं प्रियंवा यदिवा प्रियम् ।
प्राप्तं प्राप्त मुपासीत हृदयेना पराजितः २६

ताते यहपुरुष संसार दशाके प्रवाहमो सुखप्राप्तहोवे
अथवा दुखप्राप्तहोवे प्रियहै अथवा अप्रियहै जो जो का
लक्रमनासे आवता जाताहै इसके हर्षशोक त्यागवाले
असंग अपराजित मनकर्के सेवन करलिये २६

ईषदप्यंग दाराणां पुत्राणां मचर त्प्रियम्
ततोज्ञास्यसिकः कस्य केनवा कथमेवच २७

यह पुरुष जिनके दुःखसे अपनीको दुःखी मानताहै उ
न्हकी आपपरीक्षाभीकरे तो मोको कौनप्रिय जानताहै
कौन अप्रियहै जेते पुत्रदारादिक उसको प्रियहै उन्हका
एकवार दोवार अप्रियकोकरे तब जानेगा कौनकिसका
प्रियहै और कौन अप्रियहै यह संबंध किसवासते कौन
से कौनसे कौनसे कैसेबनाहै २७

येच मूढतमालोके येच बुद्धेः परंगताः ॥
तएव सुख मेधंते मध्यमः क्लिश्यते जनाः २८

ताते जो जीव अज्ञानकी अंधता महामूढहै सो इसलोक
विषे सुखीहै और जोनसा तत्वविचारकर्के अहंता ममता
बुद्धिसे असंग होगयाहै यह दोनो सुखको भोगतेहै जोन
सा इन्हकी दशासे मध्यम अवस्था विषेही सुख दुःखदशा

मो संयोग वियोग ज्ञानसे हर्षशोक मानताहै सो सदा क्ले
शभागीवनाहै २८

इत्यब्रवीन्महाप्राज्ञो युधिष्ठिर प्रसेनजित् ॥
परावरज्ञो लोकस्य धर्मवित्सुखदुःखवित् २९

हे युधिष्ठिर सो ऐसा प्रसेनजित् राजा लोकोकी पराव
रगतिको जाननेहारा महाबुद्धि इसप्रकार धर्मवेत्ताभया
और सुखकी कलनाको विचारकरताभया २९

परदुःखेन यो दुःखी नसजातु सुखीभवेत्
दुःखानांहि क्षयो नास्ति जायतेहि परात्परं ३०

जो पुरुष परदुःखकरके दुखीहोय सो कदापि सुखीनही
होता इस संसार दशामे दुखोका क्षय कदापि सुखी
नहीहोता कदापि नहीहै परेसेभी परे परमदुःखहोताहै ३०

सुखंच दुःखंच भवाभवौच लाभालाभौ मरणंजीवितंच
पर्यायतः सर्वमवाप्नुवंति तस्माद्धीरो नैवहृष्येन्नशोचे
त् ३१ ॥ सुख और दुःखभय और अभयलाभ और अ
लाभमरण और जीविना यह सर्वभूतोके इस संसार
विषे सदाप्राप्तहोतेहै ताते विचारवान पुरुषइनकी प्राप्ति
विषे हर्षशोकके वशनहीहोवे ३१ ॥

दीक्षांराज्ञः संयुगे युद्धमाहु र्योगंराज्ये दंडनीत्यांच सम्य
क् वित्तत्यागो दक्षिणानांच यज्ञे सम्यक् ज्ञानं पाव
नानीति विद्यात् ३२

हे राजन् श्रवमोको सं
न्यासके स्थानमे यज्ञ यागको कहतेहै राजाको संग्राम
कालविषे युद्धकरणेकी दीक्षाकरणे योग्यहै और राज्यपाइ
करके दंडनीतिका प्रयोगकरणे योग्यहै और राज्यपाइक
के दंडनीतिका प्रयोगकरणे योग्यहै यह महा योगकहा
है और संन्यासकहाहै यज्ञविषे दक्षिणादानवास्ते द्रव्यका
त्यागकरणा यही राजाको तत्वज्ञानकहाहै राजाको पवीध
मे पवित्रकरणेहारा ज्ञानयहै ३२

राजर्षि बुद्धिपूर्वं नयेन सत्यकालो यज्ञशीलो म
हात्मा सर्वांल्लोकान् धर्मदृष्ट्या चरन्वा पश्चाद्देहान्मो
दते देवलोके ॥ ३३ ॥

राजा अपने राज्यके देशको नीति विचारसे रक्षाकरे अहंकारको त्यागकरे यज्ञकरणेका शील जिसकोहो वे ऐसा महात्माजो सर्वलोकोंको धर्मदृष्टिकर्के देषकर विचरताहे उपरंत देवलोकविषे आनंदको भोगताहे २२

जित्वा संग्रामान्पालयित्वा च राष्ट्रं सोमं पीत्वा वर्धयित्वा प्रजाश्च युक्त्या दंडं धारयित्वा प्रजानां युद्धे क्षीणो मोदते देवलोके ॥ २४

जो राजा संग्रामको जीतकर्के अपने राज्यको पालकर्के यज्ञोविषे सोमपानकर्के अपनी प्रजाको धर्मकर्मसे दृद्धिकर्के ओर अपने प्रजाको युक्तिकर्के दंडधारकर्के युद्धविषे क्षीणदेहहोताहे सो राजा देवलोकविषे आनंदको भोगताहे २४ ॥ ॥

सम्यग्वेदान्प्राप्य शास्त्राण्यधीत्य सम्यग्राष्ट्रं पालयित्वा च राजा चातुर्वर्ण्यं स्थापयित्वा स्वधर्मे पूतात्मा वै मोदते देवलोके ॥ २५

जो राजा गुरोंसे अभ्यासकर्के वेदोंको संस्कार पाठकर्के उनके विधानवास्ते धर्म प्रधान शास्त्रोंको पढकर्के धर्ममर्यादासे राज्यको पालकर्के ओर चारवर्णो अपने अपने धर्मकर्मविषे स्थापनकर्के इसप्रकार रणविषे पवित्रदेह जो होताहे सो राजा देवलोकविषे आनंदको भोगताहे २५

यस्य वृत्तिं नमस्यंति स्वर्गस्थस्यापि मानवाः पौरजानपदामात्याः स राजा राजसत्तम २६

इति शांतौ राजधर्मे सेनजित्उपाख्यानं पंचविंशः

हे राजसत्तम जिस राजाके धर्मकर्मवाले शीलचरित्रको स्वर्गमे स्थितभयेकाभी मनुष्यलोकविषे पुरवासीजन देशवासीजन ओर उत्तम मंत्रीजनभी स्तुतिकरते हे सो राजा राजालोकोविषे उत्तमहे २६ इतिश्रीमहाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मे सेनजित्उपाख्यानंनाम पंचविंशोध्यायः ॥ २५ ॥

२५

वैशंपायनउवाच ॐ अस्मिन्नेव प्रकरणे धनंजयमुदारधीः अभिनीततरं वाक्यं मुवाच च युधिष्ठिरः

१

वैशंपायनउवाच हे जनमेजय व्यासजीके वचनप्रसंग

सो राजा युधिष्ठिर महाउदार बुद्धीहै सो युक्ति न्यायकरकें समर्थवचनको अर्जुनप्रति कहताभया १ युधिष्ठिरः

यदेतन्मन्यसे पार्थ नज्यायोस्ति धनादिति
नस्वर्गो नसुखं नार्थो निर्धनस्येति तन्मृषा २

युधिष्ठिरउवाच हे धनंजय जो तूं मानताहै धनसंग्रह से और कलुतप संन्यासादिक श्रेष्ठनहीहै धनहीन पुरुषको नास्वर्गहै नासुखहै यह तेरावचन झूठाहै २

स्वाध्याययज्ञ संसिद्धा दृश्यंते बहवोजनाः
तपोरताश्च मुनयोः येषां लोक सनातनाः ३

स्वाध्याय यज्ञकरकें सिद्धभये बहोत मुनिदृष्टहोतेहै जिनको अखंड आनंदवाले बहोतजन दृष्टहोतेहै तपो यज्ञसे सिद्धभये लोक सनातन बनेहै ३

ऋषीणां समयंशश्वद्येरक्षंति धनंजय ॥
आश्रिताः सर्वधर्मज्ञा देवास्तान्ब्राह्मणान्विदुः ४

हे धनंजय ऋषियोंका संप्रदाय वेदाध्ययनहै इसको अखंड जो अभ्यास करतेहै ऐसे ब्रह्मचारी जो लोकहै तिह्नको देवता और धर्मज्ञलोकभी अपनी पवित्रतावा स्ते आश्रयकरते इह्नको हम ब्रह्मप्राप्तिके अधिकारसे ब्राह्मण मानतेहै ४ ॥

स्वाध्याय निष्ठांश्च ऋषीन् ज्ञाननिष्ठां स्तथापरान्
बुध्येथाः सततं चापि धर्मनिष्ठा न्धनंजय ५

हे धनंजय कोनसे अपनी स्वाध्याय निष्ठावाले ऋषीहै और कौनसे ज्ञाननिष्ठावाले ऋषीहै इह्नको तूमसदा धर्मनिष्ठावाले जानो ॥ ५ ॥

ज्ञाननिष्ठेषु कार्याणि प्रतिष्ठाप्यानि पांडव
वैखानसानां वचनं यथानो विदितं प्रभोः ६

जैसे अपने हव्यकव्य दानवाले देवता पितरोंके निमित्त यज्ञयागादिकहै सो ज्ञाननिष्ठावाले तपस्वी जनो कोही दातव्यहै इसकरकें अखंड सुकृतफलदेताहै यह वचन हमने वानप्रस्थ जनोसे श्रवण कियाहै ६

अजाश्च पृश्नयश्चैव सिकताश्चैव भारत
अरुणाः केतवश्चैव स्वाध्यायेन दिवंगताः ७

जैानसे अजनामसे प्रसिद्ध ऋषीहे औेर पृश्निनामसे प्र सिद्धहे औेर सिकता नामसे प्रसिद्धहे औेर अरुनामसे प्र सिद्धहे औेर केतुनामसे प्रसिद्धऋषीहे सो सभही स्वा ध्याय यज्ञकर्के दिव्यलोकको गयेहे ७

अवाप्येतानि कर्माणि वेदोक्तानि धनंजय
दानमध्ययनं यज्ञो निग्रहश्चैव दुर्ग्रहः ८

हे धनंजय जो तुमने वेदोक्त कर्मकहेहे उन्हुको पाइ कर्के दान अध्ययन यज्ञकरणो यहतो कर्ममार्गविषे होतेहे परंतु गृहस्थधर्मविषे इंद्रियोके निग्रहबडा कठिनहै ॥ ८ ॥

दक्षिणेनच पंथानं अर्यम्णोये दिवंगताः ॥
एतान् क्रियावतो लोका ग्रुक्तवान्सर्वमध्यहं ९

जो कर्मयोगवाले दक्षिणायन मार्गकर्के अर्यमादि पि तृगण स्वर्गको गयेहे यह क्रियाकांडवालेको लोक होतेहे यह मेनेभी पूर्वकहाहे ९

उत्तरेणच पंथानं नियमाद्यं प्रचक्षते ॥
एते योगविदांलोका भांतिपार्थ सनातनाः १०

औेर जैानसे उत्तरायण मार्गके नियमकर्के देवयानकी प्रशंसा करीहे यहतो योगधारणवालेको सनातन लोकभासतेहि १० ॥

तयो स्तत्रोगतिं पार्थ प्रशंसंति पुराविदः
संतोषा त्स्वर्ग माप्नोति संतोषा त्परमंसुखं ११

यह पितृयान देवयान मार्गजोहे सो कर्मनिष्ठा योग निष्ठाकर्के सनातन लोकोने श्रेष्ठमानेहे परंतु मोको दोने मार्गसे श्रेष्ठ त्यागमार्ग उत्तम भासताहे जिसमे केवल संतोषही साधनवनाहे संतोषसे पुरुष अखंड स्वर्गसुखको पावताहे संतोषसे परमसुख उभयलो कमा नहीहे ११

तुष्टेर्न किंचित्परमं सासम्यक्त्राति तिष्ठति
क्रोधहर्षविहीनस्य सततं सिद्धिरुत्तमा १२

संतोषकी तुष्टिसिद्धिसे उत्तम सिद्धि औेर नहीहे ऐसी उत्तम क्रोधहर्षके जयवालेको सनातनहोतीहे १२

अथाप्युदाहरंतीमं गाथागीता यथातिना
याभिः प्रत्याहरेत्कामान् कूर्मोंगानीव सर्वशः १३
इहांभी इसप्रकारकी अनेकगाथा और उदाहरणकहती
हे जौनसेया उत्तमगाथा राजा ययातीने गायन कीनीहे
तिह्नाके श्रवणकर्के यह पुरुष कामवासनाके जालको
वाह्यविषयोसे कूर्मोके अंगोकीन्याई सर्वप्रकारसे फेरले
वे १३ ॥ यदाचायं नबिभेति यदाचास्मान्नबिभ्य
ति यदानेछति नद्वेष्टि ब्रह्मसंपद्यते तदा १४
यहतो प्रत्याहार साधन चित्तके अंतर्मुखतासे होताहे
अब यह त्याग योगवाला अंतर्मुखताकर्के किसीसे भ
यभीत नही होवे अरुं उसंगयोगीसे और किसीको भयन
ही उपजे जबयह इछानहीकरे नाद्वेषकरे तबयहब्र
ह्मभावको प्राप्तहोतेहे १४
यदान्नभावे कुरुते सर्वभूतेषु पापकम्
कर्मणा मनसावाचा ब्रह्मसंपद्यते तदा १५
जब यह पुरुष सर्वभूतोविषे अहंता ममता पापवाले
रागद्वेषवालेभावको मनवाणी कर्मकर्के नहीकरे
तबही ब्रह्मभावको प्राप्तहोताहे १५
विनीत मानमोहस्य बहुसंग विवर्जितः॥
तदात्म ज्योतिषः साधो निर्वाण मुपपद्यते १६
जिसको मानमोहका जयभयाहे वहोतप्रकारके धना
दिवासनाप्रसंगसे वर्जितहोताहे उसको स्वयंप्रकाशज्ञा
नसिद्धहोताहे ऐसे साधुजनको निर्वाणप्राप्ति उप
लब्ध होतीहे १६ ॥
इदंतु श्रुणुमे पार्थ ब्रुवतः संयतेंद्रियः
धर्मंमन्ये हृतमन्ये धनमीहंति वापरे १७
हे पार्थ अब मोसे यह सिद्धांतवार्ता श्रवणकरणेसे जो
को प्रेमसे कहताहूं मनकी सावधानतासे श्रवणकर
केते और जनधनको शुभमानतेहे कोई औरधनको श्रेष्ठ
कमानतेहे १७ ॥
धनहेतोर्य ईहेत तस्यानीहा गरीयसी
भूयान्दोषोहि हृतस्य पशुधर्म स्तदाश्रयः १८
जो कोई पुरुष धर्म कर्मके वास्ते धनको इच्छाकरताहे

उसको अनिच्छाही शुभहै धनके आश्रय जिसके यज्ञादि धर्महै उसको धनकी उपार्जनावास्ते हिंसादि दोष अने ककर्तव्य होतेहै १८

प्रत्यक्ष मनुपश्याम स्त्वमपि द्रष्टु मर्हसि
वर्जनं वर्जनीयानां मीहमानेन दुष्करम् १९

धनकी वांछावालेको जोदोष होतेहै उन्हको हमसदा प्रत्यक्षदेषतेहै तमभी प्रत्यक्ष प्रापदेखो जो जो दोषक्रो ध लोभादिक वर्जनीयहै सो सो धनकी वांछावालेको त्यागकरणे महाकठिनहै १९

योवित्त मभिपद्यते सम्यग्भूतेषु दुर्लभम्
द्रुह्यन्तः प्रेतितत्प्राज्ञः प्रतिकूलं तथा नयं २०

जो पुरुष धनकी उपार्जना करतेहै उन्हको साधुकृत्य दुर्लभहै धनजो प्राप्तहोताहै परद्रोह परहिंसाकर्के प्राप्तहोताहै जो धन प्राप्तभी भयाहो तस्करादि महाभयकी शंकाको करताहै २०

यस्तु संभिन्न वृत्तःस्या द्वीतशोक भयोनरः
अल्पेन तर्षितो द्रुह्यान् ब्रह्महत्यां नबुध्यते २१

जो पुरुष धनकी वांछाकर्केभी धनहानिविषे मलिनवृत्ति होताहै वीतशोक भयभी भयाहै स्वल्पधनवांछाकर्केभी ब्रह्महत्यादि दोषको करलेताहै २१

दुष्यंत्या ददतो भृत्या नित्यं दस्यु भयादिव
दुर्लभं च धनंप्राप्य भृशं दत्वा नुतप्यते २२

ऐसे दुर्लभ धनको पाइकर जो अपनी सेवाकरणेहारे सेवक भृत्यादिकहै सो सेवाके धनको लेने चाहतेहै उन्हसे धनीपुरुष चोरकी न्याई द्वेषकरलेतेहै स्वल्पधनदेकर्केभी पश्चात् संतापको प्राप्तहोतेहै २२

अधनः कस्य किंवाच्यो विमुक्तः सर्वशः सुखी
देवस्व मुपगृह्यैव धनेन नसुखी भवेत् २३

जिसके पास धन नहीहै उसको कोई दोषनही होता सर्वदोष मुक्तहै सर्वदा सुखीहै जो कोई चिरकालसे संग्रह किया धनदान भोग रहितहै तीनवर्षके संग्रहकाहै

83

सो देवता धनहोताहे उसको देवता अर्थदान कर्मकरे यज्ञकरे तबसुखी होताहे जो नही खरच करणेसे लाभालोभ बढताहे तस्याकी वृद्धिसे उस धनसे पुरुष दुःखकोही अनुभव करताहे २३

तत्रगाथा यज्ञगीता कीर्तयंति पुराविदः
त्रयी मयाश्रितांलोके यज्ञसंस्तर कारिके

तिसधनके चिंताविषे यज्ञकर्मकी प्रतिपकरणेहारीगाथा वेदत्रयीके कर्मोके आश्रितहे यज्ञविस्तारको करणेहारेहे २४ ॥

यज्ञायसृष्टा निधनानिधात्रा यज्ञायसृष्टः पुरुषो रक्षिताच तस्मात्सर्वं धनं यज्ञे प्रयोक्तव्यं ततः परम्
ने नकामायहितं प्रशस्तम् ॥ २५

यज्ञवास्ते विधाताने धर्मबनायेहे यज्ञक्रियावास्ते पुरुषभी बनायाहे सो पुरुष यज्ञयागादि धर्मका रक्षाकर्ता बनायाहे ताते सभही धनयज्ञविषेहि उपयोग कर्तव्यहे यह धन कामभोगविषे लगाया उत्तमनही होता २५

एतत् स्वार्थेच कौंतेय धनं धर्मभृतांवर ॥
दाता ददाति मर्त्येभ्यो यज्ञार्थ मिति विद्धितत् २६

हे कौंतेय हे अर्जुन तूं धनीपुरुषोविषे श्रेष्ठहे यह धनअपने भोगवास्ते नहीवना विधाता मनुष्योंके ताई धनको यज्ञवास्ते देताहे धनको यज्ञरूपही जान २६

तस्मा बुध्यंति पुरुषा नहितत्कस्यचिद्धनम्
श्रद्दधान स्ततोलोके दद्याच्चैव यजेतच २७

उत्तम पुरुष यह जानतेहे धनकिसीके स्थिरनही होता ताते श्रद्धावानपुरुष धनको देवे उसकर्के यज्ञयागादिकरे २७

लब्धस्य त्यागमेवाहु र्नभोगं नचसंचयम् ॥
तस्यकिंसंचयेनार्थः कार्यं त्यागपि तिष्ठति २८

धनकी प्राप्तीका त्यागही कार्यहे ना इसका भोगकार्यहे ना संग्रह कार्यहे जो पुरुष उत्तम कार्यविषे स्थितहोतीहे उसको धनके संग्रहकर्के क्या अर्थहे २८

येस्वधर्मादपेतेभ्यः प्रयच्छंत्यल्प बुद्धयः ॥

शतं वर्षाणि नेप्रेत्य पुरीषं भुंजतेनराः २९
जो पुरुष स्वधर्मत्यागवालेको अविचारबुद्धिसे देतेहै सो पुरुष अनेक शतवर्ष पर्यंत अपनी मलविष्टाको भोगतेहै २९
अनर्हते यद्ददाति नददाति यदर्हते ॥
अर्हानर्हा परिज्ञाना दानधर्मोपि दुष्करः ३०
जोकोई पुरुष अयोग्यपात्रको देतेहै और योग्यपात्रको नहीदेते योग्य अयोग्यपात्र अपात्रके अज्ञानसे दानधर्म महाकठिनहै ३०
लब्धाना मपिवित्तानां बोद्धव्यो द्वावतिक्रमो
अपात्रे प्रतिपत्तिश्च पात्रेवा प्रतिपादनम् ३१
इति राजधर्मे युधिष्ठिरवाक्यं षड्विंशोध्यायः २६
हे पार्थ इसधनमधेतो सज्जनोके दोदोष जरूर बनेहै अपात्रको देना और पात्रके नहीदेना इसप्रकार धनविषे दोष बहोतब नेहै ३१ इति श्री राजधर्मे युधिष्ठिरवाक्यं षड्विंशोध्यायः २६
युधिष्ठिरउवाच अभिमन्यो र्हतेबाले द्रौपद्यास्तनयेषुच
धृष्टद्युम्ने विराटेच द्रुपदेच महीपतौ १॥
युधिष्ठिरउवाच हे अर्जुन धनलोभकर्के अबशोक बनाहै र णविषे अभिमन्यु बालक माराहै द्रौपदीके पुत्र मारेहै द्रौपदीकाभ्राता धृष्टद्युम्न माराहै और उत्तरकामिता विराटमारा है और द्रौपदीकापिता द्रुपदराजा माराहै १
वसुषेणेच धर्मज्ञे धृष्टकेतौच पार्थिवे ॥
तथान्येषु नरेंद्रेषु नानादेशेषु संयुगे २
महाधर्मज्ञ वसुषेण मारा राजामाराहै और धृष्टकेतराजामारा है औरभी नानादेशोके राजेंद्र सो रणविषे मारेहै २
नच मुंचति मांशोको ज्ञातिघातिन मातुरं
राज्यकामुक मत्युग्रं स्ववंशोच्छेदकारिणम् ३
मेने आपने वंशकादी उच्छेदकियाहै इसकारणसे मोको राज्या लोभके दोषसे यह वंशघातका महादोषप्राप्तभयाहै अबमोको पश्चात्ताप और शोकनही त्यागकरता ३
यस्यांके क्रीडमानेन मयावै परिवर्तिना ॥
समयाराज्य लुब्धेन गांगेयो युधिघातितः ४
जिसके उच्छंगमेने बालभावविषे क्रीडाकरीहै और जिसकी रक्षाकर्के मेने राज्यभागपायाहै विद्याभी पाईहै सोगंगापु

८४

त्र भीष्म पितामह मेने राज्यलोभ करके युधविषे मरवायाहे ४

यदाह्येनं विह्वणंत मपश्यं पार्थ सायकैः ॥
कम्पमानं यथावज्रैः प्रेक्षमाणं शिखंडिना ५

जबमें भीष्मपितामहको वज्रसमान अर्जुनके वाणोकरकें मे
ने राज्यभागपायाहे हुमनेको ओर कंपमान देषताभया
ओर शिखंडीने दृश्यमान भयेको देषताभया ५

जीर्णं सिंह मिव प्रांशुं नरसिंहं पितामहं
कीर्यमाणं शरैस्तीक्ष्णै र्दृष्ट्वामे व्यथितंमनः ६

हृद्धसिंहकी न्याई अति ऊचे शरीरवाले अपनेपितामह ती
क्ष्णवाणोकी वर्षाकरकें छादितभयेको देषताभया तब मेराम
न वडीव्यथाको प्राप्तहोताभया ६

प्राङ्मुखं सीदमानंच रथेपर रथारुजं ॥
घूर्णमानं यथाशैलं तदामे कश्मलो भवत् ७

पूर्वदिशामें नवकरकें डुबितभयेको देखताभया कैसाहै भी
ष्मपितामह महारथीहे पराये महारथीओको पीडाकरणेहा
रेका भूकंपकरकें पर्वतके समान हुमनेको देषताभया तब
मेरे मनको अतिव्याकुलता होतीभई ७

यः सबाणं धनुष्पाणिः योधयामास भार्गवम्
बहून्य हानि कौरव्य कुरुक्षेत्रे महामृधे ॥ ८

जोनसा हमारापितामह भीष्म एकाकीही धनुषवाण हाथो
विषे धारकरकें कुरुक्षेत्रमें महारणविषे परशुरामजीसे अपने
साथ बहोतदिन युद्धकरावताभया अपने कुरुवंशोको प्र
सिद्धकरताभया ८

समेतं पार्थिवं क्षत्रं वाराणस्यां नदीसुतः ॥
कन्यार्थ माह्वय द्वीरो रथे नैकेन संयुगे ९

जोनसा गंगाजीकापुत्र भीष्म काशीपुरीमें कन्याके स्वयंवर
वास्ते बहोत पृथिवीके क्षत्री राजालोकको रणविषे अपने
साथ युद्धकरणेको अहंकारसे ललकारताभया सभको जीत
कर कंन्यारतनको हमारे पितामह विचित्रवीर्यवास्ते लेआ
वताभया ९ ॥

येनचोग्रायुधोराजा चक्रवर्ती दुरासदः ॥
दग्धश्चास्त्र प्रतापेन समया पृथिचारितः १०

जिसने उग्रायुध चक्रवर्ती महावीर राजा रणविषे अपने
अस्त्रविद्याके प्रतापकर्के दग्धकियाहै सोपितामह अपनाभी
प्रमेने राज्यलोभकर्के युद्धविषे शरशय्यामो गिरायाहै १०

स्वयं मृत्युं रक्षमाणः पांचाल्यं यः शिखंडिनं
नवाणैः पातयामास सोऽर्जुनेन निपातितः ११

जोनसाभीष्मपितामह अपनी मृत्युको आपही उत्तरायण
मार्गकर्के रक्षाकरताभया वाणोंकर्के शिखंडीको नहीं।
मारताभया सो पितामह अपना मेने अर्जुनकर्के शरश
य्यामो गिरायाहै ११

येनेमं पतितंभूमौ वपुश्यं रुधिरोक्षितम्
तदैवाविशदत्युग्रो ज्वरोमां मुनिसत्तम १२

जबमे इस पितामहको रुधिरसे लिप्तांगभयेको पृथिवीमें
पडतेको देखताभया तबही मोको शोक संतापज्वर आन
प्रविष्टभयाहै १२ ॥

येनसंवर्धिता वाला येनास्म परिरक्षिताः
समया राज्यलुब्धेन पापेन गुरुघातिना १३

हे मुनिसत्तम व्यासजी जिसद्रोणाचार्य गुरुने हमसभही
वालपनेमो विद्यापढाइकर वडेकियेहै जिसने हमको शि
क्षादानकर्के रक्षाकीनेहै सो अपना द्रोणाचार्य गुरु मेने
लोभ मूल पापकर्के रणविषे मरायाहै १३

अल्पकालस्य राज्यस्य कृतेमूढेन घातितः
आचार्यस्स महेष्वासः सर्वपार्थिव पूजितः १४

यह राज्य स्वल्प अल्पकालका भोगहै इसके वास्ते मेने
आपनी मूढताकर्के महा अस्त्रविद्याका आचार्य सर्वरा
जकुलोका पूज्य रणविषे मिथ्यावचनसे मरायाहै १४

अभिगम्य रणेमिथ्या पापेनोक्तः सुतंप्रति
तन्मेदहति गात्राणि यन्मे गुरुरभाषत १५

जोनसा हमारा गुरु द्रोणाचार्य पापबुद्धि धृष्टद्युमनने मिथ्या
वचनकर्के कहा मेने अश्वत्थामा तेरापुत्र मराहैएहाहै तव
गुरुहमारा हमको आनकर वचनकहताभया एकाकरा।
तामया सत्यवचन नहीकहा केवल अश्वत्थामा मारणेका
वचन सत्यजैसा असत्य कहाहै सोवचनमोको अवपश्चा
त्तापसे करताहै दग्ध ॥ १५

सत्यमाख्याहि राजर्षे यदिजीवति मेसुतः
सत्यमामर्षय विप्रो मयि तत्यवि प्रष्टवान् १८
हे राजन् तू सत्यकहो जो मेरापुत्र अश्वत्थामा जीवताहै
धृष्टद्युमन कहताहै अश्वत्थामा माराहै इस प्रकार सो
ब्राह्मण द्रोणाचार्यमोको सत्यवादी विश्वासकर्के पूछता
भया १९ कुंजरं चांतरे कृत्वा मिथ्योप चरितं ॥
मया सभृशं राज्यलुब्धेन पापेन गुरुघातिना १७
तदा मैने कुंजरशब्दको छिपाइकर मिथ्यावचन कहाहै मै
ने अत्यंत राज्यलोभके पापकर्के गुरुघात कियाहै १७
सत्यकंचुक मुत्सृज्य मयास गुरुराहवे।
अश्वत्थामा हतइति मयोक्तः कुंजरेहते १८
सत्यबोलना धर्म मेरा कवचके समान लोकमों प्रसिद्धरहा
सो मैने राज्यलोभकर्के अपनेसे त्यागदिया युद्धमो गुरुजी
को कहा अश्वत्थामामाराहै यव उसकालमो अश्वत्थामा
नामवाला गजमाराहै १८
कांलोका मैवगमिष्यामि कृत्वा कर्म सुदुष्करं
अघातयच्च यत्कर्णं समरेष्व पलायिनम् १५
ऐसा मिथ्यावादी राज्यलोभी और पापकारीमे महादुस्तक
र कर्मकर्के कौन लोकोको जावेगा जिसने युद्धसे कदा
पिनही मुखफेरणे हारे कर्णकोभी मारायाहै १५
ज्येष्ठंभ्रातर मत्युग्रं कोमतः पापकृत्तमः
अभिमन्युंच यद्बालं जातं सिंह मिवाद्रिषु २०
सो कर्ण अपना ज्येष्ठभ्राताभी मरायाहै मे जैसा और मा
हापापकीरी इसलोकमो कौनहै जिसने अभिमन्यु
वालकको कौरव सेनाविषे पठाय दियाहै २०
प्रावेशाय महं लुब्धो वाहिनी द्रोणपालितां
तदाप्रभृति वीभत्सं नशक्नोमि निरीक्षितुं २१
जैसे वालक सेरको पर्वतोविषे प्रवेशकरावे तैसे द्रोण
की पालीहुई कौरव सेनाविषे प्रवेशकराइकर मरायाहै
उसकालसे मै अर्जुन सन्मुख हसके सन्मुख देखनही
शाकताहूम् २१
कृष्णंच पुंडरीकाक्षं किल्बिषी भ्रातृहा तथा

द्रौपदी चाति दुःखार्ता पंचपुत्रै विनाकृता २२
महापापीमे भयाहूं सभकामहा अपराधी मायाहूं और द्रौपदी कोभी नही देखशकता यहभी अति दुःखातुरहे जो द्रौपदी पंचपुत्रोंकर्के हीनभईहे पंचपुत्र इसकेभी मेने मरायेहे २२ शोचामि पृथिवीं हीनां पंचभिः पर्वतै
रिव सोहमागस्करः पापः पृथिवी नाशकारकः २३
पंचपुत्र विनायह द्रौपदी कैसी हीनभईहे जैसे पंचजो पर्वत हे मेरु आदिक तिन्हकर्के पृथिवी होतेहे सोमे सभका अपराधी महापापी पृथिवीके सर्ववीरोका नाशकारी ऐसे अपने पापको शोचताहूं २३॥
आसीन एव मेवेदं शोषयिष्ये कलेवरम्
प्रायोपविष्टं जानीध्व मथमां गुरुघातिनम् २४
इहां गंगातट सोही बैठकर अपने शरीरको अन्नपानविना शोषकरताहूं मे गुरुघातीहूं अब तुम सबही मोको प्राणत्यागवास्ते धारण पारण करणे हारीको जानो २४
जातिष्वन्या स्वपियथा नभवेयं कुलंककृत्
नभोक्ष्ये नचपानीय मुपभोक्ष्ये कथंचन २५
जौनसा ऐसा पापी अंतर होकर इसप्रकार शरीरत्यागकरेगा तो और जन्मांतर विषे ऐसे कुलघाती वहोत नही बनेगा नामे भोजनकरेगा नाजलपान कदापि करेगा २५
शोषयिष्ये प्रियान्प्राणा निहस्थोहं तपोधन
यथेष्टं गम्यतां कामं मनुजाने प्रसाद्यवः २६
सर्वेषा मनुजानीत त्यक्ष्यामीदं कलेवरम् २७
जौनसे प्राण सभको अतिप्रियहे तिन्हको इहाही शोष करेगा अब मोको तपही धनहे सभही अपनी इच्छाकर्के चलेजावो तुमको मे प्रसादकी अंजली बांधकर विदा कियाहे मोकोभी आप सभही विदाकरो जोमे अपने कलेवरको त्यागकरताहूं २७
वैशंपायनउवाच तमेवं वादिनं पार्थं बंधुशोके १
न विह्वलं उवाच सर्वधर्मज्ञो व्यासः सत्यवतीसुतः २८
वैशंपायनउवाच हे जनमेजय राजायुधिष्ठिर ऐसे वचनको कहताभया बंधुशोककर्के पीडितभया अतिव्या

रा.य. टी. ८९

ऊल विनमयाहे उसको व्यासजी कहतेभये ऐसे मनकर इसप्रकार निषेधकर्के मुनिसत्तम व्यासजी कहतेभये ऐसे मनकर इसप्रकार निषेधकर्के मुनिसत्तमव्यासजी वहो उराजाको वचनकहतेभये २८ ॥

व्यासउवाच अतिवेलं महाराज नशोकं कर्तुमर्हसि पुनर्वक्ष्यामि दिष्टमेतत् दितिप्रभो २९

व्यासउवाच हे महाराज तुं अतिलेवा अतिशोककरणे योग्य नहीहे मे तोको पुनरुक्तिसे कहताऊं यह सभही देवगती स्वभावसे बनाहे २९

संयोगा विप्रयोगांता जातानां प्राणिनां ध्रुवाः
बुद्बुदा इवतोयेषु भवंति नभवंतिच ॥ ३०

जो प्राणी संसारविषे उत्पन्नभयेहे उन्हके संयोगजोहे सो वियोगकालविषे अंतहोवनेहारो निश्चयसे बनेहे जैसे बुदबुदे जलविषे होतेहे नहीभी होतेहे ३०

सर्वेक्षयांताः निचयाः पतनांताः समुच्छ्रयाः
संयोगाः विप्रयोगांता मरणांतंच जीवितं ३०

जेते संचयहहे सो सभही नयकालमो अंतको प्राप्तहोतेहे जेते उदय प्रकारहे ऊर्धस्थानको प्राप्तहोतेहे सो सभही पतनकालमो अंतकालेहहे जैसे संयोगहे सो सभही वियोगकालमो अंतको प्राप्तहोतेहे और सर्वभूतोका जीवना मरणांतवालाहहे ३० ॥

सुखं दुःखांतं मालस्ये दाक्ष्यं दुःखं सुखोदयं
भूतिश्री ह्रीर्धृतिः कीर्ति र्दक्षेव सतिनालसे ३१

हे राजन् जवआलस्य होताहे तव सुखभी दुःखको अंतवाला होताहे जव उद्यमकी चतुरता होतीहे तव दुःखभी सुखकी अंतवाला होताहे भूति संपदा श्रीलज्जा धीधन हति जीविका कीर्तियशा यह सभही गुण उद्यमकी चतुरता मों बसतेहे आलस्यमो नही होते ३१

नालं सुखाय सुहृदो नालं दुःखाय शत्रवः
नच प्रज्ञालमर्थेभ्यो नासुखेभ्या प्यलंधनम् ३२

मित्र सुहृद जोहे सो सदासुखकारी नहीहोते जैसे प्रा शत्रुजनहे सो सदा दुःखकारी नही होते और प्रज्ञा जो बु.

छिदेहो सो सदा अर्थसिद्धिको नही करती धनजोहे सो सदा सुखकारी नहीहोता ३२

यथा सृष्टोसि कौंतेय धात्रा कर्मसु तत्कुरु

अतएवहि संन्यासे नेशस्त्वं कर्मणा नृप ३३

ताते हे कौंतेय जैसा विधाताने तुमको जैसे कर्मविषे सृजा हे तैसे कर्मको तुमकरो इसी कारणसे अपने अपने जा तिधर्मके सभही सिद्धभयेहे ताते तुम कर्मत्यागमो अ पने मनकी कायरतासे समर्थ नहीहो ॥ ३३ इतिश्री महा भारते शतसहस्र संहितायां शांतिपर्वणि राजधर्मे व्यासवा क्यं नाम सप्तविंशोध्यायः॥ २७ ॥

वैशंपायन उवाच ज्ञाति शोकाभि तप्तस्य प्राणानभ्यु त्सिस्रतः ज्येष्ठस्य पांडुपुत्रस्य व्यासः शोक मपानुदत्

वैशंपायनउवाच हे जनमेजय राजायुधिष्ठिर पांडवोविषे पांडुराजाका ज्येष्ठपुत्रहे सो अपने ज्ञातियोके शोककर्के संतप्तभयाहे प्राणत्यागकरणे चाहताहे उसके मनविषे शोकभयाहे उसको व्यासजी हरकरतेभये १

व्यासउवाच अत्राप्युदा हरंतीम मितिहासं पुरातनं

अश्मगीतं नरव्याघ्र तन्निबोध युधिष्ठिर २ ॥

व्यासउवाच हे युधिष्ठिर हेनरव्याघ्र एकईहां अश्मगीत पुरा तन इतिहासको उदाहरणकहतेहे उसको आपभी विचार करो २ ॥

अश्मानं ब्राह्मणं प्राज्ञं वैदेहो जनको नृप

संशयं परि पप्रच्छ दुःखशोक समन्वितः ३

अश्मनामकर्के महाबुद्धि ज्ञानी ब्राह्मणभयाहे उसको वि देह जनकराजा दुःखशोक संयुक्त होकर्के अपने मनके संशयको पूछताभया ३ ॥ जनकउवाच ॥

आगमे यदिवा पाये ज्ञातीनां द्रविणस्यच

नरेण प्रतिपत्तव्यं कल्याणं कथमिछता ४

जनकउवाच हे मुनिसत्तम जो अपनी जातीके प्राणीहे उन की उत्पत्तिमो और विनाशमो तैसे धनकी प्राप्तिमो और विना शमो अपने कल्याणकी वांछावाले मनुष्यने उनकी कल्पना अनिष्टकल्पना उदासीन कल्पनासे कैसे ज्ञातव्यताहै मेरे

संशयको आपनिवृत्तकरो ४

अग्निरुवाच उत्पन्न मिममात्मानं नरस्या नंतरं
ततः तानि तान्यनुवर्तंते दुःखानिच सुखानिच

अग्निरुवाच हे राजन् जब इस मनुष्यका देह उत्पन्नहोताहे तवही इसको देह संबंधकर्के सुख दुःखआनप्राप्तहोते हे इसने देहके स्वभावमात्र सुखदुःखअभिमानकर्के दोनो से उदासीनता कर्तव्यहे ५ ॥

तेषा मन्यतरा पत्तौ यत्तदेवाप पद्यते ॥
तदस्य चेतना माशु हरत्यभ्र मिवानिलः ६

सुख अथवा दुःख स्वभावकर्के जिसकालमो प्राप्तहोताहे उस विषे अहंता ममताका आवेश होताहे तब इसकी चेतनाको अहंता ममताका आवेशहरलेताहे जैसे मेघमंडलको वातविखेर देताहे ६

अभिजातोस्मि सिद्धोस्मि नास्मिकेवल मानुषः
इत्यभि र्हेतुभि स्तस्य त्रिभिश्चित्तं प्रसिध्यते ७

जब इस मनुष्यको उत्तमगुण संपदाहोतीहे तो अहंता ममताकर्के अपनेको सबसे अधिक मानताहे मे वडे कुलकाहुं सर्वप्रकारकी बलसंपदाकर्के सिद्धभयाहुं अवर मनुष्योकी न्याई केवल मनुष्यजाति मे नहीहुं ॥

संप्रसक्त मनाभोग्या न्विसज्य पितृ संचितान्
परिक्षीणः परस्वेना मादाने साधु मन्यते ८

तव यह पुरुष अविचारसे भोगासक्त मनहोताहे तो अपने पिताके संचितधनको काम भोगकर्के नट नर्तकादि तमासाकर्के समाप्तकरदेताहे जवधनकी क्षीणताभये तव भोजन मात्रकीभी कठिनता होतीहे बहोड परद्रव्यकी वांछाकर्के चोरी आदिक खोटे कर्मोको करताहे ८

तमति क्रांत मर्यादं माददान मसांप्रतम्
प्रतिषेधंति राजानो लुब्धामृग मिवेषुभिः ९

इसप्रकार जब अपनी मर्यादाको उलंघनकरताहे परद्रव्यको हरताहे उसको राजालोक दंडकर्के पीडित करतेहे जैसे फंधकी मृगको बाणोकर्के वेदछेद करतेहे ९

येच विंशति वर्षावा त्रिंशद्वर्षाश्च मानवाः

परेण ते वर्षशता न्न भविष्यंति पार्थिव १०

हे राजन् जोनसे चोरीकरतेहे सो बीसवर्षसे उपरंत अपने पापकर्म आपमरजातेहे शतवर्ष उपरंत कोईजीवते नही रहते ऐसी पापी चोरजनोकी शीघ्रमृत्युको प्राप्तहोजातेहे चोरीके अपराधसे सताबी मारेजातेहे १०

तेषां परम दुःखानां बुद्ध्या भैषज्य माचरेत्

सर्व प्राणभृतां वृत्तं प्रेक्षमाण स्ततः ततः ११

ऐसे परम दुःख धनी लोकोंको अविचारसे होताहे ताते जो दुर्वुद्धिपुरुषहे सो अपने दुःखके विनाशवास्ते विचाररूपी औषधकोकरे दुखमो अपनेसे अधिकवालेको देषे सुखमो अपनेसे अधिक सुखवाले जनोको देषकर शोकह र्षरूपी अपने शत्रुहे इनको अधीन अपने चित्तको नाकरे ११

मानसानां पुनर्योनि र्दुःखानां चित्तविभ्रमः ॥

अनिष्टोप निपातोवा तृतीयं नोपपद्यते १२

जोनसे मानसदुःखहे सो चिंताकर्के वडेउ दुखको उतप न्नकरतेहे याते मानस दुखकर्के चित्त विभ्रम होताहे अथवा शरीरपातहोताहे चित्तविभ्रमकर्के इष्टविषे अनि ष्टबुद्धिहोतीहे अनिष्टविषे इष्टबुद्धिहोतीहे इसीप्रकार अ विचारसे दुःखशोकादिप्राप्तिहोतीहे १२

एवमे तानि दुःखानि तानि तानीह भारत

विविधानि प्रवर्तंते तथा संसर्गजान्यपि १३

हे राजन् इस प्रकार यह दुख जो जो कहेहे सोसो सभही इस मनुष्यको नानाप्रकारके अविचारसे प्राप्तहोतेहे कोई दु ख अपने देहकर्के मनकर्के होतेहे कोई दुख विषयवा सनाके संबंधसे होतीहे १३

जरामृत्युर्हि भूतानां खादितारौ वृकाविव

बलिनां दुर्बलानां च ह्रस्वानां महता मपि १४

हे राजन् जरामृत्यु जोहे सो सर्व भूतोंको हंकजोहे भगेआ दु मृगादिकनकीन्याई खानेहारेहे बलवान भूतजो हे दुर्वल भूतो जो देहस्वदीर्घजोभूतहे तिन्नको सभको खाइले तेहे ॥ १४ ॥

श्री॰
रा॰य॰
टी॰
८८

नकश्चिज्जात्वति क्रामे जन्ममृत्यूह मानवाः
अपि सागर पर्यंतां विजित्येमां वसुंधरां १५
जरा मृत्यु जो शत्रूहे इनको कोई प्राणी जीतनहीशकता
भामे सागरपर्यंत पृथिवीको जीते १५
सुखं वा यदिवा दुःखं भूतानां पर्युपस्थितं
प्राप्नव्य मवशो सर्वं परिहारो नविद्यते १६
सुख अथवा दुख सर्वभूतोको क्रमकर्के प्राप्तहोताहै अवश्य
हि जो प्राप्तव्यहे सो प्राप्तहोताहै इसका परिहार कदा
पि नहीबनता १६ ॥
पूर्वे वयसि मध्येवा प्युत्तरेवा नराधिप ॥
अवर्जनीया स्तेर्थावै कांक्षितापि ततोन्यथा १७
सर्वली अवस्था बालभाव मध्यम अवस्था युवाभाव उत्तर
अवस्था वृद्धभाव यहसभको होतीहै जैसे शरीरसे पलटे
नहीजाते तैसे मनुष्यकोकांक्षित अकांक्षि शुभअशुभभा
वभी पलटेनहीजाते १७
सुप्रिये र्विप्रयोगश्च संप्रयोगश्च विप्रियेः
अर्थाऽनर्थो सुखे दुःखे विधान मनुवर्तते १८
किसीकालविषे प्रियसंबंधी जनोका वियोग होताहै कि
सीकालविषे अप्रिय शत्रुजनोका संयोगहोताहै इसीप्र
कार अर्थ अनर्थभी होतेहै सुख दुखभी होतेहै यह विधा
न सभको प्रवृत्तहोताहै १८
प्रादुर्भावश्च भूतानां देहत्यागस्तथैवच
प्राप्तिर्व्यायाम योगश्च सर्वमेतत्प्रतिष्ठितं १९
हे राजन् भूतोका प्रादुर्भाव उत्पत्ति और देहत्याग लाभ औ
र अलाभ यह सभको स्वभावसे बनाहै १९
गंधवर्णा रसस्पर्शा निवर्तंते स्वभावतः
तथैव सुखदुःखानि विधान मनुवर्तते २०
जैसे पुष्पादिको विषे गंधवर्ण रस स्पर्श शुभ अशुभ स्वभा
वसे कालयोग कर्के आजातेहै तैसे नरोको सुखदुःख
का विधानभी कालस्वभावसे आजाताहै २०
आसनं शयनं यान मुत्थानं पानभोजनम् ॥

नियतं सर्वभूतानां कालेन वैभवंस्तत २१

आसन श्राय्यामार्गयात्रा सवारी उद्यम जलपान भोजन
सर्वभूतोंको कालयोग सेवनाहै २१

वैद्याश्चाप्या तुराः संति बलवंतश्च दुर्बलाः

श्रीमंत श्चापरे षंढा विचित्राः कालपर्ययाः २२

इस जगतविषे वैद्यभीहै रोगीभीहै दुर्बलभीहै बलवा
नभीहै संपदावालीभीहै और नपुंसकभीहै प्राणीः
है यह कालकालका स्वभावविचित्रहै ॥ २२

कुलेजन्म तथा वीर्य मारोग्यं रूप मेवच

सौभाग्य मुतयोगश्च भवितव्येव लभ्यते २३

शुभकुलविषे जन्म और देह पराक्रम और निरोगता औ
र सुंदररूप और सुंदरभाग्य और भोगसंपदा यह भवितव्य
ताकर्के होतेहै २३

संतिपुत्राः सुबहवो दरिद्राणा मनिच्छतां ॥

नास्तिपुत्राः समृद्धानां विचित्रं विधिचेष्टितं २४

यह तुम संसार यात्रामें देखो दरिद्र लोकोंके पुत्रबहो
तहै और समृद्धीवालीको एकभी पुत्रनहीहै यह विधा
ताकाचरित्र विचित्रहै २४

व्याधि रग्नि र्जलं शस्त्रं बुभुक्षा श्वापदो विषं

ज्वरश्च मरणं जंतो रुच्चाच पतनं तथा २५

इसजीवोंको व्याधी होतीहै अग्निदाह होताहै भुखलगता
है जलप्रवाह होताहै और क्षुधाकी पीडा होतीहै और रा
जाके कोपसे चोरोंके प्रसंगसे शत्रु संबंधसे आपदा प्राप्त
होतीहै विषभक्षण होताहै ज्वर होताहै मरणहोताहै
ज्वरहोताहै मरणहोताहै उच्चस्थानसे पातहोताहै २५

निर्माणे यस्य यद्दृष्टं तेन गच्छंति सेतुना ॥

दृष्टपतेना प्रतिक्रांतो नतिक्रांतोप्य वाप्नुनः २६

जिसको जैसा विधाताका विधानबनाहै उसीको हेतू ब
नायकर्के तैसाही प्राणीबनताहै कोई प्राणी मरनहोता
दृष्टहोता हो मरजामहीहै २६

दृष्टपते चाप्रतिक्राम नतिग्राह्योप्य वाप्नुनः

दृश्यन्तेह्युवै वेह विनश्यन्त्यसमाञ्जनः २७
कोई प्राणीमृतहोता सो मरजाताहे कोई प्राणी युवाही
इष्टहोताहे बलवान इष्टहोताहे सो मरजाताहे २७

दरिद्रश्च परिक्लिष्टः शतवर्षो जरान्वितः
अकिंचनाश्च दृश्यंते पुरुषाश्चिर जीविनः २८
कोई प्राणी दरिद्रही अन्नपानको उसका क्लेशवनाहे
सो शतवर्ष आयुवाला वृद्ध इष्टहोताहे कोई प्रा
णी अकिंचनहे सो चिरंजीवि इष्टहोतीहे २८

समृद्धेव कुलेजाता विनश्यंति पतंगवत्
प्रायेण श्रीमतां लोके भोक्तुं शक्तिर्न विद्यते २९
कोई प्राणी समृद्धिवाले कुलविषे जन्मापाइकर्के कीट
पतंगकी न्याई सताबी मरजातेहे प्रायी यहबी इष्ट
होताही संपदावाले पुरुषहे सो अपनी संपदाकी
भोगशक्ति रहितभयेहे २९

काष्ठान्यपिहि जीर्यंते दरिद्राणांच सर्वशः
अहमेत त्करोमीति मन्यते कालचोदितः ३०
और दरिद्रोकी काष्टभी सर्वप्रकारसे अपने देहके सा
थ जीर्ण होजातेहे उनको भोगशक्ति इष्टहष्टहोतीहे
यह पुरुष कालप्रेरणाकर्के अपने विषे अहंकारको
करताहे सो इसकार्यको करताहुं औरको ऐसे शक्ति
नहीहे इसप्रकार असंतोषसे जो जो इसको अपना इ
ष्टहे उसको असंतोषसे यह दुष्टपुरुष करताहे ३०

यद्यदिष्टं नसंतोषा दुरात्मा पाप माचरेत्
मृगयाक्षाः स्त्रियः पानं प्रसंगा निंदिता बुधैः ३१
मृगया करणी स्त्रीभोगकरणा मद्यपान करणा इन
के प्रसंगसे बुधजनोने निंदितकियेहे बहोतपुरुष ब
ड्युतभीहे सो इसप्रकार पापकर्मविषे प्रवृत्तभये दि
येहे ३१ ॥ दृश्यंते पुरुषाश्चात्र संप्रसक्ताः व
ड्युताः इतिकालेन सर्वेषां जीर्ष्मिता जीर्ष्मि
तानिह ३२ ॥
हेराजन् सर्वभूतोको दुष्ट अनिष्टकार्योके संबंध अक

त होताहै उसका प्रत्यक्षनिमित्त प्रतीतनहीहोता ३२

स्पृशंति सर्वभूतानि निमित्तं नोपलभ्यते

वायुमाकाशमग्निंच चंद्रादित्यावहः क्षपे ३३

वायुको अग्निको आकाशको चंद्रमा सूर्यको दिनरात्रको नक्षत्र तारागण ज्योतिस्वरूपहै नदीयोंको पर्वतोंको कालहीकरताहै कालही धारणकरताहै ३४

ज्योतींषि सरितः शैला करोतिच बिभर्तिच

शीत मुष्णं तथा वर्षं कालेन परिवर्तते ३५

शीतको उष्णको वर्षाको कालही प्रवृत्तकरताहै इसीप्रकार मनुष्योंकी सुखदुःखकोभी कालकरताहै ३५

एवमेवमनुष्याणां सुखदुःखे नरर्षभ

नौषधानि नमंत्रास्च नहोमा नपुनर्जपाः ३५

इस पुरुषको मृत्युने ग्रसेहुयेको औषधी रसायननही रक्षाकरते मंत्रनही रखसकते होमकार्य और जपतप भी नहीरखसकते जराग्रासमयेकोभी युवानही करसकते ३५ ॥

त्रायंते मृत्युनोपेतं जरया वापि मानवम् ॥

यथा काष्ठंच काष्ठंच समेयातां महोदधौ ३६

जैसे जलप्रवाहविषे एककाष्ठ द्वितीयकाष्ठ परस्पर आनमिलजातेहैं वहोइ वियोगकोभी प्राप्तहोतीहै ऐसेही भूतोंकाभी अन्योन्य संयोग वियोगकालसेबनाहै

समेत्यच व्यपेयातां तद्वद्भूत समागमः ॥

येचैव पुरुषास्त्रीभिः गीतवाद्यै उपस्थिताः ३७

हे राजन् जोमसे पुरुष अतिसुंदर इस्त्रियोंकर्के गीतवजंत्रोके विलासोंकर्के संयुक्त सुखभोगनेहारेहै और जोनेसे पुरुष अनाथ दरिद्रहै कष्टकर्के परान्नभोक्ताहै कालसभविषे समवर्ती क्रियावालाहै ३७

येचानाथाः परान्नादाः कालस्तेषु समक्रियः

मातापितृसहस्राणि पुत्रदार शतानिच ३८

श्री
रा॰ प॰
टी॰
४॰

९०

मातापिताके अनेक सहस्रजातेहै और पुत्रदारोके अनिकशत इस संसारमो अनुभव होतेहै सो किसेके साथ सदाबनारहतेहै ३८

संसारेष्व नुभूतानि कस्यते कस्यवा वयम
नैवास्य कश्चिद्भविता नायंभवति कस्यचित् ३९

इसपुरुषका कोई संवंधी स्थिरबनाहै नायह पुरुषकिसीका स्थिर संवंधी बनताहै यह दारावंधु सुहृदजनोका संवंधमार्ग चलनेहारे पथिकोके संयोगवियोग जैसाहै ३९ ॥

पथिसंगत मेवेदं दारावंधु सुहृज्जनैः ॥
क्वासं क्वच गमिष्यामि कोन्वहं किमिहास्थितः ४०
कस्मात्कि मनुशोचय मित्येवं स्थापयेन्मनः ४०

ताते ऐसाविचार कर्तव्यहै मे अब कहारहताहूं और कहा जाताहूं मे कौनहूं इहां कैसे आगयाहूं कौनवातसे किशोचताहूं इहा स्थिरता किसीकीभी नहीहै इसप्रकार अपने मनको सावधानकरके स्थिरकरे ४० ॥

अनित्ये प्रियसंवासे संसारे चक्रवद्गतौ ॥
पथिसंगत मेवैत द्भ्राता माता पिता सखा ४१

इस संसारमों प्रियलोकोंका सहवास अनित्यहै यह संसारकी गती रथचक्रकी गति समानहै इसमे भ्रातामाता पिता सखा संवंधजो बनाहै सो मार्गविषे पथिकोके समागम जैसा अस्थिर बनाहै ४२

न दृष्टपूर्वं प्रत्यक्षं परलोकं विदुर्बुधाः
आगमांस्त्वनतिक्रम्य श्रद्धातव्यं बुभूषता ४२

हे राजन् परलोक हमांत किसी पूर्वनहीदेखा वुधजन ऐसे जानतेहै जो पूर्वले पुरुषोने आगम निगम शास्त्रमार्गकियाहै अपने कल्याण वांछावाले पुरुषने उसीमार्गको श्रद्धाकर्तव्यहै ४२

कुर्वीत पितृदैवत्यं धर्माणिच समाचरेत्
यजेच्च विद्वा न्विधिव त्त्रिवर्गंवा समाचरेत् ४३

जो शास्त्रमो पितर देवयाग कृत्यकहे सो कर्तव्यहे दान
धर्मभी करे विधिकर्के यह पंडितपुरुष यज्ञ यागकरे धर्म
अर्थ कामके त्रिवर्गकेर्मकोभी करे ४२

स त्रिमज्जग दिदं गंभीरे कालसागरे ॥
जरा मृत्यु महाग्राहे न कश्चिद वबुध्यते ४४

यह सभही जगत महागंभीर कालसमुद्रमो डुबताजाता
हे जरामृत्युरूप महाग्राहादि जीवोकर्के अपने मोहको
आकुलतासे धर्मकर्म करणेको कोईनहीजानता ४४

आयुर्वेद मधीयानाः केवलं सपरिग्रहाः ॥
दृश्यंते बहवो वैद्या व्याधिभिः समभिः प्लुताः ४५

इहां वैद्यलोक जोहे आयुर्वेद शास्त्रको पढतेहे रसाय
न विधिको जानतेहे आपकेवल स्त्रीमात्र कुटुंबी होतेहै
संतान रहित दृष्टहोतेहै केते वहोत वेद्य असाध्य रोग ग्र
स्तदेषहे ४५

ते पिबंतः कषायांश्च सर्पींषि विविधानिच
न मृत्यु मति वर्तंते वेला मिव महोदधिः ४६

ऐसे महावैद्य अपने चिकित्सावाले अनेककषाय को
थपानकरतेहे और महाविधिकर्के सिद्धकिये घृततैला
दि सेवनभीकरतेहे अपने शरीरको मृत्युकी कदापिनही
निवृत्तकर शकते जैसे समुद्र अपनी मर्यादाकी वेलाको
नही लंघशकता ४६

रसायन विधश्चैव सुप्रयुक्त रसायनाः
दृश्यंते जरया भग्ना नागा नागै रिवोत्तमैः ४७

दृश्यंते जरया भग्ना नागा नागै रिवोत्तमैः ४७

जौनसे रसायन वेत्ता जनहे सो अनेक रसायन प्रयोगक
रणेहारेहै सोभी जराकर्के टूटतेहे जैसे सेनाके गज वन
गजोकर्के जीते जातेहे ४७

तथैव तपसो पेताः स्वाध्यायाभ्यसने रताः
दानारो यज्ञशीलाश्च नतरंति जरांतको ४८

तैसेही तपस्वी लोकभी उग्र तपस्या युक्तहे स्वाध्यायवे
दको अखंड अभ्यास करताहे और महादान करणेहारे
जोहे और अश्वमेधादि यज्ञकरताहे सो भी अपने शरीर

की जराको और मृत्युको नही जीतसकते ४९

नाहः रात्रि निवर्तन्ते न मासाः न पुनः समाः जातानां सर्वभूतानां न पक्षाः न पुनः क्षपाः सोयं विपुल मध्वाने कालेन ध्रुव मध्रुवाः नरोवेशाः समभ्येति सर्वभूत निषेवितम् ५० ॥

जरा मृत्यु जब आवतेहै उनको धनको मासको वर्षको कोई निहत्तनहीकरसकता ॥ तो प्राणी संसारविषे जन्मलेतेहै उनके पक्षदिन रात्रि जो जन्म मरणके बनेहै जन्म मृत्युवाले उनके अन्यथा कोई नही करसकता ॥ हे राजन् सो यह मनुष्य कालकर्के जन्ममृत्युवाले संसार मार्गमें निश्चयकर्के प्राप्तभयाहै आपस्थिरकही नही है जिसमे सबही आवते जातेहै उसमे आपभी पर वशहोकर्के प्राप्तहोताहै ५०

देहो वा जीवतो ऽभ्येति जीवोवा ऽभ्येति देहतः
पथिसंगत मेवेदं दारै रन्यैश्च बंधुभिः ५१

यह देहसे जाताहै अथवा देहसे जीवजाताहै इन्द्रका मार्गमें पथिकोके समान समागम बनाहै जो जीवको अपने देहसे वियोग अवश्य बनाहै तो अपने दारापुत्र बंधुरससे स्वभावकर्के मिलेहै उनके साथ इसका संबंध कहां स्थिरबनताहै ५१

नायमत्यंत संवासो लभ्यते जातु केनचित
अपिस्वेन शरीरेण किमुतान्येन केनचित ५२

यह सहवास संबंध किसीका किसकाभी सदानहीबनता अपने शरीरकी साथभी नही बनता तो और किसीके साथ बनेगा ५२

क्व ते पिता राजन् क्व तु ते पितामहः
न त्वं पश्यसि तानद्य न त्वां पश्यंति ते नव ५३

हे राजन् अब तेरा पिताकहांहै और पितामह कहांहै अब तूं उनको प्रत्यक्ष नही देखता तोको तेरे पितृपितामह अबनही देखते ५३

नचैव एकस्मा दृष्टा स्वर्गस्य नरकस्य च

आगमस्त्व सतां वत्स नृपते नमिहार्चवैः ५४
और यह पुरुष नहीस्वर्गको देषता अपने कर्मका कलानु
प नरकभी दृष्टनही होता संतजनोको स्वर्ग नरकगति
देषनेका नेत्र शास्त्रमार्ग आगमशास्त्र कहाहे ताते हेरा
जन् अब तू शास्त्रविधिकोही करो ५४
चरित ब्रह्मचर्योहि प्रजायेत धनेनच ॥
आगमस्त्व सतांवत्सः नृपते नमिहार्चवैः ५५
पितृदेव मनुष्याणां मानृण्या योनसूयकः
प्रथम पुरुष यज्ञोपवीत संस्कार पाइकर ब्रह्मचर्यकर
लेवे वहोउ गृहस्थ होकर संतानको उत्पन्नकरे वहोउ पि
तरोका ऋण देवतोका ऋण मनुष्योकाऋण गृहस्थधर्म
कर्के निवृत्तकरे गृहस्थ धर्मकी निंदानहीकरे ५५
सयज्ञशीलः प्रजने निविष्टः प्राक् ब्रह्मचारी प्रविवि
क्तचक्षुः आराधयेत् स्वर्ग मिमंच लोकं परंच मु
क्ता हृदय व्यलीकम् ५७
हे राजन् गृहस्थ धर्मवाला पुरुष जोहै सो ब्रह्मचर्य
को प्रथमकरे गृहस्थ धर्मकर्के पंचयज्ञादि यज्ञकर्मकरे
और संतान उत्पन्न करणेवास्ते विवाहकरे वहोउ विवेक
दृष्टि होकर स्वर्गलोकको प्राप्तिको यज्ञादि कर्मोका आरा
धनकरे और इसलोककी मर्यादावास्ते दानधर्मकोकरे
अपने हृदयका हर्ष शोक रहितकरे ५७
समं हि धर्मं चरतो नृपस्य द्रव्याणि चाप्या हर
तो यथावत् प्रवृत्त धर्मः स यशोभि वर्धते
सर्वेषु लोकेषु चरा चरेषु ॥ ५८ ॥
राग द्वेष रहित समदृष्टि कर्के अपने धर्मको राजाकरे
होर यथाविधि द्रव्यदानकरे ऐसे राजाको धर्मवृद्धिहोती
है और यशउसके चराचर सर्वलोको विषे अधिकवृद्धि
को प्राप्तहोताहै ५८ ॥
इत्येव मात्ताय विदेह राजो वाक्यं समग्रं परि
पूर्ण हेतु अश्मान मामंत्र विशुद्ध बुद्धि यो

श्री
शां.प.
टी.
१२

यो गृहं स्वं प्रतिशांत शोकः ५९
व्यासउवाच हे राजन् इसप्रकार विदेह राजा अश्ममु
निके वाक्यको सर्वधर्म कर्मकी संपूर्णताहेतु मानकर्के
अश्मामुनिको नमस्कारकर्के उससे विदाहोकर शुद्ध
बुद्धिहोकर गृहस्थ धर्मकी वांछाकर्के अपने गृहको
जाताभया वीतशोकहोताभया ५९
तथा त्वमप्यच्युत मुंचशोक मुत्तिष्ठशक्रोपम
हर्षमेहि क्षात्रेण धर्मेण महीजितासे तंभुंक्ष्व
कुंती सुतमावमंस्थाः ६० इतिश्रीमहाभारते
शांतिपर्वणि राजधर्मे व्यासवाक्ये अष्टाविंशो
ध्यायः ॥ २८ ॥ ॥
हे युधिष्ठिर जैसे विदेहराजा अश्मामुनिके वाक्यक
र्के वीतशोकभयाहै अपने धर्मविषे स्थितभयाहै
तैसे तुम्भी अपने धर्मविषे स्थिर बुद्धिहोकर अवशो
कको त्यागकरसावधानकर्के उठ(खडाहो) राज्यको
पाइकर इंद्रकीन्याई हर्षको प्राप्तहो तैने पृथिवी
अपने धर्मकर्के जीतेहै इसको प्रजापालनकर्के भो
गइसका त्यागमतकर ६० ॥ इतिश्री महाभारते
शांतिपर्वणि राजधर्मे अश्मगीते व्यासवाक्ये नाम
अष्टाविंशोध्यायः ॥ २८ ॥ ॥
वैशंपायनः हे जनमेजय व्यासजीके वाक्यको सुन
कर धर्मपुत्र राजायुधिष्ठिर उत्तरवाक्य नहींकरताभ
या तब परंतप शत्रुजेता अर्जुन पांडवसो कृष्णके
आजी सभके अंतर्यामी मनप्रेरणा करणेहारे उन्हको
वचनकहताभया १॥
अर्जुनउवाच ज्ञातिशोकाभि संतप्तो धर्मपुत्रः
परंतपः एष शोकार्णवे मग्नः स्तमाश्वासयमा
धव ॥ १ ॥ अर्जुनउवाच हे माधव यहराजा ध
र्मपुत्र परंतपहै शत्रुजेताहै परंतु अब ज्ञाति शोक
के संतापको प्राप्तभयाहै शोकसमुद्रमो मग्नभया

हे इसको तुम आश्वासनकरो २

सर्वस्य ते संशयिताः पुनरेव जनार्दन ॥
अस्य शोकं महाबाहो प्रणाशयितुमर्हसि २

हम इसके शोक संतापकरके अबफेर आपदा प्राप्तिके
संशयको प्राप्तभयेहैं हे जनार्दन हे महाबाहो इसरा
जाके शोकको तुमही नाशकरणे योग्यहो ३

वैशंपायनउवाच एवमुक्तस्तु गोविंदो विजयेन
महात्मना पर्यवर्तत राजानं पुंडरीकेक्षणोऽच्युतः ३

वैशंपायनउवाच हे जन्मेजय ऐसा महात्मा अर्जुनने
वचन कहा तब गोविंद भगवान् श्रीकृष्णजी कमलप
त्र समान नेत्रजिसकेहैं ऐसे अखंडज्ञान संपदा संपन्न
हैं राजाके सन्मुखहोतेभये ४

अनति क्रमणीयो हि धर्मराजस्य केशवः ॥
बाल्यात्प्रभृति गोविंदः प्रीत्या चाभ्यधिकोऽर्जुनात्

हे जनमेजय कृष्णभगवानजी बालपनेसेही धर्मराज यु
धिष्ठिरको कदापि वाक्यउलंघने योग्यनही भयेहैं और
अर्जुनसेभी अतिप्रीतिवालेहैं ५

संप्रगृह्य महाबाहुं भुजं चंदनभूषितम् ॥
शैलस्तंभोपमं शौरिरुवाचाभिविनोदयन् ६

ऐसी कृष्णजी चंदनलेप संयुक्त राजाकी महाभुजको पर्व
तसमान भारीको अपने हाथकरके पकडकरके राजाको
शोककालविषे विनोदकरतेहैं शोकहत्तिकी निवृत्ति
वास्ते वचन कहते भये ६

शुशुभे वदनं तस्य सुदंष्ट्रं चारुलोचनम्
व्याशोकमिव विस्पष्टं पद्मं सूर्य इवोदिते ७

जब कृष्णजी राजाको वचन कहनेलगे तब उनका मुख
परमशोभाको प्राप्तहोताभया सुंदर कुंदासमान जिसवि
षे दंतपंक्तिहैं और सुंदरनेत्रहैं जैसे सूर्यके उदयकालमो
प्रफुल्लित कमल शोभाको पावताहै ७

वासुदेवउ· माकृथाः पुरुषव्याघ्र शोकं त्वं गात्रशो
षणं नहिते सुलभा भूयो ये हतास्मिन् रणाजिरे ८

श्री॰
गी॰य॰
टी॰
९३

वासुदेव उवाच हे पुरुषव्याघ्र तूं यव शोककों मतकरे य
ह शोकतेरे देहको शोषकरताहे क्यों शोचताहे जो र
णविषे मारेगयेहे सो बहोडतोको कदापि शोचनेसे
नहीप्राप्तहोतेहे ८ ॥

स्वप्न लब्धा यथा लाभा वितथाः प्रतिबोधने
एवं ते क्षत्रिया राजन्ये व्यतीता महारणे ९

जैसे स्वप्नकालमो मईलाभहोतेहे जाग्रतविषे सभमिथ्या
होतेहे इसीप्रकार सभक्षत्री राजालोकजो बीतगये सो
प्राप्तनहीहोते ९

सर्वे ह्यभिमुखाः शूराः विजिता रणशोभिनः
नैषांकश्चित्पृष्ठतोवा पलायन्वापि पातितः १०

सो सभही महाशूरमारेहे रणशोभाकी वांछाकरतेभये
सन्मुख युद्धकरते जीतीहे इन्होविषेकोईभी पलायन क
रतानही मारा १०

सर्वे त्यक्त्वात्मनः प्राणा न्युद्धावीर महारणे
शस्त्रपूता दिवंयाता नत्वं शोचितुमर्हसि ११

ए सभही महावीरथहे महारणविषे सभही युद्धकर्के
शस्त्रोसे पवित्रहोकर्के दिव्यलोकोको प्राप्तभयेहे तूं उ
न्होका शोचकरणा योग्यनहीहे ११

क्षत्रधर्मरताः शूराः वेद वेदांग पारगाः
प्राप्तावीरगतिं पुण्यां नात्रशोचितुमर्हसि १२

सभही प्रथमे क्षत्रधर्ममो परायणभयेहे वेदोकर्के सहि
त वेदोके अंगोके पारगामी भयेहें सभही परम पवित्र
वीरगतीको प्राप्तभयेहे तिन्हको तूं यवशोचने योग्यनहीहे १२

मृतान्महात्म सर्वांस्त्वं श्रुत्वैव पृथिवी पतीन्
अत्राप्युदा हरंतीम मितिहासं पुरातनम् १३

जो सन्मुख रणमो मरेहे सो महापुण्यभागीहे हम इन्ह
की सत्यसुनकर्के प्रसन्नभयेहे इहांतोको एकपुरातन इ
तिहासको उदाहरणकर्के कहतेहे १३

सृंजयं पुत्र शोकार्तं यथायं नारदो ब्रवीत्
सुखदुःखै रहंत्वंच प्रजाः सर्वाश्च सृंजय १४

संजयराजा पुत्रशोककरकें आतुरभयाहै उसको यह
नारदमुनि कहताभया हे संजय हे राजन् हम और तुम
और सकल ब्रह्मचारीप्रजा सब दुःखोंकरकें संकुल भयेहै

अविशुद्धा मरिष्याम सर्वका परिदेवना
महाभाग्यं पुराराज्ञो कीर्त्यमानं मयाशृणु १५
सबदुःखोंकरकें संयुक्तही मरेंगे इसविषे क्या शोचनाहै
जो पुरातन महाराजा लोकोंके महाभाग्यकरकें महात्म्यहै
उसको मेंने कीर्तन करणाहै उसको तूं श्रवणकरो १५
गच्छावधानं नृपते ततो दुःखं प्रहास्यसि
यता न्महानुभवांस्त्व श्रुत्वैव पृथिवीपतीन् १६
हे राजन् अब तुम सावधान ताको प्राप्तहोकर जो आता
वहै उसको श्रवणकरो तब दुःखोंका त्यागोगे यते महा
नुभाव राजे इस पृथिवीके पतिभयेहै तिन्होंके वृतांत सु
नकरकें शांतिको प्राप्तहो १६
श
शममानस संतापं शृणुविस्तरशोमम
ग्रहामि मनसा माघु वर्धन सुतमम् १७
अपने मनके संतापको शमनकरो मोसे विस्तारसे श्र
वनकरो यह सर्वले राजालोकोंका वृत्तांतहै सो क्रूर व
स्यग्रहोंकी शांतिकरताहै आयुषाकी वृद्धिकरताहै १७
अग्निमाल्यं तितिभुज्ञा सुपादानं मनोहरम्
आविक्षितं मरुत्तं वै मृतं संजय सुश्रुम १८
यह राजालोकोंका सुखवृत्तांतहै श्रोतव्यतासे ग्रहण
करणे योग्यहै आविक्षित राजा मरुतभया उसको हु
म मृतभयेको सुनतेहै १८
यस्यसेंद्राः सवरुणा बृहस्पति पुरोगमाः
देवा विश्वसृजो राज्ञो यज्ञमीयु र्महात्मनः १९
जिसके यज्ञविषे इंद्रवरुण सहित देवता बृहस्पतिको
आदलेकर सभही देवता विश्वको सृजनेहारे आवतेभये
ऐसा महात्मा मरुतराजा भयाहै १९
यः स्पर्धया जयच्छक्रं देवराजं पुरंदरम् ॥

श्री० रा० च० टी० ९५

९५

शक्रप्रियैषी यं विद्वान्प्रत्याचष्ट बृहस्पतिः २०
जौनसा मरुत स्पर्धाकर्के देवराज पुरंदरको इंद्रकोजी
तताभया वहीउ बृहस्पति देवाचार्यको इंद्रकी प्रीति
करणेहारेको जानकर अपने यज्ञकर्मसे निकासदेताभया

संवर्तो याजयामास यवीयान्स बृहस्पतिः
यस्मिन्प्रशासति महीं नृपतौ राजसत्तम २१
बृहस्पतिके ज्येष्ठभ्रातासे संवर्त मुनिसे यज्ञकरावतेभये
जिस राजाके शासनामो यह पृथिवी सर्वसंपदा संपन्न
होतीभई २१ अकृष्टपच्या पृथिवी विबभौ चैत्य
मालिनी आविक्षितस्य वैसत्रे विश्वेदेवाः सभासदः
हे राजसत्तम संजय मरुत राजाकी राज्यशासनामो यह
पृथिवी अकृष्टपच्या होतीभई कृषीकर्म विनाही सर्वप्र
कारकी अन्नको परिपक्व फलवालेको देतेभई आवि
क्षित मरुतराजाको यज्ञके सभासद वासुदेव और विश्वेदे
व होतेभये ॥ २२

मरुतः परिवेष्टारः साध्याश्चास महात्मनः
मरुद्गणा मरुत्तस्य यत्सोम मपिबंस्ततः २३
मरुत देवता पंक्तीके परोसनेहारे परिवेष्टाभयेहै और
साध्यदेवताभी यज्ञकर्मकरतेभये और मरुद्गण तहां
सोमपानकरते भये २३ ॥

देवान्मनुष्यान्गंधर्वानति रिच्यंत दक्षिणाः
सर्वेन्ममार संजय चतुर्भद्रतरस्त्वया २४
और तहां इंद्रभी परिचारक जैसा सबकी सेवा करणे
हारा होताभया तहां दक्षिणादान जोभया उसकर्के दे
वतागंधर्व मनुष्योंकी दक्षिणासे अधिक होताभया २

पुत्रा त्पुण्यतर श्चैव मापुत्र मनुतप्यथाः
सहेतर्वेवो तिथिनं मृतं संजय शुश्रुम २५
हे संजय सो राजा मरुत मृतभयाहै चतुर्भद्र तरभयाहै चतुर्भद्रतर किसको कहतेहै केसा भयाहै
यागं दानं प्रियवाक सहितं ज्ञानमगर्वं क्षमान्वितं

शौर्यं त्याग समेतं वित्तं दुर्लभ मेतच्चतुर्भद्रं जिसका दा
नप्रिय वचन सहितहोवे १ और प्रकारका ज्ञान अहंका
र रहितहोवे २ और चित्त जिसका त्यागवासना युक्तहो
वे ३ और वित्त जिसका त्यागवासना युक्तहोवे अथवा
त्यागसमेतहोवे ४ इसको चतुर्भद्र नर कहतेहे अथवा
धर्म १ ज्ञान २ वैराग्य ३ ऐश्वर्य ४ यह चारोजिसके अहं
कार लोकनिंदा शोक संताप रहित अतिकल्याण रूपहो
वे सो चतुर्भद्रतर कहाहे हे संजय तेरे पर्यंत चतुर्भ
द्रतर गुणकी अवधीहे राजा मरुत तुमसे अधिक चतुर्भ
द्रतरभयाहे पुत्रवालेसे चतुर्भद्रतर अति पवित्र होताहे
तुं आप ऐसा होकर पुत्रको मृतभयेको जानकर मतसं
तापकरे २५ ॥

सुहोत्रं वैवा तिथिनं मृतं संजय शुश्रुम
अस्मिन् हिरण्यं ववृषे मघवा परिवत्सरं २६
हे राजन् संजय सुहोत्रराजा अतिशयकर्के अतिथिपूजा
वाला भयाहे इसकोभी हम मृतभयेको सुनतेहे
जिसके देशमें देवराज इंद्र वर्ष वर्ष प्रति सदा हिरण्य
की वर्षा करताभया २६

सत्यनामा वसुमती यं प्राप्यासी ज्जनाधिपम्
हिरण्य मवहन् नद्य स्तस्मिन् जनपदेश्वरी २७
जिसके राज्यविषे यहपृथिवी वसुजोधन इसकर्के पूर्ण
भई तो वसुमती नामसे सत्यरूप वसुमती प्रसिद्धभ
ई नदीयांभी इसके देशमें सुवर्ण प्रवाहवाली भईहे

कूर्मान्कर्कटका न्नक्रा न्मकरा ञ्छिंशुका नपि
नदीषु पातय द्राजन् मघवा लोक पूजितः २८
जिसके। देशमें जेती नदीहे तिन्होविषे इंद्र सुवर्णके
कूर्म सुवर्णके कर्कटकेकडे सुवर्णके नक्रजीव सुव
र्णके मकरजीव सुवर्णके शिशुमार जीव संपूर्ण नदी
योविषे गेरदेताभया ऐसा लोक पूजित देवेंद्र जिसका
वरस प्रति सुवर्ण करदेताभया २८
हिरण्या न्पातिता न्दृष्ट्वा मत्स्या न्मकर कच्छपान्

श्री॰
ग॰प॰
टी॰
९५

९६

सहस्र शोथ शतशो स्वर्णोस्य यदृशो निधिः २९
स्वर्णके मच्छमकर कच्छुमार्ग मार्गविषे पड़ेहुये देषक
र अनेकसहस्र अनेक शत प्रतिथि वार वार ग्रहणकरके
महासंतोषकरके बहोउनही लेतेभये २९
त द्धिरण्मय पर्यंत माहूते कुरुजांगले
ईजानो वितते यज्ञे ब्राह्मणेभ्यः समर्पयेत् ३०
कुरु जांगल देशमें स्वर्णकी असंख्यात हुंडी अत्यंत दे
षकर्के बहोतप्रकारके यज्ञकरता भया संपूर्ण स्वर्ण
को संग्रहकर्के यज्ञविधिके विस्तारमें ब्राह्मणोंको दक्षि
ण देताभया ३० ॥
स चेन्ममार संजय चतुर्भद्रतर त्वया ॥
पुण्या त्पुण्यतर श्चैव मा पुत्र मनुतप्यथाः ३१
ऐसा सुहोत्रराजा मरगयाहै चतुर्भद्रतरभयाहै तुमीच
तुर्भद्रतरहै पुत्रसे अधिक पुण्यतरहै पुत्रसंतापको मत
करे ३१ ॥ अदक्षिण मयज्वानं श्वैत्य संशाम्य मा
शुचः ३२ ॥ तो पुत्रने दक्षिणादान नही किया वेद
संस्कार रहित और स्वेच्छाचारी मराहै ऐसे जानकर मोह
की शांतिको कर शोक मतकरे ३२ ॥
अंगं बृहद्रथं चैव मृतं संजय शुश्रुम ३३
हे राजन् अंगदेशका बृहद्रथ राजाभया उसको हमसुन
भयेका सुनाहै सोभी राजा बृहद्रथ जैसा भयाहै उसके
वृत्तांतको सुनो ३३ ॥
यः सहस्रं सहस्राणां श्वेतानश्वा नवासृजत्
सहस्रंच सहस्राणां कन्याहेम परिष्कृताः ३४
जौनसा बृहद्रथराजा श्वेत घोड़ेयोके सहस्रोके देताभया
दशलक्ष अश्वदान श्वेतवर्णही करता भया और दशलक्ष
कन्यादान स्वर्णभूषण संयुक्त होताभया ३४
ईजानो वितते यज्ञे दक्षिणा मत्यकालयत्
यः सहस्रं सहस्राणां गजाना मतिपद्मिनां
ईजानो वितते यज्ञे दक्षिणामत्यकालयत्
अनेक प्रकारके यज्ञोंकर्के दक्षिणा करताभया प्रतिष्ठा

यकर्के देताभया दशलक्ष गजदान देताभया कैसे गजहे
प्रतिमत्तहे गजोविषे अतिश्रेष्टहे ३५

यः सहस्रं सहस्राणां श्वेतानश्वा नवासृजत्
ईजानो वितते यज्ञे दक्षिणा मत्यकालयत्
शतं शतं सहस्राणां वृषाणां हेम मालिनां
गवां सहस्रानुचरं दक्षिणा मत्यकालयत्
अंगस्य यज्ञमानस्य तदाविस्नुपदे गिरौ
अमाद्यदिंद्रः सोमेन दक्षिणाभि र्द्विजातयः ३६

बहोत और प्रकारकेभी यज्ञकरताभया उस विषेभी अतिद
क्षिणादेताभया सुवर्ण मालावाले दशलक्ष वृषदान क
रताभया ॥ एक एक वृषके साथ हजार गोदान
देताभया अंगराजा जब यज्ञकरताभया तब विस्नुपद
पर्वतमे इंद्रसोमपानकर्के मदमत्त होताभया ॥
और यज्ञके वांछांको त्यागकरताभया

यस्य यज्ञेषु राजेंद्र शतसंख्येषु वै पुरा देवान्
मनुष्यान् गंधर्वा नति रिच्यंत दक्षिणाः ३७

जिसके हुवेते शतसंख्या यज्ञभयेहे जिह्नोविषे देवता
मनुष्य गंधर्व दक्षिणासे अधिक दक्षिणाकर्के सभको जीत
ताभया ॥ यह हमनही जानते ऐसा पुरुष अवर होवेगा
जो यज्ञविषे ऐसी दक्षिणा बहोत सोभी देवेगा ३८

नजातो जनिता चान्यः पुमान्यस्तत्प्रदास्यति
यदंगः प्रददौ वित्तं सोमसंस्थासु सप्तसु ३९

जौनसे दक्षिणा सप्तप्रकारकी सोमयागोविषे अंगराजाने
दीनीहे ऐसे दक्षिणाको अवर कौन यज्ञकरणेहारा देवे
गा यह हमनही जानते ३९ ॥

सचेन्ममार सृंजय चतुर्भद्रतरस्त्वया
पुत्रा त्पुण्यतरश्चैव मापुत्र मनुतप्यथाः ४०

हे संजय सो ऐसा अंगराजा मराहे जौनसा चतुर्भद्रतर
गुणवहा हे राजन् चतुर्भद्रतरहे पुत्रसे अति पुण्यतरहे
पुत्रको मतशोचकर ४० ॥

शिव मौशीनरं चैव मृतं संजय शुश्रुम
यस्तां पृथिवीं सर्वां चर्मवत्समवेष्टयत् ५१
हे संजय उशीनर देशका राजा शिविभयाहै उसकोभी
हमसृतभयेको सुनतेहै जौनसा शिविराजा इसपृथिवी
को समग्रही चर्मकी न्याईं वेष्टन करनाभया ५१
महता रथघोषेण पृथिवीं मनुनादयन्
एकच्छत्रां महीं चक्रे जैत्रेणैकरथेन यः ५२
महाघोर शब्दवाले रथघोषकर्के समग्रपृथिवीको श
ब्दायमानकरताभया अपने एकरथकर्के पृथिवीको ए
कछत्रवाली करताभया
यावदद्य गवाश्वस्या दरण्यैः पशुभिः सह
तावतीः प्रददौ गाः स शिविरौशी नरोध्वरे ५३
जेती संख्यावाली इसके देशमे गोधन अश्वधन अर
एय पशुगण संभक्तहै तावत् संख्या परिमाण गोदान
उशीनर शिवीराजा यज्ञमे दक्षिणा देताभया ५३
नवोढारं धुरं तस्य कंचिन्मेने प्रजापतिः
न भूतं न भविष्यं च सर्वराजसु संजय ५४
प्रजापति सो ब्रह्मा सो उशीनर राजा समान राज्यभार
धारणे हारेको भूतभविष्यत कालमे समग्र राजलो
कोविषे और किसीराजाको मानताभया ५४
अन्यत्रौशीनराच्छैब्या द्राजर्षे रिंद्रविक्रमात्
अदक्षिण मयज्वानं माऽपुत्र मनुतप्यथा ५५
ऐसे शिविराजा मरगयाहै तेरे पुत्रने दक्षिणादान न
ही किया यज्ञयागनही किये उसको मतपश्चात्तापकरे
सचेन्ममार संजय चतुर्भद्रतरस्त्वया
पुत्रा त्पुण्यतरश्चैव मा पुत्र मनु तप्यथाः ५६
सो शिविराजा चतुर्भद्रतरभया जोभी मरगया तूभी
चतुर्भद्रतरहै पुत्रसे अधिक पुण्यतरहै पुत्रको मत
पश्चात्तापकरे ५६ ॥ ४ ॥

भरतं चैव दुष्यंतिं मृतं संजय शुश्रुम शाकुं
तलं महात्मानं भूरि द्रविण संचयम् ४७
हे संजय भरत राजा दुष्यंतका पुत्र भया उसको मरेको
हमने सुनाहै शाकुंतलाका पुत्र भया बहोत द्रव्यके सं
ग्रहवाला भयाहै ४७
यो बद्ध्वा त्रिंशतं ह्यश्वान् देवेभ्यो यमुनामनु
सरस्वतीं विंशतिं च गंगामनु चतुर्दश ४८
जौनसा भरत राजा यमुना तीर विषे तीशबहु संख्यावा
ले घोडे देवगणके निमित्त देताभया सरस्वतीके तीरमों
विंशति बहुसंख्याके घोडे देवगणोंके देताभया और गंगा
तीरमो घोडा बहु संख्याके घोडे देवता गणके निमित्त
देताभया ॥ ४८
अश्वमेध सहस्रेण राजसूय शतेनच
इष्टवान् समहातेजा दौष्यंति भरतः पुरा ४९
दुष्यंतका पुत्र सो भरत सर्वकालमो अश्वमेध सहस्रक
र्के यज्ञकरताभया राजसूय शतकर्के यज्ञकरताभया ४
भरतस्य महत्कर्म सर्वराजसु पार्थिवाः ॥
खं मर्त्या इव बाहुभ्यां नानुगंतु मशक्नुवन् ५०
हे संजय पृथिवी विषे राजकुलोंविषे जेते राजाके भरत
के महाविचित्रकर्म करणेका नही समर्थ होते भये
जैसे मनुष्य भुजोंकर्के आकाशको नही चढशकते ५०
एवं सहस्रान्योबद्ध्वा हयान्वेदीं वितत्य च
सहस्रं यत्र पद्मानां कण्वाय भरतो ददौ ५१
सो भरत राजा अपने यज्ञविषे हजार हजार घोडे चारो
दिशामे बांधकर वेदीकरताभया एक एक घोडे प्रति ह
जार हजार कमल सुवर्णोके बनाइकर कंठभूषण देक
र सभही घोडे दक्षिणादान देताभया ५१
सचेन्ममार सृंजय चतुर्भद्रतरस्त्वया ॥
पुत्रात् पुण्यतरश्चैव मृतं संजय शुश्रुम ५२

ऐसा भरतराजाभी चतुर्भद्रतर भयाही सोभी भरतायाहै तैभी चतुर्भद्रतनरहै पुत्रसे शुश्रूषितरहै मृतपुत्रसे पश्चात्ताप नकरे ५२ ॥ ५ ॥ रामचंद्रको क्रम मृतभयेको सुनतेहै जो ५

यस्त्व कंपतवै नित्यं प्रजाः पुत्रानिवौरसान् ५३
हे संजय दशरथके पुत्र रामचंद्र प्रजाको औरस पुत्रोकी न्याई दयाकरके पालना करताभया ५३

विधवा यस्य विषये न नार्थः कास्त्रना भवत्
सदैवासी पितृसमो रामो राज्यं यदन्वशात् ५४
जिसके राज्यमो विधवा स्त्री नही होती भई अनाथदी नलोककोई नहीभया सभलोकोविषे सदा पिता समा न होकर रामचंद्र राज्यपालना करते भये ५४

कालवर्षी च पर्जन्यः सस्यानि समुपादयत्
नित्यं सुभिक्ष मेवासी द्रामे राज्यं प्रशास्यति ५५
रामचंद्रजीको राज्यकरणेमो पर्जन्य समयानुवर्षता भया सभही अन्नखेती सम्रद्ध होती भई सदा सुभिक्ष रामजीके राज्यमो होताभया ५५

प्राणिनो नाप्सु मज्जंति नान्यथा पावकोदहत्
रुजाभयं न तत्रासी द्रामे राज्यं प्रशास्यति ५६
प्राणी जलविषे नहीडुभतेभये हथा अग्निदाह देशमो नही होताभया रोगभय लोकको रामचंद्रजीके राज्यमो नही भया ५६ ॥

आसन्वर्ष सहस्राणि तथा पुत्र सहस्रिकाः
अरोगाः सर्व सिद्धार्था रामेराज्यं प्रशासति ५७
सभही प्रजा दश हजारवर्षकी आयुषावाली भयेहै सभही पुत्र सहस्र वाले भयेहै रोगा रहित सभही लोकभयेही सभही लोक सर्वार्थ सम्रद्धिवाले रामजीके राज्यमो होतीभये ५८ ॥

संतुष्टाः सर्व सिद्धार्था निर्भयाः स्वैरचारिणः
नराः सत्यव्रतास्यास द्रामे राज्यं प्रशासति ५८

अन्योन्य विवाद इस्त्रियो विषे नहीभया तोपुरुषविषे क
हा होताहै सभही प्रजा नित्यप्रति धर्म निष्ठावाले रा
मजीके राज्यमो होतेभये ५८

नान्योन्येन विवादोभूत् स्त्रीणामपि कुतोन्नृणां
धर्मनित्याः प्रजाश्चास न्रामे राज्यं प्रशासति ५९

रामजीके राज्यमो सभही मनुष्य सदा संतुष्टभये
है सर्वार्थसिद्धीवालेभयेहै निर्भय सदाभयेहै स्व
छंदसुख विहारी भयेहैं सभही मनुष्य सत्यधर्म
वचन व्रतधारी भयेहै ॥ ५९

नित्यपुष्प फलाश्चैव पादपा निरुपद्रवाः
सर्वा द्रोणदुघागावो रामेराज्यं प्रशासति ६०

रामजीके राज्यमो वृक्षसदापुष्प फलसंयुक्त भयेहै
दावाग्निवात वर्षादि पीडारहित भयेहै सभही गोय
न द्रोणभर दुग्धदेनेहारी देतेभई ६०

स चतुर्दश वर्षाणि वने प्रोष्य महातपाः ॥
दशाश्वमेधान्जाहृथ्या नाजहार निरर्गलान् ६१

हे संजय ऐसेजो रामचंद्र राजाभयेहै जिन्होने पिता
के वचनसे चौदावर्ष वनमो महातपकिया राक्षस
कुलको अशेषमाराहै दस अश्वमेध महादक्षिणा
वाले अवारित भोजन दक्षिणावाले कियेहै ६१

युवाश्यामो लोहिताक्षो मातंग इव यूथपः
आजानुबाहुः सुमुखः सिंहस्कंधो महाभुजः ६२

सो ऐसे रामचंद्र राजा सदा युवाशरीरभयेहै कमल
दलकी रक्तवर्ण जिसके नेत्र भयेहै आजानुबाहुभये
है सिंहासमान जिन्हके महाबलवता संयुक्त स्कंध
स्थानसे महापराक्रम संयुक्त जिन्हके भुजदंडहै ६२

दशावर्ष सहस्राणि दशावर्ष शतानिच अयो
ध्याधिपति र्भूत्वा रामो राज्य मकारयेत् ६३

सो रामचंद्र महाराज दशहजार वर्ष और दशावर्षशत

श्री· रा·प· टी· २८

अयोध्याकी महाराजपदवी पाइकर संपूर्ण पृथिवी
के राज्यको पालन करतेभये ९३

स चेन्ममार सृंजय चतुर्भद्रतर स्त्वया पुत्रा
त्पुण्यतर स्तैव मापुत्र मनुतप्यथाः ९४

हे राजन् जो सो रामचंद्रभी चतुर्भद्रतर राजा हो
कर मरगये तो तूंभी चतुर्भद्रतर राजाहै पुण्यसे
अतिपुण्यतरहैं मतपुत्रशोकसे पश्चात्तापमतकरे ९४

भगीरथं च राजानं मृतं संजय शुश्रुम ॥
यस्येंद्रो वितते यज्ञे सोमं पीत्वा मदोत्कटः ९५

हे संजय भगीरथ राजाको हमसुनतेभयेको सुनतेहै
जिसके यज्ञविधिके विस्तारसे इंद्रसोमपान करके मदो
त्कटभयाहै ९५ ॥ ९ ॥

असुराणां सहस्राणि बहूनि सुरसत्तमः
अजयद्बाहु वीर्येण भगवा न्पाकशासनः ९६

सो इंद्र सुरोंविषे श्रेष्ठभयाहै पाक असुरोंकामार जी
तकर पाकशासन नामसे प्रसिद्धभयाहै राजाभगीर
थके यज्ञभागकरके महापराक्रमीभयाहै सो भगवान्
इंद्र असुरोंके अनेक सहस्रोंको अपने बाहुवीर्यकरके
रणविषे जीतलेताभया ९६ ॥

यः सहस्रं सहस्राणां कन्याहेम परिष्कृताः
ईजानो वितते यज्ञे दक्षिणा मत्यकालयत् ९७

जौनसा भगीरथ राजाहै अनेक यज्ञोंकरके यज्ञदी
क्षापाइकरके सुवर्ण भूषण संयुक्त कन्या सहस्रोंके
सहस्रकरके अतिदक्षिणाको कल्पना करताभया ९७

सर्वा रथगताः कन्याः रथाः सर्वे च नयुताः
शतं शतं रथे नागाः पद्मिनो हेममालिनः ९८

जेती कन्या दक्षिणा तूकरके कल्पितकीनी सो सभही क
न्यारथोंविषे चढाईही सभही रथचार चार घोडे संयु
क्तकरके एक एक रथसाथ शत शत हाथी सुवर्ण
की पद्ममाला संयुक्त कीनीहै ९८

सहस्रमश्वा एकैकं हस्तिनं पृष्ठतोन्वयुः
गवां सहस्रमश्वांच सहस्रं गवजाविकं ६९
इस प्रकार एक एक हाथी साथ सहस्र सहस्र घोडे घोडे पीछे लगाइ दिये हे एक एक घोडे साथ सहस्र सहस्र गऊ लगाइ दीनी हे एक एक गऊ प्रति सहस्र सहस्र गो भेड लगाइ दीनी हे ६९

उपह्वरे निवसतो यस्यांके निषसादह
गंगाभागीरथी तस्मा दुर्वशी ह्यभवत्पुरा ७०
ऐसा भगीरथ राजा जब उपह्वरस्थान विषे तप करता भया तब गंगाभगवती ~~पुत्र होती भई~~ भगीरथके उछंग मो आन बेठती भई इसको गंगाभगवती पुत्री होती भई ताते भागीरथी नामसे प्रसिद्ध होती भई गंगाभगवती उर्वशीही किसीके वश नही हे सो भगीरथके कार्य वासते इसको आगे चलती भई ७०

भूरिदक्षिण मैक्ष्वाकं यजमानं भगीरथम्
त्रिलोक पथगा गंगा दुहितृत्व मुपेयुषी ७१
इक्ष्वाकुवंश भगीरथ राजा बहुत दक्षिणावाले यज्ञ करता भया ताते गंगाभगवती भगीरथकी पुत्री भयी हे सो गंगा भगीरथके प्रभावसे त्रिपथगा त्रिलोकी विषे तीन मार्ग करके वहती भई ७१

सचे न्ममार संजय चतुर्भद्रतर स्त्वया
पुत्रा त्पुण्यतर श्चैव मा पुत्र मनुतप्यथाः ७२
हे संजय भगीरथ राजाभी मरा हे चतुर्भद्रतर भया तूं भी चतुर्भद्रतर हे पुत्रसे अतिपुण्यतर हे मृतपुत्रोंको मत पश्चात्ताप करे ७२ ॥ ७

दिलीपंच महात्मानं मृतं संजय शुश्रुम
यस्य कर्माणि भूरीणि कथयंति द्विजातयः ७३
इसको हम सुना हे संजय दिलीप राजा महात्मा भया हे जिसके अनेक विचित्र कर्मोंको अनेक ब्राह्मण कहते हे ॥ ७३

य इमां वसुसंपूर्णां वसुधां वसुधाधिपः

श्री
रा० प०
टी०
९९

ददौ तस्मि न्महायज्ञे ब्राह्मणेभ्यः समाहितः ७४
जो राजा दिलीप इस पृथिवीको स्वर्णादि अनेक द्रव्यसंपदा संपूर्णकरके महायज्ञ अश्वमेध यज्ञविषे ब्राह्मणोंको दक्षिणाकरके श्रद्धासंयुक्त देताभया ७४
यस्येह यजमानस्य यज्ञे यज्ञे पुरोहितः सहस्रं वारणा न्हैमान् दक्षिणा मत्यकालयत् ७५
जिस यजमानके एक एक यज्ञविषे पुरोहित जो है सो एक एक हजार स्वर्ण गज दक्षिणा अतिद्रव्य संयुक्त कल्यन होतीभई ७५
यस्य यज्ञे महानासी द्यूपः श्रीमान् हिरण्मयः
तंदेवाः कर्मकुर्वाणाः शक्रमेवा उपाश्रयन् ७६
जिसके यज्ञविषे स्वर्णका महायूप यज्ञका स्तंभ होताभया उसी अश्वमेधयज्ञको करणेद्वारा इंद्रजोहै सो उसकी यज्ञचेष्टाको प्रतिबंधकरताभया ७६
चषाले यस्य सौवर्णे तस्मिन्यूपे हिरण्मये
ननृतुः देवगंधर्वाः षट् सहस्राणि सप्तधा ७७
जिसके यज्ञविषे स्वर्णका चारोतरफ महाविस्तारवाला पीड होताभया उसविषे षट् सहस्र देवगंधर्व आइकर्के नृत्य करते भये और षड्जादि सप्तस्वरोके भेदकर्के वाद्यवजंत्रोको वजावतेभये ७७
अवादय त्तत्रवीणां मध्ये विश्वावसुः स्वयम्
सर्वभूतान्य मन्येत मम वादयते स्वयम् ७८
तहां आइकर विश्वावसु गंधर्व मध्यविषे वीणाको वजावतेभये सभही कहती भई यह विश्वावसु गंधर्व मेरे संतापवास्ते वीणाको वजा एसा मोद सर्वभूतोकोहोताभया
एतद्राज्ञो दिलीपस्य राजानो नानु चक्रिरे
यस्येभा हेम संच्छन्ना पथि मत्तास्म शेरते ७९
ऐसे राजे दिलीपके कर्मकोओर राजकरणेको नहीकर सकते भये जिसकी हाथी स्वर्णके झूलकिंकिणी माला शृंखलादि सामग्री संयुक्त मदमत्त होकर मार्गमेंभीविषेपडे निद्राको करतेहै ७९

३८

राजानं शतधन्वानं दिलीपं सत्यवादिनम्
येपश्यन् सुमहात्मानं तेपि स्वर्गजितो नराः ८०
ऐसा राजा दिलीप शतधन्वा नामसे प्रसिद्ध होता भया
जोनसा दिलीप अपने सन्मुख आये अनेक शत धनुष
धारी योधा गणोंको रणविषे संहार लेता है इसप्रकार
के शतधन्वा राजाको सत्यवादी जानकर जो लोक ऐसे
महात्मा दिलीप राजाको देखते भये सो भी स्वर्गजेता
होते भये ॥८०॥
त्रयः शब्दा न जीर्यंते दिलीपस्य निवेशने ॥
स्वाध्यायघोषो ज्याघोषो दीयतामिति वै त्रयः ८१
हे संजय राजा दिलीपके दरबारविषे तीनशब्द विश्राम
को नही पावते भये एक वेदोका स्वाध्यायघोष शब्द १
और धनुर्वेदोका ज्याघोषशब्द २ और देतेजावो ऐसा दान॥
का शब्द ३ ये तीनशब्द तहां कदापि पुराणी नही भये सदा
नवेही बने रहेहै ८१
स चेन्ममार संजय चतुर्भद्रतरस्त्वया
पुत्रात्पुण्यतरश्चैव मा पुत्रमनुतप्यथाः ८२
हे संजय सो दिलीपराजाभी मरा है ऐसा चतुर्भद्रतर भ
या है तूभी तैसाही है चतुर्भद्रतर पुत्रसे पुण्यतर होता है
ताते मृतपुत्रके संतापको पश्चात्ताप मतकरो ८२ ॥
मांधातारं यौवनाश्वं मृतं संजय शुश्रुम
यं देवा मरुतो गर्भं पितुः पार्श्वादपाहरन् ८३
हे संजय युवनाश्वके पुत्रको मांधाताराजाको मरेको
हम सुनते है जो मांधाता पिताके गर्भमो रहा उसको
मरुत देवता पिताके पार्श्वसे उतारलेते भये ८३
संवृद्धो युवनाश्वस्य जठरे यो महात्मनः ॥
पृषदाज्यो द्भवः श्रीमां त्रिलोक विजयी नृपः
युवनाश्व राजाके गर्भमो बडा भया है पिताके गर्भमो जे
से भया उसको हमको कहते है पृषदाज्यसे गर्भ भया
दधिमिश्रित घृत पृषदाज्य बना है उसमो किसीके पुत्र
के इच्छाकर्के ऋषीजनोने उसविषे पुरुषवीर्य स्थापन
किया है उसको राजा युवनाश्वने जलभ्रांतिकर्के पान

किया तो मंत्रबलकर्के स्त्रीके रजोभावके रुधिर विनाभी
राजाके उदरमें गर्भहोगया सो पिताके कूखिसे बालक
निकास लेनाहै सो राजा त्रिलोकका विजयी भयाहै ८४

ये दृष्ट्वा पितुरुत्संगे प्राध्मातं देव रूपिणं ॥
अत्रेयाय मब्रुवन् देवा कमयं दास्यती तिवै ८५

तब इंद्रकहता भया सोको यह स्तनपानवास्ते पीवेगा
सोको दास्यति पीवेगा ऐसे कहिकर इंद्र मांधातानाम
करता भया ॥ ८६ ॥

मामेव दास्यतीत्येव मिंद्रोथा भ्युपपद्यत
मांधातेति ततस्तस्य नामचक्रे शतक्रतुः ८६

ततकालही इंद्रके हाथसे दुग्धकी धाराप्रवाह रूपजैसी
उत्पन्न होतीभई उसकी पोषणवास्ते इंद्रका हाथ दुग्ध
का निरंतर स्रवताभया ८७ ॥

ततस्तु पयसो धारां पुष्टिहेतो महात्मनः
तस्यास्ये यौवनाश्वस्य पाणिरिंद्रिय वास्रवत् ८८

इंद्रके हाथको मांधाता बालभावसे पानकरताहै इंद्रकी
अंगुलीसे एकदिनकर्के शतपल परिमाण दुग्धस्रवताभ
या उसके पानक कर्के सो बालक बारादिन कर्के द्वाद
शवर्ष शरीर वाला होताभया ८८

तमिमं पृथिवीं सर्वां मेकाह्ना समपद्यते
धर्मात्मानं महात्मानं शूरमिंद्रसमं युधि ८९

ऐसे राजा मांधाताको समग्र पृथिवी एकदिन कर्केही प्राप्त
होतीभई कैसाहै धर्मात्माहै महात्माहै युद्धमे इंद्र समानहै

यश्चांगारंतु नृपतिं मरुत्त मसितं गयम्
अंगं बृहद्रथं चैव मांधाता समरे जयत् ९०

अथ दिग्विजयकरणेको मांधाताराजा प्रथम अंगारराजा
को जीतताभया मरुत्तराजाको असितराजाको गयराजा
को अंगराजाको बृहद्रथ राजाको रणमे जीतलेताभया

यौवनाश्वो यदांगारं समरे प्रत्य युध्यत
विस्फारैः धनुषो देवा गौरभेदीति मेनिरे ९१

नव मांधाता राजाने अंगार राजाको रणमो प्राप्तभया
तव धनुषके टंकार शब्दकर्के देवता मानतेभये स्वर्गलो
कको भेददीयाहै ऐसे भयभीत विस्मित होतेभये ९१

यत्र सूर्य उदेतिस्म यत्रच प्रति तिष्ठति ॥
सर्वं तद्यौवनाश्वस्य मांधातुः क्षेत्रमुच्यते ९२

जहांसे सूर्यउदेहोताहै जहां अस्तहोताहै एताभूमंड
ल सभही मांधाता राजा यज्ञलेतेभया ९२

अश्वमेधशतेनेष्ट्वा राजसूय शतेनच अदद
द्रोहितान् मत्स्यान् ब्राह्मणेभ्यो विशांपते ९३

प्रथम अश्वमेध शतकर्के यज्ञकरताभया वहोउ राजसू
य शतकर्के यज्ञकरताभया यज्ञांत दक्षिणाविषे स्वर्ण
के रोहित जाति मत्स्योंको देताभया ९३

हैरण्यान्योजनोत्सेधा नायतान् दशयोजनं
अतिरिक्तान् द्विजातिभ्यो व्यभज्ञ न्नितरेजनाः
९४

स्वर्णके शिखर एक योजन ऊचे दशयोजनलंबे ब्राह्म
णोमे वचरहेहै तिन्होंको अन्यान्य अवरलोक अन्यान्य
बांटलेतेभये ९४

सचेन्ममार संजय चतुर्भद्रतरस्त्वया
पुत्रा त्पुण्यतर श्चैव मापुत्र मनुतप्यथाः ९५

हे संजय ऐसा मांधाता राजामराहै चतुर्भद्रतरहोता
भया तुभी आप तैसाहीहै चतुर्भद्रतरहोताभया पुत्रसे
अधिक पुण्यवान् मृतभये पुत्रके शोचसे पश्चात्तापसं
तापको मतकरो ९५ ९॥

ययातिं नाहुषं चैव मृतं संजय शुश्रुम यइ
मां पृथिवीं कृत्स्नां विजित्य सहसागरां ९६

हे संजय ययातिराजा नहुषका पुत्रभयाहै उसको हम
मरा सुनतेहै जौनसा ययातिराजा इस पृथिवीकों स
मग्रजीतलेताभया ९६ ॥

श्री
रा पं.
टी.
१०१

101

शम्यापाते नाभ्यतीया न्वेदीभिश्चित्रयन्महीं
ईजानः क्रतुभि र्मुख्यैः पर्यगाद्वसुंधरां ९७

इसराजाका स्थूलत्रम एककाष्ठदंडभया सो शम्यापात काष्ठदंड राजाने वलकर्के हरयोजन देशमें क्षेपनकिया उसके अंतर्गतजेती पृथिवी आइगई एतादेश शम्यापातकल्पनाकर्के यज्ञवेदी राजानेकीनी यज्ञकर्के समुद्रपर्यंत पृथिवीको प्राप्तभया ९७

अश्वा क्रतु सहस्रेण वाजपेय शतानि च
तर्पयामास विप्रेंद्रो त्रिभिः कांचन पर्वतैः ९८

अश्वमेध सहस्रकर्के राजसूय शतकर्के यज्ञकर्के ब्राह्मणोंको स्वर्णके तीन सुमेरु पर्वत दानकर्के दक्षिणा दानकर्के तृप्तकरताभया ९८

व्यूहेन सरथुहेन हत्वा दैत्येय दानवान् व
भज त्पृथिवीं कृत्स्नां ययाति र्नहुषात्मजः ९९

अपनी सेनाको अस्तर व्यूहकर्के दैत्य दानवोंको मारकर समग्र पृथिवीका प्रजाको विभागकरदेताभया ऐसा नहुषकापुत्र राजा ययाती भयाहै ९९

अंतेषु पुत्रा न्निक्षिप्य यदुद्रुह्यु पुरे स्वया
पुत्रा त्पुण्यतर स्यैव मापुत्र मनुतप्यथाः १००

राजा ययाति यदुमुख्य चारपुत्रोंको चारदिशाके देशोविषे स्थापनकर्के पूरुपुत्रोंको चारदिशाके देशोविषे स्थापनकरी सपत्नी करी वनको जाताभया १००

सचेन्ममार संजय चतुर्भद्रतर स्त्वया
पुत्रा त्पुण्यतर स्यैव मापुत्र मनुतप्यथाः

हे संजय ऐसा ययाति चतुर्भद्रतरहोकर मराहै तो तुभी चतुर्भद्रतरहोकर पुत्रसे अधिक पुण्यतरहोता है ताते मृतपुत्रके शोककर्के पश्चात्ताप मतकरे १०१

अंबरीषं च नाभागिं मृतं संजय शुश्रुम
यं प्रजा वव्रिरे पुण्यं गोप्तारं नृपसत्तम १०२

हे संजय राजा अंबरीष नाभागका पुत्रभया उसको हम मरा सुनतेहैं जिसको सभही प्रजा अपनी रक्षाकरणेको आपवरलेतीभई २

यः सहस्रं सहस्राणां राज्ञा मयुत याजिनां
ईजानो विततेयज्ञे ब्राह्मणेभ्यः समाहितः ३

यो राजा अंबरीष आप यज्ञ दीक्षा करताभया ब्राह्मणोकी अतिथिपूजावास्ते यज्ञयाजी राजोंकी अयुतको युक्तकरताभया आप सावधानतासे यज्ञकरताभया ३

नैतत् पूर्वजना श्चक्रु र्नकरिष्यंति चापरे इत्यं
बरीषं नाभागि मन्वमोदंत दक्षिणाः ४

जैसी दक्षिणा अंबरीषने दीनीहै ऐसीही लोक राजाके सनेधर्मको पूर्वले राजालोक नहीकरतेभये आगेभी होवेंगे सोभी नहीकरेंगे इस प्रकार सभही लोकराजाकी दक्षिणादानके प्रशंसा करतेभये ४

शतराजसहस्राणि शत राजशतानिच सर्वे
श्वमेधे राजान स्तेन्वयु र्दक्षिणायनम् ५

शतसहस्र राजा लोक और शतसंख्या संयुक्त शतराजा लोक राजा अंबरीषके साथ अश्वमेधयज्ञोंके शतकरणे करके दक्षिणायनमार्गकी गति स्वर्गभोगको भोगकरके उत्तरायण गतिको ब्रह्मलोकको प्राप्तहोतेभये ५

सचेन्ममार संजय चतुर्भद्रतर स्त्वया पुत्रात्
पुण्यतर स्तव माशुत्र मनुतप्यथाः ॥ ६

हे संजय ऐसा अंबरीष राजा चतुर्भद्रतरभया सोभी मरा है तो तूंभी चतुर्भद्रतर है पुत्रसेभी पुण्यतर है मतपुत्रसे शोकके पश्चात्तापकर्के मत संतापकरे ६ ॥ ११

शशबिंदुं चैत्ररथं मृतं संजय शुश्रुम यस्य
भार्या सहस्राणां शतमासीन्महात्मनः ७

हे संजय चित्ररथका पुत्र शशबिंदु राजाको हम मरेको

सुनतेहै जिस महात्माराजा शशबिंदुकी शतसहस्र भा
र्याभईहै ७ ॥

सहस्रं तु सहस्राणां पुत्राआसन् शाशबिंदवः
हिरण्यकवचाः सर्वे सर्वे चोत्तम धन्विनः ८

बहोड शशबिंदु राजाके शतसहस्रपुत्रहोतेभये तातै
सभही शाशबिंदुहोतेभये सभही कांचन कवचधारी भ
येहै सभही उत्तमधनुर्वेद वेत्ताभयेहै ८

शतं कन्या राजपुत्र मेकैकं पृथगन्वयुः क
न्यां कन्यां शतं नागा नागं नागं शतं रथाः ९

ऐसे शशबिंदु राजाके पुत्रोको एक एक प्रति एक एक
शतकन्या भिन्न भिन्न प्राप्तभयेहै एक एक कन्याप्रति ए
क एक शतरथ साथहोतेभये ९

रथे रथे शतं चाश्वा देशजाः हेममालिनः
अश्वे अश्वे शतं गावो गवां तद्वदजाविकं १०

एक एक रथप्रति एक शत वनमालाधारी अश्वसाथ हो
तीभये एक एक अश्वप्रति एक एक शतधेनु साथभई
है एक एक धेनुसाथ शत शत बकरी भेडहोतीभई १०

एतद्धन मपर्यंत मश्वमेधे महामखे शश
बिंदु महाराज ब्राह्मणेभ्यः समर्पयेत् ॥११

इसप्रकार असंख्यात एक एक अश्वमेध महायज्ञविषे श
शबिंदुराजा ब्राह्मणोको दक्षिणादेताभया ११

सचेन्ममार संजय चतुर्भद्रतर स्त्वया पुत्रात्
पुण्यतरश्चैव मापुत्र मनुतप्यथाः ११२

हे संजय ऐसा शशबिंदुराजा चतुर्भद्रतरभयाहै तैसी
तूंभीहै चतुर्भद्रतर पुत्रसेभी अतिपुण्यतरहोताहै पुत्र
शोककरके पश्चात्तापके संतापको मतकरो १२

गयं चामूर्त रयसं मृतं संजय शुश्रुम यः
सवर्षशतं राजा हुतशिष्टाशनो भवत् १३

हे संजय अमूर्त रयस राजाके पुत्रको गयराजाको हममरे
को सुनतेहै जोनसा गयराजा वर्ष शत भर यज्ञके हुत

भोजनका अर्वेद्रव्रतकरताभया ११३

यस्मै वह्निर्वरं प्रादात् ततो वव्रे वरान्गयः
ददतो मेक्षयं वित्तं धर्मे श्रद्धा च वर्ततां ११४

जिसको प्रसन्न होकर वरदेताभया सो राजा गयअग्निसे वरप्रार्थना करताभया मोकी दानधर्म करणेसे अक्षय धनवृद्धिहोवे धर्मकर्मविषे मोको श्रद्धा सदा हढवनीरहे ११४

मनो मे रमतां सत्ये त्वत्प्रसादात् हुताशन
लेभे च कामांस्तान्सर्वान्पावकादितिनः श्रुतं

मनमेरा सदासत्यधर्मविषे रतहोवे हे हुताशन भगवन् ऐसेवरमोको सिद्धहोजावे इसप्रकार सो गयराजा अग्निसे सर्वकामनाप्राप्तिकेवरकों प्राप्तहोताभया यहहमनेसुनाहे

दर्शे च पूर्णमासे च चातुर्मास्ये पुनः पुनः
अयजद्धयमेधेन सहस्रं परिवत्सरान् ११६

ऐसा गयराजा सो दर्शयागमो पौर्णमास यागमों चातुर्मास्य यागमों वारं वार अश्वमेधयज्ञ सहस्रवर्षपर्यंत करताभया ११६

शतं गवां सहस्राणि शतमश्वतराणि च उत्था
योत्थाय वै प्रादात्सहस्रं परिवत्सरान् ११७

शतसंख्या गो सहस्र शत अश्वतरीयां प्रतिदिन प्रातःकालमो उठकर ब्राह्मणोंको सहस्रवर्षपर्यंत देताभया ११८

तर्पयामास सोमेन देवान्वित्तैर्द्विजानपि पितॄ
न्स्वधाभिः कामैश्च स्त्रियः स पुरुषर्षभ १८

सो गयराजा सोमयागविषे सोमपान देवता गणोंको तृप्तकरताभया ब्राह्मणोंको दक्षिणादानके द्रव्यकर्के तृप्तकरताभया पितरोंको स्वधाकारवाले पितृयज्ञोकर्के तृप्तकरताभया और स्त्रियोंको सर्वकामनावाले भोगपदार्थोंकर्के तृप्तकरताभया १८॥

सौवर्णां पृथिवीं कृत्वा दशव्यामां द्विरायताम्
दक्षिणामददद्राजा वाजिमेधे महाक्रतौ १९

ऐसा गयराजा स्वर्णकी पृथिवीको दो योजन विस्तार
वाली दशयोजन लंबीकरके अश्वमेध यज्ञमो यज्ञप्र
तिष्ठाकी दक्षिणादेताभया १९

यावत्यः सिकता राजन्गांगायाः पुरुष र्षभ
तावतीरेव गाः प्रादा दामूर्तरयसो गयः २०

हे राजन् जैती गयाक्षेत्रमों रेतकी कणका है एती सं
ख्याकी धेनू स्वर्णशृंगादि युक्ता दामादि सामग्री अमू
र्तरयस राजाका पुत्र गयराजा दक्षिणादेताभया २०

सचेन्ममार सृंजय चतुर्भद्रतर स्त्वया पुत्रात्
पुण्यतरश्चैव मापुत्र मनुतप्यथाः २१ ॥

हे सृंजय ऐसा गयराजा चतुर्भद्रतरभया है सोभी मरा है
तो तूंभी चतुर्भद्रतर है पुत्रके पुण्यसे अधिक पुण्यभागी
है मृतपुत्रके शोकसंतापके पश्चात्तापकरके मतसंतप्त
होवे २१ ॥ १२

रतिं देवंच सांकृत्यं मृतंसृंजय शुश्रुम ॥
सम्यगाराध्ययः शक्रं वरं लेभे महातपाः २२

हे सृंजय सांकृति राजाकापुत्र रंतिदेव राजाभया है इस
कोभी हम मरा सुनते है जो रंतिदेव राजा इंद्रको विधि
करके आराधन करके महातपस्वी भया है इंद्रसे सो रंति
देव वरमांगताभया २२

अन्नंच नो बहुभवे दतिथिंश्च लभेमहि अश्रद्धा
चनोमाभ्यगम न्माचया चिष्मकंचन २३

हमारे अन्नदान बहोत होवे सत्पात्र अतिथी हमको
प्राप्तहोजावे श्रद्धाहमारी दानधर्मसे नजावे याचक
हमको प्राप्तहोवे हमकिसीके याचक नहोवे २३

उपातिष्ठंश्च पशवः स्वयं तं संशितव्रतं
ग्राम्यारण्या महात्मानं रंतिदेवं यशस्विनं २४

हे राजन् रंतिदेव राजाको यज्ञकरणेवास्ते महासंय
मव्रतधारी जानकरके ग्रामके गवादि सकल पशु
अपने शरीरके पवित्रता और स्वर्गगतीकी वांछाक

तत्रस्म सोदाः क्रोशंति सृष्ट मणिकुंडलाः
सूपभूयिष्ठ मश्नीधं नाद्यमांसं यथापुरा २९
उसराजाकी अन्नदानकी पाकशालामो जो पाचकलोक हैं
सो शुद्धस्वर्णके मणिकुंडलोंकी विचित्र शोभावाले हैं
सो ब्राह्मणोंको भोजनवेलाविषे पुकारते हैं ब्राह्मणो आज
तुम बहुत चणक मुद्ग माषादि सूपभूयिष्ठ भोजनको पा
ओ पहिलेदिन जैसा मांस भूयिष्ठ भोजन आज नहीं है ३०
स चेन्ममार संजय चतुर्भद्रतर स्त्वया ॥
पुत्रात् पुण्यतरश्चैव मापुत्र मनुतप्यथाः
हे संजय ऐसा सो रंतिदेव राजा चतुर्भद्रतर भया है सोभी म
रा है तो तूंभी तैसा है चतुर्भद्रतर पुत्रसेभी अधिक पुण्यतर
होता है तुम पुत्रशोकके संतापकरके मत पश्चात्तापकरो ३१
सगरं च महात्मानं मृतं शुश्रुम संजय
ऐक्ष्वाकं पुरुषव्याघ्र मतिमानुष विक्रमं ३२
हे संजय सगरराजा महात्मा भया है इक्ष्वाकु राजाके वंशमो
भया है मनुष्योंसे अधिक अद्भुत पराक्रमी भया है उसको
भी हम मरेको सुनते हैं ३२
षष्टिपुत्र सहस्राणि ययाति मनुजर्षभे
नक्षत्रराजं वर्षांते व्यभ्रे ज्योतिर्गणा इव ३३
जिसराजा सगरके साठहजार पुत्र भये हैं जब राजा सगर
यात्राकरे तब षष्टिसहस्रपुत्र राजाके साथ कैसी शोभासे
बादलरहित निर्मल आकाशमो चंद्रमासाथ नक्षत्रता
रागण अपने ज्योतिप्रकाशकरके शोभाको करते हैं ३३
एकछत्रा महीयस्य प्रतापाद भवत्पुरा योश्व
मेधसहस्रेण तर्पयामास देवताः ३४ ॥
जिसके प्रतापसे यह पृथिवी एकछत्रा प्रथम होतीभई यो
सगरराजा अश्वमेध यज्ञोंके सहस्रकरके देवगणोंको प्रसन्न
करताभया तृप्तकरताभया ३४ ॥
यः प्रादात्कनक स्तंभं प्रासादं सर्वकांचनम्
पूर्णं पद्मदलाक्षीणां स्त्रीणांशयन संकुलम् ३५

यो राजा सगर सुवर्णके स्तंभवाला सकल सुवर्णमय
मंदिरको बनाइकर कमलदलसमान नेत्रवाली इस्त्रियो
की शय्यावस्त्रादि संयुक्तकर्के ३६

द्विजातिभ्यो ऽनुरूपेभ्यः कामांश्च विविधान्बहून्
यस्यादेशेन तद्वित्तं व्यभजंत द्विजातयः ३७

सुंदर स्वरूप ब्राह्मणोंको देतेभयो और अनेक प्रकारके
कामभोगदेताभया जिसके आज्ञाकर्के सबही ब्राह्मण उस
द्रव्यको विभाग करलेते भये ३७

खानयामास यः कोपात्पृथिवीं सागरांकितां
यस्य नाम्ना समुद्रश्च सागरत्वमुपागतः ३८

जो राजा सगर अश्वमेध यज्ञके अश्वखोजनेवाले समुद्र
तीरकी पृथिवीको पुत्रोंसे उखनावताभया जिसके नाम
कर्के समुद्रभी सागर नामताको प्राप्तभयाहै ३८

सचेन्ममार सृंजय चतुर्भद्रतरस्त्वया
पुत्रात्पुण्यतरश्चैव मा पुत्रमनुतप्यथाः ३९

हे सृंजय सो राजा सागर चतुर्भद्रतरभयाहै सोभी म
रगयाहै तैसा तूंभी चतुर्भद्रतर है पुत्रसेभी अधिक पु
ण्यवालाहै तो पुत्रशोकके संतापसे मत पश्चात्तापकरे ३६ १५

राजानं च पृथुं वैन्यं मृतं शुश्रुम सृंजय
यम भ्यषिंचन्संभूय महारण्ये महर्षयः

हे सृंजय वेनराजाका पुत्र पृथुराजाभयाहै उसकोभी हम
मरा सुनतेहैं जिस पृथुको दंडकारण्यविषे आदिराज अभि
षेक सबही महाऋषी करतेभये ३९

प्रथयिष्यति वै लोकान्पृथुरित्येव शब्दितः
क्षताद्यो वै त्रायतीति स तस्मात्क्षत्रियः स्मृतः

जो पृथुराजा लोकोंको निवासस्थान वर्णाश्रम धर्ममर्यादा
कर्के यथायोग्य नामसंज्ञाकर्के प्रसिद्धकरेगा इसहेतुसे
पृथुनाम कहतेहै और सर्वलोकोंको चोरव्याघ्रादि प्रहारके
क्षतसे त्राणसे रक्षाकरेगा ताते क्षत्रियवर्णकी जातिवाला क
हाहै १४०

पृथुं वैन्यं प्रजा दृष्ट्वा रक्ताः स्मेति यदब्रुवन्
ततो राजेति नामास्य अनुरागादजायत ४१

कै ग्रामके गवादि सकल पशु और अरण्यके हिरणादि सकल पशु महायशधारीको आपही आनप्राप्त होतीभये २४ महानदी चर्मराशेः क्लेदात्सुस्रुवे यतः

ततश्चर्मण्वती त्येवं विख्याता सा महानदी

जिस रंतिदेवने अनेक पशुयागकीनीही आईजो पशुच र्म्हें तिन्होंसो रुधिर महास्रवजो भया उससे महानदी प्रवृत्त होती भई सो नदी चर्मण्वती नामसे प्रसिद्ध होती भई २५ ॥

ब्राह्मणेभ्यो ददौ निष्कान् सदसि प्रतते नृपः

तुभ्यं निष्कं तुभ्यं निष्कं मिति क्रोशंति वै द्विजाः २६

राजा रंतिदेव एक एक यज्ञकी सभामो सुवर्ण निसक अनेकदान करताभया यह तुमको निसक शत यह तुमको निसक धुन इस प्रकार ब्राह्मण अनेक अन्योन्य वादकरते भये २६ सहस्रं तुभ्य मित्युक्त्वा ब्राह्मणान्संप्रपद्यते अन्वाहार्योपकरणं द्रव्योपकरणं चयत् २७

तोको सहस्र निसक ऐसे सुनकर ब्राह्मण संतुष्ट होतेभये मासहुतिनि तुमको संपूर्ण द्रव्यके उपकरण संयुक्त सहस्र निसक मिलेगा इसप्रकार ब्राह्मण रंतिदेवसे पाइकर प्रसन्न होतेभये २७ ॥

घटाः पात्र्याः कटाहानि स्थाल्यश्च पिठराणिच

नासी त्किंचिदसौवर्णं रंतिदेवस्य धीमतः २८

राजाके यज्ञमो सुवर्णके घट सुवर्णके भोजनपात्र सुवर्णके कटाह सुवर्णके पाकपात्र टोकणे सुवर्णके जलपानपात्र सुवर्णके पिटारी होतीभई राजा रंतिदेवके सुवर्ण कल्पना विना कोई सामग्री समाज नही होताभया २८

सांकृते रंतिदेवस्य यां रात्रि मवसन् गृहे

आलभ्यंत शतं गावः सहस्राणि च विंशतिः २९

हे राजन् सांकृति राजाका पुत्र जो रंतिदेव राजा उसकी यज्ञशालामो जो पथिक आइकर एकरात्रि बसेरा करतेभये सो पथिक बीसहजार एक शत गौको सुवर्णभूषण दक्षिणा संयुक्त प्राप्त होते भये २९ ॥

श्री॰ रा॰प॰ टी॰ १८५ 105

जिस वेनपुत्र पृथुराजाको सभही प्रजा अपनी रक्षाविषे साव धान देखकर्के कहतेभये तेने हमको रक्षापालनकर्के अप नी प्रीतिकर्के रागसे रंगदियाहै ऐसे अनुरागवचनसे रा॰ जा उसकानाम प्रसिद्धभयाहै ५१

अकृष्टपच्या पृथिवी पुटके पुटके मधु।
सर्वाद्रोणा दुघा गावो वैन्यस्यास्य प्रशासतः १५२

पृथिवी खेतीके कष्टविनाही परिपक अन्न समृद्धीवाली होतीभई हलोके एक एक पत्रके पुटकमो मधुहोताभ या सभही गोयन द्रोण परिमाण दुग्ध संपदा युक्तहो तीभई राजा पृथुके राज्य शासनामो १५२

अरोगाः सर्वसिद्धार्था मनुष्या अकुतो भयाः
यथाभिकाम मवसन् क्षेत्रेषुच गृहेषुच १५३

सभही प्रजा रोगरहित सर्व समृद्धी संयुक्त भईही मनुष्य सभही निर्भयहोतेभये जैसी किसीकी अभिलाषा ऐसे कामभोग संयुक्त क्षेत्रोविषे गृहोविषे निवासकरतेभये १५३

आपस्तस्तंभिरे चास्य समुद्र मभियास्यतः
सरितश्चानुदीर्यंत ध्वजभंगश्च नाभवत् ५४

जब राजापृथु समुद्रपारकी यात्राकरे तब समुद्रके जल अपने विषे स्तंभनकर्के राजाको मार्गदेतेभये राजाकी सेनाभंगनही होवे इसप्रकार हलआपही विखरजातेभये ५४

हैरण्यान् त्रिनल्वा न्मेधा न्पर्वतान्ये कविंशतिः
ब्राह्मणेभ्यो ददौराजा योश्वमेधे महामखे ५५

चारहस्त परिमाण किष्कु होताहै चार किष्कुशत न ल्वहोताहै ऐसे तीन तीन नल्वपरिमाण ऊचे सुवर्ण केपर्वत एकविंशति ब्राह्मणोको अश्वमेध महायज्ञमो राजा पृथुदेताभया ५५

सवैमसार संजय चतुर्भद्रतर स्त्वया
पुत्रात् पुण्यतरश्चैव मापुत्र मनुतप्यथाः ५६

हे संजय ऐसा राजापृथु चतुर्भद्रतरभयाहै सोभी मरा है तैसा तुंभी चतुर्भद्रतरहै चतुर्भद्र किसकोकहतेहै दानं प्रियवाक् सहितं जिसकादान प्रियवाणी सहितहो वे ज्ञानमगर्वं सर्वप्रकारका असंग ज्ञानहोवे क्षमान्वि

ते शौर्य और क्षमासंयुक्त सुवर्णभावहोवे त्यागसमेतं वि
त्तं दुर्लभमेतच्चतुर्भद्रं इस जिसको त्यागसमेतहोवे इसको
चतुर्भद्र कहतेहे धर्मज्ञान वैराग्य ऐश्वर्यभी होवे तो चतुर्भ
द्र होताहे ताते चतुर्भद्रतर पुत्रके प्राप्तिके पुण्यसेभी अ
धिकपुण्यतरहोताहे ताते हे संजय हे राजन् तं पुत्रशोक
के संतापसे मत पश्चात्तापकरे १५६

किं वा तूष्णीं ध्यायसे सृंजय त्वं न मे राजन्वाचमि
मां शृणोषि न चेन्मोघं विप्रलप्तं मयेदं पथ्यं
मुमूर्षोरिव सम्प्रयुक्तम् ५७ ॥

हे राजन् तूं कौं तूष्णी होकर ध्यानकरताहे याते मेरी
ऐसी वाणीको श्रवणनही करता जो तूं इसवाणीको हित
जाकर नही सुने तो मेरावचन वृथा बकवाद होताहे
जैसे मृतप्राय पुरुषको वैद्यका वचनवृथा बकवाद जैसा
निस्फलहोताहे ॥ ५७

संजयउवाच शृणोमि ते नारद वाचं सतां विचि
त्रार्थां स्रजमिव पुण्यगंधां राजर्षीणां पुण्यकृ
तां महात्मनां कीर्त्या युक्तानां शोकविनाशनार्थं

संजयउवाच हेभगवन् हेनारद मे तुह्मारी ऐसी वाणी
को श्रवणकरताहूं यह तेरी वाणी विचित्र अर्थ ज्ञानसं
युक्तहे इसको मेने हृदयमो दिव्यगंधवाली पुष्पमालास
मान धारण कियाहे यह तेरी वाणी कैसीहे पुण्यकर
णेहारे महात्मा कीर्तिसंयुक्त राजऋषीयोके दानधर्मके
वृत्तांत संयुक्तहे और सकल शोकको विनाशकरणेहारीहे

न ते मोघं विप्रलप्तं महर्षे दृष्ट्वैवाहं नारद त्वां
विशोकः शुश्रूषे ते वचनं ब्रह्मवादिन् न ते तृप्या
म्यमृतस्येव पानात् ॥ ५८ ॥

नही
हे नारद तेरावचन वृथा बकवाद जैसा निसफलहोता
मे तुह्मारे दर्शनकर्के विशोकभयाहूं हे ब्रह्मवादीजी
तुह्मारी वचनकी श्रवणेछा मोको अधिक वधीहे मे अ
मृतपान जैसा वचन सुनके तृप्तनहीहोता ५८

अमोघदर्शिन् मम चेत्प्रसादं संतापदग्ध

५७

शा॰ प
टी॰
१०६

106

प्रजुर्यास्त्वतस्य संजीवनमथमेस्या त्वत्प्रसादात्वद्गतसंगमस्य ॥ ५० ॥

आपका दर्शन नही अमोघहे सकल्हे जो आपने मोपर प्रसन्नताकीनही तोमे पुत्रसंतापकर्के ययद्दार दशामो संतप्तभयाहूं मृतभये मेरापुत्रका संजीवनहोवे तो मोको संसारमों पुत्रका समागम होजावे ५०

नारदउवाच यस्तेपुत्रो गमितोयं विजातः स्वर्णष्ठीवी यमदात्पर्वतस्ते पुनस्तते पुत्रमहं ददामि हिरण्यनाभं वर्ष सहस्रिणंच ॥ ५१ इतिश्रीमहाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मे षोडशराजोपाख्यानमेकेत्रिंशोध्यायः ॥ ३१ ॥

नारदउवाच हे राजन् जो तेरामृतपुत्रभयाहे सो विशेषगुणवान्वहा स्वर्णष्ठीवी भयाहे जिसको पर्वत मुनिनोको देताभया सोतो गया अवमे तोको पुत्रदेताहूं हिरण्यनाभ तेरापुत्रहोवेगा और वर्षसहस्र जीवने हारा सो तेरापुत्रहोवेगा ५१ इतिश्री महाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मे षोडशराजोपाख्यानेमेकोनत्रिंशोध्यायः २९

युधिष्ठिरउवाच सकथंकांचनष्ठीवी संजयस्यसुतोभवत् पर्वतेन किमर्थंवा दत्तस्तेन ममारच १

युधिष्ठिरउवाच हे कृष्णजी राजा संजयको सो कांचनष्ठीवी पुत्रकैसे भयाहे पर्वतमुनिने किसप्रकारसे राजाको वहोउसोपुत्र किसहेतूसे मरजाताभया १

यदावर्ष सहस्रायुस्तदा भवति मानवः कथमप्राप्तकौमारः संजयस्य सुतोमृतः २

जिसकालविषे वर्षसहस्रआयुषावाला मनुष्यहोताभया ऐसे कालमो युवा कौमार अवस्थाकी प्राप्तीविना संजयका पुत्र कौन हेतूसे मराहे २

उताहो नाम मात्रंवै सुवर्ण ष्ठीविनो भवत् सकथं कांचनष्ठीवी त्वमेतदिच्छामि वेदितुं ३

उसको नाममात्रसेही कांचनष्ठीवी कहाहे अथवा उसविषे कछुनामका गुणभी रहा इसवार्ताको मे जानाचाहताहूं

ग्रापमोकों संशय निवृत्तिकरो ३

श्रीकृष्णउवाच श्रूयते वर्णयिष्यामि यथावृत्तं जने

श्वर नारदः पर्वतश्चैव ह्यावृषी लोकसत्तमौ ४

श्रीकृष्णउवाच हे नरेश्वर इहा अवमे तोको जैसे यह वृत्तांत भया उसको वर्णन करताऊं नारद और पर्वत यह दो ऋषी लोकविषे अतिश्रेष्ठभयाहे ४

मातुलो भागिनीयश्च देवलोकाद्विहागतौ

विहर्तुकामौ संप्रीत्या मानुष्येषु पुरा विभो: ५

तिन्होंविषे एकमुनि मामाहे दुसरा भानजाहे सो दोनो ऋषी देवलोकसे इहांभूलोकमो विहार करणेकी वांछाकरके आवतेभये ॥ ५ ॥

हविः पवित्र भोज्येन देवभोज्येन चैव हि

नारदो मातुलश्चैव भागिनेयश्च पर्वतः ६

हविष्यरूपी पवित्र भोजन कर्के और देवलोकके अमृतभोजन कर्के प्राणयात्रा करतेभये नारदमुनी तहा मामारहा पर्वतमुनि भानजा भयाहे ६ ॥

तावुभौ तपसोपेतौ ववनीतल चारिणौ

भुंजानौ मानुषान्भोगान्यथावत्पर्यधावतां ७

सो दोनो तपसा संयुक्त पृथिवीमो विचरते भये मनुष्यलोकके उत्तम भोगकरतेही देशाटन करतेभई ७

प्रीतिमंतौ मुदायुक्तौ समयं चैव चक्रतुः ॥

योभवेत् हृदिसंकल्पः शुभो वा यदिवाशुभः ८

अन्योन्य विषे दोनौ प्रीतिवाले और अन्योन्य आनंद संयुक्त होकर परस्पर विषे एक मर्यादा कल्पन करते हमारे विषे जो मनका संकल्प उदेहोवे सो शुभहोवे अथवा अशुभहोवे ८

तौ तथेति प्रतिज्ञाय महर्षी लोकसत्तमौ ॥

अन्योन्यस्य समाख्येयो मृषा शापोन्यथाभवेत् ९

सो परस्पर कहदेना जो नही कहे उसको परस्परही शापहो वेगा इस प्रकार दोनो अन्योन्य प्रतिज्ञाकर्के दोनोंहि महा ऋषी लोकविषे पूजा पाइकर विचरते भये ९

सृंजयं चैव्यमभ्येतौ राजानमिदमूचतुः ॥

आवां भवति वत्स्यावः कंचित्कालं हितायते १०

श्री॰
रा॰प॰
टी॰
१०७

107

एककालविषे एजापाइकर संजय राजाको प्राप्तहोकर यह वचन कहते भये हे राजन् हमकोई कालतेरी हिन वाले तेरे गृहसे वासकरा चाहतेहैं १०

यथावत्पृथिवीपाल आवयोः प्रगृहीभव तथेव कृत्वा राजाता सत्कृत्यो पचचारह

तुम यथाविधि हमारी सेवाकरणेमो सावधान रहने योग्य हे राजा उनकी आज्ञाको तथास्तु कहकर्के उनकी सुश्रुषा सेवाकरताभया ११

ततः कदाचित्सोराजा महात्मानौ तपोधनौ अब्रवीत्परमप्रीतः सुतेयं वरवर्णिनि १२

तबसे किसी कालमो सो राजा संजय दोनो महात्मा मुनी तपोधन जोहे नारद पर्वत तिन्हको प्रसन्न जानकर वचन कहताभया हे प्रभुजी मेरे गृहमो यह एककन्याहे सो अब वर प्राप्ति योग्यभईहे १२ ॥

एकैव मम कन्येषा युवां परिचरिष्यति दर्शनीयानवद्यांगी शीलवृत्त समाहिता १३

एकही यहकन्या संतानभईहे आपआज्ञाकरो तो आपकी सेवायह करेगी यह मोको अतिप्रियहे दर्शनीयहे सर्वागसुंदरहे शीलवृत संयुक्तहे १३

सुकुमारी कुमारी च पद्मकिंजल्कसुप्रभा परमं सौम्य मित्युक्ते ताभ्यां राजाशशासतां १४

कुमार अवस्थावालीहे कोमल अंगही कमलपुष्पकी तरी समान इसका वर्णहे और सुमारी इसका नामही ऐसे वचनको सुनकर राजाको वचन कहतेभई राजन् जोते नेकहा सो वचन शुभहे हमने मानाहे ऐसा मुनिवरोने कहा तो राजा कन्याको शिक्षावचन कहताभया १४

कन्ये विप्रावुपचर देववत्पितृवच्चह मातः कन्या तथे सुत्का पितरं धर्मचारिणी १५

हे कन्ये हे सुकुमारी यह दोनो ब्रह्मऋषियोको तूं पिताके समान जानकर सेवा सावधानतासे कर सो कन्याभी पिताको तथास्तुकहकर धर्मकार्य करणे हारीहे १५

यथानिदेशं राजसौ सत्कृत्योपचचारह

तस्मात्ते नोपचारेण घोरेण प्रतिमे नच १६

जैसे राजाकी आज्ञाही तैसेही ऋषीनको सत्कारकर्के शु श्रूषाको करती भई उसकन्याके अनुकूलतावाले सेवा के आचरणकर्के और अपूर्व स्वरूपकर्के १६

नारदो हृच्छय स्तस्या सहसैवाभ्य पद्यत

ववृधे हि ततस्तस्य हृदिकामो महात्मनः १७

नारदके हृदयमों तत्कालही कामकावेग उदयकर्के दि न दिन प्रति बढ़ताभया उसको महात्मा सो मनविषेही धारणकरताभया १७ ॥

यथा शुक्लस्य पक्षस्य प्रवृत्तः चंद्रमाः शनैः

नचतं भागिनेयाय पर्वताय महात्मने १८

जैसे चंद्रमा शुक्लपक्षमों बढताहै नारदमुनि अपने संक ल्पको भानजा जो पर्वत महामुनि उसके प्रति १८

शशंस हृच्छयं तीव्रं व्रीडमानः सधर्मवित्

तपसा चेंगितेनैव पर्वतोथ बुबोधतम् १६

नहीं कहताभया धर्मवेता होकर कहनेमो लज्जाकरता भया पर्वत मुनि तपोबलसे नारदके संकल्पको जानले ताभया १६ ॥

कामार्तं नारदं क्रुद्धः शशापैनं ततोभृशम्

कृत्वासमय मव्यग्रो भवान्वै सहितो मया २०

कामातुर नारदको जानकर अतिक्रोधसे शापदेताभया हे नारद तेने मेरेसाथ प्रतिज्ञाकरके क्यों संकल्पको नहीकहा २०

यो भवेत् हृदिसंकल्पः शुभो वा यदिवा शुभः

अन्योन्यस्य सआख्येय इति तद्वै मृषाकृतम् २१

अन्योन्यस्य प्रथम ऐसा कहाहै जो हमारे दोनोको हृदयमो संकल्पहोवे शुभया अशुभसो अन्योन्य दोनोनेही कहदेना सो तेने मिथ्या कीनीहै २१ भवता वचनं ब्रह्मं स्तस्मादेष शपाम्यहं

नचकामं प्रवर्तंतं भवानाचष्ट मेपुरा २२ ॥

अपना वचन तेनेही मिथ्याकियाहै ताते मे तोको शापदेता। ऊं तूं मनकर्के कामसंकल्पको प्रवृत्तभया मोको प्रथम तेनेनहीकहा २२

सुकुमार्या कुमार्यांते तस्मादेष शपाम्यहं

108

नचकामे प्रवर्त्तंते म [illegible] वाना चक्षमेषुरा २३

सुकुमारी नाम कुमारीविषे अपने संकल्पको तेने गोपन कियाहै ताते मै तोको शापदेताहूं तूं ब्रह्मचारी मेरामामा गुरुजैसाहै और तपस्वीहै और ब्राह्मणहै २३

अकार्षी न्समयश्रेश मावाभ्याय: कृतोमिथ:
शापेनतस्मा न्संक्रुद्धो भवंतं तनिबोधमे २४

ऐसा होकर अपने सत्यवचन धर्मको त्यागकर्के जो परस्पर प्रतिज्ञासे संकेत किया रहा सोतेने प्रतिज्ञाभंग किया है ताते मै संक्रुद्ध होकर तोको जो शापकरताहूं उसको तूं श्रवणकर २४ तपस्वी जनोका संकल्प सत्य वचन कर्के सत्यहोताहै २४

सुकुमारी च ते भार्या भविष्यति नसंशय:
वानरं चैवते रूपं विवाहा त्प्रभृति प्रभो २५

अब तेरा मनोरथ सुकुमारीविषे भयाहै सो सत्यनही होवेगा यह कुमारी तेरी भार्यानही होवेगी इसके विवाहतक तेरारूप वानरमुखवाला होवेगा २५

संद्रक्ष्यंति जनाश्चान्ये स्वरूपेण विनाशनम्
सतज्ञाकं तु विज्ञाय नारद: पर्वतं तथा २६

और मनुष्यतोको वानरमुखवाले रूप विनाही यथारूपही देखेगे सोनारदभी ऐसे पर्वतके वचनको सुनकर पर्वतको क्रोधसे देखताभया २६ ॥

अशापत् मपिक्रोधा द्भागिनेयं स मातुल:
तपसा ब्रह्मचर्येण सत्येनच दमेनच २७

अपने भानजाको पर्वतको मामानारद शापदेताभया हे पर्वत तूं तपकर्के युक्तहै ब्रह्मचर्य संयुक्तभीहै सत्ययुक्तभीहै इंद्रिय दमन संयुक्तहै तोभी स्वर्गगतीके योग्य नहीहै २७

युक्तस्त्वं धर्मविश्चापि नवै स्वर्ग मवाप्स्यसि
नोत्व शापा भृशंक्रुद्धो परस्पर ममर्षिणौ २८

धर्मविश्वासकर्के युक्तहै तोभी स्वर्गलोकको नहीजावेगा हे राजन् सो दोनो अन्योन्य परमक्रुद्ध होकर अन्योन्यके अपराधको नही सहारसके ॥ २८

प्रतिजग्मतु रन्योन्यं क्रुद्धा विव गजोत्तमौ
पर्वतः पृथिवीं कृत्स्नां विचचार महामतिः २९

परस्पर शापदेकर क्रोधयुक्त गजोकी न्याई परस्पर प्रीतिको त्यागदेतेभये उसके अनंतर पर्वतमुनि संपूर्ण पृथिवी। को विचारताभया २९ ॥

पूज्यमानो यथान्यायं तेजसा स्वेन भारत
अथतामलभत्कन्यां नारदः सृंजयात्मजाम् ३०

अपने तेजकर्के सर्वत्र प्रजाको प्राप्तहोताभया इसीकालवि षे नारद पिताके वाक्यदानसे सृंजयराजाकी उसकन्याको। प्राप्तहोताभया ३० ॥

धर्मेण विप्रप्रवरः सुकुमारी मनिंदिताम्
सात्वकन्या यथाशापं नारदंतं ददर्शह ३१

राजाके धर्मकर्के तो विप्रवर निंदादोषरहित कंन्याको नार दप्राप्तभया तैसेही वोभ सोकन्याभी नारदको जैसा पर्वतमुनि का शापभया तैसेही वानर स्वरूप मुखवालेको देषतीभई

पाणिग्रहण मंत्राणां नियोगा देव नारदम्
सुकुमारीच देवर्षि वानर प्रतिमाननम् ३२

पाणिग्रहण मंत्रोकी विधिसे पूर्वनारदको देवऋषीको वानर समान मुखको देषती भई देषकर उदास होतीभई ३२

नैवाव मन्यत तदा प्रीति मत्येव चाभवत्
उपातस्थे च भर्तारं नचान्यं मनसा प्यगात् ३३

भर्त्ताकर्के नही भानती भई केवल शुश्रूषामे प्रीतिवाली होतीभई औेर भर्त्ताको मनकर्केभी नही करती भई ३३

देवं मुनिं वा यक्षंवा पतित्वे पतिवत्सला
ततःकदाचि द्भगवा न्पर्वतो नुचचारह ३४

हे तो पति प्रीतिवाली तोभी किसीदेवको किसी मुनिको किसी यक्षको पतिभावमे नही मानतीभई बहोड किसी कालमे पर्वतभगवान् मुनि पृथिवीमे देशाटन करताभया ३४

वनं विरहितं किंचि त्तत्रापश्य त्सनारदम्
ततोभिवाद्य प्रोवाच नारदं पर्वत स्तदा ३५

तदनंतर वनको विचरणकर्के वनमे नारदको देषताभया तबना रदको पर्वत प्रणामकर्के कहताभया ३५

भवान् प्रसादं कुरुतां स्वर्गदेशाय मे प्रभो
तमुवाच ततो दृष्ट्वा पर्वतं नारदस्तथा ३६
हे भगवन् आपमोपर प्रसादकरो स्वर्गजानेको आज्ञाकरो
तब नारद पर्वतको कहताभया पर्वतको नारदने देखा ३६
कृताञ्जलि मुपासीनं दीनं दीनतरः स्वयम्
त्वयाहं प्रथमं शप्तो वानरस्त्वं भविष्यसि ३७
कृताञ्जलि अतिदीनतासे अतिदीनपर्वतको आपभी दीनत
र होकर कहता तेने प्रथम मोको शापदिया हे नारद तू
वानर होवेगा ३७
इत्युक्तेन मयापश्चाच्छप्तस्त्वमपि मत्सरात्
अद्य प्रभृति वै वासं स्वर्गे नावाप्स्यसीति च ३८
ऐसा जबतेनेकहा तब पश्चात् मेनेभी तोको शापदियाहे
जो तेरी कोभी आजसे स्वर्गवास नही होवेगा ३८
तवनैतद्धि सदृशं पुत्रस्थाने हि मे भवान्
निवर्तयेतां तौ शापौ वन्योन्येन तदामुने ३९
तोको मेरेप्रति शापदेना उचितनहीरहा कारेते तू मोको
पुत्रस्थानमो बनाहे ऐसा कह कह दोनो मुनी परस्पर प्रस
न्न होकर अन्योन्यशापसे निवृत्त होनेभये ३९
श्री समृद्धं तदा दृष्ट्वा नारदं देवरूपिणं
सुकुमारी प्रदुद्राव परपत्यभिशंकया ४०
हे राजन् संजयकी पुत्री सुकुमारी नारदको स्वरूप संप
दाकर्के संमृद्ध देवरूप देखकर्के परपतीका शंकाकर्के व्य
भिचारभयसे द्रवेगसो जातीभई ४०
तां पर्वतस्ततो दृष्ट्वा प्रद्रवन्तीं मनिन्दिताम्
अब्रवीत् तव भर्तैष नात्र कार्या विचारणा ४१
पर्वतमुनि नारदसे हतजाती सुकुमारीको देखकर निर्दोष
जानकर वचन कहताभया यह तेरा भर्ताहे इसमे तेने
परपति विचारणा नहीकरणी ४१
ऋषिः परम धर्मात्मा नारदो भगवान्प्रभुः
तवैवाभेद्यहृदयो माते भूदत्र संशयः ४२
यह परम धर्मात्मा नारद भगवान् प्रभीहे इसविषे
तेराहृदय प्रीतिसंयुक्त अभेदहोवे भेदरहित होवे तो

को और संशय मतहोवे ४२

मानुनीता बहुविधं पर्वतेन महात्मना
शापदोषं च तं भर्तुः श्रुत्वा प्रकृति मागता ४३

हे राजन् सो सुकुमारी इस प्रकार बहुत विधिसे पर्वत मुनीने वचन कहकर मनाई तब भर्त्ताके शापदोषको जानकर बहोड प्रीतिस्वभावको प्राप्त होतीभई ४३

पर्वतोऽथ ययौ स्वर्गं नारदो भगमन् गृहान् ४४

उसके अनंतर पर्वत मुनी स्वर्गको जाताभया और नारद मुनि राजाके गृहमें जाताभया ४४

श्रीकृष्णउवाच प्रत्यक्षकर्ता सर्वस्य नारदो भगवान्
ऋषिः एषवक्ष्यति तेपृष्टो यथावृत्तं नरोत्तम ४५

इति श्री महाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मे त्रिंशोध्या
यः ३० ॥ वैशंपायनउवाच ॥

श्रीकृष्णउवाच हे राजन् यह नारद भगवान् ऋषि सब वृत्तांतके भूत भविष्यत वर्तमानका प्रत्यक्षदर्शीहै जो तूं इसको और पूछाकरे तो तोको जैसे पूर्ववृत्तांतभया उसको तेरे प्रतिकहेगा ४५ ॥ इति श्री महाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मे नारदपर्वतशापचरितंनाम त्रिंशोध्यायः ३०

वैशंपायनउवाच ततोराजा पांडुसुतो नारदं प्रत्यभाषत भगवन् श्रोतुमिच्छामि सुवर्णष्ठीविसंभवम्

वैशंपायनउवाच हे जनमेजय कृष्णके वचनके अनंतर राजायुधिष्ठिर पांडुव नारदको वचन कहताभया हे भगवन् राजे संजयका पुत्र सुवर्णष्ठीवी जैसे भयाहै उसके वृत्तांतकोमें श्रवण किया चाहताहूं १ ॥

एव मुक्तस्तु समुनि धर्मराजेन नारदः ॥
आचचक्षे यथावृत्तं सुवर्णष्ठीवनं प्रति २

हे जनमेजय धर्मराजने जब ऐसा नारदको कहा तब नारद सुवर्णष्ठीवीका जैसे वृत्तांत भया उसको राजा प्रतिकहताभया ॥ २

नारदउवाच एवमेत न्महाबाहो यथायं केशवो ब्रवीत् कार्यस्यास्यतु यच्छेषं तत्ते वक्ष्यामि पृच्छतः ३

श्री॰
ए॰प॰
टी॰
११०

110

नारदउवाच हे राजन् जैसे मोको केशवजी त्रिकालज्ञ जानके सत्यदर्शी कहताहे इसी प्रकार कहताऊं जौन सा शोक निवृत्तिरूप यहकार्यहे सवर्णष्ठीवीका हमां तहे उसको तेरी इच्छासे कहतेहे ३

अहं च पर्वत श्चैव स्वस्त्रीयोमे महामतिः
वस्तुकामा वभिगतौ संजयं जयतां वरम् ४

हे राजन् अहं क्या मे नारदमुनि और मेरे भानजा पर्वत महामुनि राजा संजयको धर्मकर्मकी जयकीर्ति वाले जानकर प्राप्तहोतेभये ४

तत्रावां पूजितौ तेन विधिदृष्टेन कर्मणा
सर्वकामैः सुविहितौ निवसावोस्यवेश्मनि ५

राजासंजयने अपने गृहमो प्राप्तभये जो दोनो हमहे तिन्हको शास्त्रविधिसे पूजितकिये संपूर्णकामनाकी भोगसमृद्धीकरकें संयुक्त होकर राजाके गृहमो दोनोही निवासकरतेभये ॥ ५

व्यतिक्रांतासु वर्षासु समये गमनस्यच
पर्वतो मामुवाचेदं कालेवचन मर्थवत् ६

हे ब्रह्मन् हमारे वासका काल वर्षाकाल वीतगया शरतकाल यात्राकरणेको प्राप्तभया तवहम तहांसे गमनकी वांछा करतेभये उसकालमो पर्वतमोको परमार्थवाले वचनको कहताभया ६

आवामस्य नरेंद्रस्य गृहे परम पूजितौ
उषितौ समये ब्रह्मं स्तद्विचिंतय सांप्रतं ७

हे नारदजी हमदोनो इसराजाके गृहविषे परमश्रेष्ठपूजा पाइकर वर्षाकालमो सुखकरकें वसेहे इससेवाका फल कछु इस राजाको दानदेके उसको चिंतनकरो ७

ततोह मब्रुवं राजन् पर्वतं शुभदर्शनम्
सर्वमे तत्त्वयि विभो भागिनेयो पपद्यते ८

हे राजन् मे शुभ चिंतक जो अपना भानजा पर्वत उसको कहताभया हे भागिनेय जो तूं कहताहे सो सभही तेरे विषे योग्य वनाहे ८

वरेण छंदयतां राजा लभतां यद्यदिच्छति ॥

आवयोस्तपसा सिद्धिं प्राप्नोत यदि मन्यसे ९

इस राजाको वर देना कहो जो राजाकी वांछा है उस वरको
राजा हमारी तपसिद्धि करके प्राप्त होवे जो तूं इस वार्ताको
मानता है ९

तत आहूय राजानं संजयं जयतां वरम्
पर्वतो ऽनुमतं वाक्यमुवाच कुरुपुंगव १०

तब जयशीलोंविषे श्रेष्ठ जो राजा संजय उसको वरदानवा
ले पर्वतके अनुमतीकरके बुलाया पर्वत मोको कहताभ
या जो वाक्य तुमने चिंतन किया है उसको अब करो आप
मुनि पुंगव हो १० ॥

प्रीतौ स्वो नृपसत्कारैर्भवदार्जवसंभृतैः
आवाभ्यामभ्यनुज्ञातो वरं नृवर चिंतय ॥

हे राजन् तुम्हारे पूजा नित्य पूजा सत्कारोंकरके हम प्रसन्न
भई है तो हमारी आज्ञाकरके अपनी इच्छासे वरकी वांछा
को चिंतन करो ११ ॥

देवानामविहिंसायां न भवेन्मानुषत्वयः
तद्गृहाण महाराज पूजार्हो नौ मतो भवान् १२

जिसकरके देवकार्यविषे हानि न होवे और मनुष्यलोकविषे
क्षय नहीं होवे ऐसा तेने वर याचनीय है उस वरको तूं हमसे
ग्रहण होकर तोको हमनेभी पूजनीय माना है १२

संजयउवाच प्रीतौ भवंतौ यदि मे कृतमेतावता मम
एष एव परो लाभो निर्वृत्तो मे महाफलः १३

संजयउवाच हे महाप्रभो जो आप मो पर प्रसन्न भये हो
इसकरके मैं कृतार्थ भया हूं ऐसी महाफलवाला वरलाभ भया है १३

तमेवं वादिनं भूयः पर्वतः प्रत्यभाषत हणी
वृणु राजन् संकल्पं यस्ते हृदि चिरं स्थितम् १४

ऐसे राजाने कहा तब पर्वतमुनी राजाको बहोड कहता भया
हे राजन् अपने मनका संकल्प जो है चिरकालसे स्थित भया
उसको हमसे ग्रहण कर १४ ॥

संजयउवाच अभीप्सामि सुतं वीरं वीर्यवंतं दृढ
व्रतं आयुष्मंतं महाभागं देवराजसमद्युतिं १५

श्री॰
रा॰ध॰
टी॰
१११

संजयउवाच हे भगवन् मे अपने गृहमों वीर ओर वीर्यवान् ऐसे पुत्रको उत्पतभयेको चाहताहूं जो पुत्र आयुषावाला हो वे महाभागहोवे इंद्रके समान स्वरूपशोभावालाहोवे १५

पर्वतः भविष्यतीव तेकामो नत्वा सुषा भविष्यति देवराजाभिभूत्यर्थं संकल्पो ह्येषते हृदि १६

पर्वतउवाच हे राजन् तेरी पुत्रकामना सफल होवेगी पुत्र होवेगा परंत तेने इंद्रका निरादर मनको विचाराहे आयु(षा) उसकी स्वल्पहोवेगी १६ ॥

ख्यातः स्वर्णष्ठीवीति पुत्रस्तव भविष्यति
रक्ष्यश्च देवराजात्स देवराज समद्युतिः १७

स्वर्णष्ठीवी उसका नाम होवेगा उसको तमने देवराजसे रक्षाकरणी देवराज समान तेजवाला होवेगा स्वर्ण उस के देह मलसे उत्पन्नहोवेगा १७

तत् श्रुत्वा संजयो वाक्यं पर्वतस्य महात्मनः
प्रसादयामासतदा नैतदेवं भवेदिति १८

हे राजन् ऐसा संजय सुनकर महात्मा पर्वतमुनिको रा जा बहोत प्रसाद करावताभया हे प्रभुजी मेरा पुत्र अल्पायुन होवे १८ ॥

आयुष्मान्मे भवेत्पुत्रो भवत स्तपसा मुने
नचतं पर्वतः किंचि दुवाचेंद्र उपेक्षया १९

उसको आप अपने तपोबलकर्के दीर्घायुकरो ऐसा राजाके वचनको पर्वत उत्तरनही देताभया इंद्रके कार्यकी अपेक्षा करताभया १९

तमहं नृपतिं दीनं मब्रुवं पुनरेवच ॥
स्मर्तव्योस्मि महाराज दर्शयिष्यामितेसुतं २०

हे राजन् पर्वतको अनुत्तर जानकर राजा अतिदीनभया उ सकोमे बहोत कहताभया जब तोको चिंताबनेगी तब हमको तेने बहोत स्मरण करणा तो मेरीचिंता निवृत्तहोवेगी

अहं ते दयितं पुत्रं प्रेतराज वशंगतम्
पुनर्दास्यामि तद्रूपं माशुचः पृथिवीपते २१

मे तेरे पुत्रको यमराजके गयेकोभी तोको प्राप्तकरदेवोगा अब पर्वतका वचनही तुम मानो मत शोचनाकरो २१

एवमुक्त्वा नृपतिं प्रयातो स्मा यथेप्सितं
सृंजयस्य यथाकामं प्रविवेश स्वमंदिरम् २२
हे युधिष्ठिर ऐसे हमराजा सृंजयको कहकर अपनी इच्छा
कर तहांसे जातेभये सृंजयराजा अपने गृहको जाताभया २२
सृंजयस्याथ राजर्षेः कस्मिंश्चित् कालपर्यये
जज्ञे पुत्रो महावीर्यस्तेजसा प्रज्वलन्निव २३
इसकालसे अनंतर केता काल बीतनेमें सृंजयराजाके
पुत्रजन्म होताभया केसा पुत्रभया महावीर्यवान है ते
जकरके अग्निजैसा प्रकाशमानाहे २३
ववृधे स यथाकाले सरसीव महोत्पलम्
बभूव कांचनष्ठीवी यथार्थं नाम तस्य तत् २४
सो अपनी कालमर्यादाजैसा वढताभया जैसे सरोवरविषे
महाकमल वढताहे सो अपने शरीरके मलसे कांचनह
ह्वि करताभया ताते कांचनष्ठीवी नाम उसका यथार्थ हो
ताभया २४ ॥
तदद्भुततमं लोके पप्रथे कुरुसत्तम
बुबुधे तच्च देवेंद्रो वरदानं महर्षितः २५
उसका गुणचमत्कार लोकप्रति अद्भुत लोकविषे प्रसि
द्धहोताभया इंद्रभी पर्वत मुनिकी वरदानको जानलेताभया २५
ततः स्वाभिभवाद्भीतो बृहस्पतिमते स्थितः
कुमारस्यांतरप्रेक्षी बभूव बलवृत्रहा २६
तबसे इंद्र उसबालकसे अपने पराजय भयसें भीतभ
या इंद्र जोहे सो बृहस्पतिके मतमें स्थितभयाहे अप
नी रक्षावासते कुमारकी मृत्युवासते छिद्र देखताभया २६
चोदयामास तद्वज्रं दिव्यास्त्रं मूर्तिमत्स्थितम्
व्याघ्रोभूत्वा जहीमं त्वं राजपुत्रमितिप्रभो २७
अपना जो प्रसिद्ध अस्त्रहे वज्र उसको स्मरणकरताभया
वज्र इंद्रके स्वरूपधारी पुरुष होकर आइ इंद्रके साम
ने स्थितभया तब इंद्र वज्रको आज्ञादेताभया हे वज्र तूं
व्याघ्रहोकरके राजाके पुत्रको मारतूं सभको मारणेको स
मुहे समर्थहे २७

श्री
वा.प.
टी
११२

प्रहष्टः किलकार्येण मामेषोभि भविष्यति
संजयस्य सुतोवज्र यथैनं पर्वतो ब्रवीत् २८
नहीं तो राजाका पुत्र बलककें वडातो अपने विजयका
र्यवासते मोको जीतेगा संजयका पुत्र इंद्रजीता होवे
गा ऐसा पर्वत मुनिने कहाहै २८

एव मुक्तस्तु शक्रेण वज्रः पर पुरंजयः
कुमार मंतरप्रेक्षी नित्य मेवान्व पद्यत २९
ऐसा इंद्रने कहा तब वज्र परशत्रोका जेताहै सो कुमा
रकी मृत्युवासते छिद्र न्वेषी नित्यप्रति होताभया २९

संजयोपि सुतंप्राप्य देवराज समद्युतिम्
हृष्टः सांतः पुरो राजा वननित्यो बभूवह ३०
हे राजन् संजयराजाभी इंद्रसमान तेजस्वी पुत्रको प्रा
प्तहोइकर्कें अंतः पुरकी राज महिषी संयुक्त परमहर्ष
को प्राप्तहोताभया कुमारकी चिरजीवतावासते तपस्वी
जनोकी सेवा करणेको नित्यही वनको जाताभया ३०

ततो भागीरथी तीरे कदाचिन्निर्जने वने
धात्री द्वितीयो बालः स क्रीडार्थं पर्यधावत ३१
तब एककालविषे गंगाभागीरथीकी तीरमो बालक ए
काकी गयाहै द्वितीय उसके साथ धाईहै ऐसा कुमार
क्रीडावासते तहां डोलताभया ३१

पंचवर्षकदेशीयो बालो नागेंद्र विक्रमः
सहसो त्पतितं व्याघ्र माससाद महाबलं ३२
हे राजन् सो बालक पंचवर्षकी अवस्थावालाहै तोभी
गजराजजैसा पराक्रमी दृष्टहोताहै तहां व्याघ्रतत्काल
ही अकस्मात् आन बालक ऊपर पडाहै उसको महाब
ल देखकर बालक उसको मारणेको खडाहोताभया ३२

सबालस्तेन निष्पिष्टो वेपमानो नृपात्मजः।
व्यसुः पपात मेदिन्यां ततो धात्री विचुक्रुशे ३३
सो बालक उसव्याघ्रने तत्कालही मर्दन किया तब राजा
का पुत्रसो बालक तडफकर्कें प्राणत्यागकर पृथिवीमो
पडगयाहै तब उसको देखकर उसकी धात्री जोहै धाई
उच्च स्वरकर्कें कलावती भई ३३

हत्वात राजपुत्रंस तत्रैवांतर धीयत ॥
शार्दूलो देवराजस्य मायया स्वर्हितस्तदा ३४
हे राजन् जौनसा इंद्रकी देवमायाकर्के वज्रशार्दूलबनार
हा सोभी राजकुमारको मारकर्के अंतर्धान होताभया ३४
धात्रयास्तु निनदं श्रुत्वा तदंत्याः परमार्तवत्
अभ्यधावत तंदेशं स्वय मेव महीपतिः ३५
धात्री जब परम आर्तव शब्दकर्के कलावती रानी उसध्या
नको राजा संजय तत्कालही धाइकर आनप्राप्तहोताभया ३५
स ददर्श शयानंतं गतास्वं पीत शोणितम्
कुमारं विगतानंदं निशाकर मिवच्युतम् ३६
सो राजा मृतभये बालकको पृथिवीमो स्मभये जैसे पडे
को देषताभया रुधिर उसका आपने पानकियाहे कुमारके
सादेषा आनंद कला रहितहे जैसे चंद्रमा आकाशसे पड
जावे तैसेको राजा देषकर ३६
सत मुत्संगमारोप्य परिपीडित मानसः
पुत्रं रुधिर संसिक्तं पर्यदेव यदातुरः ३७
राजा मृतपुत्रको अपने उत्संगमो स्थापनकर्के अतिपीडा
मनको करताभया रुधिर सिंचनायुक्त कुमारको लेकर आ
तुर होकर्के विलाप करताभया ३७
ततस्ता मातरस्तस्य रुदंत्यः शोक कर्षिताः
अभ्यधावंत तं देशं यत्रराजा स संजयः ३८
तत्कालही उस कुमारकी जेती मातासाथ इस्त्रीयाहे सो स
भही बालककी मृत्युको सुनकर रुदनकरतीहे शोक
व्याकुल होकर उसदेशको आनप्राप्तभईहे जहांराजावि
लापकरनास्थितभयाहे ३८॥
ततः सराजा सस्मार मामेव गतमानसः
तदाहं चिंतनं ज्ञात्वा गतवां स्तस्यदर्शनं ३९
हे राजन् न
नारदजी राजायुधिष्ठिरकों कथा सुनावतेहे
वराजा संजय मेरे वचनको यादकर्के मोको स्मरणकर
ताभया तबमें राजाके चिंतनको जानकर राजाके दर्शन
गोचर होताभया ३९

मयैतानिच वाक्यानि श्रावितः शोकलालसः
यानिते यदुवीरेण कथितानि महीपते ५०
तबमेने राजा संजयको यह षोडश राजा संबंधी बचनक हेहे जोनसे लोकमर्यादावास्ते यदुवीर वासुदेवजीने तेरे प्रति अबकहेहे ५०

संजीवित स्थापि पुन वासवानुमते तदा
भवितव्यं यथा तच्च नतच्छक्यं मतोन्यथा ५१
राजाका पुत्रभी इंद्रके अनुमतीमों स्थितहोकर्के वहोउ संजीवित मेने करदियाहे ताते हेराजन् जो भवितव्यजैसा बनाहे सो अन्यथा करणा अशक्यहे ५१

ततऊर्ध्वं कुमारस्तु स्वर्णष्ठीवी महायशाः।
चित्तं प्रसादयामास पितुर्मातुश्च वीर्यवान् ५२
जबसो बालक संजीवन किया तबसे स्वर्णष्ठीवी राजपुत्र अपनी गुण संपदाकर्के पिताके चित्तकों माताके चित्तकों प्रसन्न करताभया महावीर्यवान् होताभया ५२

कारयामास राज्यंच पितरि स्वर्गते नृप
वर्षाणां शत मेकं च सहस्रं भीम विक्रमः ५३
जब राजा संजय देह त्यागकर्के स्वर्गको गया तबराजाका पुत्र एक सहस्र एकशत वर्षभर पृथिवीमों राज्यकरताभया अतिभीम पराक्रम संयुक्त भयाहे ५३

ततईजे महायज्ञै र्बहुभिः भूरिदक्षिणैः
तर्पयामास देवांश्च पितॄंश्चैव महाद्युतिः ५४
बहोत दक्षिणावाले महायज्ञोकर्के यजन करताभया देवतागणोंको तृप्तकरताभया कीर्तिकर्के महाप्रकाशवान् होताभया ५४ ॥

उत्पाद्यच बहून्पुत्रान् कुलसंतान कारिणः
कालेन महता राजन् कालधर्म मुपेयिवान् ५५
अपने कुलकी संतान वृद्धि करणेहारे बहोत पुत्रोंको उत्पन्नकरके पुत्रोंकों राज्यदे कर्के अपनी आयुषाके अंतकालमों शरीरको त्यागकरताभया ५५

सत्वं राजेंद्र संजातं शोकमेनं निवर्तय ॥

यथा त्वां केशवः प्राह व्यासश्च सुमहा तपाः ४६
हे राजेंद्र युधिष्ठिर अब इस शोकको निवृत्तकर जैसा तो
को केशवजी कहते हे जैसा महातपस्वी व्यासजी कहते हे
पितृपैतामहं राज्य मास्थाय धुरमुद्वह दृष्ट्वा
पुण्यै र्महायज्ञै रिष्टं लोक मवाप्स्यसि ४७
इतिश्री महाभारते शां राजधर्मे स्वर्णष्ठीवि
संभवो नाम एकत्रिंशोध्यायः ॥ ३१ ॥
अपने पितृ पितामहादि कुल परंपराके राज्यको पाइकर
शास्त्रविधिसे क्षत्रधर्मकर्के महापुण्य यज्ञोकर्के यजनकर्के
देहांतकालविषे अपने इष्टलोकको प्राप्तहोवेगा ४७
इतिश्री महाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मे भाषाटीकायां स्व
र्णष्ठीविसंभववर्णनंनाम एकत्रिंशोध्यायः ३१ ॥
वैशंपायनउवाच तूष्णीभूतंतु राजानं शोचमानं युधि
ष्ठिरम् तपस्वी धर्मतत्वज्ञः कृष्ण द्वैपायनो ब्रवीत् १
वैशंपायनउवाच हे जनमेजय इसप्रकार नारदकी वचन
कोभी सुनकर राजा युधिष्ठिर तूष्णीभूतरहा उत्तरनहीदि
या बहोत शोचमानही रहा तब महातपस्वी धर्मतत्वके
वेत्ता जोहे कृष्णद्वैपायन व्यासजी सो राजाको बहोतवचनक
हते भये १
व्यासउ० प्रजानां पालनं धर्मो राज्ञां राजीव लोचन
धर्मः प्रमाणं लोकस्य नित्यं धर्मानु वर्तिनः २
व्यासउवाच हे राजीवलोचन कमलनेत्र राजन् राजालोको
को प्रजोका पालनकरणा नित्यधर्महे संपूर्ण लोकोंको नित्य
ही जो धर्ममार्गके अनुसार प्रवृत्तहोना चाहिए उसका अ
पने धर्म कर्मके अनुसार वर्तना धर्मप्रमाण कहाहे २
अनुतिष्ठस्व तद्राज न्पितृपैतामहं पदम्
ब्राह्मणेषु तपोधर्मः सनित्यो वेद निश्चयः ३
ताते हेराजन् तू अपने पितृ पितामहसे प्रमाण भयाजो
राजधर्म उसकोही सावधान होकर्के कर तपजोहे सो ब्रा
ह्मणोकाही नित्यधर्म प्रमाणहे यह वेदका निश्चयहे ३
तत्प्रमाणं ब्राह्मणानां शाश्वतं भरतर्षभ
तस्यधर्मस्य कृत्स्नस्य क्षत्रियः परिरक्षिता ४

तपरूपी धर्मब्राह्मणोंको परंपरासे सदाप्रमाण बनाहै उसध
र्मके रक्षाकरणेहारा क्षत्रिय कहाहै इसको ब्राह्मणोंके धर्म
तपोमय धर्मकी रक्षाकरणेसे तपकरणेका फलहोजा
ताहै ४

यस्त्वपः प्रतिहंत्यस्य शासने विषये रतः
स्वाङ्गभ्यां प्रतियाह्यो लोकयात्रा विघातकः ५

जो राजा अपनी शासनारूपी धर्मको आपही खंडनकरता
है आपविषयभोगमों रतहोताहै सो भृत्योंसे ग्रहणकर्के
दंडशासनायोग्य कर्तव्यहै सो रक्षाविना लोकयात्राको
घातकरताहै ५

प्रमाण मप्रमाणंयः कुर्यान्मोह वशंगतः
भृत्यो वा यदि वा पुत्र स्तपस्वी वा कथंचन ६

जो कोई राजाकी प्रजाकी रक्षारूपी आज्ञाको प्रमाणनहीक
रता मोहवशहोकर अप्रमाण करताहै सोभामे भृत्यहोवे
भामे पुत्रहोवे भामे तपस्वी कोई ब्राह्मणहोवे ६

पापान्सर्वै रुपायैस्ता न्नियच्छे द्धातये त्तवा ॥
अतोन्यथा वर्तमानो राजा प्राप्नोति किल्बिषं ७

उसको जिस उपाइकर्के बने उसी उसी उपाइकर्के निग्रह
दंडकरे अथवा मारदेवे जो राजा दंडनही करे अन्यथा
कारी होकर क्षमाकरे तो तो जो जो पापराजाकी आज्ञाभं
गकारी इहलोककरतेहै सो पापदंड त्यागसे राजाको प्रा
प्त होतेहै ७ ॥

धर्मं विनाश्य मानंहि योन रक्षेत्सधर्महा
नत्वया धर्महंतारो विहताः सपदानुगाः ८

धर्मलोप करणेहारेको जो राजा उसके धर्मको दंडकर्के न
ही रक्षाकरे सो धर्मघाती होताहै तातें जो युद्धविषे मारेहै
सो सबही धर्मघातकारी भयेहै सो परिवारसहित मारेहै ८

स्वधर्मे वर्तमानस्त्वं किंनु शोचसि पांडव
राजाहि हन्या द्दद्याच्च प्रजारक्षेच्च धर्मतः ९

उन्होंको मारणेसे तूं अपने धर्मविषे वर्तमानभयाहै हे
पांडव तूं को ह्या शोचताहै राजाहै धर्मघाती लोकोंको
मारे धर्मपालना हारेको संतुष्ट होकर द्रव्यदेवे प्रजाको
अपने धर्मसे पालनकरे ९ ॥

युधिष्ठिरउवाच नतेभिशंके वचनं यद्ब्रवीषि तपो
धन अपरोक्षोहि तेधर्मः सर्वधर्म विदांवर १०

हे तपोधन व्यासजी मे तुह्मारे वचनको दोषशंका नही
करता जो तुम कहतेहो सो धर्मतत्वका प्रमाणहे आपधर्म
वेत्ताजनोंविषेश्रेष्ठहो आपको धर्मका स्वरूप हस्तामलकजे।
सा प्रत्यक्षहे १० ॥

मयात्ववध्या बहवो घातिता राज्यकारणात्
तानि कर्माणि मे ब्रह्मन् दहंतिच पचंतिच ११

मे अपने शोकसंतापको कहताहूं मेने जो रणविषे राज्यलो
भके कारणसे बहोत अवध्य गुरुपितामहादिक मरायेहैं
सो ऐसे गुरुघातादि खोटेकर्म मोको पश्चात्तापसे दाहकरतेहैं
और मेरे शरीरको शोषकरतेहे ११

व्यासउवाच ईश्वरोवा भवेत्कर्ता पुरुषो वापि भारत
हठोवा वर्तते लोके कर्मजं वा फलं स्मृतम् १२

व्यासउवाच हे राजन् तूं कहताहे मेने बहोत अवध्यमरा
ये हे इसीका शोको बाधाकरताहे इस हनन क्रियाविषे
तूं ईश्वरको कर्ता मानताहे अथवा हननकर्ता पुरुषको
मानताहे अथवा मरताहे उसका मरणरूपी स्वभाव कर्म
मानताहे अथवा पूर्वलेकर्मके फलसे इस हननक्रियाको
मानताहे १२ ॥

ईश्वरेण नियुक्तोहि साध्वसाधु च भारत
कुरुते पुरुषः कर्म फलमीश्वरगामितत् १३

जो तूं ईश्वरको कर्ता मानताहे तो ईश्वर नियोज्य कर्ताहे
ईश्वरकर्के प्रेरणाकिया पुरुष साधुकर्मको करताहे वा अ
साधुकर्मकरताहे उसका फल पुरुषको नहीहे ईश्वरको
कर्मफलहै १३

यथाहि पुरुष छिंद्या द्वृक्षं परशुना वने
छेत्तुरेव भवेत्पापं परशोर्न कथंचन १४

जैसे पुरुष वनविषे जाइकर परशुकर्के वृक्षको छेदनकरे
तो वृक्षके छेदनका पापफल उस पुरुषकोहे परशुशस्त्र
कुहारेको छेदका पापनहीहे ऐसे विचारसे तोको पापहन
न क्रियाका पापफलहे तो तूं परशुकी न्याई पापसंबंधसे र
हितहे १४ ॥

श्री॰ रा॰ प॰ टी॰ ११५

115

अथवा तदुपादाना त्वाश्रया कर्मणः फलम्
दंडशास्त्रकृते पापे पुरुषे तन्न विद्यते १५

जो तूं कहे मे परशुकीन्याई जडनही जो पापसंबंध नही होवे मै तो चेतन पुरुषहूं मोको पापसंबंध बनाहे हेराज न इसप्रकारसेवी तोको पापसंबंधमानाहे इसीप्रकार से जिसने परशुका दंड और परशुशास्त्र बनायाहे उसको छेदकापाप होवेगा परशुग्रहण करणे हारेको नहीहे प्रथम सोई छेद क्रियाका कारण बनाहे ऐसा तुमनही मानो छेदकिया पुरुषने और परशु १५

नचैतदिष्टं कौंतेय यदन्येन कृते फलम्
प्राप्नुयादिति यस्माच्च ईश्वरे तन्निवेशय १६

कर्ता कैसे पापभागी होवे जैसे परशुका प्रेरक पुरुषहे तैसे पुरुषका प्रेरक ईश्वरहे ईश्वरके प्रेरणासे यह हनन क्रिया तुमसे इसका फल तुम ईश्वर विषेही स्थापनकरो १६

अथवा पुरुषः कर्ता कर्मणोः शुभ पापयोः
न परो विद्यते तस्मा देव मेतत् शुभं कृतं १७

अथवा तुम पुरुष कोही शुभाशुभ कर्मकर्ता मानतेहो तो कर्मफलभी पुरुषको मानो औरको कर्मफलनहीहोता तुमने जो हननक्रिया कीनी सो शुभकीनीहे १७

नहि कश्चित् क्वचिद्राजन् दिष्टात्प्रति निवर्तते
दंडशास्त्र कृते पापं पुरुषे तन्नविद्यते १८

अपने शुभाशुभ कर्मका कर्ताको होताहीहे जैसे शास्त्रदंड कर्ताको पापनही छेदकर्ताको पापनही इसकीही विप रीतता इसको फलदेतीहे तैसे तुमारे साथ जो इन्होने पापकर्म कियाहे उसके फलसे आपमेही तुमपापदोष नहीहे १८॥

यदि वा मन्यसे राजन् हतमेकं प्रतिष्ठितम्
एवं मप्प शुभं कर्म नभूतं न भविष्यति १९

अथवा जो जिसका जैसा जैसा उसको शुभा शुभ बनना जाताहे शुभाशुभ और कोई नही तो इन्हका इसकालमें इस प्रकार मरण स्वभावसेही बनाहे तोभी तुमको शो चना उचित नहीहे १९

अथाभिपति लोकस्य कर्तव्या शुभपापयोः
अभिपन्न मिदं लोके राज्ञा सृयत दंडनम् २०

अथवा तुम मानतेहो जो शुभ अशुभ कर्मका फल इहां
नही होवे तोभी परलोक विषे होताहे इसहेतुसे अशुभ
कर्मका राजदंड होवे तो फल निवृत्त होताहे प्रायश्चित्तरू
पी शुभकर्म फलसे निवृत्त होताहे इसवास्ते मे त्यागतप
स्या कर्तव्य मानताऊं इसका उत्तर कहतेहे यह बात तो
शुभाशुभकर्म विचारकरके राजाने प्रजापालन धर्म कर्त
व्यहे आपही बनीहे राजाको अशुभकारिजमोविषे दंड
कर्तव्यहे सो तोसे सर्व इन्होको दंड होगयाहे २०

तथापि लोके कर्माणि समावर्तंते भारत
शुभाशुभं फलंचैते प्राप्नुवंतीति मेमतिः २१

सभलोक हमारे
जो तूं कहे दंडजो भया अथवा नभया
हारसे शांतहोगयेहे तो शुभ अशुभकर्म सभसमागमक
रतेहे फलको अवश्य करतेहे ताते मोको इहां सर्वत्या
गकरके अन्नपान त्यागकरणा शुभहे ऐसा कहो तो उत्तर
कहतेहे हे राजन् इसलोकविषे प्राणीयोको कर्म अवा
श्य प्राप्तहोतेहे ताते यह प्राणीको शुभाशुभ फलकोदे
तेहे यह तो हमभी मानतेहे २१

एव मप्य शुभं कर्म कर्मणा त्वत्फलात्मकं
त्यजत्वं राजशार्दूल मेवं शोके मनः कृथाः

जो तुम सर्वत्यागकरके प्रजापालनादि शुभकर्मके फल
को त्यागदेवोगे ऐसे त्यागकरके लोकविषे अशुभकर्महो
वेगे उनका फलभी तोको प्राप्तहोवेगा ताते तूं पापका
मूलजो त्यागकर्म इसको त्यागकर मनको शोकविषे
मतमगनकरे २२

स्वधर्मे वर्तमानस्य सापवादेपि भारत
एव मात्मपरित्यागो तवराज नशोभनः २३

हे राजन् अपना धर्म दोषवाला तोभी इसविषे प्रवृत्तहो
वेगा तोको दोषशंका नही होती इस हेतुसे मे कहताऊं
तोको ऐसा स्वधर्म त्याग शुभनहीहे २३

विहितानिहि कौंतेय प्रायश्चित्तानि कर्मणां

शरीरवांस्त्वा निःकर्मा स्वशरीरः पराभवेत् २४
जो तूं स्वधर्मविषे हिंसादि पापभीति मानताहे जोस
न पापकर्मोकेभी प्रायश्चित्त शास्त्रमो कहेहै देहधारी
जोहे सो अश्वमेधादि प्रायश्चित्त कर्मलेवे जो जवशरी
रछुटजावे तव पापकर्मोंके फलसे मुक्तहोजाताहे २४

तद्राजन् जीवमानस्त्वं प्रायश्चित्तं करिष्यसि
प्रायश्चित्तमकृत्वातु प्रेत्यतप्तासि भारत २५
ताते हे राजन् जो तू स्वधर्मकर्के जीवता रहेगा पापक॰
र्मोंके प्रायश्चित करेगा जो कर्मत्यागकर्के बहोड प्रायश्चि
तभी नहीं करेगा ऐसे त्यागकर्के परलोक विषे संताप
ही पावेगा २५ ॥ ॥ इतिश्री महाभारते शांतिप
र्वणि राजधर्मे प्रायश्चित्तविधिर्द्वात्रिंशः ॥ ३२ ॥

युधिष्ठिरः हताः पुत्राश्च पौत्राश्च भ्रातरः पितर
स्तथा श्वशुराः गुरवश्चैव मातुलाश्च पितामहाः १
युधिष्ठिरउवाच हे भगवन् आपमोकों शुभउपदेश कर
तेहो परंतु शोककवाधाकरताहे मेरे पुत्र हतभयेहे
पौत्र ओर भ्राता ओर भूरिश्रवादि पिता ओर श्वशुर ओर गुरु
ओर मातुल ओर पितामह मारेहे १

क्षत्रियाश्च महात्मानः संबंधि सुहृदस्तथा
वयस्या भागिनेयाश्च ज्ञातयश्च पितामहाः २
महात्मा ओर क्षत्रिय ओर संबंधि ओर सखा प्रतिप्रेम
मवाले ओर भानजे ओर अपनी ज्ञातीकी मुवमालोक
मवापहे २ ॥

बहवश्च मनुष्येंद्रा नानादेशा समागताः
घातिता राज्यलुब्धेन मयैकेन पितामह ३
ओर वहोतमनुष्योके राजा नानादेशोसे आनप्राप्तभयेहे
सो एक मेनेही राज्यलोभसे मारेहे ३

तांस्तादृशा नहंहत्वा धर्मनित्या न्महीक्षितः
असकृत्सोमपा न्वीरा न्किं प्राप्स्यामि तपोधन
ऐसे नित्यधर्म निष्ठावाले राजा लोकोको मारेहे जिन्होने
यज्ञोविषे सदा सोमपान कियेहे ऐसे महावीर राजालो
कोको लोभसे मरवाइ कर्के आप तपोधन होमेको कहा

हमकोन कोन लोकोंको प्राप्तहोवेंगे ४

दृष्ट्वामया विशमयापि चिंतयानः पुनः पुनः
हीनां पार्थिव हृदैस्तैः श्रीमद्भिः पृथिवीमिमां ५

अबभी मे इसपृथिवीको राजोंविषे सिंह जैसे संपदाकी शोभासंयुक्त ऐसे राज्यलोकोंकर्के हीनभई देषकर्के वार वार चिंतनकर्के अबभी निरंतर दग्धहोताहूं ५

दृष्ट्वा ज्ञातिवधं घोरं हतांश्च शतशः परान्
कोटिशश्च नरानन्यान् परितप्ये पितामह ६

हे पितामहजी यह अपनी ज्ञातीका घोरवध देषकर्के और शतसहस्र पराये शूरमाभी मरे देषकर्के मे निरंतर शोकसंतापकर्के दग्धहोताहूं ६ ॥

कान्नुतासां वरस्त्रीणां मवस्था भविष्यति
विहीनानां च तनयैः पतिभि र्भ्रातृभि स्तथा ७

जोनसे पतिव्रता स्त्रियां पुत्रहीन भईहै उन्हकी अवस्था अवस्था होवेगी ७ ॥

अस्मानन्तकरान्घोरान् पांडवान्नसिसंहतान्
आक्रोशन्त्यः कृशादीनाः प्रपतिष्यंति भूतले ८

उन्हके विचारमें यादवोंकर्के संयुक्त हमही घोर अंतकाल करणेहारे भयेहैं सो सभही पतिव्रता स्त्रीयां हमारे नामले कर्के विलापकरणेसे व्याकुल होकर्के पृथिवीमें पडजावेंगीयां ८

अपश्यन्तः पितॄन्भ्रातॄन् पतीन् पुत्रांश्च योषितः
त्यक्त्वा प्राणान् प्रियान्सर्वा गमिष्यंति यमक्षयं ९

अपने अपने पितरोंको और भ्रातरोंको और पति पुत्रोंको न ही देषतीहै ऐसी सभही पतिव्रता स्त्रियां प्राणोंको त्याग कर्के यमलोकोंको प्राप्त होवेंगीयां ९

वत्सलत्वा द्विजश्रेष्ठ तत्र मे नास्ति संशयः
व्यक्तं सौक्ष्म्याच्च धर्मस्य प्राप्स्यामः स्त्रीवधं वयं १०

हे द्विजश्रेष्ठ उन्हको अपने अपने संबंधिजनोंका अतिप्रेमका स्नेह संबंधबनारहा इसमें शोकको संदेह नहीं है इस हेतूसे मे कहताहूं धर्मकीगति अतिसूक्ष्म है पतिव्रता स्त्रियोंके प्राणत्यागसे हम निश्चयकर्के स्त्रीवधके पापकोंभी प्राप्तहोवेंगे १० ॥

श्री० रा० ध० टी० १७

117

यद्वयं सुहृदो हत्वा कृत्वा पाप मनंतकं
नरके निपतिष्यामो ह्यधः शिरस प्रवह ॥ ११

जौनसे हम अपने संबंधि सुहृदलोकोंको मारकर्के अनंतपा
पकर्के अधोमुख होकर घोर नरकमें पडेंगे ११

शरीराणि विमोक्ष्याम स्तपसोग्रेण सत्तम
आश्रमाणां विशेषांस्त्व मथाचक्ष्व पितामह १२

हे संतजनोंविषे उत्तम पितामहजी हम उग्रतपकर्के शरी
रोंकोत्यागकरेंगे आपहमको अव संपूर्ण आश्रमोंके धर्म
विशेषोंको कहो १२ वैशंपायनउवाच ॥

युधिष्ठिरस्य तद्वाक्यं श्रुत्वा द्वैपायन स्तदा
निरीक्ष्य निपुणं बुद्ध्या ऋषिः प्रोवाच पांडवं १३

वैशंपायनउवाच हे जनमेजय युधिष्ठिरके वाक्यको सुन
द्वैपायन भगवान् व्यासजी सो बुद्धिविषे सम्यक् विचारकर्के
परमधर्म वेत्ता हे सो व्यासजी पांडवराजाको बहोड वचन
कहतेभये १३ व्यासउवाच ॥

मा विषादं कृथा राजन् क्षत्रधर्म मनुस्मरन्
स्वधर्मेण हतास्तेते क्षत्रियाः क्षत्रियर्षभ १४

व्यासउवाच हे राजन् तं शोकविषादको मतकर अपने क्ष
त्रीधर्मको स्मरणकर हे क्षत्रियश्रेष्ठ जेते यह मरे हे जिन्होंको
तूं शोचता है सो सबही अपने क्षत्रधर्मकर्के मरे हे १४

कांक्षमाणाः श्रियं कृत्स्नां पृथिव्यां च महद्यशः
कृतांत विधि संयुक्ताः कालेन निधनं गताः १५

समग्र पृथिवीके राज्यवास्ते वांछाकरतेभये रणविषे ज
सकी कीर्तिको वांछाकरतेभये और यमराजकी विधि
संयुक्तभये हे सो कालधर्मकर्के मरणको प्राप्तभये हे १५

न त्वं हंता न भीमोपि नार्जुनो नयमा वपि
कालः पर्याय धर्मेण प्राणाना दत्त देहिनां १६

न तूं इन्होंको हंता हे न भीम मारणे हारा हे न अर्जुन इन्होंका
मरवदाता हे ना नकुल सहदेव इन्होंको मारतेभये काल
जो हे सो ही इन्होंका मरण विधिकर्के प्राणोंका ग्रहण करताभया

न तस्य माता पितरौ नानुग्राह्योस्ति कश्चन
कर्मसाक्षी प्रजानांय स्तेनकालेन संहृताः १७

नकालमाता पिताको देषता कालका कोई प्रियनहीहे और श
त्रुभी कालकानहीहे जोकाल सभके शुभाशुभकर्मका और क
र्मफलका साक्षीहे दाताभीहे उसकालकर्के सभही अंतका
लके कालधर्मको प्राप्तभयेहे १७

हेतुमात्र मिदं तस्य विहितं भरतर्षभ
यत् हंतिभूतै र्भूतानि तदस्मै रूप मैश्वरम् १८

कालको जीवोंका अंतकरणेमा व्याधिरोग रणादिक निमित्त
मात्रवनेहे जाते यह भूतोको भूतोसेही मरताहे इसको केव
ल सर्वभूतोकी प्रेरकता वनीहे यह कालही ईश्वररूपहे १८

कर्मसूत्रात्मकं विद्धि साक्षिणं शुभपापयोः
सुखदुःखगुणोदर्कं कालेकाल फलप्रदम् १९

हे राजन् कर्म सर्वभूतोंका वंधनका सूत्रहे कालसर्वभूतोकी
शुभाशुभकर्मका साक्षीहे सुखदुःखरूपी गुणोका अंतकाल
सिद्धकरणेहारा कालही फलदाताकहाहे १९

तेषा मपि महाबाहो कर्माणि परिचिंतय
विनाशहेतुका नित्वं येस्मि कालवशंगताः २०

हे महाबाहो जो रणविषे मरेहे उन्हके कर्मविचारकरो उ
न्हकी कर्मकीही विनाशके हेतुवनेहे जिन्हकर्के सभही
कालके वशभयेहे २०

आत्मनश्च विजानीहि नियत व्रत शासने
यदात्व मीदृशं कर्म विधिनाक्रम्य कारितः २१

हे राजन आपकोभी कालकी आज्ञाकरणी महाव्रतहे जोत
मको इसकालने इसप्रकारकर्के वलकर्केही युद्धकर्मकरा
याहे अपनी इछाकर्के वनवासकोही धर्ममानतेहो २१

त्वष्ट्रेव विहितं यंत्रं तथा चेष्टयितं वंशो
कर्मणा कालयुक्तेन तथेदं चेष्टते जगत् २२

जंत्रकार जैसे यंत्रको कल्पनाकरताहे तैसी जगतरूपी यंत्र
कालसे चेष्टा करताहे तैसेही कर्मचेष्टाभी करावताहे २२

पुरुषस्य हि दृष्टेमा मुत्पत्ति मनिमित्ततः
यदृछया विनाशंच शोकहर्षा वनर्थको २३

इसपुरुषकी उत्पत्ति विनाशभी कर्मचेष्टाकर्के कालके वश
हे देवकर्के विनाश होताहे उसको शोकहर्ष मानने अ
नर्थरूपहे २३

ग्रा.प.
मी.
१८

118

अलीक मपि यत्त्वत्र विजवै तंसिके तव
तस्य मिथ्यते राजन् प्रायश्चित्तं तदाचर २४
यह समझी तेरी मनकी कल्पना हथाहै जो तेने अपनेविषे हननक्रियाका संबंधमानाहै सो भी ह्थाहै जो तूं दीर्घदर्शी होकर अपने मनविषे दोषसंबंध सत्यमानताहै दोषनिवृत्तिवासते प्रायश्चित्तकर्मको कर २४

इदंतु श्रूयते पार्थ युद्धे देवासुरे पुरा
असुरा भ्रातरो ज्येष्ठा देवाश्चापि यवीयसः २५
हे पार्थ यह वृत्तांत ऐसा सुणप्रथम देवासुर संग्रामका सुनाहै असुर वडे भ्राता देवता सभ कनिष्टभ्राता भयेहैं २५

तेषा मपि श्री निमित्तं महानासी त्समुच्छ्रयः
युद्धं वर्ष सहस्राणि द्वात्रिंश दभवत्किल २६
उन्होंकाभी त्रैलोक्य संपदावास्ते महाविरोध भयाहै उन्होंका अन्योन्य युद्ध वतीशवर्षसहस्र होताभया २६

एकार्णवां महीं कृत्वा रुधिरेण परिप्लुता
जघ्नुर्दैत्यां स्तथा देवा स्त्रिदिवं चाभिलेभिरे २७
देवता असुर परस्पर युद्धकर्के पृथिवीको रुधिर प्रवाहकर्के एकप्रलय कालके समुद्रजेसे करतेभये असुरोंको मारकर देवता त्रैलोक्य राज्यको प्राप्तहोतेभये २७ ॥

तथैव पृथिवी लब्ध्वा ब्राह्मणावेदपारगाः
संश्रिता दानवानांवै सहार्थं दर्प मोहिताः २८
तैसेही ब्राह्मणभी धनलाभकर्के वेदपारगामीभी भये सो भी अपने वेदधर्मके मदकर्के मोहितभये असुरोंके सहाय करणे हारे वनेहै २८ ॥

शालावृका इति ख्याता स्त्रिषुलोकेषु भारत
अष्टाशीति सहस्राणि तेचापि विबुधै र्हताः २९
सो त्रिलोकीमो शालावृकनाम संज्ञावाले भयेहै अष्टाशीतिसहस्रसंख्या उन्होंकी प्रसिद्धभईहै सोभी देवतालोकोने मारेहै

धर्म व्युच्छित्ति मिच्छंतो येधर्मस्य प्रवर्तकाः
हंतव्यास्ते दुरात्मानो देवैर्दैत्या इवोल्बणाः ३०
जोनसे लोकधर्मके विछेदको इच्छाकरतेहै ऐसे अधर्मको प्रवृत्तकरतेहैं ऐसे दुरात्मा वाजजनोने हंतव्यहै जैसे देवतोने दैत्यमारेहैं ३०

एवं हत्वा यदि कुले शिष्टानां स्याद्दनामयं
कुले हत्वा च राष्ट्रे च न तद्वृत्तोपघातकम्
हे राजन् जो कुलविषे एकको मारकर्के शेषकुलमो सु
खहोवे तो एकका मारणा शुभहै जो एककुलको मारक
र्के राजाके राज्यदेशमों कुशल होवे तो कुलको देशाके
धर्म रखावाले एकका मरणा कुलका मारणा धर्मका
विरोधी नही होता २१
अधर्मरूपो धर्मो हि कश्चिदस्ति नराधिप
धर्मश्चाधर्मरूपोऽस्ति तच्च ज्ञेयं विपश्चिता २२
हे नराधिप कोई धर्म अधर्मरूप भासताहै जैसे आतताइ
कादि ब्राह्मणोकावध अधर्मरूप धर्महै और चोरीवाले
मार्गीकहना धर्मरूप अधर्महै जिसका परिणाम फलशु
भहोवे धर्मरूप अधर्महै जिसका परिणामफल अशुभ
होवे सो धर्मरूप अधर्महै यह विवेक पंडितजनोने जान
यहे २२ तस्मात्संस्तंभयात्मानं श्रुतवानसि भारत
देवैः पूर्वगतं मार्गमनुयातोसि भारत २३
हे पांडव तैने दुष्टहनन कर्के अधर्मरूप धर्मकियाहै तातें
अपने मनको अवसाधनकर तैने देवता देत्योका हता
तहनाहै जो मार्गदेवोने सेवाहै उसको तूं करचुकाहै २३
न हीदृशा गमिष्यन्ति नरकं पांडवर्षभ
भ्रातरश्चाश्वसंतस्ते सुहृदश्च परंतप २४
हे पांडव अष्टजैसा अधर्मरूप धर्मतेने कियाहै ऐसे कर
णेहारे नरकको नही जाते यह तुह्मारे भीम अर्जुनादि
कहै इनकों तूं मधुरवचनके आदरसे और राजधर्मकी पा
लनासे आश्वासन करतैसे और जो तेरे सुहृदहै कुला
दिक इन्होंकोभी आनंदकर २४
ये हि पाप समारंभे कार्ये तद्भाव भावितः
कुर्वन्नपि तथैव स्यात्कृत्वा च निरपत्रपः २५
जो पुरुष आदविषे पापके आरंभको प्रारंभकरताहै
मध्यविषेभी पापकार्यकरे और अंतविषे पापकर्मक
र्के पश्चात्ताप लज्जानहीकरे उसकी बातसे अधर्मफलन
ही होता यह समझो ऐसे भरेहै २५

श्री.
रा.य.
टी.
११९

119

तस्मिं स्तत्कलषं सर्वं समाप्त मिति शाहितं
प्रायश्चित्तं न तस्यास्ति ह्रासो वा पापकर्मणः
जो पुरुष आद मध्यविषे पापकोही सदा चिंतन करता
है कार्यभी पापके सदा करताहै वहोउ पश्चात्तापन
हीकरता उसविषे सर्वपाप समाप्त होताहै उसको प्रा
यश्चित्त नहीहै उसको पापका क्षय कदापि नहीहोता ३६
त्वंतु शुक्लाभिजातीयः परदोषेण कारितः
अनिच्छमानः कर्मेदं कृत्वा च परितप्यसे ३७
हे राजन् तूं तो प्रथमही अभिमान त्यागीहै और परदोष
करके तेरेसे युद्धादिकार्यकरा तेने युद्धकी अनिच्छा करके
ही क्षमाधारीहै और संधी करतेभी मानी रही युद्धकरके
अबभी पश्चात्तापकरताहै ३७
अश्वमेधो महायज्ञः प्रायश्चित्त मुदाहृतं
तमाहर महाराज विपाप्मैव भविष्यसि ३८
हे राजन् पापकर्मकी पश्चात्तापशांतिकरणेको अश्वमे
ध महायज्ञ प्रायश्चित्त कहाहै उसयज्ञको विधिविस्तार
सेकर इसप्रकार तूं पापभीतिसे रहितहोवेगा ३८
मरुद्भि सह जित्वारी भगवान्पाकशासनः
एकैकं क्रतु माहृत्य शतं कृत्वा शतक्रतुः ३९
हे महाराज पाकशासन भगवान् इंद्रजोहै सोभी मरु
तोंकै साथ सर्व शत्रुगणोंको जीतकरके एकएक अश्व
मेधयज्ञको भिन्नविधिसे करताभया ऐसे यज्ञकर्मक
रकै शतक्रतु नामककै त्रिलोकीमो प्रसिद्धभयाहै ३९
धूतपाप्माजित स्वर्गो लोकान्प्राप्य सुखोदयान्
मरुद्गणै र्वृतः शक्रः शुशुभे भासयन्दिशः ४०
इसप्रकार इंद्रगत पापभया और स्वर्गजेताभया उत्तम
लोकको प्राप्तहोकर मरुतोंके साथ परमशोभाको
पाइकर प्रतापककै सर्वदिशाको प्रकाशमानकरता
भया ४०॥ स्वर्गलोके महीयंत मप्सरोभिः शची
पतिम् ऋषयः पर्युपासंत देवाश्च विबुधेश्वरम् ४१
इंद्र स्वर्गलोकविषे महामहिमाको पायकर अप्स
रोंके गणे संयुक्तभया जो शचीकापति उसको ऋ

वीलोकदेवता आशीर्वाद स्तुतिको करतेभये ४१

सेयं त्वामद्य संप्राप्ता विक्रमेण वसुंधरा ॥
निर्जिताश्च महीपाला विक्रमेण त्वयानघ ४२

हे राजन् सो यह वसुंधरा तोको अब समय प्राप्त भई है तैने अपने पराक्रमकर्के जीतेहि और राजालोक सभही तैने अब महाबल पराक्रमकर्के जीते और तूं अनघहे पापसंबंधरहित भयाहे ४२

तेषां पुराणि राष्ट्राणि गत्वा राजन्सुहृद्वृतः
भ्रातॄन् पुत्रांश्च पौत्रांश्च स्वे स्वे राज्येभिषेचय ४३

अब तुमने ऐसा कर्तव्यहे जो जो राजालोक रणमें मारे हे उनके देशविषे तुम अपने मंत्री सुहृदलोको साथ लेकर जाओ तहां तहां जाइकर उन राजा लोकोके जहां जहां भ्राताहे पुत्रहे पौत्रहे उनको अपने अपने राज्यविषे अभिषेक करो ४३

बालानपि च गर्भस्थान् सांत्वेन समुदाचरन्
रंजयन् प्रकृतीः सर्वाः परिपाहि वसुंधरां ४४

रंजयन प्रकृतीः सर्वा परिपाहि वसुधरा ४४
जिनके बालकहे अथवा गर्भस्थ बालकहे उनको अभिषेककरो मधुर वाक्योंकर्के उनको आश्वासनकर्के शोकनिवृत्तिकरो इसप्रकार समस्त रैयतको रंजनाकरो पृथिवीका पालन धर्मकर्के करो ४४

कुमारो नास्ति येषां च कन्यास्तत्राभिषेचय
कामाशयो हि स्त्रीवर्गः शोकमेवं प्रहास्यति ४५

जिन राजोंका जिहां बालक नहीहे तहां उनकी कन्या अथवा अविवाहित उसको अभिषेक विवाहितहोइ करो जो तुम स्त्रियोंका संपदाकर्के पूर्णकाम करोगे तब सबही स्त्रीवर्ग शोकको त्यागकरेगा ४५

एवमाश्वासनं कृत्वा सर्वराष्ट्रेषु भारत
यजस्व वाजिमेधेन यथेन्द्रो विजयी पुरा ४६

हे भारत इसप्रकार सभदेशोंविषे सभको आश्वासनकर के पश्चात अश्वमेध यज्ञकरके यजनकर जिसे इंद्र प्रथम असुरोंको जीतकर अश्वमेधके शतयज्ञ करताभया ४६

श्री॰ रा॰ पं॰ टी॰ १२॰

अशोच्यास्ते महात्मानः क्षत्रियाः क्षत्रियर्षभ
स्वकर्मभिर्गतानाशं कृतान्तबलमोहिताः ४७

हे राजन् रणविषे मरे जो क्षत्रियलोकसो सर्वप्रकारसे अशोच्यहैं जोनसे अपने प्रबलकर्मोंकर्के नाशको अपने अंतकालके बलकर्के मोहित भयेहैं ४७

अवाप्तः क्षत्रधर्मस्ते राज्यं प्राप्तमकंटकम्
रक्षःस्वधर्मं कौंतेय श्रेयान्यः प्रेत्यभारत ४८

हे भारत क्षत्रधर्म तुमको सफल सिद्ध भयाहै जो रणजीत कर्के अकंटक राज्यप्राप्त भयाहै अब प्रजापालन रूपी अपने धर्मका रक्षणकरो जो तुमको परलोकमो कल्याण हवणेहाराहै ४८ ॥

इतिश्री महाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मे प्रायश्चित्तीये त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३३ ॥ युधिष्ठिरउवाच ॥

कानि कृत्वेह कर्माणि प्रायश्चित्ती यतेनरः
किं कृत्वा मुच्यते तत्र तन्मे ब्रूहि पितामह १

युधिष्ठिर उवाच हे पितामहजी यह मनुष्य कैसे कर्मकर्के प्रायश्चित्त करणेको योग्यहोताहै और किसप्रकारसे प्रायश्चित्तको कर्के पापकर्मसे मुक्तहोताहै उसकर्मको आपमोकोकहो १ ॥

व्यासउवाच अकुर्वन्विहितं कर्म प्रतिषिद्धानि चाचरन् प्रायश्चित्तीयते ह्येवं नरोमिथ्याचवर्तयन् २

व्यासउवाच जो पुरुष अपने वर्णाश्रमके शास्त्रविहितकर्मको नाकरे और अपने जातीके निषिद्ध कर्मोंको करताहै सोप्रायश्चित्तकरणे योग्यहोताहै अपने धर्म कर्मको कपटसे विकार करताहै २ ॥

सूर्येणाभ्युदितो यश्च ब्रह्मचारी भवत्युत
तथा सूर्याभि निर्मुक्तः कुनखी श्यावदंतपि ३

जो हे राजन् ब्रह्मचर्य आश्रमको धारकर्के सूर्यके उदयकालमो निद्राकरताहै और जिसके निद्राकालमो सूर्यअस्तहोजावे सो सुवर्णचोरीके और सुरापानकी दोषको प्राप्तहोताहै जन्मांतर विषे कुनखी होताहै जन्मांतरविषे श्या

महंतभी होताहै इसने सूर्याहणसंवाद कर्म विपाक देष करके प्रायश्चित कर्म कहतेहै ३

परिवित्तिः परिवेत्ता ब्रह्मघ्नो यस्य कन्यकः
दिधिषूपपतिर्या या दधिषुश्च देवर ४

जहां ज्येष्ठभ्राता अविवाहितहै कनिष्ठभ्राता धनके बलकरके विवाह प्रथम करलेवे सो परिवेत्ता होताहै सो ब्रह्महत्या दोषवालाहोकर प्रायश्चित योग्यहोताहै इसी प्रकार जहां ज्येष्ठकन्या विवाह बिनाहै कनिष्ठकन्या विवाहवाली भईहै प्रथम कनिष्ठाके विवाहवाला दिधिषूपपतिकहाहै पश्चात् ज्येष्ठाके विवाहवाला दिधिषुहोताहै सो दोनो गुरुतल्पगमनके प्रायश्चित्ती होतीहैं ४

अवकीर्णी भवेद्यस्तु द्विजाति वधकस्तथा
अतीर्थे ब्राह्मणत्यागी तीर्थेच प्रतिपादकः ५

जो पुरुष ब्रह्मचर्य व्रतको खंडित करे सो ब्रह्मवधका प्रायश्चित्ती होताहै तैसे अयाज ब्राह्मणको दानदाता और सत्पात्र ब्राह्मणको दानकालविषे त्यागकरणेहारा सो भी ब्रह्म वधका प्रायश्चित्ती होताहै ॥ ५

ग्रामघाती च कौंतेय मांसस्य परिविक्रयी
यश्चाग्नीन् परित्यजेत तथैव ब्रह्म विक्रयी ६

हे कौंतेय जो ब्राह्मण ग्रामयाजकहै अथवा ग्रामघातकरके ग्रामकरके समूह घातीहै और मांसविक्रय करताहै और अग्निहोत्र ग्रहणकरके त्यागकरणेहारा और मजूरी लेकर वेदपाठकजोहै ६

गुरुणां वधको यस्तु पूर्वः पूर्वस्तु गर्हितः
वृथापशु समालंभी गृहदाहस्य कारकः

और गुरुको वधकर्ताजोहै इन्हो विषे जो जो पूर्व पूर्व कहाहै सो सो अधिक अधिक प्रायश्चित्ती होताहै और जो वृथा पशु घातकरताहै और गृहदाह करताहै ७

अनृते नोपवर्ती च प्रतिषेद्धा गुरोस्तथा
एतान्येनांसि सर्वाणि यथोक्तानि समयस्थयः ८

और द्रव्यलोभकरके कूटसाक्षी होताहै और गुरोकेसाथ विरोध

121

विरोधकरताहै यह सब कर्म ब्रह्मवधके प्रायश्चित्तके समान है और तैसे अपनी प्रतिज्ञाके संकेतका त्यागकरणेहारासे इनके समान प्रायश्चित्तीहै ८

अकार्याण्यत्र वक्ष्यामि यानि तानि निबोध मे
लोकवेद विरुद्धानि तान्येकाग्रमनाः शृणु ९

और भी जो अकार्य है लोकवेदके विरोधी है तिन्हकोभी कहतेहैं आप एकाग्र मनकर्के श्रवणकरो १०

स्वधर्मस्य परित्यागः परधर्मस्य च क्रिया
अयाज्य याजनं चैव तथा भक्ष्यस्य भक्षणं ११

अपने धर्मका त्यागकरणा परधर्मका सेवन करणा और अयोग्योंसे यज्ञकरणा और लशुनादि अभक्ष्यका भक्षणकरणा

शरणागत संत्यागो भृत्यस्या भरणं तथा ॥
रसानां विक्रय श्चैव तिर्यग्योनिवधस्तथा ११

और शरणागतको रक्षाविना त्यागकरणा और सेवाकरणेहारे भृत्यका पोषण पालन नही करणा लवण गुडादि रसोका विक्रय करणा और अजादि पशुयोनिका वधकरणा ११

आदानादीनि कर्माणि शक्तिमात्र करोति यः
अप्रयच्छंश्च सर्वाणि नित्यदेयानि भारत १२

और अपनेको जो ग्रहण करणे योग्य दंडकरादि इन्हको अपनीं पराक्रम सामर्थ्यविषे जो नही ग्रहणकरणा और नित्यदेने योग्य गोग्रास वलिदानादि नहीदेने १२

बल"

दक्षिणाना मदानं च ब्राह्मणा नाभि मर्षणं
सर्वाण्येतान्य कार्याणि प्राहुर्धर्म विदोजनाः १३

और यज्ञकराइ कर्के दातासे दक्षिणा नही लेनी और ब्राह्मणके धनको हरलेना यहसभही कार्य धर्मवेत्ता जनोने अकर्तव्य कहेहै १३ ॥

पित्रा विवदते पुत्रो यश्च स्या द्गुरुतल्पगः
अप्रजाय न्नधर्मज्ञ भवत्या धार्मिको नरः १४

जो पुत्र पितासे वादकरे और गुरुस्त्री विषे गमनकरणा और अपनी धर्मपत्नीविषे ऋतुकाल विषे संतान उत्पत्तिवास्ते गमन नहीकरणा ऐसा पुरुष अधर्मीहोताहै १४

उक्तान्येतानि कार्याणि विस्तरेणेतरेण च
एतान्येव तु कर्माणि क्रियमाणानि मानवाः
यह कर्म मेने विस्तार संक्षेपकरके कहेहे जिनको देशकालम
र्यादासे करे और नही करे तो यह प्रकार प्रायश्चित्ती होताहे १५
येषु येषु निमित्तेषु न लिप्यंतेथ तान् शृणु
प्रगृह्य शस्त्र मायांतं मपि वेदांतगं रणे १६
हे भारत एतेही यहकर्म मेने कहेहे इनको करणहारा
जिन्कोजिन्को निमित्तो विषे करके पापसे लिप्तनहीहोता ति
न्को तिन्को निमित्तोको आपमोसे सुनो १६
जिघांसंतं जिघांसीया मतेन ब्रह्महा भवेत्
इति चाप्यत्र कौंतेय मंत्रो वेदेषु पठ्यते १७
जो कोई शस्त्र उठाइकरके अपने दोषविना मारणेकी वांछा
करे सो वेदोके अंतका पारगामीभीहोवे उसको जोमारे उस
के मारणेसे ब्रह्मघातका दोषनही होता १७
वेद प्रमाण विहितं धर्मं च प्रब्रवीमि ते
अपेतं ब्राह्मणं हत्वा यो हत्वा ह्याततायिनं १८
हे कौंतेय इसी प्रकारके अर्थका मंत्र वेदोविषे पढ्याहे वेदप्र
माणके धर्मको तोको हमकहतेहे १८
न तेन ब्रह्महा स स्यात् मन्यु स्तन्मन्यु मृच्छति
प्राणात्यये तथाज्ञाना दाचरन्मदिरा मपि १९
जो ब्राह्मण अपने विप्रधर्मकी मर्यादासे गलितभयाहे और श
स्त्रलेकर आततायी भयाहे उसके वधकरके ब्रह्मवधकादोष
नहीहोता इसविषे जो अधर्म उदे भया उसको वधरूपी अ
धर्म धर्मरूप होकर प्राप्त करताहे १९
अदेशितो धर्मपरैः पुनः संस्कार मर्हति
एतत्ते सर्व माख्यातं कौंतेया ऽभक्ष्य भक्षणे २०

प्रायश्चित्तविधानेन सर्वमेतेन शुध्यते २१

प्राणांत कालविषे औषधवास्ते सुरापान करणा इसका प्राय
श्चित पुनः षोडश संस्कार कहेहे धर्मवेत्ता जनोका यहवा
क्य प्रमाणहे २० ॥ इसीप्रकार और अभक्ष्य भक्षणमोभी
प्रायश्चित्तकहीहे जो इसविधिसे जो प्रायश्चित्तकरे तो सुरापा
नादि अभक्ष्य भक्षणसे शुद्ध होताहे २१

गुरुतल्पे हि गुर्वर्थे न दूषयन्ति मानवं
उद्दालकः श्वेतकेतुं जनयामास शिष्यतः २२

हे कौंतेय जो गुरोकी आज्ञाकरके गुरुते अन्य संतानकार्यवास्ते गुरुस्त्री गमनकरे तो गुरुतल्पगमनदोष मनुष्यको नही प्राप्तहोताहे उद्दालक मुनिजोहै सो अपनी स्त्रीविषे संतानवास्ते अपने शिष्यको आज्ञादेकर्के श्वेतकेतुपुत्रको होत्र विधिकर्के उत्पन्न करता भया २२

स्तेयं कुर्वंश्च गुर्वर्थे मापत्सु न निषिध्यते
बहुशः कामकारेण नैवेयः संप्रवर्तते २३

जो शिष्यहोकर अपने प्राणांतकालविषे प्राणधारणा प्राणधारणवास्ते गुरुद्रव्यको चोरीकरे लोभकर्के अधिक नालेवे तो स्वर्णस्तेयदोषको नही प्राप्तहोता २३

अन्यत्र ब्राह्मणस्वेभ्य आददानो न दुष्यति
स्वयमप्रणिताय च न सपापेन लिप्यते २४

और कालविषे ब्राह्मण द्रव्यविना परोपकारवास्ते स्वर्णचोरीकरे आप उसद्रव्यको नहीखावे तोभी स्वर्णस्तेयपापकर्के लिप्तनही होता २४

प्राणत्राणे ऽनृतं वाच्य मात्मनो वा परस्य च
गुर्वर्थे स्त्रीषु चैवस्या द्विवाह करणेषु च २५

हे राजन् अब असत्य वचनकी निर्दोषता सुनो प्राणांतकालमें अपनी प्राणरक्षावास्ते परोपकारवासते अथवा कामचारिणी गुरुस्त्री विषे असंगत्यागवास्ते गुरुस्त्रीसे असत्यवचनकहा और विवाहकालविषे असत्यवचनकहनेसे असत्यभाषणका दोषनही होता २५

नावर्तते व्रतं स्वप्ने शुक्रे मोक्ते कथंचन
आज्यहोम समिद्धेऽग्नौ प्रायश्चित्तं विधीयते २६

जो ब्रह्मचर्यविषे निद्राकालके स्वप्नविषे वीर्यपातकर्के ब्रह्मचर्यका भंगहोजावे तो प्रायश्चित्तवास्ते पुनःसंस्कारनही करणा इसका प्रायश्चित्त पुनर्मामत्विंद्रियं इसमंत्र आज्याहुतिमात्र होमविधान वेदमो कहाहे २६

पा[illegible]वितंत पतिते नास्ति प्रव्रजिते तथा
[illegible]ते पारदार्यं च तदर्मस्य न दूषके २७

जौनसा ज्येष्ठभ्राता अथवा ज्येष्ठकन्याके विवाहिना कनिष्ठो के विवाहका दोषहे सो ज्येष्ठभ्राता अथवा कन्या पतित होजा वे अथवा कुष्टादिरोगातुर होजावे अथवा संन्यस्त होजावे तब ज्येष्ठके विवाह विना कनिष्ठका विवाहका पाविविमि दोषनहीहोता और ज्येष्ठभ्राता संतानवास्ते अपनी स्त्रीविषेक निष्ठको आज्ञाकरे तोभी परस्त्री गमनका दोष कनिष्ठभ्राता को नहीं होता २७ ॥

वृथा पशुसमालंभं नैव कुर्यान्नकारयेत्
अनुग्रहः पशूनां हि संस्कारो विधिनोदितः २८

हे राजन् अब पशुहिंसा दोषकी निवृत्ति कहतेहे वृथा पशुहिंसा न आपकरे औरसे करावे यज्ञविषे पशुहिंसाक रणी उसकर्के पशुको स्वर्गको प्राप्तिहोतीहे इसवास्ते यज्ञ विषे पशुसंस्कार विधिकहीहे यहभी प्राणांतकालविषे प्राण रक्षावास्ते और श्राद्धविधिवास्ते ब्राह्मणकी प्रीतिवास्ते पशुहिं सा दोषनही करती २८

अनर्हे ब्राह्मणे दत्तमज्ञाना न्न दूषकम्
सत्कारणं तथा तीर्थे नित्यं वा प्रतिपादनम् २९

और अपात्रदानकी दोष निवृत्तिभी कहतेहे अज्ञानसे अपात्र को दान देना दूषणनही करता और पुत्र जन्मादि संस्का रमोभी दोषनही करता और तीर्थमो पर्वकालमोभी दोषन ही करती और नित्यदानमो अपात्र अतिथी दानादिकमोभी दोषनही करता और स्त्रीगृहस्ति कुटुंबी समीपवर्ति ब्राह्मण विषे और अपने अनुकूल अपना जाति संबंधी विषेभी अ पात्रदान दोषनही करती २९

स्त्रियास्तथा प्रचारिण्या निष्कृतिः स्या ददूषका:
अपिसा त्यज्यते तेन नतु भर्ता प्रदुष्यति ३०

और परस्त्री त्यागदोषकी निवृत्तिकहतेहे जोव्यभिचारिणी स्त्रीहे उसका संगदोषनही करता उसको अनादरनही करणा और अन्नवस्त्र देकर्के मलिनवस्त्र और असंस्कार भोजनदेकर्के दूरकोणादि अशुभस्थानविषे वनिर्जनवा सदेना इसकर्के आपमोको दोष और स्त्रीव्यभिचारदोष से पवित्र होतीहे ३०

श्री
शा.पं.
टी.
१२३

123

तत्त्वे ज्ञात्वात सोमस्य विक्रयः स्या दृदोषवान
असमर्थस्यभृत्यस्य विसर्गः स्या ददोषवान् ३१
अब सोमविक्रयकी दोष निवृत्ति कहतेहे यज्ञविधिका
तत्त्वज्ञानकर्के सोमविक्रयभी दोषनही करता ३१
वनदाहो गवा मर्थे क्रियमाणो नदूषकः
उक्तान्येतानि कर्माणि यानिकुर्वन्नदुष्यति
प्रायश्चित्तानि वक्ष्यामि विस्तरेणैव भारत ३२
इतिश्री महाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मे
प्रायश्चित्तीये वतस्त्रिंशोध्यायः ३४ ॥
गैसेही गौंके पोषणवास्ते तृणवृद्धि निमित्त वनविषे अग्नि
दाह करणा पाप प्रसंगका दोषनही होता हे राजन् एते
यहकर्म प्रथम अधर्मरूपहे फलसिद्धिमो धर्मरूपहो
ताहे ताते इन्हको करणेद्वारा पापदोषको नहीप्राप्तहो
ता हेभारत अब प्रायश्चित्त धर्मको तमको विस्तारकर्के कह
तेहे ३२ ॥ इतिश्री महाभारते शतसाहस्र्यां संहितायां वै
यासिक्यां शांतिपर्वणि राजधर्मे प्रायश्चित्तोपदेशोवतस्त्रिंशो
ध्यायः ३४ ॥
व्यासउवाच तपसा कर्मभिश्चैव प्रदानेन च भारत
पुनाति पापं पुरुषः पुनश्चे न प्रवर्त्तते ॥ १ ॥
श्रीव्यासउवाच हे भारत तोको प्रथमसाधारण प्रायश्चित्तक
हतेहे कृच्छ्रचांद्रायणरूपी तपकर्के यज्ञकर्मादिकर्के औेर
उभयमुखी तिलधेन्वादि दानकर्के यह पुरुष अपने पाप
कर्मको पवित्र करताहे परंतु जोहोउ फेर पापकर्मविषे प्र
वृत्तनही होवे तोपापसे मुक्तहोताहे १
एककालंतु भुंजीत चरन्भैक्ष्यं स्वकर्मकृत्
कपालपाणिः खट्वांगी ब्रह्मचारी सदोत्थितः २
जो ब्रह्मवधके प्रायश्चित्तकरताहे सो एककाल भिक्षाटनकर्के
भोजनकरे औेर आपही सर्वकामकरे भृत्यसे सेवा अपनी न
करावे भिक्षाकालमो ब्राह्मणकपालको हाथमो धारणकरे
उसीकी खट्वाकार अस्थिकोवी अपने साथरखे औेर ब्रह्मचर्य
व्रतधारणकरे सदा खडारहे पृथिवीमो लेवा नपडे एकत्र
आसनभी नहीकरे २ ॥

अनसूय रथः शायी कर्मलोक प्रकाशयन्
मूर्लैः द्वादशभि र्वर्षैः ब्रह्महा विप्रमुच्यते ३

यो कोई ब्रह्मघाती उसको कोई तो कोपन नहीं करे भूमितल
मे शय्या वस्त्रादि रहित शयन करे अपने ब्रह्महत्या पापको
आपही लोकोंको प्रकार सुनावे इस प्रकार द्वादश वर्ष व्रतक
र्के ब्रह्महत्या जो अपनी कामना कर्के कीनी उस पापसे मुक्त
होताहै ३॥

लक्ष्यः शस्त्रभृतां वास्या द्विदुषा मिच्छयात्मनः
प्रास्येदात्मान मग्नौवा समिद्धे त्रिरवाक्शिराः ४

अथवा लक्षशस्त्रधारी जहां आपजाई कर्के देहत्याग कीवांछा
कर्के सन्मुखजाई पडै अथवा प्रचंड अग्निविषे अपने शरीर
को होमकरे अधोमुख होकर पडजावे ४॥

यह तो पंडितोके उपदेशकर्के कामकृत ब्रह्मह
त्याका प्रायश्चित कहाहै अकामकृत अज्ञान
॥ कृत ब्रह्महत्याका प्रायश्चित इस
प्रकारकाहै उसको आपसुनो
जहां लक्षशस्त्रधारीहोवे तीन
वारतहां आपजाइपडे
अथवा अधोमुखहोकर
प्रचंडअग्निविषे तीनवा
र जाइपडे ४ +

जपन्वा यतमं वेदं योजनानां शतं व्रजेत्
सर्वस्वंवा वेदविदे ब्राह्मणायो पपादयेत् ५

अथवा वेदकी संहिताको समग्र तीनवार जितेंद्रीहोके पाराय
णकर्के अथवा पादचारी होकर तीनशाउ योजन तीर्थयात्रा
करे अथवा अपने गृहका सर्वस्व वेदविद्या ब्राह्मणको देवे ५

धनं वा जीवना यालं गृहं वा सपरिच्छदम्
मुच्यते ब्रह्महत्याया यो गोप्ता ब्राह्मणस्य च ६

अथवा ब्राह्मणको उपजीवका योग्य अखंड वृत्तिवाला धन दे
वे अथवा समग्री संपूर्ण ब्राह्मणको गृहदान देवे तो ब्रह्मह
त्यासे मुक्तहोताहै जो ब्राह्मणके रोगसे चोरभीतिसे रक्षाकरे
तोभी ब्रह्महत्यासे मुक्तहोताहै ६

षड्भिः वर्षैः कृच्छ्रभोजी ब्रह्महा पूयतेनरः
मासे मासे समश्नंस्तु त्रिभिर्वर्षैः प्रमुच्यते ७

अथवा कृच्छ्रव्रतकर्के षट्वर्षभर अखंड नियमकरे कृच्छ्रव्रत
की जैसी विधीहै उसको आपसुनो तीनदिन प्रातःकाल अर्धा
हार भोजन १ तीनदिन रात्रिभोजन २ तीनदिन अयाचित अ
नाश्रितभोजन ३ तीनदिन उपवासकरे ४ एकप्रकार ऐ
सा नियमकरे अथवा सातदिन प्रातःकालमें अर्धाहार
भोजन १ सातदिन सायंकालमें भोजन २ सातदिन अ
याचित अनाश्रितमें भोजन ३ सातदिन उपवासव्रत अथ

श्री० रा० य० टी० १२४

124

मतृतीयादिमासमो सातदिनकाक्रमसे द्वितीय चतुर्थादि
मास आठदिनका क्रमसे इसक्रमकर्के तीनवर्षकृच्छ्रव्रतक
रणा यह द्वितीयप्रकार कहाहे ७

संवत्सरेण मासाशी शुध्यते नात्र संशयः
तथैवोपवसन् राजन् स्वल्पेनापि प्रशुध्यते ८

अथवा एकमास सायंकालमोभोजन १ एकमास प्रातःकालमो
भोजन २ एकमास अयाचित भोजन ३ एक मासमो उपवा
सव्रत ४ इसप्रकारसे एकवर्षनियमकरे मासभरसेउप
रंत उपवासकरे तो स्वल्पमात्र जलपानसे वर्तमानहोये
तो ब्रह्महत्यासे मुक्तहोताहे ८

क्रतुना वाश्वमेधेन शुध्यते नात्र संशयः
ये वाप्यवभृथस्नाता केचिदेवं विधानराः ९

अथवा अश्वमेधयज्ञकर्के ब्रह्महत्यासे मुक्तहोतेहे अथवाको
ई ऐसे जो अश्वमेध यज्ञमो प्राप्तहोकर ब्राह्मणाको बहोतदा
न अथवा सर्वस्वदान अथवा ब्रह्महत्ति देकर यज्ञांतस्नान
मो अभिषेक करावे ९

ते सर्वे धूतपाप्मानो भवंतीति परा श्रुतिः
ब्राह्मणार्थे हतो युद्धे मुच्यते ब्रह्महत्यया १०

सो सबही ब्रह्महत्यासे मुक्त होतेहे यह वेदकी परम उत्तम
श्रुतीहे अथवा ब्राह्मण रक्षावास्ते युद्धविषे जो मराहे सो
भी ब्रह्महत्यासे मुक्तहोताहे १०

गवां शत सहस्रं तु पात्रेभ्यः प्रतिपादयेत्
ब्रह्महा विप्रमुच्येत सर्वपापेभ्य एव च ११

अथवा गोदान शतसहस्र पात्रब्राह्मणकोदेवे तो ब्रह्मह
त्यावाला सर्वपापोसे मुक्तहोताहे ११

कपिलानां सहस्राणि यो दद्यात् पंचविंशतिः
दोग्ध्रीणां सर्वः पापेभ्यः सर्वेभ्यो विप्रमुच्यते १२

अथवा पंचविंशति कपिलादान बहोत दुग्ध संयुक्त सव
त्सश्रृंगादि सर्वसामग्री संपन्न ब्राह्मणोको देवे तोभी सर्व
पापोसे मुक्तहोताहे १२

गो सहस्रं सहस्राणां दोग्ध्रीणां प्राणसंशये
साधुभ्यो वै दरिद्रेभ्यो दत्वा मुच्येत किल्बिषात् १३

अथवा ब्रह्महत्या प्रायश्चित्तमें प्राणसंशयमाने तो संपदा
युक्त होवे तो सवत्सा गोसहस्र बहुतद्रव्य संयुक्त बहुत
नसंपन्न दरिद्र कुटुंबी ब्राह्मणोंके देवे तोभी सो ब्रह्महत्या
पापसे मुक्त होताहै १३

घृतं वै यस्तु कांबोजान् ब्राह्मणेभ्यः प्रयच्छति
नियतेभ्यो महीपाल सर्वपापा त्प्रमुच्यते १४

अथवा कांबोज देशके उत्तम घोडे एक शांत ब्राह्मणोंको
देवे सोभी ब्रह्महत्या दोषसे मुक्त होताहै १४

मनोरथं तु यो दद्या देकस्मादपि भारत
न कीर्तयेत दत्वायः सर्वपापा त्प्रमुच्यते १५

अथवा एक ब्राह्मणको नियमव्रतजपादि संपन्नपात्र जान
करके उसका मनोवांछित कार्यसिद्धि करदेवे अपनेही क
हीतो भी ब्रह्महत्यासे मुक्त होताहै १५

सुरापानं सकृत्पीत्वा योग्निवर्णां सुरांपिवेत्
पवित्रय त्यथात्मान मिहलोके परत्रच १६

अब सुरापानका प्रायश्चित्त कहते हैं जो पुरुष सुरापान
एकवार अपनी कामनासे जानकर करे सो अग्निकर्के
प्रज्वलित सुरापानकरे तो उसके दाहकर्के अपने आप
को इहलोकमें तथा परलोकगतिमें पवित्र करताहै १६

मेरुप्रपातं प्रपतन् ज्वलनंवा समाविशन्
महाप्रस्थान मातिष्ठन् मुच्यते सर्वकिल्बिषैः १७

अथवा निर्जलदेशमें पर्वताग्रसे अपना शरीर पातकरे
अथवा प्रज्वलित अग्निविषे प्रवेशकरे अथवा महाप्रस्था
नके द्वारमें जाइकर हिमालय पर्वतको आरोहणकरे
तो सुरापानके सर्वपापसे मुक्त होताहै १७

बृहस्पति सवेनेष्ट्वा सुरापो ब्राह्मणः पुनः
समितिं ब्राह्मणो गच्छे दिति वै ब्रह्मणः श्रुतिः १८

अथवा सुरापान करणेहारा ब्राह्मण जोहै सो बृहस्पति सव
यागकर्के यज्ञकरलेवे पुनः सुरापान नकरे तो ब्राह्मणों
की सभाको आरोहण योग्य होताहै यह ब्रह्मवचनकी वे
दश्रुती कहतीहै १८

भूमिप्रदानं कुर्याद्यः सुरांपीत्वा विमत्सरः

श्री॰ रा॰ यं॰ टी॰ १२५

125

पुनर्मद्य पिवेद्राज न्संस्कृतः सच शुध्यति १९

जो कोई सुरापान करणे हाराहै सो अपनी भूमिकादान करे और क्रोध अहंकारसे रहित देहरक्षावास्ते औषधा र्थसुरापानकरे पुनः सुरापान नकरे तो सुरापान पुनः षोडश संस्कार करणेसे सुरापानपापसे शुद्ध होताहै

गुरुतल्पी शिलांतप्ता मायसी मभिसंविशेत्

अवकृत्यात्मनः शेषं प्रव्रजे द्दर्धदृष्टिनः २०

अबगुरुतल्पगमनका प्रायश्चित्त कहते हैं जो पुरुष गुरुतल्पगमन पापको करताहै लोहेकी शिलातप्तकरके उसमें शयनकरे और अपने लिंगको काटकर्के आकाशदृष्टिहोकर वेगसे दौड़जाये २०

शरीरस्य विमोक्षेण मुच्यते कर्मणो शुभात्

कर्मभ्यो विप्रमुच्येत यतः संवत्सरं स्त्रियः २१

इसप्रकारशरीरमोक्षणसे गुरुतल्पपापसे मुक्तहोताहै यह प्रायश्चित्त कामकृत गुरुतल्पकाहै अज्ञानकृतगुरुतल्प गमनका प्रायश्चित्तको कहते जो पुरुष गुरुतल्पगमन करताहै संवत्सर एकभर आहार विहार त्यागकरे और स्त्री प्रसंगसेभी रहितहोवे २१

महाव्रतं चरेयन्त्तु दद्यात्सर्वस्व मेवता ॥

गुर्वर्थे वाहतो युद्धे मुच्येत्कर्मणोशुभात् २२

अथवा मासभर महाव्रतकरे जलमात्रभी त्यागकरे अथवा अपनासर्वस्व गुरोको देवेगा प्रायश्चित्तादन वनवासकरे अथवा गुरुकार्यवास्ते युद्धमें प्राणत्यागकरे तो गुरुतल्पके सर्वपापसे मुक्तहोताहै ॥ २२

अनृते नापवादो चेत प्रतिरोद्धा गुरोस्तथा

उपाहृत्य प्रियं तस्मै तस्मा त्पाप प्रमुच्यते २३

जो पुरुष गुरोके साथ मिथ्यावचनको कहताहै और गुरोके साथ विरोध करताहै सो गुरोको जो प्रियकार्यहै उसको गुरोकी आज्ञाकर्के तनमन धनसे करके प्रसन्न करे तो उसपापसे मुक्तहोताहै २३

अवकीर्णी निमित्तेन ब्रह्महत्या व्रतंचरेत्

गोवधं वा सः षण्मासं तथा मुच्येत किल्बिषात्

परदारापचारीत परस्याभिहरन्वसु।

संवत्सरं व्रतीभूत्वा तथा मुच्येत किल्बिषात् २५

जो पुरुष परदाराविषे अभिचारकरे और परद्रव्यको हरले
वे सो संवत्सरभर कृच्छ्रव्रतकरे तो पापसे मुक्त होताहै २५

धनं तु यस्यापहरेत् तस्मै दद्यात्समं वसु

विविधेनाभ्युपायेन तदा मुच्येत किल्बिषात् २६

जिसके धनहाराहै उसको उसके धनोबरोबर धनदेवे
अनेक विधीके उपायकर्के उसको प्रसन्न करे तो उसपा
पसे मुक्तहोताहै २५

कृच्छ्राद्वादशरात्रेण संयतात्मा व्रते स्थितः

परिवेत्ता भवेत्पूतः परिवित्तिस्तथैव च २७

जौनसा ज्येष्ठभ्राताके विवाह विना कनिष्ठभ्राता विवाह
करलेतासे सो परिवेत्ता परिवित्तिहोतेहै उसका प्रायश्चि
त द्वादशदिनेवाले कृच्छ्रव्रतको करे और जितेन्द्रियहोवे
ऐसे व्रतनिष्ठाकी स्थितीसे परिवेत्ता परिवित्तिपापसे दोनो
भ्राता मुक्तहोतेहै २७

निवेशयेत्तु परित्यस्य सदा तावद्यिता पितृन्

नतु स्त्रिया भवेद्दोषो नतु सा तेन लिप्यते २८

कनिष्ठभ्राताने उस स्त्रीको त्यागकर और विवाहकरलेना
तब उसकी पापशुद्धि होतीहै अन्यथा शुद्धीनहीहोती २८

भाजने स्वंतरं शुद्धं चातुर्मास्य विधीयते

स्त्रियस्तेन प्रशुध्यंति इति धर्मविदो विदुः २९

हे राजन् जो स्त्रीसे महापातक दोषहोवे तो चारमासभ
र धारण पारण व्रतकर्तव्यहै तव स्त्रियाभी महापातक
से शुद्धहोतीहै ऐसी विधीको धर्मवेत्ता जनजानतेहै २९

श्री॰ ग॰ पं॰ टी॰ १२९

स्त्रियः पार्श्वे किलायाता नोपगम्या विजानता
रेतसाता विशुध्यंते भस्मना भाजनं यथा ३०

हे राजन् जो स्त्रीविषे प्रत्यक्ष व्यभिचार दृष्टनहीभया जो म
नविषे व्यभिचार शंका किसीके कहेकहा ऐसे शंकाभई
उसको गमन नहीकरणा रजस्वला स्नान जबउसस्त्रीको
होजावे तव शुद्ध होतीहै जैसे भस्मकर्के कांस्यादिपात्र शु
द्धहोताहै ३०

पात्रजोच्छिष्ट कांस्यं गवा घ्रात मथापि वा
गंडूषोच्छिष्ट मपि वा विशुद्ध्येद्दशभिस्त्वनत् ३१

प्रसंगसे पात्रशुद्धिभी कहतेहै जौनसा धातुमयपात्र शूद्र
कर्के उच्छिष्टहोवे अथवा गौका संघाहोवे अथवा शूद्रके
गंडूष जलकर्के अशुद्धहोवे सोभी दशसंस्कारसे शुद्धहोता
है पृथक् पृथक् पंचगव्यके प्रक्षालनसे पांच संस्कार म
नकाकर्के और जलकर्के और भस्मकर्के और अम्लद्रव्यके सं
स्कारकर्के पात्रशुद्धिकहीहै ३१

चतुष्पात्सकलो धर्मो ब्राह्मणस्य विधीयते
पादावकृष्टो राजन्ये तथा धर्मो विधीयते ३२

अव ब्राह्मणादिक्रमसे प्रायश्चित्त क्रमकहतेहै ब्राह्मणको
प्रायश्चित्तधर्म चारपादकर्के संपूर्ण संपूर्ण कहाहै और क्ष
त्रिको त्रिपाद प्रायश्चित्तविधान कहाहै ३२

तथा वैश्ये च शूद्रे च पादपादो विधीयते
विपादेवं विधेनैषां गुरुलाघव निश्चयम् ३३

जैसे वैश्यको शूद्रको द्विपाद और एकपाद प्रायश्चित्तक्रमसे
कहाहै इसप्रकारसे वर्णक्रमसे प्रायश्चित्त विधीका गौरव
लाघवके निश्चयको करलेवे ३३

तिर्यग्योनिवधं कृत्वा द्रुमां छित्वेतरा न्बहून्
त्रिरात्रं वायुभक्षीस्यात् कर्म च प्रथयन्नरः ३४

अव उपपातकादि प्रायश्चित्त कहतेहै जो पुरुष पशुयोनिके
वधको करताहै और बहोत वृक्षोका छेद वृथाकरताहै
सो तीनरात्रि वायुभक्षण मात्रकरे अपने पापकर्मको
सर्वत्र विख्यातकरे ३४

अगम्यागमने राजन् प्रायश्चित्तं विधीयते ॥
आर्द्रवस्त्रेण षण्मासान् विदार्य भस्मशायिना ३५

हे राजन् गुरुस्त्रीसे भिन्न इतरजो अगम्यस्त्रियाहै उन्हविषे अगम्या गमनकरे तो आर्द्रवस्त्रको षट्मासभर निरंतर धारण करे और भस्मविषे शय्याकरे ३५

एष एव तु सर्वेषां मकार्याणां विधिर्भवेत्
ब्राह्मणोक्तेन विधिना दृष्टांतागम हेतुभिः ३६

हे राजन् यहीविधि संपूर्ण अकर्तव्य सर्वपापों विषे कहीहै ब्राह्मणके वचनप्रोक्त विधिकर्के प्रायश्चित्त विधि दृष्टांत शास्त्रविचारके हेतुयुक्ति जोकर्के कर्तव्यतासे ज्ञातव्यहै ३६

जौनसा पापकर्म आपही जानाहै और ज्ञान नही सो रहस्य कृत होताहै उसका प्रायश्चित्त जो पुरुष कियाचाहे तो रुद्र सूक्तादि पारायण और पंचगव्यादि प्राशन भस्मादि धारण तीर्थयात्रा कृच्छ्रादिव्रत तिल होमादिकरे तो रहस्य कृत पापनिवृत्तहोताहै ३८ ॥

सावित्रीमप्यधीयीत शुद्धदेशे मिताशनः
अहिंस्रो मंदको जल्पो मुच्यते सर्वकिल्बिषैः ३७

अहिंसा गायत्री जप नित्यकरे तीर्थादि शुचिदेशमो वासकरे स्वल्पाहारादि व्रतकरे हिंसारहितहोवे और मूढ जैसा रागद्वेषादि रहितहोवे ज्ञात अज्ञात मूल्यहोवे और निषिद्धभाषणादि रहितहोवे सर्वपापोंसे मुक्तहोताहै ३७

अहस्सु सततं तिष्ठेद् अभ्याकाशे निशां स्वपन्
त्रिरह्नस्त्रिनिशायांच सवासा जलमाविशेत् ३८

हे राजन् दिनविषे निद्रानहीकरे और रात्रिविषे निरावरण स्थानमो गृहसे बाहिर निद्राकरे तीनदिन रात्रिमो तीनदिन दिनमोही व्रतकर्के पारणकरे और वस्त्रसंयुक्त प्रवेशकरे अर्थात् जलमोशय्याकरे ३८ ॥

स्त्रीशूद्रं पतितं वापि नाभिभाषेत कर्हिचित्
पापान्यज्ञानतः कृत्वा मुच्येदेवं व्रतो द्विजः ३९

श्री॰
गा॰ध॰
१२७

इसप्रकार वलकरणेद्वारा स्त्रीशूद्रोंसे संभाषण नहीकरे इसप्रकार व्रत जो करे अज्ञानसे किये जो पापकर्म उन्हसे द्विजमुक्त होताहै ३६

शुभाशुभफलं प्रेत्य लभते भूतसाक्षिकं
अतिरिच्येत योयत्र तत्कर्ता लभते फलम्

शुभ अशुभ कर्मजो किये है उन्हके साक्षी भूत मन आदिक अथवाभूत पृथिवीजल अग्निवायु आकाशादि यह उसक र्मके साक्षी है उसकाफल परलोकमे अवश्य होताहै जो कर्म अधिक होवे सो न्यूनकर्मके फलको जीतकर अ पने अधिकफलको करताहै ४०

तस्मात् ज्ञानेन तपसा कर्मणा च शुभं फलं
वर्धयेद् शुभं कृत्वा यथा स्यादतिरेकवान् ४१

ताते हेराजन् ज्ञानकर्के तपकर्के और शुभकर्के शुभफल होताहै अशुभकर्मको न्यूनकर्के शुभकर्मको अधिककरे जिसकर्के शुभफल अधिक होताहै ४१

कुर्यात् शुभानि कर्माणि निवर्तेत्पापकर्मणः
दद्यान्नित्यं च वित्तानि तथामुच्यत किल्बिषात्

परलोकविषे जो शुभफलकी वांछाकरे सो शुभकर्मोकोकरे और पापकर्मसे निवृत्त होवे नित्यप्रति सर्वप्रकारकेद्रव्य देवे तब पापकर्मसे मुक्त होताहै ४२

अनुरूपंहि पापस्य प्रायश्चित्तमुदाहृतं
महापातकवर्जं तु प्रायश्चित्तं विधीयते ४३

हे राजन् इसप्रकार पापके अनुसार प्रायश्चित्त शुभकर्मक र्केकहाहै महापातकविना होताहै महापातक प्रायश्चित्त महातपकर्के महाव्रत महादानसे देहान्तव्रतकर्केहोताहै ४३

भक्ष्याभक्ष्येषु चान्येषु वाच्यावाच्ये तथैव च
अज्ञानज्ञानयो राजन्विहितान्यनुजानतः ४४

महापातक विनाजो भक्ष्याभक्ष्यकर्म है और वाच्यावाच्य जो कर्म है ज्ञात अज्ञातकर्म है उन्हकी प्रायश्चित्त शुभक र्मके अधिकतासे होजाते है ४४

ज्ञानजातं कृतं पापं गुरुसर्वं भवत्युत ॥
अज्ञानात्स्खलिते दोषः प्रायश्चित्तं विधीयते ४५

जानकर्के जो पापकर्म किया सो गुरुदोषकारी होताहै अज्ञानसे किया उसका दोष स्वल्पहोताहै इसहेतुसे गुरु लघुप्रायश्चित मर्यादा कीनीहै ४५

शक्यते विधिना पापं यथोक्तेन व्यपोहितुं
आस्तिके श्रद्दधाने च विधिरेष विधीयते ४६

हे राजन् शास्त्रविधिके प्रायश्चित्तकर्के पापनिवृत्तकरणा शक्यहोताहै सो प्रायश्चित्तविधान आस्तिक पुरुषविषे श्रद्धावान पुरुषविषे विधिसे बनताहै ४६

नास्तिकाश्रद्दधानेषु पुरुषेषु कदाचन
दंभद्वेषप्रधानेषु विधिरेष न दृश्यते ४७

जो पुरुष नास्तिकहै और श्रद्धारहितहै दंभपाखंड द्वेष प्रधानतावाला पुरुषोविषे प्रायश्चित्त विधीका उपदेश कदापि दृष्टनहीं होता ४७

शिष्टाचारश्च शिष्टश्च धर्मो धर्मभृतांवर
सेवितव्यो नरव्याघ्र प्रेत्येह च सुखेप्सुना ४८

हे राजन् जो पुरुष इहलोकविषे परलोकविषे सुखकी वांछाकरताहै उसने शिष्टजनोका आचार और शिष्टजन और धर्म कर्म सेवने योग्यहै ४८

स राजन्मोक्ष्यसे पापात्तेन पूर्वेण हेतुना
प्राणार्थं वा धनेनैषां मथवा न्पकर्मणा ४९

तूं आपधर्मवेत्ताजनोविषे श्रेष्ठहै हे पुरुषव्याघ्र सो तूं पूर्व कहे शुभकर्मकरणेके हेतुसे पापकर्मसे मुक्तहोजावेगा प्राणायामावास्ते सभको धनदानकर्के और यथाविधि दंड कर्मकर्के पापपरोकासे मुक्त होजावेगा ४९

अथवा तेहणाकापि प्रायश्चित्तं तरिष्यसि
मा त्वेवानार्यजुष्टेन कर्मणा निधनं गमः ५०

अथवा तेरेको कुछ मनविषे पापभयहैतो तूं लोकानिंदा प्रांका निवृत्तिवास्ते प्रायश्चित्तकरेगा तब तेरा पापनिवृत्त होजावेगा जो तेने त्यागकरणा मानाहै सो अनार्य पुरुषो ने दुर्बलजनोने सेवाहै इसकर्के वृथा मरणको मत प्राप्तहोवे ५०

वैशंपायनउवाच एवमुक्तो भगवता धर्मराजो

श्री
रा.प.
टी.
१२८

138

धिष्ठिरः चिंतयित्वा मुहूर्तेन प्रत्युवाच तपोधनं ५१
इतिश्री राजधर्मे प्रायश्चित्तीये पंचविंशः २५
वैशंपायनउवाच हे जनमेजय भगवान व्यासजीने जब
धर्मराजजो राजा युधिष्ठिरसो उसके वचनके अभिप्रायको
चिंतनकर्के वहोउ तपोधनजोहे व्यासजी तिन्हको वचन कह
ताभया ५१ इति श्री महाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मे
प्रायश्चित्तविधानेनाम पंचविंशोध्यायः २५ ॥

युधिष्ठिरः किंभक्ष्यं वाप्यभक्ष्यंच किंचदेयं प्रशस्य
ते किंच पात्र मपात्रंच तन्मे ब्रूहि पितामह १
युधिष्ठिरउवाच हे पितामहजी आपने मोको प्रायश्चित्तवि
धानकहाहै अब मोको तुम यह कहो जो भक्ष्यकावस्तु है
अभक्ष्यकाहै औरदातव्य दानक्याहै पात्रकैसाहै जोइन्हका
लक्षणहै उसको कहो १

व्यासउवाच अत्राप्युदा हरंतीम मितिहासं पुरात
नं सिद्धानां चैव संवादं मनोश्चैव प्रजापतेः २
व्यासउवाच हे राजन् जो तेने प्रश्नकियाहै इसविषे एक
इतिहासको उदाहरणकर्के कहतेहै सिद्धोंका और मनुप्रजा
तिके संवादकर्के प्रवणकियाहै २

ऋषयस्तु व्रतपराः समागम्य पुरे विभुम्
धर्मं पप्रच्छु रासीन मादिकाले प्रजापतिं ३
हे राजन् आदिसर्गके प्रारंभकालमो ऋषीलोकव्रतनिष्ठावि
षे परायण भयेहै सो परम प्रभुजो स्वायंभुव मनुउसको स
मागमकर्के आदिकालविषे मनुप्रजापतिको धर्मकर्मके
स्वरूपके जाननेवास्ते प्रश्नकरतेभये ३ ॥

कथमन्नं कथंपात्रं दान मध्ययनं तपः
कार्याकार्यं च यत्सर्वं शंसवैत्वं प्रजापते ४
हे प्रजापते अन्नकैसे योग्यताकर्के और अन्नदानको पात्रकै
से ज्ञातव्यहै दानकास्वरूपकैसे ज्ञातव्यहै और वेदका अ
ध्ययनकैसे ज्ञातव्यहै और कार्य अकार्यकैसे ज्ञातव्यहै हे
प्रजापते जी यह सभही तुम हमको कहो ४

तेरेव मुक्तो भगवा न्मनुः स्वायंभुवो ब्रवीत्
शुश्रूषध्वं यथावृत्तं धर्मं व्यास समासतः ५

हे राजन ऋषिसिद्धलोकोंने जब ऐसा कहा तब भगवान स्वा
यंभुव वचन कहताभया हे सिद्धा आपधर्मके हमको यथाक्रम
विस्तारसे संक्षेपसे तोसे श्रवणकरो ५

प्रनादेशो तपोहोम उपवासस्तथैव च
आत्मज्ञाने प्रवृत्तियो यस्याशाश्च तत्पराः ८

जहां धर्मकर्मका विशेषकर्के अंगसाधन विधिनहीकही
तपहोम उपवास आत्मज्ञान प्रवृत्तनदीया आज्ञपुरुषने
धर्मपरायण इनको सेवने योग्यहै ८

दिशान्येतानि पुण्यानि पुण्यश्च धरणीभृतः
सुवर्णस्पर्शन मपि रत्नादि स्नान मेव च ७

यह पुण्यरूपक है है ओर पवित्रदेशविषे पर्वतभी पुण्य
यहै सुवर्णादकप्राशन ओर रत्नोदक स्नानभी पुण्यक
हाहै ७ ॥

देवस्थानाभि गमनं माज्यं प्राशन मेवच
एतानिमेध्यं पुरुषं कुर्वत्याशु न संशयः ८

देवकी यात्रा ओर घृतप्राशन यह जोहै सो अपने सेवनक
र्के पुरुषको पापसे पवित्रकरतेहै इसवातमो संशयनहीं
करणा ८ ॥

न वर्गेण भवेत्पापी कदाचिद पि मानवः
दीर्घ माप्नुयादेकेति पिराग्रं चात्मयो भवत् ९

जो प्राज्ञपुरुषहै सो गर्वनहीकरे गर्वकर्के पवित्रनहीं
होता जो पुरुष दीर्घआयुचाहै सो सुरापान नहीकरे
जो अज्ञानसे सुरापानकरे तीनदिन उस जलपानकरे
जो ज्ञानपूर्वक कामकृत सुरापानकरे सुराकोही उसक
र्के पीवे तो शुद्धहोताहै ९

अदत्तस्या नुपादानं दान मध्ययनं तपः ॥
अहिंसा सत्यम क्रोध इत्या धर्मस्य लक्षणं १०

अहिंसा सत्यम क्रोध इत्या धर्मका सामान्य लक्षण कहतेहै अदत्तवस्तु
अव तमको धर्मका सामान्य लक्षण कहतेहै यथाशक्ति दानकरे स्वा
को कदापि ग्रहणनहीकरे ओर यथाशक्ति यथोदानकरे स्वा
ध्याय वेदका अध्ययनकरे उपवासादिव्रतकरे हिंसाकोत्या
गकरे सत्यवचनकहे ओर क्रोधनहीकरे यह धर्मके सामान्य
लक्षणहै १० ॥

श्री॰
ग॰ य॰
टी॰
१२५

129

सएवधर्मः सोधर्मो देशकाले प्रतिष्ठितः
आदान मनृतं हिंसा धर्मोह्यावस्थिकः स्मृतः ११

हे सिद्ध यह धर्मका स्वरूपहै इससे भिन्न अधर्महै परंतु दे
शकाल अवस्थासे अधर्मभी धर्मरूप होताहै प्राणांतका
लविषे प्राणरक्षावास्ते चोरी मिथ्यावचनादि अधर्मभी ध
र्मरूपकहाहै प्राणरक्षावास्ते मांसादि पथ्यरूपतासे
हिंसाभी धर्मरूपहोतीहै इसप्रकार अवस्था विशेषका
रके धर्मस्वरूपज्ञानयहै कहाहै ११

द्विविधौ चाप्युभावेतौ धर्माधर्मौ विजानतो
अप्रवृत्ति प्रवृत्तिस्च द्वैविध्यं लोकवेदयोः १२

यह धर्म अधर्मजोहै सो दोनोंहि धर्मतत्ववेत्ता जनोंको लो
करीतिसे वेदकी श्रुतिसे दो प्रकारके बने इनके विषे प्रवृत्ति
निवृत्तिकरके शुभअशुभ फलदो कदाचित् धर्मप्रवृत्ति अ
शुभफल करतीहै निवृत्ति अशुभ फलको करतीहै १२

अप्रवृत्ते रमर्त्यत्वं मर्त्यत्वं कर्मणः फलं
अशुभस्या शुभं विद्यात् शुभस्य शुभमेवच १३

यह लौकिक व्यवहारकी प्रवृत्ति निवृत्तिजोहै इनका फल
कारणके अनुसारहोताहै कही अप्रवृत्तिकरके मनुष्यलो
कवनताहै मर्त्यलोक जोहै सो कर्मफल रूपवनाहै शुभ
कर्मका शुभफलहै अशुभकर्मका अशुभफलहोताहै १३

एतयो श्चोभयोः स्यातां शुभाशुभ तया तथा
दैवं च दैव संयुक्तं प्राणश्च प्राणदश्चह १४

ताते यह लौकिकजो धर्म अधर्मकी प्रवृत्ति निवृत्ति है इनके
स्वरूप और फल शुभरूपता अशुभरूपताकरके ज्ञातव्यहै
दैवयुक्त शास्त्रीयकर्मजोहै सो प्राणजीवनमे नेष्ठा इस यु
क्तिसे सर्वभूतोंके प्राणजीवनवनेहै जो प्राणोंको रक्षाक
रके पुनः प्राणजीवनकरे सोई धर्महै १४

अपेता पूर्व करणा दशुभानां शुभं फलं
ऊर्ध्वं भवति संदेहा दिह स्वार्थ मेवच १५

ताते अशुभकर्मको प्राणांतकालविषे प्राणरक्षावास्ते
करे वहोउ उसकी अपेक्षानकरे प्राणांतकालविषे अपे
क्षापूर्वकरे तो अशुभकर्मोका शुभफलहोताहै उसका॥

लसे उपरंतकर्तव्यताका सहदेवने तो जो लोकनिंदाके परि
हारवास्ते नित्यदानादि धर्मकर्म और केवल दृष्टस्वतासे
स्नानादि कर्मसे अपेक्षा पूर्वकरणसे प्रायश्चित्तयोग्यहो
ताहै अशुभकर्मोंका अपेक्षा पूर्वकरणसे प्रायश्चित्तकरणा
बनताहै १५ ॥

अपेक्षा पूर्वकरणे प्रायश्चित्तं विधीयते
क्रोधमोहकृते चैव दृष्टान्ता नम हेतुभिः १६

जौनसा क्रोधलोभादि करके मनका प्रिय अप्रिय अप्राप्ती
य क्रियाहै यावत्प्रमाण गुरुलघु पापहै उसके निवृत्तिवा
स्ते देहशोषणउपवासादि प्रायश्चित्त कर्तव्यहै और औषधी
हविष्यान्नभोजन पवित्रमंत्रजापकर्तव्यहै औरभी तीर्थाटना
दि श्रमकरके सो पाप सबप्रकार शांतहोताहै यह पूर्वसिद्धांत
बनाहै १६ ॥

शरीराणां अपक्लेशो मनसश्च प्रियाप्रिये
तदौषधैश्च मंत्रैश्च प्रायश्चित्तैश्च शाम्यति १७

जो हमने पूर्वकहाहै जो पाप हविष्यादि भोजन औषधी अथ
स मंत्रजपादि प्रायश्चित्त उपकरणे करके पापशांत होता।
है इसका क्रम अबकहतेहैं १७

उपवासमेकरात्रं दंडोत्सर्गे नराधिप ॥
विप्लुतो ब्रह्मचर्ये त्रिरात्रं तु प्रदोहितः १८

जो ब्रह्मचारी प्रमादकरके ब्रह्मचर्यके दंडका समावर्तनविधि
विना त्यागदेवे तो एकरात्र उपवासकरे जो बलात्कारके ब्रह्म
चर्यभंगकरके दंडको त्यागकरे तो त्रिरात्रव्रत करोहितभीकरे

१८

तथ शोकं च कुर्वाणो न म्रियेत यदा नरः ॥
शस्त्रादिभिरुपाविष्ट त्रिरात्रं तत्र निर्दिशेत् १९

जो पुरुष पुत्रादि मरणके तत्कालमें शोककरके शस्त्रादि
कोंसे अपने मरणेका यत्नकरे जो नहीं मरे तो आत्मघातदो
षनिवृत्तिवास्ते त्रिरात्रउपवासकरे १९

जातिश्रेण्यधिवासानां कुलधर्मांश्च सर्वशः
वर्जयंति च ये धर्मं तेषां धर्मो न विद्यते २०

जो कोई पुरुष अपनी जातीके धर्मको और अपने ग्रामनगर।
वासी गृहस्थ लोकोंके साधारण त्यागकरतेहैं उनको पापनि
वृत्तिका प्रायश्चित्त धर्मनहींहै उस सभाके लोकोंके साधा।

श्री॰
रा॰ पं॰
११॰
सि॰ ५२

130

मिलकर्केही सो धर्मवनजाताहे जो अपनी इच्छासे वलका।
र्के त्यागकरे तो उसविषे अधर्महृदि अधिकतासे प्रायश्चि
त धर्मनहीहोता २० ॥

दशावा वेदशास्त्रज्ञा स्त्रयो वा धर्मपाठकाः
यत्रब्रूयुः कार्यउत्पन्ने सधर्मोधर्मसंशये २१

जहां दशवेद शास्त्रवेत्ता ब्राह्मण और तीनधर्मकेवेत्ता स
भाकर्के धर्म संशयको निहत्तकर्के जोकछु प्रायश्चित्ता
दि धर्मरूपकहे सोधर्मप्रमाण होताहे २१

अनुड्वा मृत्तिकावैव तथा क्षुद्रपिपीलिकाः
श्लेष्मातके स्तथाविषे रभक्ष्यं विषमेव च २२

यह पदार्थ ब्राह्मणोके अभक्ष्यहे वृषभका गोमूत्र गोमयादि
और वृषभका सेव्या अन्नपानादिक और मृत्तिका और क्षुद्रपिपी
लिकाकामधु और श्लेषांतक और विषजाति सभही अभक्ष्यहे

२२

अभक्ष्या ब्राह्मणे मत्स्याः शल्कैर्येवे विवर्जिताः
चतुष्पात्कच्छपादन्ये मंडूका जलजाश्चये २३

जोकंटकादि वर्जित मत्स्यहे सो ब्राह्मणोको अभक्ष्यहे और
कछूसे भिन्न चारपादवाला जलचर मांस और जलके मीडक
यह विप्रको अभक्ष्यहे २३

भासाहंसाः सुपर्णाश्च चक्रवाका स्लवाचकाः
काक मद्गुश्च गृध्रश्च श्येनोलूक स्तथैवच २४

औरभी सपक्षी और हंस और हंस और भास और गरुड और च
क्रवाक चकवा और प्लवपक्षी और पगला और मद्गुपक्षी और
गृध्र और श्येन जाती वाजादिपक्षी और उलूपक्षी इनकामां
स अभक्ष्यहे २४ ॥

दष्ट्रादा दंष्ट्रिणः सर्वे चतुष्पा त्पक्षिणश्चये
येषा वोभयतो दन्ता चत्वरंष्ट्राश्च सर्वशः २५

और मांसभक्षणकरनेहारे दंष्ट्रावाले सब चार पाओवाले
ग्रामके वनके अभक्ष्यहे तिन्हको ऊर्धदंतपंक्तिहे अधावी
दंतपंक्तिहे सोभी अभक्ष्यहे और जिन्हके चारदंष्ट्राहे चार
अर्धचंद्राकारदंतहे सो सभही अभक्ष्यहे २५

एकशफा स्त्रियोष्ट्रीणां सूतिकानां गवामपि
मानुषीणां मृगीणांच न पिबेद्ब्राह्मणः पयः २६

अव अभक्ष्य दुग्धकहतेहे भेडका दुग्ध अश्वदुग्ध खरदुग्ध

और मृगी
और दुग्धादि प्रसूतिवाले गौका दुग्ध मानुषीदुग्ध और मृगी
दुग्ध पते दुग्ध ब्राह्मण औषध कल्पना विना न पीवे २६
प्रेतान्नं सूतिकान्नं च यच्च किंचिदनिर्दशम्
दुग्धमनिर्दिशं २७
अभोज्यं चाप्यपेयं च धेनोर्दुग्ध मनिर्दिशं २७
अब अन्नकी अभक्ष्यता कहतेहैं प्रेतभावका अन्न और सू
तकभावका अन्न जो दशदिनके अंतर्गत अन्न और जलभी
अन्न अभक्ष्यहै जल अपेयहै और गौका दुग्ध प्रसूतिसे
दशदिन अभक्ष्यहै २७ ॥
राजान्नं तेज आदत्ते शूद्रान्नं ब्रह्मवर्चसम्
आयुः स्वर्णकारान्नमवीरायाश्च योषितः २८
अब और भी अन्नके भक्षणका दोष कहतेहैं राजाका अन्न
तेजको भी हरताहै और शूद्रका अन्न ब्रह्मकर्मके तेजकोभी
हरताहै और स्वर्णकारका आयुषाको हरताहै और पति
पुत्रहीन विधवा स्त्रीका अन्नभी आयुषाको हरताहै २८
विष्ठा वार्धुषिकस्यान्नं गणिकान्नमथेन्द्रियम्
मर्षन्ति ये चोपपतिं स्त्रीजितान्नं च सर्वशः २९
और जो अन्नादि ऋणदानादि वृद्धिद्वारा वृत्तिका और क्रय वि
क्रयकी वृद्धिके वृद्धि कालेका अन्न विष्ठासमान अभक्ष्यहै
और वेश्याका अन्न और व्यभिचारिणी स्त्रीके पतिका अन्न
और । स्त्रीजित पुरुषका यह सभही वीर्य रुधिरके समान
अभक्ष्यहै २९
दीक्षितस्य विपर्ययस्य क्रतुविक्रियकस्य च
तक्ष्णश्चर्मावकर्तुश्च पुंश्चल्या रजकस्य च ३०
जो अग्निष्टोमादी दीक्षास्थित पुरुषहै उसका अन्न दीक्षाकालमें
अभक्ष्यहै और यव होमके उपरंत दीक्षितका अभक्ष्य नहीहै
और धनके खरच भयसे जो पुरुष भोगत्यागही नहै ऐसे के
कर्मको धनलोभकरकें विक्रयकरे उसका अन्नभी अभक्ष्य
है और तक्षाजो तरषाण उसका अन्न अभक्ष्यहै चर्मकारका
अन्न और बहोत पुरुषोके व्यवहारवाली पुंश्चली स्त्रीका अन्न
और धोबीका अन्नभी अभक्ष्यहै ३०
चिकित्सकस्य मृगयोः क्रूरस्योच्छिष्टभोजिनः

गणान्नाभाभिशस्तानां रंगस्त्री जीविनां तथा ३१
ओर चिकित्साद्वारकरणेका जो अन्न अभोज्य अन्नजोहे म
न्यादिक उनकी रक्षाकरणे हारीका अन्न ग्रामपालक
अन्नतेत्र्यादि सीमापालका अन्न ओर जोनसे अपने जातिग
णसे बाहिर होगयेहे उनका अन्न ओर रंगकारका अन्न
ओर स्त्रियोके अभिचारका अन्नलेनेहारी उनका अन्नभी ३१

परिवित्तीनां षंडस्य वंदिघ्नत विहांतथा
वामहस्तात्तं वान्नं भुक्तपर्युषितं चयत् ३२

ओर परिवेत्ता परिवित्ती अन्न ओर वंदी जनोका अन्न ओर द्यूतवे
त्ता जूआकरणेहारे उनका अन्न ओर वामहस्तकादिया
अन्न ओर भोजन सेवाकी रहा पेसावासी अन्नजोहे सोभी
अभक्ष्यहे ३२

स्वरान्वगत मुच्छिष्ट मभोज्यं शेषितंच यत्
पिष्टस्य मेक्षु शाकानां विकाराः पयसस्तथा ३३

ओर मदिराके स्पर्शवाला अन्न अभक्ष्यहे ओर परोसनेहारेणप
रोसकर अपने वास्ते धराजो अन्नसोभी अभक्ष्यहे ओर पिष्ट
के विकारका अन्न ओर इक्षुविकारका ओर शाकादि विकार
ओर दुग्धके विकार ३३

सक्तुधानाकरंभानां नोपभोग्या स्थिरस्थिताः
पायसंकृसरं मांस मपूपाश्च वृथाकृताः ३४

ओर शाकत जोहे ओर भूने यवोका धाना जोहे ओर दही सत्तू
जोहे यह चिरकालसे विकृत होजावे तो अभक्ष्यसे ओर खी
रके विकार वरफी आदिक ओर खिचडी ओर मांस ओर अपूप
पूडे पूरी आदिक जोहे सो देवता पितरोके यज्ञकार्यविना
वृथाकिये होवे सो भी अभक्ष्य होतीहे ३४

अपेया चाप्यभक्ष्याश्च ब्राह्मणैः गृहमेधिभिः
देवानृषी मनुष्यांश्च पितॄन् गृह्याश्च देवताः

पहर्थ ५ इत्यादि प्रकार खानपान जोहे सो ब्राह्मणोने देवतापितरो
का मनुष्योका ओर गृहस्थके गृहपति देवताको दियेविना
आपने भोजनपानके कार्यवास्ते करणे अपने वास्ते केवल
नही करणे ३५

पूजयित्वा ततः पश्चा द्गृहस्थो भोक्तु मर्हति
यथा प्रवजितो भिक्षु स्तथैव स्वगृहेवसेत् ३६

है सिद्धाजैानसागृहस्यहै सो इसप्रकार संपूर्णदेवता पितृमनु
ष्योंको पूजनकरके भोजन आपभी करणे योग्य होताहै तो जै
सा वनविषे प्रवज्याकरणोद्वारा भिक्षुत्यागकर्के वनविषे पर
मपदको पावताहे तैसे सो गृहस्थभी दानधर्मकर्के परमपद
को पावताहे ३७

एवंदत्तः प्रियैर्दारैः संवसन्धर्ममाप्नुयात्
न दद्याद्यशसे दानं न भयान्नोपकारिणे ३७

कर्म॰ इसप्रकार दानकरणोद्वारा गृहस्थ जोहै सो अपने प्रियकरणे
हारे पुत्रदारादि संयुक्तभी धर्मकर्मके प्रसंग फलको प्राप्तहो
ताहै केवल यशवास्ते दाननही करे केवल भयसेभी नहीक
रे केवल उपकारी वास्तेभी नहीकरे ३७

न नृत्य गीतशालीषु हास्यकेषु च धार्मिकः
न मत्ते चैव नोन्मत्ते नस्तेने न च कुत्सके ३८

नृत्य गीतादि शीलजनविषे नहीदेवे तैसेही धर्मकर्मनिष्ठा
वाला पुरुषजोहै सो मदमत्तविषे दान नदेवे उन्मत्तहस्तिवा
ले विषे नदेवे चोरविषे नदेवे ३८

नवाकहीनेविवर्णेवा नांगहीने न वामने
न दुर्जने दौष्कुलेवा व्रते योवा न संस्कृतः ३९

न दुर्जने दौष्कुलेवा व्रते यो वा न संस्कृतः मूर्खविषेभी नदे
निंदितहस्तिविषे नदेवे ओैर मूकविषे नदेवे मूर्खविषेभी नदे
वे अंगहीनविषे नदेवे वामन दुर्जनविषे दाननदेवे दुष्टकुल
विषेनदेवे व्रतहीनविषे नदेवे उपनयनादि संस्कार रहित
विषे दाननही देवे ३९

न श्रोत्रिय मृते दानं ब्राह्मणे ब्रह्मवर्जिते
अससम्यक्केषु यद्दत्त मससम्यक प्रतिग्रहः ४०

दानधर्मकरणेका यही विधान श्रेष्ठही जो वेदविद्यारहित
ब्राह्मणभी होवे ऐसे अपात्रविषे कदापि दाननही देना जो
दानपात्र विचारविना ओैर दानविधिविना दियाहै ओैर अपात्र
होकर्के जिसने शास्त्रविधिविना प्रतिग्रहदानका कियाहै ४०

उभयोस्यादनर्थाय दातुर्दातुरेव च ॥
यथा खदिर मालंब्य शिलांवाप्यर्णवांतरन् ४१

सो दानधर्मदाताको ओैर प्रतिग्रहकरणेको देनोको अनर्थका
रीहोताहै अवश्य नरकको प्राप्तकरताहै जैसे खदिरहस्तके
काष्टको आश्रयकर्के अथवा शिलाको आश्रय कर्के समुद्रमो
तरेतो ४१

मज्जेत मज्जत स्तद्द दाता यश्च प्रतिग्रही
काष्ठैवाहै यथावाक्कि रूपस्तीर्णो नदीप्यते ५२

जैसे सो पुरुष डूबजाताहै तैसे ऐसे दाता प्रतिग्रहीत्वा दोनो नरकसमुद्रमो डूबजातेहै ५२

तपः स्वाध्याय चारित्रै रेवं हीनः प्रतिग्रही
कपाले यद्वदापः स्युः श्वदृतौ यथापयः ५३

जैसे आर्द्र काष्ठैकर्के अग्नि प्रज्वलितकिया अग्निप्रकाशमानन हीहोता तैसे तपस्यावेदपाठादि उत्तम चरित्र रहित प्रतिग्रहकरणेहारा दानधर्मके फलको नहीकरता ५३

आश्रयस्थानदोषेण वृत्तहीने तथाश्रुते
निर्मंत्रो निर्व्रतोयः स्या द्दशास्तेनानसूयकः ५४

जैसे मनुष्यकपालमो जल अपवित्र होजाते ओर जैसे श्वान के चर्मपात्रविषे जलकी अपवित्रता होतीहै तैसे आश्रय देषके अनुस्वार शास्त्रविधानका दानधर्मभी निष्फलहोताहै ५४ ॥

अनुक्रोशात्तु दातव्यं हीनेष्व प्रतिकेषु च
नैवदेय मनुक्रोशा दाता [illegible] तेतरेष्वपि
आमा चरित इत्येव धर्मइत्येव वाप्तुनः ५५

जोब्राह्मणमंत्रसंस्कार हीनहोवे व्रतहीनहोवे शास्त्रज्ञानहीन हीनहोवे गुणोविषे दोषारोप करणेहाराहोवे ५५ उसको दया कर्के दानदातव्यहोताहै परंतु जो गुणहीनहोवे व्रतनिष्ठारहित होवे ऐसे दानआतुरविषे शास्त्रविधिका दानधर्म दातव्यनही है कौनहेतुसे कौनविधिकर्के दातव्यहै सो कहतेहै दानदया कर्केदेना ऐसाशिष्टाचारकर्के धर्मफलवृथा नहीहै ऐसी बुद्धिकर्के मंत्रसंस्कार विधिरहितदातव्यहै [illegible]
[illegible] दीयमान [illegible] निस [illegible]
[illegible] निसफलहोताहै [illegible] नही करनी ५५

निष्कारणं स्मृतं दत्तं ब्राह्मणे ब्रह्मवर्जिते
भवेदपात्रदोषेण नचात्रास्ति विचारणा ५६

वेद वर्जित ब्राह्मणविषे दीयमान दान निसकारण होताहै निसफलहोताहै अपात्र दोषकर्के दाननिसफलहोताहै इस विचारणा नही करनी ५६

यथा दारुमयो हस्ती यथा चर्ममयो मृगः
ब्राह्मणश्चानधीयानस्त्रयस्ते नाम बिभ्रति ४८
जैसे काष्ठमय हस्ती नाममात्र है जैसे चर्ममय सिंहादिमृग नाममात्र है तैसे वेदविद्याहीन ब्राह्मण केवल नामधारी होता है
यथा षण्ढोऽफलः स्त्रीषु यथा गौर्गवि चाफला
शकुनिर्वाप्यपत्रः स्यान्निर्मन्त्रो ब्राह्मणस्तथा ४९
जैसे नपुंसक स्त्रियों विषे निर्वीर्य होता है जैसे गौ दूसरी गौ विषे प्रवृत्तिकार्य को निसफल होती है जैसे पंखों विना पंछी वृथाफल होता है तैसे अमंत्रक ब्राह्मण निर्वीर्य होता है दानधर्म के फल को नही करता ४९
ग्रामधान्यं यथा शून्यं यथा कूपश्च निर्जलः
यथा हुतमनग्नौ च तथैव स्यान्निराकृतौ ५०
जैसे ग्राम के अंतर्गत धान्य स्थापन किया है सो फल वृद्धि को नही करता जैसे अग्निविना भस्म विषे होमकार्य निसफल होता है तैसे अपात्र मूर्ख विषे दानधर्म निसफल होता है ५०
देवतानां पितॄणां च हव्यकव्यविनाशकः
शत्रुरर्थहरो मूर्खो न लोकान् प्राप्तुमर्हति ५१
जो हव्यक मूर्ख जो ब्राह्मण है सो देवता पितरों के योग्य दीया जो हव्यकव्य उसके फल को विनाश करता है केवल वृथा द्रव्यहरण को शत्रु जैसा बना है सो अपने को और दाता को उत्तम लोकों को प्राप्त करणे को समर्थ नही होता ५१
एतत्ते कथितं सर्वं यथा वृत्तं युधिष्ठिर
समासेन महद्ध्येतत् श्रोतव्यं भरतर्षभ ५२
इति राजधर्मे व्यासवाक्ये षट्त्रिंशोऽध्यायः ३६
हे राजन् युधिष्ठिर जैसे स्वायंभुव मनु का और ऋषि सिद्ध लोकों के संवाद करके दानधर्म का तत्वतों को संक्षेप करके संपूर्ण दानधर्मकाल विषे कहा है विस्तार करके श्रवण करणा ह्मारे तो अपने राजधर्म की समृद्धि धारण करके दानधर्मकाल विषे श्रोतव्य तोको वनेगा ५२ ॥ ॥ ५२
इति श्री महाभारते शतसहस्रसंहितायां वैयासिक्यां शांतिपर्वणि राजधर्मे षट्त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३६ ॥ ॥ ॥

युधिष्ठिरउवाच श्रोतुमिच्छामि भगवन्विस्तरेण
महाद्युते राजधर्मान्द्विजश्रेष्ठ चातुर्वर्ण्यस्य चाखि
लान् १ ॥ युधिष्ठिरउवाच हे भगवन् द्विजश्रेष्ठ तुम
अब राजधर्मोंके कहो औरचारवर्णोंके धर्म संपूर्णकहो १

आपत्सुच यथा नीतिः प्रणेतव्या द्विजोत्तम
धर्ममालत्व पंथानं विजयेयं कथं महीं २

और हे द्विजोत्तम आपदाकालविषे राजनीति कैसे प्रयोग
से कर्तव्यहे मैं आपके वचनसें धर्ममार्गको आश्रयक
कें पृथिवीको कैसे जयकरलेवो २

प्रायश्चित्तकथाह्येषा भक्ष्याभक्ष्य विवर्जिता
कौतूहलानुप्रवणा हर्षं जनयतीव मे ३

यह आपने मोको प्रायश्चित्तकथा कहीहे और भक्ष्य अभ
क्ष्यको कथाकौतूहलसे प्रहृत्तभईहे सो अबमोको हर्ष
को उपजावने जैसे वनीहे कछु मनविषे संशय करतीहे ३

धर्मचर्या च राज्यं च नित्यमेव विरुध्यते
एवं मुह्यति मेचेतश्चिंतयानस्य नित्यशः ४

सो कैसे धर्म आचार और राज्यका व्यवहार इनका अन्योन्य
विरोधमोको भासताहे मे इसको सदाचिंतन करताहुं मे
रा चित संशयकरकें मोहित होताहे इसके आप निहृत्तक
रणे योग्यहो ४

वैशंपायनउवाच तमुवाच महाराज व्यासो वेदविदां
वरः नारदं समभिप्रेक्ष्य सर्वज्ञानां पुरातनम् ५

वैशंपायनउवाच हे राजन् जनमेजय ऐसा राजा युधिष्ठि
रकावचन जबसुना तब वेदवेत्ता जनोविषे श्रेष्ठ व्यासजी
सर्वज्ञ जनोविषे श्रेष्ठऐसी नारदजीको फिरकरकें देखकर ना
रदकी अनुमतिकरकें राजाको व्यासजी वचनकहतेभये ५

श्रोतुमिच्छसि धर्माणि निखिलेन नराधिप
प्रैहि भीष्मं महाबाहो कुरुवृद्धं पितामहं ६

व्यासउवाच हे नराधिप जो तूं विस्तारकरकें संपूर्णधर्मको सुना
चाहताहे तो महाबाहो तुमारा वृद्धजो कुरुकुलका पिता
मह भीष्महे उसको जाइप्राप्तहो ६

सते धर्मरहस्येषु संशयान्मानसस्थितान्
छेत्ता भागीरथीपुत्रः सर्वज्ञः सर्वधर्मवित् ७

सो भीष्म तेरे मनविषे स्थितजो धर्मरहस्योंविषे संशय तिसका
को छेदने करणेहाराहै जौनसा भीष्म साक्षात भागीरथी पुत्र
है और सर्वज्ञहै और सर्वप्रकारके धर्मरहस्यका वेत्ताहै ७

जनयामास यंदेवी दिव्या त्रिपथगा नदी
साक्षाद्ददर्श योदेवान्सर्वान् शक्रपुरोगमान् ८

जिसको साक्षात् देवनदी गंगा त्रिलोकीको तीनमार्गहोकर प
वित्रकरणेहारी सो पुत्रकर्के अपने गर्भसे उत्पन्न करतीभई
जौनसा भीष्म इंद्रादि सर्वदेवतागणोंको साक्षात् प्रत्यक्षदेषता
भया ॥ ८ ॥

बृहस्पति पुरोगांश्च देवर्षीन समकृत्प्रभुः
तोषयित्वा पचारेण राजनीति मधीतवान् ९

और बृहस्पतिको आदलेकर जेते देवऋषीहै उन्होंको अपनी
आचारविधिकर्के प्रसन्नकरके राजधर्मकी नीतिको आमदो
ताभया ॥ ९ ॥

उशना वेदयच्छास्त्रं यञ्च देवगुरु र्द्विजः
सब्रह्मधर्मं सवैयाख्यं प्राप्तवान् गुरुसत्तमः १०

जिस राजनीतिशास्त्रको शुक्राचार्य जानताहै और जिसराजनी
तिको देवाचार्य बृहस्पति देवगुरुजानताहै उन्हदोनोंकोजो
नीतिशास्त्रहै उसको नीतिशास्त्रको संपूर्णव्याख्याविस्तार
संयुक्त भीष्मजानताहै इसहेतुसे भीष्मही गुरुसत्तमही
उत्तमगुरुहै १० ॥

भार्गवात् च्यवनाच्चापि वेदानंगोप बृंहितान्
प्रतिपेदे महाबाहु र्वसिष्ठाच्च यतव्रतः ११

हे राजन् जिसहेतुसे हम भीष्मको गुरुसत्तम कहतेहै सो
जौनसा भीष्म भार्गव गोत्रको च्यवनसे अंगविद्या
श्रवणकर षडंगवेदवेत्ताभयाहै और महाव्रत
रसहितवेदोंके पढकर
चर्याकरके वसिष्ठजीभी वेदरहस्यकोभी प्राप्तभयाहै ११

पितामहसुतं ज्येष्ठं कुमारं दीप्ततेजसम्
अध्यात्मगतितत्त्वज्ञ मुपाशिक्षत यः पुरा १२

और सृष्टिके आदितिनका जन्महै ऐसे ब्रह्मापितामहके ज्येष्ठ
पुत्र जोहै सनतकुमार सो ब्रह्मविद्याके तेजसे अग्निसमान
प्रचंडतेजसेहै तिन्हसे अध्यात्मज्ञानकी परमरहस्य वि
द्याकी शिष्यचर्याके प्राप्तभयाहै १२

श्री॰ ग॰ पं॰ टी॰ १३४

134

मार्कंडेयमुखो कृत्स्नो यतिधर्मं मवाप्तवान्
रामादस्त्राणि शक्राच्च प्राप्तवान् पुरुषर्षभः १३

और जो भीष्म मार्कंडेयमुनि परमदीर्घायु चिरजीवीहै उनके यति धर्मजोहै संन्यासयोग उसको प्राप्तभयाहै और भार्गवगोत्रके परशुरामजीसे और इंद्रसे दिव्यशस्त्रविद्या को समग्रप्राप्तहोताभया १३

मृत्युरात्मेच्छया यस्य जातस्य मनुजेष्वपि ॥
यथान पत्यस्य सतः पुण्या लोकादि विश्रुताः १४

जोनरसो भीष्म मनुष्य योनिविषे उत्पन्नभयाहै तोभी जिसको मृत्युभी अपने इच्छाके वशवर्तीहै और यह भीष्मका परमउत्तम प्रभावहै जो भीष्म पुत्रसंतान रहितहै तोभी पुण्यलोकोविषे प्रसिद्धभयाहै १४

यस्य ब्रह्मर्षयः पुण्या नित्यमासन्सभासदः
तस्यना विदितं किंचि ज्ज्ञानं ज्ञेयेषु विद्यते १५

हे राजन् युधिष्ठिर सो ऐसा सर्वधर्मवेत्ता भीष्म सर्वधर्मोका तत्ववेत्ताहै तोको सर्वधर्मोंको तत्वकोकहेगा उसकोतूं धर्मतत्वजाननेवास्ते प्राप्तहो सो भीष्म आगे अवआवैगा हावे उत्तरायणकी प्राप्तिमें अपने प्राणोको अपनी इच्छासे त्यागकरेगा १६ ॥

हेराजन् युधिष्ठिर सो ऐसा सर्वधर्मवेत्ता भीष्म सर्वधर्मोका तत्ववेत्ताहै तोको सर्वधर्मोके तत्वकोकहेगा उसको तूं धर्मतत्वजाननेवास्ते प्राप्तहो सो भीष्म आगे अवआवैगाहावे उत्तरायणकी प्राप्तिमें अपने प्राणोको अपनी इच्छासे त्यागकरेगा १६ ॥

एवमुक्तस्तु कौंतेयो दीर्घप्रज्ञो महामतिः
उवाच वदतां श्रेष्ठं व्यासं सत्यवती सुतम् १७

वैशंपायनजी जनमेजयकोकहतेहै हे जनमेजय ऐसाव्यासजीने राजाको जबकहा तब कुंतीपुत्र सो राजायुधिष्ठिर दीर्घविचारवाली जिसकी प्रज्ञा बुद्धिहै और महामनन संयुक्त जिसकी मतीहै सो वचन बोलेवाले विषे महाश्रेष्ठ जो व्यासजी सत्यवतीके पुत्र तिनको वचन कहताभया १७ ॥

युधिष्ठिर: वैशंमे समहत्त्वा ज्ञातीनां रोमह
र्षणं आगस्कृत्सर्वलोकस्य पृथिवीनाशकारक: ॥ १८
युधिष्ठिरउवाच हे भगवन् व्यासजी मे जोहों सो सर्व अपने
ज्ञातीयोंका क्षयकियाहै जिसको श्रवणकर्के महाघोर पाप
कर्मके सभाको रोम रोम विस्मय पाइकर्के उठखडे होजावे
ऐसा कर्के सभका अपराधी होकर्के पृथिवीका नाशकारी
प्रसिद्धभयाहूं १८

घातयित्वा तमेवाजौ छलेना जिह्मयोधिनं
उपसंप्रष्टु महीमि तमहं केन हेतुना १९
और मेरा विपरीत उग्रकर्मसूनो जो भीष्म आपकपट युद्ध
का योधा नहीहै उसको मैने कपटयुद्धसे मरायाहै ऐसाक
र्मकर्के मै उसभीष्मको धर्मपूछ्छाकरणेको जाइकर कौनहे
तूसे प्राप्तहोवने योग्यहोताहूं उसहेतुको आपही तुमकहो ॥ १९
वैशंपायनउवाच ततस्तं नृपतिश्रेष्ठं चातुर्वर्ण्य
हितेक्षया पुनराह महावाहु र्यदुश्रेष्ठ महामति: ॥ २०
वैशंपायनउवाच हे जनमेजय जब राजाने ऐसाकहा तब म
हावाहु यदुश्रेष्ठ वासुदेवजी राजाके वचनको सुनकर सको
पजैसे होकर चातुर्वर्ण्य सर्वलोककी हितवांछाकर्के महा
मति भगवान् नृपश्रेष्ठजो राजायुधिष्ठिर उसको वचनकह
तेभये २० ॥ ॥

वासुदेवउवाच नेदानी मति निर्बंधी शोकं त्वकर्त्त
मर्हसि यदाह भगवान् व्यास स्तत्कुरुष्व नृपोत्तम ॥ २१
वासुदेवउवाच हे राजन् तूं वहोड शोकचिंताके हठको
करताहै हितवचनको कैंनो नही मानता अब अतिशोक
को हठवंधको तूं करणीयोग्य नहीहै जो तोको भगवान्व्या
सजी वचनकहतेहै उसको कर हे नृपोत्तम अब शोकका
परित्यागकरो २१

ब्राह्मणास्त्वा महावाहो भ्रातरश्च महौजस:
पर्जन्य मिव घर्मार्ते नाथमाना उपासते २२
हे महावाहो ब्राह्मणजो जोहै और तेरे भ्राता सभही महातेजवा

श्री
रा॰ध॰
टी॰
१२५

लेहे जैसे कृषीवालेलोक पर्जन्यको वर्षाकी आशावास्ते से
वाकरतेहे वारंवार देषतेहे तेरे भ्राता ओर ब्राह्मणभी ते
रेसे राजधर्मकी वांछाकरतेहे २२

हतशिष्टाश्च राजानः कृत्स्नं चैव समागतम्
चातुर्वर्ण्यं महाराज राष्ट्रं ते कुरुजांगलम् २३

जो रणसे हतशेषरहेहे ओर जेता राजमंडलहे सभही तेरी
वशहे चातुर्वर्ण्य जेता कुरुजांगल राजमंडलहे सोभी ते
रीवशभयाहे २३

प्रियार्थ मपि चैतेषां ब्राह्मणानां महात्मनां
नियोगा दस्यच गुरो र्व्यासस्या मिततेजसः २४

इन्हके प्रियवास्ते ओर ब्राह्मणोंके प्रियवास्ते ओर यह व्यासजी
तुम्हारे कुलगुरुसे महातेजस्वीहे इन्हकी आज्ञासे २४

सुहृदा मस्मदादीनां द्रौपद्याश्च परंतप
कुरुप्रियं ममित्यन्न लोकस्य च हितं कुरु २५

ओर हमलोकतेरे सुहृदहे हमारे प्रियवास्ते ओर द्रौपदीके
प्रियवास्ते तेने पापमारेहे इसकर्के अब सभका हितकर २५

वैशंपायनउवाच एवमुक्तः सकृष्णेन राजाराजीव
लोचनः हितार्थं सर्वलोकस्य समुत्तस्थौ महामनाः

वैशंपायनउवाच हेजनमेजय सो राजायुधिष्टिर कृष्णजीका
सुनकर कमलपुष्पके षिडनेजैसे नेत्रोंको प्रसन्नकर्के सर्व
लोकोंके हितवास्ते महामनकर्के आसनसे उठखडाहोताभ
या २६ सोनुनीतो नरव्याघ्रो विष्टरश्रवसा स्वयं

द्वैपायनेन चतथा देवस्थानेन जिष्णुना २७

सो राजा कृष्णभगवानजीने सावधान कियाहे ओर तेसे व्या
सजीने सावधान कियाहे देवस्थानने सावधान कियाहे २७

एतै श्चान्यैश्च बहुभि रनुनीतो युधिष्ठिरः
व्यजहान्मानसं दुःखं संतापंच महायशाः २८

सभके वाक्य सुनरहाहे आपभी सर्वशास्त्र श्रवणकाविधी
हे जो कछुश्रोतव्यशास्त्र उन्हके विचारविषे चतुरहे उसका
लमें सो राजा मनकी शोकशांतिको प्राप्तहोताभया २८

श्रुतवाक्यः श्रुतनिधिः श्रुतश्रव्य विशारदः
ततः समनसः शांति मगच्छत्पांडुनंदनः २९

ऐसा पांडुनंदन राजा युधिष्टिर सर्वप्रकारके ऋषि ओर महात्मा

२६

लोकभी जो जो तहां प्राप्तभयेहैं सभने राजाको आश्वासनकर्के
सावधानकिया तब राजाने शोकसंतापको त्यागदियाहै २९

सतैः परिवृतोराजा नक्षत्रै रिवचंद्रमाः
धृतराष्ट्रं पुरस्कृत्य स्वपुरं प्रविवेशह ३०

तब सो राजा संपूर्ण राजालोक मुनिलोक कृष्णजी भीमार्जुना
दिभ्राता औरव्यासादि उत्तमपुरुष जनोंकर्के युक्तशोभताभया
जैसे नक्षत्रोंकर्के चंद्रमा शोभताहै तैसे परमशोभाको प्रा
प्तहोताभया राजा धृतराष्ट्रको आगे लेकर नगर प्रवेशकी
इच्छाकरताभया ३०

प्रविविश्वः सधर्मज्ञः कुंतीपुत्रो युधिष्ठिरः
अर्चयामास देवांश्च ब्राह्मणांश्च सहस्रशः ३१

तब राजा कुंतीपुत्र युधिष्ठिर नगर प्रवेशकरणेको तियार
भया तब देवता गणोंको पूजाकरताभया और अनेक स
हस्रब्राह्मणोंको वस्त्रदक्षिणाकर्के पूजाकरताभया ३१

ततोनवं रथं शुभ्रं कंबलाजिन संवृतम्
युक्तं षोडशभि र्गोभिः पांडुरैः शुभलक्षणैः ३२

तब राजाके वास्ते नवांरथ तहां आवताभया कैसाहै मुक्ता
जालकर्के खचितहै श्वेतवर्णहै औरउत्तम जो केवल औरको
मल मृगचर्मइनसकर्के चारोतरफ सर्वत्र खचित कियाहै
बहोड कैसा रथहै श्वेतवर्ण षोडशबर्दोंकर्के जोडाहै वेरमं
षेमा लिखाहै जो राजा शत्रुजीतकर आवे तो वृषभ षोडश
संयुक्त रथकर्के नगरको प्रवेशकरे इसीप्रकार बृहस्प
तिपुरोहितने इंद्रको रथका अभिमंत्रण कियाहै और षोड
शवृषभोंके रथकर्के असुरोंके विजयकालमे नगरप्रवेश
करायाहै ३२ ॥

मंत्रैरभ्यर्चितं पुण्यैः स्तूयमानश्च वंदिभिः
आरुरोह रथं चैव सोमोमृतमयं यथा ३३

पुरोहितने मंत्रोंकर्के अर्चितकिये रथको चढकर्के राजा यु
रको जबचलाहै तब वंदिलोकोंकर्के स्तूयमानभयाहै उ
सरथको चढकर राजाऐसी शोभाको प्राप्तभया जैसे अमृत
मय रथको चढकर चंद्रमा शोभताहै ३३

जग्राहरश्मीन्कौंतेयो भीमो भीमपराक्रमः

अर्जुनः पांडुरः छत्रं धारयामास भानुमत् ३४
राजाके रथकी रश्मी जोहै वागां डक्को भीमपराक्रमवा
ला भीमसेन ग्रहणकरताभया और अर्जुन जोहै सो महा
प्रकाशवाले श्वेतछत्रकों राजाके ऊपर धारणकरताभया ३४

ध्रियमाणं तच्छत्रं पांडुरं रथ मूर्धनि
शुशुभे तारका कीर्णं सित मभ्र मिवांबरे ३५
सो श्वेतछत्रको राजाके रथऊपर अर्जुनने धारणकिया ऐ
सी शोभाकों करताभया तारागण संयुक्त जैसे श्वेत बाद
ल आकाशमों शोभताहै ३५

चामरव्यजने तस्य वीरौ जयकृत स्तदा
चंद्ररश्मि प्रभेशुभ्रे माद्री पुत्रा वलंकृते ३६
उस राजाके चामरको पंखाको माद्रीके पुत्र नकुल सहदे
वग्रहणकरते भये कैसेहै चामर और पंखा चंद्रमाकी कि
रणोंके समानश्वेतहै और मणिरत्नोंकरकें अलंकृतहै ३६

ते पंच रथमास्थाय भ्रातरः समलंकृताः
भूतान्यपि समस्तानि राजन्ददृशिरे तदा ३७
हे जनमेजय सो पांचो पांडव पांचोभ्राता रथविषे बैठेहै
वस्त्रभूषणोंकरकें अलंकृत संपूर्ण लोकोंने ऐसेदेषेहै जै
से आकाशादि पंचभूतरथदेहविषे प्राप्तभये दृष्टहोतेहै ३७

आस्थायत रथं शुभ्रं युक्त मश्वै र्मनोजवैः
अन्वया त्पृष्टतो राजन् युयुत्सुः पांडवाग्रजं ३८
उसराजाके पीछे मनोवेग श्वेतअश्वोंकरकें युक्तश्वेतरथको
चढकर युयुत्सराजा धृतराष्ट्रका पुत्र परमशोभाको प्रा
प्तकर जाताभया ३८

रथं हेममयं शुभ्रं शैब्यसुग्रीव योजितम् ॥
सहसात्यकिना कृष्णः समास्थाया न्वयाकुरून् ३९
तैसेही स्वर्णमय श्वेतरथ जोहै सैब्यसुग्रीव मेघपुष्प बला
हक इसप्रकारके नामवाले चार अश्वोंकरकें युक्तभयाहै उ
सको चढकर सात्यकि साथ कृष्णमहाराजकी कौरवोसाथ जा
ताभया ३९ नरयाने नतेनाग्रे पिता पार्थस्य भारत
अग्रतो धर्मराजस्य गांधारी सहितो ययौ ४०

तैसे पार्थराजाकाविना जेरथजोहे सोनरयान जोहे भाषाके तावतिरवार उसको चढकर गांधारी संयुक्त नगरको जाताभया ५० ॥

कुरुस्त्रियश्च ताः सर्वाः कुंती कृष्णा तथैव च
यानैरुच्चावचैर्जग्मु विदुरेण पुरस्कृताः ५१

कौरवोंकीयां स्त्रियां जोहे कुंती द्रौपदी सुभद्रादिक सोभी अपने अपने उच्ची शोभा न्यूनशोभावाले अधिकारवाले सवारी जोहे तिन्हों करके विदुरने आगे करलीनीहे सो भी नगरको यातीभईयां ५१

ततो रथाश्च बहुला नागाश्च समलंकृताः
पदाताश्च हयाश्चैव पृष्ठतः समनुव्रजन् ५२

उसके पीछे और बहोत रथ बहोत हाथी बहोत पेदल व होत घोडे बहोतशोभा संयुक्त असंख्यात नगरको जातेभये ५२

ततो वैतालिकैः सूतै मागधैश्च सुभाषितैः
स्तूयमानो ययौ राजा नगरं नागसाह्वयम् ५३

इस प्रकार सबही सेना संयुक्त जब सवार होकर चले तब राजायुधिष्ठिर सूतमागधोंकरके स्तूयमानभया हस्तिना पुरको जाताभया ५३

तत्प्रयाणं महाबाहो बभूवा प्रतिमं भुवि
आकुलाकुल मुत्कृष्टं हृष्टपुष्टजनाकुलं ५४

हे राजन् जनमेजय पांडवोंका हस्तिनापुरको प्रयाणजोहे सो पृथिवीविषे अतुलशोभासंयुक्त होताभया महाकोल लाहलके कलकलशब्द संयुक्त हृष्टपुष्ट जनोंकरके सं कुल होताभया ५४

अभियाने तु पार्थस्य नरै र्नगर वासिभिः
नगरं राजमार्गं तु यथावत्समलंकृतं ५५

राजाके नगर प्रवेशाकालमो नगरका राजमार्गजोहे सो नगरवासी नरोंकरके यथायोग्य शोभाके अलंकार यु क्तहोताभया ५५ ॥

पांडुरेण च माल्येन पताका भिश्च मेदिनी ॥

५२

श्री·
रा·ध·
टी·
१३७

137

संस्कृता राजमार्गोभूत् सुमनैश्च सुधूपितः ४६
सो नगरका राजमार्गकी पृथ्वी श्वेतपुष्पोंके माला समूह
करकै औरनानाप्रकारकी विचित्रशोभावाली पताकाध्वजों
करकै अतिशोभाकों प्राप्तहोतीभई और राजमार्गभी नाना
प्रकारके अगुरुधूपादिकोंकरकै उत्तमसुगंधीवालाहोताभ
या ४६
अथचूर्णैश्च गंधानां नानापुष्पप्रियंगुभिः
माल्यदामभिरासक्तै राजवेश्माभिसंस्कृतं
औरभी सुगंधीवाले चूर्णद्रव्योंकरकै और नानापुष्पवाली सुगं
धी अंतरोंकरकै और माला समूहोंकरकै और नानाप्रकारके
सिंचन संस्कारोंकरकै और दिव्य अप्सरागणोंके समानरूप
शोभावाली वेश्यासमूहकरकै राजमार्ग पूर्णहोताभया ४७
कुंभाश्च नवकद्वारि वारिपूर्णा नवादृढाः
कन्याः सुमनसो गौराः स्थापिता स्तत्रतत्रह ४८
और नगरके द्वारद्वारविषे नवीन कुंभजलकरकै परिपूर्ण अति
दृढगंधमालाहवी अक्षतवस्त्रोंकरकै अलंकृतस्थापनकिये
हैं और कन्याजोहै सो भी पुष्पमाला वस्त्रभूषणोंकरकै संयु
क्त गौरवर्णवालीयां जहांतहांप्रवेशमार्गमो राजाके मंगल
दर्शनवास्ते नीराजनकरणेवास्ते स्थापनकीनीहै ४८
तथा स्वलंकृते द्वारे नगरे पांडुनंदनः ॥
स्तूयमानः शुभैर्वाक्यैः प्रविवेश सुहृद्वृतः ४९
इतिश्री युधिष्ठिर नगरप्रवेशः सप्तत्रिंशः ३७
इसप्रकार जहां द्वारा अलंकृत किये ऐसे नगरको पांडुनंद
न राजायुधिष्ठिर जोहै सो ब्राह्मणोंके स्वस्तिवाचन और शु
भसूचक आशीर्वाद वाक्योंकरकै स्तूयमानभयाहै अपने सु
हृत्संबंधिजनोंके हर्षसंयुक्तनगरको प्रवेशकरताभया ४९
इतिश्री महाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मे युधिष्ठिरस्य नगर
प्रवेशोनाम सप्तत्रिंशोध्यायः ॥ ३७ ॥

वैशंपायनउवाच
प्रवेशने च पार्थानां जनानां पुरवासिनां
दिदृक्षूणां सहस्राणि समाजग्मुः सहस्रशः १

वैशंपायनउवाच हे राजन् जनमेजय पांडवोंके नगर प्रवेश कालमें पुरवासी जनोंके सहस्रोंके सहस्र देषनेकी इच्छाक कें आयातेभये १

सराजमार्गः शुशुभे समलंकृत चत्वरः
यथाचंद्रोदये राजन् वर्धमानो महोदधिः २

उस नगरका सो राजमार्ग अलंकृतकिये चौकस्थान जिस के ऐसे शोभताभया जैसे चंद्रमाके उदयकालमें समुद्र वढ जाताहै ॥ २ ॥

गृहाणि राजमार्गेषु रत्नवंति महांतिच
प्रकंपंतीव भारेण स्त्रीणां पूर्णानि भारत ३

जैसे राजमार्गविषे पुरवासी जनोंके गृहहैं सो रत्नशोभाक कें बडे प्रकाशमानभयेहैं देषणेहारी स्त्रीजनोंकर्के पूर्णभयेहैं मानो भारकर्के कंपायमानहैं ३

ताः शनै रिवसव्रीडं प्रशशंस युधिष्ठिरं
भीमसेनार्जुनौ चैव माद्रीपुत्रौ च पांडवौ ४

हे भारत हे जनमेजय सो नगरकी नारीगण शनै शनै मंदमं द सव्रकर्के लज्जा संयुक्त राजा युधिष्ठिरको स्तुतीकरतीभ ई भीमसेनको अर्जुनको माद्रीपुत्र जोहै नकुल सहदेव तिन्होंकोभी स्तुतीकरलगीहै ४

धन्या त्वमपि पांचालि यात्वं पुरुष सत्तमान्
उपतिष्ठसि कल्याणि महर्षीनिव गौतमी ५

बहोड द्रौपदीको स्तुतिकरणलगीहै हे पांचालि तूं महा धन्यहै जोनसी इह पांचोपुरुष सत्तमोंको सदाउपासना करतीहै जैसे अहल्या गौतम ऋषीको सदासेवनकरतीहै ५

तवकर्माण्यमोघानि व्रतचर्याच भामिनी
इतिकृष्णां महाराज प्रशशंसुस्तदा स्त्रियः ६

हे द्रौपदि तेरेकर्म सभही सफलहै और सेवातेरीभी पर मउत्तमहै इसप्रकार सभही स्त्रीगण द्रौपदीको प्रशंसाक रतेभए ६ प्रशंसावचनै स्तासां मियः शद्वैश्च भारत

श्री॰
रा॰यं॰
ली॰
३८

38

प्रीतिजैश्च तदाशब्दैः पुरमासीत्समाकुलं ७

हे राजन् जनमेजय इसप्रकारके स्त्रियोंका प्रशंसा वचनो के अतिप्रिय हर्षके शब्दोंकरकै समग्रपुर संकुल होताभया

तमतीत्य यथायुक्तं राजमार्गं युधिष्ठिरः
अलंकृतं शोभमानं उपायाद्राजवेश्मतत् ८

इसप्रकार राजायुधिष्ठिर उस राजमार्गको लंघकरकै बडा शोभा संयुक्त राजमंदिरको प्राप्तहोताभया ८

ततः प्रकृतयः सर्वाः पौरजानपद स्तथा
ऊचुः कर्णसुखावाचः समुपेत्य तत स्ततः ९

तहां जेते अधिकारी लोकहै और नगरके देशके प्रधान लोकहै सो कर्णविषे आनंदकरणे हारे जयकार शब्द और स्तुतिशब्द आशीर्वादके शब्दोंको जहां तहां राजाको प्राप्तहोकर कहतेभये ९ ॥

दिष्ट्या जयसि राजेंद्र शत्रून्शत्रु निसूदन
दिष्ट्याराज्यं पुनःप्राप्तं धर्मेणच बलेनच १०

हे राजेंद्र सफलभया तूं शत्रुगणोंका जेताहोकर शत्रुगणोंको जीत आयाहै हमको बहोत आनंदभयाहै तोको अब राज्य अपने धर्मकरकै और बलकरकै प्राप्तभयाहै १०

भवनस्त्वं महाराजा राजेंद्र शरदां शतम्
प्रजापालय धर्मेण यथेंद्र स्त्रिदिवं तथा ११

हे राजन् तूं हमारा राजाशकडे वरसहोवे प्रजाको धर्मकरकै पालनकर हमनेरै सभ अधीनहै जैसे स्वर्गराज्यको इंद्रपालन करताहै ११ ॥

एवं राजकुलद्वारि मंगलैरभि पूजितः आ
शीर्वादान् द्विजैरुक्तान् प्रतिगृह्य समंततः १२

इसप्रकार राजा युधिष्ठिर राजद्वारविषे मंडलवासी अधिकारी लोकोंने नगरदेशवासी प्रधानलोकोंने नजरभी देकर पूजाहै और ब्राह्मणोंकोंभी मंत्रपुष्प फलादि संयुक्त आशीर्वाद वचनको सभसे लेकर

प्रविश्य भवनं राजा देवराज गृहोपमम्
श्रुत्वाविजय संयुक्तं रथात्पश्चादवातरत् १३

देवराजके इंद्रके समान मंदिरको प्रवेशकरके ग्रहाविजय
संयुक्तभया रथसे पश्चात् उतरताभया १३

प्रविश्य मंदिरं श्रीमा न्देवता नभिगम्यच
पूजयामास रत्नैश्च गंधमाल्यैश्च सर्वशः १४

राजा मंदिरके भीतर प्रवेशकर्के महासंपदायुक्त देवताकेमंदि
रको जाकरके रत्नोंकर्के गंधमाल्यादिकोंकर्के सर्वप्रकारोंक
र्के सर्वत्र सबको पूजाकरताभया १४

निश्चक्राम ततः श्रीमान् पुनरेव महायशाः
ददर्श ब्राह्मणांश्चैव सोभिरूपा नवस्थिताः १५

वहाँ तहां सो महायशवाला राजानिकरकर ब्राह्मण जो
अपने अपने अधिकारसे प्राप्तभये तिन्होंको देखताभया १५

स संवृत स्तदा विप्रै राशीर्वाद विवक्षुभिः
शुशुभे विमलश्चंद्र स्तारागण वृतो यथा १६

आशीर्वाद कहनेकी इच्छावाले ब्राह्मणोंकर्के संयुक्त राजा
परमशोभाको प्राप्तहोताभया जैसे तारागण संयुक्त नि
र्मल पूर्णचंद्रमा शोभताहै १६

तांस्तु वै पूजयामास कौंतेयो विधिवद्द्विजान्
धौम्यंगुरुं पुरस्कृत्य ज्येष्ठं पितर मेवच १७

जेते सो संपूर्ण ब्राह्मणके तिन्होंको कौंतेय राजा युधिष्ठिर
धौम्यगुरुको पिताके ज्येष्ठभ्राता राजा धृतराष्ट्र राजाको
अग्रलेकर्के सबको विधिकर्के पूजाकरताभया १७

सुमनो मोदकै रत्नै र्हिरण्येन च भूरिणा
गोभि र्वस्त्रैश्च राजेंद्र विविधैश्च किमिच्छकैः १८

पुष्पोंकर्के मोदकोंकर्के गोदानोंकर्के वस्त्रोंकर्के आपकी
क्यावांछाहै इसप्रकारके इच्छादानको प्रश्नपूर्वक प्रसन्नक
रके पूजाकरताभया १८

ततः पुण्याह घोषोभू द्दिवंस्तब्ध्वेव भारत
सुहृदां प्रीतिजननः पुण्यश्रुति सुखावहः १९

तब राजाके मंदिरविषे प्रवेशकालका शुभसूचक पुण्याह
घोष होताभया मानो आकाशको स्तंभन करताहै सुहृद
लोकोंको प्रीतिजनकहै महापवित्रहै कर्णोविषे श्रवणकर्के
परम सुखकारीहै १९

श्री॰ रा॰ य॰ टी॰ १२५

139

हंसवत्रेद्रुषां राजन्द्विजानां तत्र भारती
शुश्रुभे वेद विदुषां शुक्लार्थ पदात्तरा २०

तहां राजा ब्राह्मणोंकी पवित्रवाणीको श्रवणकरताभ
या कैसेहै दानमान सत्कारकर्के प्रसन्न कियेहे उन्होंकी
हंसोंकी प्रसन्नसुभावोसी प्रकटभई वहांउ ब्राह्मण वेदवेत्ता
हे उन्होंकी वाणी शुक्ल सर्थसिद्धीके पदोंकी अत्तरकल्प
ना संयुक्तहे २०

ततो दुंदुभि निर्घोषः शंखानां च मनोरमः
जयं प्रवदतां तत्र स्वनः प्रादुरभून्नृप २१

जव पुण्याह घोषहोगया तव दुंदुभी भेरीशब्द नगारे इ
त्यादि अनेकजंत्रोंका शब्द और शंखोंकाशब्द मनको आनं
दकरणेहारा जयकार बोलने वालेका आनंदशब्द तहां
अत्यंत उदे होताभया २१

निःशब्दे च स्थिते तत्र ततो विभ्राजते पुनः
राजाने ब्राह्मणका या चार्वाको राक्षसो ब्रवीत्

जववाजंत्रोंकाशब्द होगया तव ब्राह्मणनोंविषे एककप
टी विप्ररूपी चार्वाक नामा राक्षस बोलताभया २२

तत्र दुर्योधन सखा भिक्षुरूपेण संवृतः
सांतः शिखी त्रिदंडी च धृष्टो विगतसाध्वसः २३

तहां सो राक्षस दुर्योधनका सखा रहा भिक्षुरूपकर्के
छिपारहा महावीर्य जिसकी शिखाहे और त्रिदंडी वनार
हा वचन कहनेविषे महाढीठ अति निर्भयरहा २३

वृतः सर्वैः स्तथा विप्रै राशीर्वाद विवत्तुभिः
परं सहस्त्र राजेंद्र तपो नियम संश्रितैः २४

जो ब्राह्मण आशीर्वाद कहनेकी इच्छावालेहे तपस्या नि
यमके आश्रयवाले रहे तिन्होंके साथ मिलारहा २४

स दुष्ट पाप माशंसु पांडवानां महात्मनां
अनामंत्र्यैव तान्विप्रां स्तमुवाच महीपतिं २५

सो दुष्टकपटविषी विप्रमहात्माजो पांडव उन्होंका [illegible]

पापकहनेवाला जो अशुभसूचक ब्राह्मण तिसको विनाशकहेही महीपतिजो राजायुधिष्ठिर उसको प्रगटवचन कहताभया २५

चार्वाकउवाच इमेप्राहुर्द्विजाः सर्वे समारोप्य वचो मयि । धिग्भवंतं कुनृपतिं ज्ञातिघातिनमस्तुवै २६

चार्वाकउवाच हे राजन् यह सभही ब्राह्मण मेरे विषे अपना वचन छिपाइकर तोको कहतेहे ऐसे खोटे राजाको तोको धिगहोवे जिसने अपने ज्ञातीके संबंधिजन राज्यलोभसे मारेहें २६

किं तेन स्याद्धि कौंतेय कृत्वेमं ज्ञातिसंक्षयम ।
घातयित्वा गुरूंश्चैव मृतं श्रेयो न जीवितम् २७

हे कौंतेय ऐसा अपने ज्ञातीके घोरक्षयकर्के तोको क्या पापन हीहोता जिसने अपने गुरुभी मरायाहे तोको मरणा कल्याणकारीहे जीवना तेरा कल्याणकारी नहीहें ऐसें यह ब्राह्मण सभही मुखसें कहतेहें २७

इति ते वै द्विजाः श्रुत्वा तस्य दुष्टस्य रक्षसः ।
विव्यथुः क्षुकुशुश्चैव तस्य वाक्यप्रधर्षिताः २८

हे राजन् जनमेजय सो सभही ब्राह्मण उस दुष्ट राक्षसके वचनको सुनकर मनविषे बहोत पीडा मानते भये सभही कलाइ उठतेभये उसको वाक्यकर्के दुखीहोतेभये २८

ततस्ते ब्राह्मणाः सर्वे सच राजा युधिष्ठिरः ॥
व्रीडिताः परमोद्विग्नास्तूष्णीमासन्विशांपते २९

चार्वाकके वचनसे उपरंत सभही सो ब्राह्मण और सो राजा युधिष्ठिरभी लज्जाको प्राप्तभये सभही तूष्णी होजातेभये २९

युधिष्ठिरउवाच प्रसीदंतु भवंतो मे प्रणतस्याभियाचितः । प्रत्यासन्नव्यसनिनं न मां धिक्कर्तुमर्हथ ३०

युधिष्ठिरउवाच हे महाप्रभुजी सभही ब्राह्मणो परप्रसन्न हो मे आपको प्रणामकरताहूं और अपराध क्षमायाचनकरताहूं मोको आपदाको अंतकायह स्वल्पकालही वीतिहे मे परमदुःखके असनवालाहूं मोको धिगकार नहीकरो अ वजो कर्तव्यहे उसका उपदेशकरो ३०

वैशंपायनउवाच ततो राजन् ब्राह्मणास्ते सर्व एव

श्री
रा॰ पं॰
टी॰
१४॰

विशांपते कुरुश्रेष्ठ दचोस्माकं श्रीरस्तु तव पार्थिव ३१
वैशंपायनउवाच हे राजन् तब सो सभही राजाको वचन कहतेभये हे राजन् युधिष्ठिर यहवचन हमारानहीहै हमपही कहतेहै तोको सदा अखंड संपदाहोवे ३१

ततस्तैव महात्मानं ततस्ते ज्ञान चक्षुषा ॥
ब्राह्मणा वेदविद्वांस स्तपोभि र्विमलीकृताः ३२
ऐसा कहकर मनमो विचार करताभया क्या हेतुहै ज्ञान दृष्टिकर्के जानलेतेभये सो सभही ब्राह्मण वेदवेत्तारे विद्याकर्के तपकर्के निर्मल अंतःकरणवालेहै उस चार्वाक को जानकर राजाको वचनकहतेभये ३२

विप्राऊचुः एषदुर्योधन सखा चार्वाको नाम राक्षसः परिव्राजक रूपेण हितंतस्य चिकीर्षवः ३३
विप्राऊचुः यह ब्राह्मणनहीहै चार्वाक नामकर्के राक्षसहै दुर्योधनका सखाहै त्रिदंडी रूपकर्के दुर्योधनके हितको कराचाहताहै ३३ ॥

न वयं ब्रूतधर्मात्मन् व्येतुते भयमीदृशम्
उपतिष्ठतु कल्याणं भवंतं भ्रातृभिः सह ३४
हे राजा तुं धर्मात्माहै तोको हम ऐसावचन कदापिनही कहते ऐसा भयतोको कदापि नहीहोवे तेराभय निवृत्त होवे सदाभ्रातृवर्ग संयुक्त कल्याणहोवे ३४

वैशंपायनउवाच ततस्ते ब्राह्मणाः सर्वे हुंकारैः क्रोधमूर्छिताः निर्भर्त्सयंतः शुचयो निजघ्नुः पापराक्षसं
वैशंपायनउवाच हे राजन् जनमेजय सभही ब्राह्मण राजाको ऐसावचकहे पीछे सभही क्रोधकर्के मूर्छितभयेहै सभही पवित्रहै उसचार्वाककोवाणीकर्के तिरस्कारकरतेभये हुंकारोकर्के पापराक्षसको मारदेतेभये ३५

स पपात विनिर्दग्ध स्तेजसा ब्रह्मवादिनां
महेंद्राशनि निर्दग्धः पादपोंकुरवानिव ३६
सो पापराक्षस ब्रह्मवादी विप्रोंके वाणीरूप तेजकर्के दग्धभया प्राणत्यागकर्के पृथिवीमो पड़ाऊपा शोभताभया जैसे इंद्रकेवज्रकर्के दग्धभया अंकुरोवाला वृक्ष पृथिवीमो पड़जाताहै ३६ ॥

पूजितास्च यथुर्विप्रा राजान मभिनंयतं राजानरू
षेमापेदे पांडवः सस्हृज्जनः ३७ इति श्री राज
धर्मे चार्वाकवधोनाम अष्टात्रिंशोध्यायः ३८
ब्राह्मणजोहे सो राजाने पूजनकिये सो राजाको आशीर्वाद
देकर्के प्रसन्नकर्के जातेभये राजा परमहर्षको प्राप्तहोताभ
या भीमादि और पांडवभी अपने सुहृदजनोके साथ परा
महर्षको प्राप्तहोतेभये ३७ इतिश्री महाभारते शांतिप
र्वणि राजधर्मे चार्वाकवधोनाम अष्टात्रिंशोध्यायः ३८
वैशंपायनउवाच ततस्तत्र राजानं तिष्ठंतंभ्रात
भिःसह उवाच देवकीपुत्रः सर्वदर्शी जनार्दनः
वैशंपायनउवाच हे जनमेजय तदनंतर राजा अपने भ्राता
जोहे भीमादिक तिन्हकर्के संयुक्त जब बेठा तब देवकीपुत्र
जनार्दनजी सर्वज्ञान संपन्नहे सो राजाकोवचनकहतेभये १
वासुदेवउवाच ब्राह्मणास्तात लोकेस्मि नर्चनीयः
सदाममः एते भूमिचरा देवा वाग्विषाः सुप्रसादकाः
[illegible] इन्की वाणी वि
[illegible]
षरूपहे और सुप्रसन्नतावालेहे ॥ २ ॥
पुराकृतयुगे राजं चार्वाको नाम राक्षसः
तपस्तेपे महाबाहो बदर्यां बहुवार्षिकं ३
हे राजन् पूर्वले सत्ययुगमो चार्वाकनामराक्षस बदरिका
आश्रममो बहोतवर्ष तपकरताभया ३
छंद्यमानस्तु ब्रह्मणाच पुनः पुनः
अभयं सर्वभूतेभ्यो वरयामास भारत ४
ब्रह्माजीने वरकोवास्ते प्रार्थन कियातो सर्वभूतोसे अपनेको
अभयदान वरमांगताभया ब्रह्माने सो वर इसको नहीदिया
तो वारंवार तपकर्के एहीवर मांगताभया ४
द्विजावमानादन्यत्र प्रादाद्वर मनुत्तमं
अभयं सर्वभूतेभ्यो ददौतस्मै जगत्पतिः
तब ब्रह्माजी ब्राह्मणोके अवमानविना सर्वभूतोसे अभयद

श्री॰ रा॰ य॰ टी॰ १४।

प वरदानदिया ऐसे वरदेकर्के जगत्पति ब्रह्माजी अंतर्धान होतेभये ५

सतल्लब्धवरः पापो देवान मितविक्रमः

राक्षस स्तापयामास तीव्रकर्मा महाबलः ६

सो राक्षस ऐसे वरको पाइकर महापापकारी अमितपराक्रम होकर तीव्रकर्मवाला महाबलभया देवता गणको बहोत संतापदेताभया ६ ॥

ततो देवाः समेतास्ते ब्रह्माण मिद मब्रुवन्

वधाय रक्षस स्तस्य बलविप्रकृतस्तदा ७

तब देवता ब्रह्माजीको प्राप्तहोकर यहवचन कहतीहे हे महाप्रभो चार्वाक राक्षसकेबलकर्के हमपीडितभयेहे उसकेवधका आप चिंतनकरो ७ ॥

तानुवाचा व्ययो देवो विहित स्तत्रवैमया

यथास्य भविता मृत्यु रचिरेणेति भारत ८

तब ब्रह्माजी देवतागणोको कहते भये मेने उसकेवधका उपायकियाहे जिसकर्के इसराक्षसका मरणहोवे ८

राजा दुर्योधनो नाम सखास्य भविता नृपु

तस्य स्नेहाव बद्धोसौ ब्राह्मणा नव मन्यते ९

राजा दुर्योधन पृथिवीमे होवेगा उसका यह राक्षस सखा होवेगा उसके स्नेह बंधसे यह राक्षस ब्राह्मणोका अवमानकरेगा ९ ॥

तत्रैनं रुषिता विप्रा विप्रकार प्रधर्षिताः ॥

धक्ष्यंति वाग्बलाःपापं ततो नाशं गमिष्यसि १०

तहां ब्राह्मण इसको कोपकर्के पीडित होकर वाणी जिनका बलहे ऐसे ब्राह्मण इसराक्षसको वाणीरूप अग्निकर्के दग्ध करेगे तब यह राक्षस नाशको प्राप्तहोवेगा १०

स एव निहतः शेते ब्रह्मदंडेन राक्षसः

चार्वाको नृपति श्रेष्ठ मासंगो भरतर्षभ ११

सो यहराक्षस ब्रह्मदंडकर्के मराहे पृथिवीमे अवशायन करताहे हे भरतर्षभ अब तं शोचमतकरे ११

हतास्ते क्षत्रधर्मेण ज्ञातय स्तवभारत स्वर्गी

ताश्च महात्मानो वीराःक्षत्रियपुंगवाः १२

तेरे बांधव सभक्षत्रधर्मकरके मारेहे सो महावीर सभही
सो महावीर सभही स्वर्गको गयेहे तत्रीयासे सभश्रेष्ठरहेहे १२

मत्त्वमानिष्टकार्याणि मातेभूत्ग्लानिरच्युत
शत्रून् जहि प्रजारक्ष द्विजांश्च परिपूजय १३
इतिश्री महाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मे चार्वा
कवधोनाम एकोन चत्वारिंशोध्यायः ३९

सो तू अवराजा होकर राजकार्योंके करतूको अव शोकके
ग्लानि मतहोवे तू शत्रुजनोको मार ब्राह्मणोको पूजाकर १३
इतिश्री महाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मे चार्वाक वधो
नाम एकोन चत्वारिंशोध्यायः ३९

वैशंपायनउवाच ततः कुंतीसुतो राजा गतमन्युर्गत
ज्वरः कांचनो प्रांमुखो हृष्टो निषीदत्परमासने १

वैशंपायनउवाच हे जनमेजय तदनंतर कुंतीसुत राजायु
धिष्ठिरदीनतासे रहितभया और वीतशोकभया कांचनके
परमउत्तम आसनमो पूर्वमुख होकर हर्षयुक्त विटताभया १

तमेवाभि मुखोपीठे प्रदीप्ते कांचने शुभे
सात्यकि वासुदेवश्च निषीदत्त रविंदमौ २

उसके सन्मुखही सवर्णके आसनविषे सात्यकि और वासुदे
वभी एक आसनमो वेष्टतभये २

मध्येकृत्वात राजानं भीमसेनार्जुनावुभौ ॥
निषीदत्त महात्मानौ श्लक्ष्णयो मणिपीठयोः ३

भीमसेन अर्जुन दोनोही राजाको मध्यविषे करके कोमलस्प
र्शवाले मणी खचित आसनोविषे वेष्टतेभये ३

दांते सिंहासने शुभ्रे जांबूनद विभूषिते
पृथापि सहदेवेन सहासे नकुलेनच ४

पृथापि सहदेवेन सहासे नकुलेनच ४ कुंती जोहे सो
और गजदंतमय कनक चित्रित आसनविषे कुंती जोहे सो
नकुलको सहदेवको साथलेकर वेष्टतीभई ४

सुधर्मा विदुरो धौम्यो धृतराष्ट्रश्च कौरवः
निषेदुः ज्वलनाकारे ष्वासनेषु पृथक्पृथक ५

सुधर्माहुर्योधनकापुरोहित और धृतराष्ट्रराजा अग्निसमान च
मकवाले आसनोविषे पृथक पृथक वेष्टते भये ५

युयुत्सु संजयश्चैव गांधारीच यशस्विनी

धृतराष्ट्रो यतोराजा ततो राजा समाविशत् ६
पुत्रन्ह और संजय और महायशवाली गांधारी रानीजहां धृतराष्ट्र राजाहा आसनोविषे बैठतेभये और विदुरादिक भी तहां तहांअपने अपने आसनोविषे बैठतेभये ६

ततोपविष्टो धर्मात्मा सेनाः स्वमनसो भवन्
स्वस्तिका नततान्भूमिं स्वर्णं रजतं मणिं ७
तहा बैठा सो राजा सर्वतोभद्रादि मंडल संज्ञक देवनोके आसनजोहै तिनको और समरतिकावाली भूमिको स्वर्णको रजतको पंचरतन शुक्रमणीको मंगल वस्तकी स्पर्शविधीसे करताभया ७

ततः प्रकृतयः सर्वाः पुरस्कृत्य पुरोहितम्
ददृशुर्धर्मराजानमादाय बहुमंगलम् ८
तदनंतर सभही अधिकारी जनजोहै सो धौम्यपुरोहितको मुखकर्के वदोतमंगल वस्तु पूर्णकलशादि लेकर राजधर्म राजको आइकर देषते भये ८

पृथिवीच स्वर्णं च रत्नानि विविधानिच
अभिषेचनके भांडे सर्व संभार संभृतम् ९
स्वर्णकल्पित पृथिवीको स्वर्णको और अनेक रतनोको और भीजो अभिषेक योग्य स्वर्णपात्रादि उपकरणको संभार कर्के लेआवतेभये ९

कांचनो उदुंबरास्तत्र राजताः पृथिवी मयाः
पूर्णाः कुंभाः समनसो लाजाः बर्हींषि गोरसं १०
तहां कांचनुकलश ताम्रकलश रजतके कलश मृण्मयकलश जलकर्के पूर्णकर और पुष्प और लाजा अक्षतादिक कुशा पंचगव्य पंचामृतादि और संभार १०

शमी पिप्पल पालाश समिधो मधु सर्पिषी
स्रुव उदुंबरः शांख स्तथा हेम विभूषिताः ११
शमी पिप्पल पलाशादि समिधा मधुहोतादि मधुपर्क उदुंबरके ताम्रमय स्रुवा और उदुंबर काष्टका स्रुचा तैसे शांख स्वर्ण खचित इसप्रकार अभिषेककी सामग्री तियार कर ले आवते भये ११

दाशार्हेनाभ्यनुज्ञात स्तत्रैधौम्यःपुरोहितः

प्रागुदक् प्रवणा वेदी लक्षणेनोपलक्ष्यच १२

हे जन्मेजय तब कृष्णजीने आज्ञाकर्के धौम्य पुरोहित पू
र्वसे उत्तरतरफ नतभई वेदीको लक्षण ज्ञानसे कल्पन
कीनी गोमयकर्के लिप्तकीनीहै १२

व्याघ्रचर्मोत्तरे शुभ्रे सर्वतो भद्र आसने
दृढपादप्रतिष्ठाने हुताशन समत्विषि १३

उस वेदीके समीप व्याघ्रचर्म जिसके उपरहै ऐसे सर्वतो
भद्रवाले आसन विषे कैसा आसनहै दृढजिसके चारोप
द प्रतिष्ठितवनेहै अग्निसमान चमकवाले सुवर्ण सिंहा
सनविषे १३

उपवेश्य महात्मानं कृष्णां च द्रुपदात्मजां
जुहावपावकं धीमा विधिमंत्र पुरस्कृतम् १४

महात्मा राजा युधिष्ठिरको और द्रौपदकी पुत्री कृष्णाको
बैठाइकर धौम्य पुरोहित जोहै सो अग्निको विधिवत्प्र
तिष्ठा मंडपकर्के होमकरावताभया १४

ततउत्थाय दाशार्हः शंखमादाय पूजितम्
अभिषिंचत् पतिं पृथ्व्याः कुंतीपुत्रं युधिष्ठिरम् १५

होमके अंतमो कृष्णमहाराज उठकर शंखकी पूजाकर्के
शंखको हाथमो लेकर पृथिवीका पतिकर राजायुधिष्ठि
रकों अभिषेक करताभया १५

धृतराष्ट्रश्च राजर्षिः सर्वाः प्रकृतयस्तथा
अनुज्ञाताथ कृष्णेन भ्रातृभिः सहपांडवः १६

उसके अनंतर राजऋषि धृतराष्ट्र अभिषेक करताभया
और अधिकारीभी अभिषेक करतेभये सो पांडवराजा
भ्राताजोहै भीमादिक तिन्हकर्के संयुक्त कृष्णजीकी आ
ज्ञासे अभिषेकको प्राप्तभयाहै १६

पांचजन्याभिषिक्तस्य राजाऽमृत मुखोऽभवत्
ततोऽनुवादयामास पणवानक दुंदुभीन् १७

ऐसा राजा युधिष्ठि
पांचजन्यकर्के जिसको अभिषेकभया

अमृत समान अत्यंत दर्शन योग्यस्वरूप शोभाको प्राप्तहोताभया १७

धर्मराजोपि तत्सर्वं प्रतिजग्राह धर्मतः
पूजयामास तेषांपि विधिवद्भूरिदक्षिणः १८

हे जनमेजय उसकालविषे संपूर्ण अधिकारी लोकोने राजाको नीराजनके जो जो पूजा भेट राजाको नजरदीनी सो सो सभही राजा धर्ममर्यादासे लेलेताभया सभ अधिकारी लोकोको अपने तरफसे अधिकारकी प्रतिष्ठावाले सभको वस्त्रभूषणादिक देकर ब्राह्मणोंको विधिसे वहोत दक्षिणादेताभया १८

ततो निष्क सहस्रेण ब्राह्मणान् स्वस्तिवाचयन्
वेदाध्ययन संपन्नान् धृतशील समन्वितान् १९

तदनंतर सुवर्णके निष्क सहस्रकर्के ब्राह्मणोंको स्वस्तिवाचनकी दक्षिणादेताभया ब्राह्मण कैसेहै वेदोके अध्ययन संपन्नहै वहोत दक्षिणा ग्रहण समयविषे धैर्य संतोष शीलसंपन्नहेन लोभकर्के कोलाहल उत्पातकल्पना रहितहै १९

तेप्रीता ब्राह्मणा राजन् स्वस्त्यूचुर्जय मेवच
हंसाइव वचनं दंतः प्रशशंसु युधिष्ठिरम् २०

सो सभही ब्राह्मण दक्षिणालेकर हे राजन् स्वस्तिकल्याण होय तेरीसर्वत्रजयहोवे इसप्रकार हंसोकीन्याई प्रसन्नहोकर राजाको वहोत आशीर्वाद शांतिपाठ सुनाइकर वहोतस्तुतिपूर्वक प्रशंसा करतेभये ग्रसकशीलवचन नहीकरतेभये २०

युधिष्ठिर महाबाहो दिष्ट्याजयसि पांडव
दिष्ट्या स्वधर्मं प्राप्तोसि विक्रमेण महाद्युते २१

हे युधिष्ठिर हे महाबाहो सुकरभया तेने आनंदकर्के जय पाईहै आनंदकर्केही अपने पराक्रमकर्के राजधर्मको तूं प्राप्तभयाहै २१

दिष्ट्या गांडीव धन्वाच भीमसेनश्च पांडव

त्वंचापि कुशलीराजन् माद्रीपुत्रौच पांडवौ २२

परम आनंदकर्के गांडीवधन्वा कुशलको प्राप्तभयाहै भीम
सेनभी कुशलको प्राप्तभयाहै माद्रीके पुत्र नकुल सहदेव
पांडवभी कुशलको प्राप्तभयेहै २२

मुक्तोवीर त्वयास्मा त्संग्रामा द्विजितद्विषः
त्क्षिप्रमुत्तरकार्याणि कुरु सर्वाणि भारत २३

यह राजन् हमको समतराहसे सुकरभया आनंदभया
सो तुम ऐसे घोर संग्रामसे शत्रुमारकर जयपाइकर
कुटआयेहो हेभारत अब विजय अभिषेकसे उपरंतका
र्यकरणेहै मर्यादासे प्रजापालनके उनको शीघ्रहीकरो

२३

ततः प्रतिर्चितः सद्भि र्धर्मराजो युधिष्ठिरः
प्रतिपेदे महद्राज्यं सुहृद्भिः सहभारत २४

तदनंतर इसप्रकार संपूर्ण संतजन प्रधानजनोंने प्रीतिक
कर्के पूजनकिया धर्मराज युधिष्ठिर जोहै सो अपने सुहृ
द्लोकोंके साथ महाश्रेष्ठ राजकार्यको प्राप्तहोताभया २४

इतिश्रीमहाभारतेशांतिपर्वणि युधिष्ठिरराजाभिषेकःच
त्वारिंशः ॥ ४० ॥

वैशंपायनउवाच प्रकृतीनां च तद्वाक्यं देशकालो
पबृंहितं श्रुत्वा युधिष्ठिरो राजा सोत्तरं प्रत्यभाषत १

वैशंपायनउवाच हेजनमेजय राजा युधिष्ठिर सर्वप्रकारके
अधिकारी प्रधानजनोंके वाक्यदेशकाल मर्यादा योग्यसु
नकर सभको तत्कालयोग्य उत्तर वचनको कहताभया

१

धन्याः पांडुसुता नूनं येषां ब्राह्मण पुंगवाः
तथ्यान्वाप्यथवातथ्यान् गुणानाहुः समागताः २

नहीं महात्मा प्रधानलोक हमारे पांडुराजाके पुत्र अव
धन्यभईहै जिन्हके विषे ऐसे ब्राह्मण प्रधानलोक आइक
र हमारे गुण सत्यहै अथवा असत्यहै हमारेविषे विद्य
मानहै अथवानाहै उन्हको इसप्रकार प्रसन्नतासे कहते
है प्रशंसा करतेहै २

अनुग्राह्या वयंनूनं भवता मितिमेमतिः ॥

श्री.
रा. ध.
टी.
१४४

144

यद्येवं गुण संपन्नान स्मान् ब्रूथ विमत्सराः ३
तुम्हारे सभके हम अनुग्रहभागी भयेहै यह मेरी मतिक हतीहै जो तुमलोक हमारेको ऐसे गुण संपन्न प्रीतिसे कहतीहो ३ ॥

धृतराष्ट्रो महाराजा पिता मे दैवतं परम्
शासनेस्य प्रियेचैव स्थेयं मत्प्रियकांक्षिभिः ४
तो अवहमारी वेनतीका वचन सुनो यह धृतराष्ट्रराजामेरा पिता यहीहै मेरादेवताहै इसके आज्ञामो और प्रियकार्य मो मेरी प्रीतीकी वांछाकर्के सदा सावधानता सभहीने कर्तव्यहै ४ ॥

एतदर्थं न जीवामि कृत्वा ज्ञातिवधं महत्
अस्य शुश्रूषणं कार्यं मयानित्य मतन्द्रिता ५
ऐसा भारी खोटाकर्म अपनी जातिका वधकर्के मै इसकी सेवावास्तेही इसरस्तासे वचकर्के जीवता रहाऊं नहीतो इसकी सेवाके सेवनताती इसकी शुश्रूषा मैने आपही सावधानतासे नित्यही कर्तव्यहै ५

यदि वाहमनुग्राह्यो भवतां सुहृदां तथा
धृतराष्ट्रे यथापूर्वं वृत्तिं वर्तितु मर्हथ ६
तुम मेरे सभही सुहृदहो जो तुमने मेरेविषे अनुग्रहक रणाहै धृतराष्ट्र राजाविषे पहिली जैसेही राज्यकी मालक वृत्ति वर्तने योग्यहो ६ ॥

एषनाथोहि जगतो भवतां च मयासह ॥
अस्यैव पृथिवी कृत्स्ना पांडवाः सर्वएवच ७
यह राजाही सर्वजगतका नाथहै मेरे साथ तुम्हाराभी यही नाथहै संपूर्ण पृथिवी इसकीही और पांडवभी स भइसकीहै पुत्रहैं ७ ॥

एतन्मनसि कर्तव्यं भवद्भिर्वचनं मम ॥
अनुज्ञाप्य नाराजा यथेष्टं गम्यतामिति ८
यह वचन मेरा सभही तुमने मनविषे निश्चयकर्के स्थिर कर्तव्यहै ऐसी राजा युधिष्ठिर वेनतीकर्के सभसे मनाइ कर सभको कहताभया अव तुम सभही अपने अपने कार्यकी चिंतासे यथेछवले जावो ८ ॥

पौरजानपदान्सर्वान् विसृज्य कुरुनंदनः
यौवराज्ये च कौंतेयं भीमसेनं मयोजयत् ९
कुरुनंदन राजा युधिष्ठिर एसे कहिकर सभको विदाकर्कै
युवराजताके अधिकारविषे भीमसेनको सत्कार संयुक्त
नियोगकरताहै ९ ॥
मंत्रे च निश्चयेचैव षाड्गुण्यस्य च चिंतने
विदुरं बुद्धिसंपन्नं प्रीतिमान्स समादिशत् १०
सभप्रकारके मंत्रमें और कार्यके निश्चयमें और स्वामीभाव
में और मंत्रीभाव सुहृदभाव कोश खजानेका विचार और
राज्यका विचार और दुर्गोकाविचार और अपने सेनाका बल
विचार इसप्रकार षट्गुण निश्चयमें विदुरजोहै महाबु
द्धिसंपन्न उसको महाप्रीतिकर्कै आज्ञादेकर सावधानक
रताभया १० ॥
कृताकृत परिज्ञाने यथायव्यय चिंतने
संजयं योजयामास वृद्धं सर्वगुणैर्युतम् ११
और कार्योका कृतज्ञान अकृत ज्ञानविषे और लाभ खरचके
चिंतनविषे संजयजोहै उसको नियोगदेताभया कैसाहै
वृद्धहै और उत्तम बुद्धि संपन्नहै और सर्वगुण संपन्नहै ११
बलस्यपरिमाणेच भक्तवेतनयोस्तथा
नकुलं व्यादिशद्राजा कर्मणां चान्ववेक्षणे १२
अपने सेनाके बलपरीक्षामे सभको भोजनदेना और तलब
मजूरीदेनी और लोकोके कर्मकार्य परीक्षाविषे राजान
कुलको सावधान करताभया १२
परचक्रोपरोधेच दुष्टानां चावमर्दने
युधिष्ठिरो महाराज फल्गुणं व्यादिदेशह १३
और चक्रके रोकनेविषे और दुष्टोके मर्दनकरणेविषे राजायु
धिष्ठिर अर्जुनको आज्ञादेकर सावधान करताभया १३
द्विजानां देवकार्येषु कार्येष्वन्येषु चैवहि ।
धौम्यं पुरोधसांश्रेष्ठं नित्यमेव समादिशत्
और ब्राह्मणोके देवताकार्यविषे और शांतिक पौष्टिकका धौ।

श्री रा. पं. टी. ४४

१४५

म्यजो पुरोहितहै सर्वपुरोहितोंविषे श्रेष्ठउसको नित्यही आप आज्ञादेताभया १४

महादेवं समीपस्थं नित्यमेव समादिशत्
तेन गोप्यो हि नृपतिः सर्वावस्थासु विशांपते १

और सहदेवको नित्यही समीप स्थितकरताभया उसके सदा सर्वदा संपूर्णकार्योंकी अवस्थाविषे राजाकी रक्षाकर्तव्य है १५

यान्यानमन्यतायोगांश्च येषु येष्विह कर्मसु
तांस्तांस्तेष्वेव युयुजे प्रीयमाणो महीपतिः १६

जो जो लोक औरऔर कार्योंके योग्यहैं तिन्ह तिन्हको उन्हउन्ह कार्योंविषे विचारकर्के सभको सर्वकार्योंविषे [illegible]
[illegible]
[illegible]

अब्रवीत्परवीरघ्नो धर्मात्मा धर्मवत्सलः १७

हे राजन् जनमेजय इसप्रकार सभको सर्वकार्योंविषे सावधानकर्के सो धर्मात्मा धर्मवत्सलराजा विदुरको संजयको युयुत्सुको सभसे पृथककर्के महाप्रीति संयुक्त वचनकहताभया १७

उत्थायोत्थाय तत्कार्यं मम्यराज्ञः पितुर्मम
सर्वं भवद्भिः कर्तव्यमप्रमत्तैर्यथायथम् १८

तुमने मेरे प्रेमसे मेरी तरफसे एताकार्य सावधानतासे नित्यही अवश्यकर्तव्यहै नित्यप्रति हरवखत उठकर्के सोईकार्यकर्तव्यहै जौनसा कार्यमेरा पिताजो राजा धृतराष्ट्र इसके प्रियकार्यमो जैसे बने तैसेही सो कार्यसावधानसे अवश्यकर्तव्यकरणा १८ ॥

पौरजानपदानां च यानि कार्याणि सर्वशः
राजानं समनुज्ञाप्य तानि कार्याणि भागशः १९

इतिश्री महाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मे भीमयोवराज्याभिषेकः ४२ ॥

जेते पुरवासी देशवासी जनोंके कार्यहैं सो सर्वप्रकारसे सभही इस राजाको अवजस्नाइकर इसीकी आज्ञासेही यथायोग्य विभागसेकरणेयोग्यहैं ॥ १९ ॥ इतिश्री भीमयोवराज्याभिषेकः ४२

वैशंपायनउवाच ततोयुधिष्ठिरो राजा ज्ञातीनां ये
हतायुधि आद्धानिकारयामास तेषां पृथगुदारधी
वैशंपायनउवाच हे राजन् जनमेजय तदनंतर सो राजा युधि
ष्ठिर महाउदारबुद्धिहै जो जो अपने जातिके युद्धविषे मरेहै
उन्हके सभके श्राद्धोकों पृथक् पृथक् करावताभया १

धृतराष्ट्रो ददौराजा पुत्राणा मौर्धदेहिकम्
सर्वकामगुणोपेत मन्नंगाश्च धनानिच २

राजा धृतराष्ट्र जोहै सो अपने पुत्रोकी ऊर्ध्वदेहकी क्रिया
को आपकरताभया सर्वकामनावाले सर्वगुणसंयुक्तविधि
से करताभया अन्नदान अनेक गोदान और अनेक प्रकारके
धनदानकरताभया २

रत्नानिच विचित्राणि महार्हाणि महायशाः
ततो युधिष्ठिरो राजा कर्णस्यच महात्मनः ३

और महामोलवाले रत्नदानभी महायशाकर्के देताभया
तदनंतर युधिष्ठिर महात्मा अपना ज्येष्ठभ्राता जो कर्णउस
के श्राद्धकर्मके विधिसे करताभया ३

धृष्टद्युम्नाभि मन्युभ्यां हैडंवस्य च रक्षसः
विराटप्रभृतीनांच सुहृदा मुपकारिणां ४

धृष्टद्युमनको श्राद्धको अभिमन्युके श्राद्धको और हिडंबाके
पुत्र घटोत्कच उसके श्राद्धको विराटप्रभृति औरभी सुहृद
अपनेको उपकारकरणेहारे उन्हके सभको श्राद्धोको आप
करावताभया ४

द्रुपद द्रौपदीयानां द्रौपद्या सहितो ददौ ॥
ब्राह्मणानां सहस्राणि पृथगेकैक शद्दिशन्

द्रुपदको और द्रौपदीके पुत्रोको द्रौपदीसंयुक्तहोकर श्राद्ध
करके अनेकदानदेताभया ब्राह्मणोके अनेक सहस्र एक
एक प्रति भिन्न भिन्न पूजनकर्के दानदेताभया ५॥

धनरत्नैश्च गोभिश्च वस्त्रैश्च समतर्पयत् ॥
येचान्ये पृथिवी पाला येषां नास्ति सुहृज्जनाः ६

धनदान रत्नदान गोदानकर्के तृप्तकरताभया जोकोई और

श्री॰
टी॰
१४९

वाजे युद्दमे मरे है जिन्हका सुहृदजन तहां नही है ६

उद्दिश्योद्दिश्य तेषां तु चक्रे राजोर्ध्वदैहिकं
सभाः प्रियाश्च विविधा स्तडागानि च पांडवः ७

सभको नाम लेकर उर्द्ध देहकी क्रियाको करदेताभया उ
न्हके निमित्त अनेक प्रमकी सभा और जलपानकी याप्ताला
और अनेक तडाग कूपादिक निवासकी याप्ताला सर्वभोग
संपन्न करदेताभया ७

सुहृदो कारयामास सर्वेषा मोर्ध्वदैहिकं
स तेषा मन्नृणो भूत्वा गतो लोकेष्ववाच्यतां ८

इसप्रकार अपने अपने पराये संपूर्ण सुहृत् लोकोकी
उर्द्ददेह क्रियाको सर्व संपदा गुणयुक्त श्रद्धाविधिसे करा
ईकर्के सभका अनृणी होकर लोकोविषे अपनी अपयशकी
अवाच्यताको पाइकर ८

कृतकृत्यो भवेद्राजा प्रजाधर्मेण पालयन्
धृतराष्ट्रं यथापूर्वं गांधारी विदुरं तथा ९

राजा कृतकृत्य होताभया प्रजाको धर्मकर्के पालनकरता
भया धृतराष्ट्रको गांधारीको विदुरके यथापूर्व भक्ति
कर्के मानपूजा करताभया ९

सर्वाश्च कौरवान्मान्यान् भृत्यांश्च समपूजयत्
याश्च तत्र स्त्रियः काश्चित् हतवीरा हतात्मजाः १०

और जेती कौरवोंकी इस्त्रीयां है जिन्हके पति पुत्र माणगये है
उन्हकों धनधान्य वस्त्र संपदा कर्के जीवनवृत्ति अखंड
करदेताभया १० ॥

सर्वास्ताः कौरवो राजा संपूज्या पालयन् घृणी
नीचांध कृपणानां च गृहाच्छादन भोजनैः ११

और जो कौरवोके मंत्री अधिकारी और सेवक भृत्य है उन्हको
भी जीवका वृत्तिकर्के पालनकरता भया और भी अपने
देशविषे नगरविषे दीन अंध कृपण अनाथ जन है जि
न्हसे आपकहु उद्यमन होवे तिन्हको भी निवासवास्ते
गृह वस्त्र अन्नपान सभको करदेताभया ११

आनृशंस्यपरो राजा चकारानुग्रहं प्रभुः स
विजित्य महीं कृत्स्नां मानृण्यं प्राप्य वैरिषु
निःसपत्नः सुखी राजा विजहार युधिष्ठिरः १३
इति राजधर्मे श्राद्धक्रिया द्विचत्वारिंशः ४२
सर्वत्र सर्वप्रकारकी पालनाकर्के सभके प्रति अनुग्रह रा
जाकरताभया ऐसा सर्वसामर्थ्य संपन्न महाप्रभुराजा
समस्त पृथिवीको जीतकर शत्रुगणोंकी विजयको पाइ
कर निर्वैर होकर राजा युधिष्ठिर अपने राजधर्मकर्के
विहारकरताभया १३ ॥ इतिश्री महाभारते शांतिपर्व
णि राजधर्मे श्राद्धक्रिया द्विचत्वारिंशोध्यायः ४२
वैशंपायनः अभिषिक्तो महाप्राज्ञो राज्यं प्राप्य यु
धिष्ठिरः दाशार्हं पुंडरीकाक्ष मुवाच प्रांजलिः शु
चिः ॥ १ ॥ वैशंपायनउवाच हे जनमेजय राजायुधि
ष्ठिर अभिषेक पाइकर और राज्यको प्राप्तहोकर महावि
चारवाली जिसकी बुद्धिहै सो दाशार्ह जोहै पुंडरीकाक्षकृष्ण
जीको कृतांजलि होकर शुद्धमनकर्के वचन कहताभया १
युधिष्ठिर उवाच तवकृष्णप्रसादेन नयेनच बलेनच
बुद्ध्याच यदुशार्दूल तथा विक्रमणेनच ॥ २॥
युधिष्ठिरउवाच हे कृष्ण यदुशार्दूल तेरे प्रसादकर्के नीति
उपदेशकर्के बलकर्के पराक्रमकर्के बुद्धिकर्के अकंटकराज्य
हमको प्राप्तभयाहै २
पुनः प्राप्तमिदं राज्यं पितृपैतामहं मया
नमस्ते पुंडरीकाक्ष पुनःपुन रविंदम ३
यहराज्य हमसे पूर्वगयारहा सो फेर पितृपितामह राज्य
प्राप्तभयाहै हे पुंडरीकाक्ष तोको हमारी नमस्कारहै पु
न पुन मेनमस्कार तोको करताहूं ३
त्वामेक माहुः पुरुषं त्वामाहुः सात्वतां गतिं
नामभिस्त्वां बहुविधैः स्तुवंति प्रयताः द्विजाः ४
जितचित्त विप्रतोको एकपुराण पुरुष कहतेहै तोको बहु
तनामकर्के जितात्मा द्विजस्तुति करतेहै तोको सात्वता
भक्तजन जिन्हकी परमगति कहतेहै ४

विश्वकर्म नमस्तेस्तु विश्वात्म विश्व संभव
विष्णो जिष्णो हरे कृष्ण वैकुंठ पुरुषोत्तम ५
हे विश्वके सृष्टिकर्मकरणेहारे तमको प्रणामहे तूं विश्वा
त्माहे और विश्वकी उत्पत्तिको तूं स्थानहे विश्वका आभास
रज्जुसर्पन्यायकर्कै तूहीजगता आधारभूतहे हे विष्णो हे
जिष्णो हे हरे हे कृष्ण हे वैकुंठ हे पुरुषोत्तम ५
आदित्या समधाते पुराणे गर्भतांगतः
पृश्निगर्भ स्त्वमेवैक स्त्रियुगं त्वां वदत्यपि ६
हे कृष्ण तू पुराण पुरुष आदिति विषे समस्वरूपसे गर्भ
ताको प्राप्तभयाहे विष्णुनामकर्कै सूर्यभया १ वामनरू
पभया २ पृश्निगर्भभया ३ परशुरामभया ४ दाशरथि
रामभया ५ बलरामभया ६ कृष्णरूपभया ७ समरूपों
कर्कैभी तम एकरूपहीहो और तमको त्रियुगभी कहते
हे कलिविना पूर्वले तीनयुगोविषे प्रत्यक्षहोतेहे ६
शुचिश्रवा हृषीकेशो हुतार्वि हंसउच्यते
त्रिचक्षुः शंभुरेकस्त्वं विभुर्दामोदरोपिच ७
शुचिश्रवा तम पुण्यकीर्तिहो और हुतार्वि तमयज्ञरूपहो
और हंसहो तमब्रह्माकेभी गुरुहो तीननेत्र जिसकेहे
शब्द प्रमाण अनुमान प्रत्यक्षप्रमाण जिसकेहे अथवा त्रि
नेत्र शंभुरूप शिवरूपहो एकही तम सर्वव्यापी सर्व
सामर्थ्यसंपन्न महाप्रभुहो और दामोदररूपभी तमहीहो ७
वराहो ग्नि हरुस्नात्र हृषभ तार्क्ष्यलक्षणः
अनीकसाहः पुरुषः शिपिविष्ट उरुक्रमः ८
पृथिवीको धारणकरणेहारे वराहरूपहो अग्निरूप तम
हो और हृषभ तमधर्मरूपहो तार्क्ष्यलक्षण गरुडध्वज त
महो अनीकसाह तम शत्रुसेनाको मर्दन करणेहारे
तमहो शिपिविष्ट सर्वशरीरोंत प्रविष्ट जीवपुरुषहो
महापराक्रमसंपन्नहो ८
वरिष्ठ उग्रसेनानीः सत्योवाज सनिर्ग्रहः
अच्युतः च्यावनोवीणां संस्कृति विकृतिर्वृषः ९
वरिष्ठ सर्वोत्तम तमहो सत्यरूप तमहो उग्रसेनाके नेता

नमहो वाजसनि अन्नप्रदरूपहो देवसेनानी स्वामी कार्त्तिक नमहो आपअच्युत अखंडरूपहो शत्रुसेनाको भगाइदेतेहो संस्काररूपहो विकार महत्तत्वादिरूपहो वृष इंद्र रूपहो ९

ऊर्ध्ववर्मा त्वमेवाद्रि र्वृषदर्भो वृषाकपिः ॥
सिंधुर्विधर्म स्त्रिककुब् त्रिधामा त्रिदिवात्च्युतः

ऊर्ध्ववर्मा अग्निरूपहो अचलरूपपर्वतहो वृषदर्भहो इंद्र के जेताहो वृषाकपि हरिहररूपहो सिंधुसमुद्ररूपहो विधर्मा नमनिर्गुणरूपहो त्रिककुब्धाम धर्मकर्मयोग्य सर्वउत्तर ईशान दिशारूपहो अथवा सूर्य चंद्रमा अग्निरूप रूपकर्के प्रकाशमानहो त्रिदिवात् च्युते स्वर्गसे उतरकर अनेक अवतार धारीहे १०

सम्राट् स्वराट् विराट् चैव स्वरराजो भवोद्भवः
विभुः भूरभिभूः कृष्णः कृष्णवर्त्मा त्वमेवच ११

सम्राट् चक्रवर्ती राजारूपहो विराट् ब्रह्मांडरूपहो स्वराट् स्वयंप्रकाशरूपहो स्वरराज देवराजरूपहो संसारके अथवा भवजो शिव तिन्हके उत्पत्तिस्थानहो विभुसर्वव्यापीहो भूपृथिवीरूपहो सत्तारूपहो अभिभू अघहारीवहो कृष्णः सच्चिदानंद रूपहो कृष्णवर्त्मा यज्ञभोक्ता अग्निरूप नमहीहो ११

स्विष्टकृद्भिषजावर्तः कपिलस्त्वं च वामनः
यज्ञोध्रुवः पतंगश्च यज्ञसेन स्त्वमुच्यसे १२

स्विष्टकृत् सुंदर इष्टकर्ता नमहो भिषज जोहे देववैद्यअश्विनीकुमार तिन्हके उत्पत्तिकर्त्ता सूर्यरूपहो कपिलरूप सांख्यतत्वके आचार्यहो वामनरूपकर्के देवगणके हितकर्ताहो यज्ञरूपहो और ध्रुवरूपहो अविनाशीरूपहो पतंगगरुडरूपहो यज्ञसेनराजारूप नमहीहो १२

शिखंडी नहुषो बभ्रुः दिवस्पृक्त्वं पुनर्वसुः
सुबभ्रु रुक्मयज्ञश्च सुषेणो दुंदुभि स्तथा १३

शिखंडी नीलकंठ रूपहो नहुषराजा रूपहो बभ्रु रजोगुण

श्री
रा.ध.
टी.
१४८

148

रूपहो दिवस्पृक् स्वर्गद्वाररूपहो पुनर्वसु नक्षत्ररूपहो
स्वक्ष अतिपिंगलरूप अग्निहो रुक्म यज्ञरूप रुक्मांगद
रूपहो स्कंदरूपेणाणरूप गणपति अथवा लोहित नदरूपो
णाम्नदरूपहो और डुंडुभी जैसे शब्दवाला मेघगर्जनरूपहो १३

गभस्तिनेमिः श्रीपद्मः पुष्करः पुष्पधारणः
ऋतुर्विभुः सर्वसूक्ष्मः चारित्रे चैव पठ्यसे १४

गभस्तिनेमि सूर्य जिसकी परिधीहै वर्षमासादि कर्ताहै
ऐसा जो काल तद्रूपहो श्रीपद्म श्री जो लक्ष्मी तिसके प
द्म क्या निवास भूतहो और पुष्कर तीर्थरूप जलरूप आका
शरूपहो और पुष्पधारीहो वनमालीहो १४

अंभोनिधिस्त्वं ब्रह्मा त्वं पवित्रं धाम धामवित्
हिरण्यगर्भं त्वामाहुः स्वधा स्वाहा च केशवः १५

ऋतु वसंतादि रूपहो और विभु व्यापकहो अथवा सर्वाधिप
तिहो सभसे सूक्ष्मरूपहो चारित्रवर्णाश्रमादि रूपतोको
कहतेहैं १५॥

योनस्त्वमस्य प्रलयश्च कृष्ण त्वमेवेदं सृजसि वि
श्वमग्रे विश्वंचेदं त्वद्वशे विश्वयोने नमोस्तुते शा
र्ङ्गचक्रासि पाणे १६

हे कृष्ण इस जगतका तुही योनिहै उत्पत्तिस्थानहै तु
ही इसको प्रथमसृजताभया यह विश्वतेरी वशहीचेष्टा
करताहै हे विश्वयोने शार्ङ्गधनुष चक्र असि खड्ग जिस
के हाथमेहै ऐसे तुमको हम नमस्कारकरतेहै १६

एवंस्तुतो धर्मराजेन कृष्णः सभामध्ये प्रीतिमा
न् पुष्कराक्षः तमभ्यनंदद्भारते पुष्कलाभि
र्वाग्भिर्ज्येष्ठं पांडवं यादवाग्र्यः १७ ॥
इति राजधर्मेषु वासुदेवस्तुतिः त्रिचत्वारिंशः ४३

वैशंपायनउवाच राजा जनमेजयकहतेहै इसप्रकार धर्म
राजाने कृष्णको स्तुतिकीनी सभामध्यविषे पुंडरीकाक्ष
भगवान् प्रीतिमानहोकर यादवश्रेष्ठ पुंडरीकाक्ष श्रीकृ
ष्णजी राजाको वहोत प्रेम विस्तारवाली करके प्रसन्नकरते
भये ॥ १७ ॥ इति श्री महाभारते राजधर्मे वासुदेवस्तुतिः

वैशंपायनउवाच ततो विसर्जयामास सर्वाः प्रकृ
तयो नृप विविशुः चाभ्यनुज्ञाता यथास्वानि गृहा
णिते ॥ १॥ वैशंपायनउवाच हेजनमेजय तदनंतर
राजा सभासे जेते अधिकारी लोकरहे उन्को विदाकरता
भया सो सभही अधिकारी लोक राजाने जब विदाकिये त
ब सभहीलोक अपने गृहोको जाइकर प्रवेशकरतेभये

ततो युधिष्ठिरो राजा भीमं भीम पराक्रमम्
सांत्वय न्नब्रवीत् भीमा नर्जुनं यमजौ तथा २

तदनंतर राजा युधिष्ठिर भीमपराक्रमवाले भीमसेनको
और अर्जुनको और नकुल सहदेवको आश्वासनकरताहु
परमशांतवाणीकर्के कहताभया २॥

शत्रुभि विविधैः शस्त्रैः क्षतदेहा महारणे ॥
श्रांताः भवंतः सभृशं तापिताः शोकमन्युभिः ३

हे भाई तुमशत्रुगणोने महारणमो शस्त्रोकर्के पीडितदेह
हे भाई तुम शत्रुगणोने महारणमो शस्त्रोकर्के पीडितदेह
वहोत कियेहो अतिश्रमको प्राप्तभयेहो शोककर्के अति
संतप्तभयेहो ३॥

अरण्ये दुःखवसती मत्कृते भरतर्षभाः
अनुभूता भवद्भिर्हि यथाकु पुरुषस्तथा ४

अरण्यमो दुःखनिवास तुमनेमेरे लिये चिरकालकीनी
है जैसे कादरलोको गृहत्यागकरके वनवास करतेहै ४

यथासुखं यथाजोषं जयाय मनुभूयताम्
विश्रांतलब्ध विज्ञानान् श्वः समेतास्मि वाघुनः ५

अब जैसा सावतुमको बनेहै तैसे अपनी इच्छाकर्के इस
विजयके सुखको तुमभोगो विश्रामजबकरोगे तब तुम
को अपने आपकी होस आवेगी अब गृहमो जाइकर सु
खसे विश्रामकरो सवेरे आइ फेर मिलोगे ५

ततो दुर्योधनगृहं प्रासादै रुपशोभितं
बहुरत्न समाकीर्णं दासीदास समाकुलं ६

ऐसा कहिकर दुर्योधनका जो गृहहै बहोतरत्नसंपदायु
क्तहै अनेकदासी दासी दास गणसंयुक्तहै ६

धृतराष्ट्राभ्यनुज्ञातं भ्रात्रादत्तं वृकोदरः

श्री॰
रा॰य॰
टी॰
१४९

149

प्रतिपेदे महाबाहु मंदिरं मघवानिव ७
धृतराष्ट्रकी आज्ञालेकर ज्येष्ठभ्राताने दियाहै ऐसे मंदिरको भीमसेन प्राप्तहोताभया जैसे इंद्रस्वर्गके मंदिरको प्राप्त होताहै ७

यथा दुर्योधनगृहं तथा दुःशासनस्य च
प्रसादमाला संयुक्तं हेम तोरण भूषितं ८

जैसा दुर्योधनका अनेक संपदा युक्तहै ऐसाही दुशासनकाभी मंदिरहै अनेक प्रसादमाला संयुक्तहै सुवर्णतोरणोंकर्के भूषितहै ८

दासीदाससु संपूर्णं प्रभूत धन धान्यवत्
प्रतिपेदे महाबाहु रर्जुनो राजशासनात् ९

दासी दास संयुक्तहै बहुत प्रकारकी धनधान्यसंपदावालीहै उसको राजाके आज्ञासे अर्जुन प्राप्तहोताभया ९

दुर्मर्षणस्य भवनं दुःशासन गृहादरम्
कुबेर भवन प्राख्ये मणिहेम विभूषितम् १०

तैसाही दुर्मर्षण जो दुर्योधनका भ्राता उसकाभी मंदिरहै दुशासनके गृहसेभी अतिसुंदरहै कुबेरके गृहसमान मणिरत्नभूषिहै १०

नकुलाय वराहीय कर्षिताय महावने
ददौ प्रीतो महाराज धर्मपुत्रो युधिष्ठिरः ११

ऐसे मंदिरको राजा प्रसन्नहोकर धर्मपुत्र युधिष्ठिर नकुल जोहै अतिप्रसादयोग्य वनवासविषे अतिक्लेशपाजिसनेभोगाहै ऐसे नकुलको प्रसन्नहोकर देताभया ११

दुर्मुखस्य तु वेश्माग्र्यं श्रीमत्कनक भूषितं
पूर्णं पद्मदलाक्षीणां स्त्रीणां शयन संकुलम् १२

तैसाही दुर्मुख दुर्योधनका भ्राताकाभी गृहहै अतिसंपदयुक्तहै सुवर्णकर्के भूषितहै कमलनेत्रवाली स्त्रीगण संपूर्णहै अनेकप्रकारकी शय्यासामग्रीयुक्तहै १२

प्रददौ सहदेवाय सततं प्रियकारिणे
मुमुदे तन्त्रलब्ध्वा स कैलासं धनदोयथा १३

ऐसे गृहको राजा सहदेवजी अपना सदाप्रीतिकारी भ्राता उसको प्रीतिसे देताभया ऐसे गृहको पाइकर सहदेव प्रसन्नहोताभया जैसे कैलास मंदिरको कुवेरप्राप्तहोकर प्रसन्नहोताहै १३

युयुत्सु विदुरश्चैव संजयश्च विशांपते ॥
सुधर्मा चैव धौम्यश्च यथा स्वंजग्मुरालयान् १४

हे जनमेजय हे राजन् सुधर्मा दुर्योधनका पुरोहित और विदुर और युयुत्सु और संजय और धौम्यपुरोहित पांडवोका यह सभही जैसे जैसे अपने गृह है तिनको जातेभये १

महासात्यकिना शौरि रर्जुनस्य निवेशनम्
विवेश पुरुष व्याघ्रो व्याघ्रोगिरि गुहामिव १५

और कृष्णभगवानजी सात्यकि संयुक्त अर्जुनके गृहको प्रवेशकरतेभये जैसे मेरपर्वतके कंदराको प्रवेशकरताहै सो महापुरुष श्रीकृष्णजी अर्जुनके गृहको प्रवेशकरतेभये

तत्र भक्ष्यान्न पानैस्ते मुदिताः सुखवोषिताः
सर्वे प्रबुद्धा राजान मुपतस्थु र्युधिष्ठिरं १६

इति राजधर्मे भवन प्रवेशः चत्वारिंशोध्यायः ४४

सो सभही जहां तहां मंदिरो विषे परम उत्तम भक्ष्यभोज्य पानोकर्के प्रसन्नहोकर सुखकर्के निद्राको पाइकर रात्रिवासकर्के प्रातःकालमों सभही जाग्रतभये नित्यकर्मकर्के वस्त्रभूषण धारणकर्के राजा युधिष्ठिरको आइप्राप्तहोतेभये १६ ॥ इतिश्री राजधर्मे रात्रिवासः चत्वारिंशोध्यायः ४४

जनमेजयउवाच प्राप्यराज्यं महाबाहु र्धर्मपुत्रो युधिष्ठिरः यदन्यद करोद्विप्र तन्मेवक्तु मिहार्हसि १

जनमेजयउवाच हे वैशंपायनजी महाबाहु धर्मपुत्र राजा युधिष्ठिर राज्यपाइकर जो कछु और कार्यको करताभया उसको तुममेरे प्रतिकहने योग्यहो १

भगवान्स हृषीकेशो त्रैलोक्यस्य परोगुरुः
ऋषेयदकरो द्वीर स्तच्च व्याख्यातु मर्हसि २

सो भगवान् श्रीकृष्ण त्रैलोक्यके गुरुहै पुरातन नारायण ऋषिका अवतार महावीरहै जो कछु और चरित्रकरते भये उसकोभी आपमेरे प्रतिकहने योग्यहो २ ॥

श्री॰ रा॰प॰ टी॰ १५॰ 150

वैशंपायनउवाच शृणुतत्वेन राजेंद्र कीर्त्यमानं
मयानघ वासुदेवं पुरस्कृत्य यदकुर्वत पांडवाः ३
वैशंपायनउवाच हे राजेंद्र जनमेजय मैतेरेसे कहताहूं
इसको तू तत्वरूपताकर्के जानकर श्रवणकर जोकछुह
तांत श्रीकृष्णको अग्रणीकर्के पांडवकरतेभये इसको सा
वधानतासे निश्चयकरमानो ३

प्राप्यराज्यं महाराज कुंतीपुत्रो युधिष्ठिरः ॥
चातुर्वर्ण्यं यथायोग्यं स्वेस्वेस्थानेन्यवेशयत् ४
कुंतीपुत्र राजायुधिष्ठिर जोहै सो राज्यको पाइकर महाराज्य
भयाहै प्रथमतो चारवर्णोंको अपने अपने धर्मके अधिका
रमो यथायोग्य मर्यादासे स्थापन करताभया ४

ब्राह्मणानां सहस्रे च स्नातकानां महात्मनाम्
सहस्रं निष्कमेकैकं दापयामास पांडवः ५॥
ब्राह्मणोंके सहस्रजोहै वेदविद्याविषे निपुण धर्मकर्मके
महात्मा तिन्हको एक एक प्रतिसहस्र सहस्र सुवर्णोंके
निष्कपांडवराजा देताभया ५

तथानुजीविनो भृत्यान्संश्रितानतिथीनपि
कामैः संतर्पयामास कृपणांस्तार्किकानपि ६
तैसे औरभी अपने अनुसार जीविका करणेहारे भृत्यलोक
औरभी अतिथीलोक उन्हको यथायोग्य कामभोगनकर्के
तृप्तकरताभया औरजो दीनलोकहै औरजो अपने राज्यव्य
वहारको तर्क वितर्क करणेहारे उन्हकोभी यथाधिकार
जानकर दानधर्मकरके प्रसन्नकरताभया ६

पुरोहिताय धौम्याय प्रादादयुतशः सगाः
धनं सुवर्णं रजतं वासांसि विविधान्यपि ७
और अपना प्रोहितजो धौम्य उसको अयुतसंख्योकी गोदान
देताभया उन्हका खानपान तृणादिकभी करदेताभया धन
सुवर्ण रजत वस्त्र अनेकप्रकारसे करदेताभया ७

कृपयाच महाराज गुरुवृत्तिमवर्तत ॥
विदुरायच राजासौ पूजां चक्रे यतव्रतः ८
और कृपाचार्यकोभी पहलेसेभी अधिक गुरुवृत्ति करदेताभया
और विदुरकोभी सो राजा स्थिरचित्तहोकर वहोतमानसेपू
जाप्रतिष्ठाकरताभया ८॥

भक्ष्यान्नपानै र्विविधै र्वासोभिः शयनासनैः
सर्वान् संतोषयामास संश्रितान् ददतां वरः ९

भक्ष्यभोज्य अन्नपान नानाप्रकारकेवस्त्रशय्या आसनदेकर्के अपने लोकआश्रितलोकहे सभको संतोष करताभया सोभी सभको प्रसन्नकरताभया ९

लब्ध प्रशमनं कृत्वा स राजा राजसत्तम
युयुत्सो र्धृतराष्ट्रस्य प्रजां चक्रे महायशाः १०

हे राजसत्तम जनमेजय सो राजायुधिष्ठिर लब्धभया जो राज्य उसका प्रशमन करताभया प्रथम पुरवासी जनकी रक्षाकीनी औेर देशनगर ग्रामोकी मर्यादाकीनी औेर योधागणोका संग्रहकीना औेर वैरी लोकोकोभी धनसंपदासेवशकिया औेर मान्यजो गुरुलोक उन्हकीभी मर्यादास्थापनाकीनी औेर ब्रह्मचारी वानप्रस्थ संन्यासी लोकभी समानदृष्टिसे सुजतकीनी दानमानासन मानसे सभकी तृप्तिकरदीनी इसप्रकारके लब्धराज्यके भूतभविष्य दोषशांतिकर्के युयुत्सु जो धृतराष्ट्रपुत्र उसकी वडीपूजा प्रतिष्ठाकरताभया महायशाको प्राप्तहोताभया १०

धृतराष्ट्राय तद्राज्यं गांधार्यै विदुरायच
निवेद्य स्वस्थवद्राजा सुखमास्ते युधिष्ठिरः

औेर संपूर्ण राज्यका भार राजा धृतराष्ट्रको गांधारीको विदुरको अर्पणकर्के आपस्वस्थ जैसा राजा युधिष्ठिर होताभया ११ ॥

तथा सर्वं स नगरं प्रसाद्य भरतर्षभ
वासुदेवं महात्मानं मभ्यगच्छत् कृतांजलिः १२

इसप्रकार संपूर्णनगरको प्रसन्नकर्के सभसे प्रसाद पायलेकर पश्चात् कृतांजलि होकर महात्माजो वासुदेव उन्हके समागम करणेको आपही उन्हके समीप जाताभया १२

ततो महति पर्यंके मणिकांचन भूषिते
ददर्श कृष्ण मासीनं नीलमेघ समद्युतिं १३

तहा जाइकर वासुदेव भगवानजीकों देषताभया केसेहे वासुदेवजी मणिकांचनभूषित महाउत्तमशय्या वस्त्रसंयुक्त पर्यंकमो वेठेहे नीलमेघ समान शोभाकर्के प्रकाशमानाहे १३ ॥

श्री॰
रा॰य॰
टी॰
१५१

151

जाज्वल्यमाने वपुषा दिव्याभरण भूषिते
पीतकौशेय वसने हेम्नेवोपगतं मणिम् १४

दिव्याभूषणोकर्के भूषितहै अपनी देहकी तेजोमय संपदा कर्के जाज्वल्य मानाहै पीतवर्ण उत्तमकौशेय वस्त्रकर्के सुवर्णकर्के संयुक्त महानीलमणिके समान विराजमानाहै १४

कौस्तुभे नोरसिस्थेन मणिनाभि विराजितं
उद्यते वोदये शैले सूर्येणाभि विराजितम् १५

उरस्थल विषे स्थितजो कौस्तुभमणी उसकर्के ऐसे विराजमानाहै जैसे उदितभये सूर्यकर्के उदयाचलपर्वत विराजमानाहोताहै १५

वैशाम्यं विद्यते तस्य त्रिषुलोकेषु किंचन
सोभिगम्य महात्मानं विष्णुं पुरुष विग्रहं १६

जिसकृष्णभगवानकी उपमा त्रिलोकीमो कहीनहीहोती ऐसे कृष्णजीको सो राजा प्राप्तहोताभया सो महात्मा कृष्ण पुरुषरूपी महाविष्णुहै उनको समागमके १६

उवाच मधुरं राजा स्मित पूर्वमिदं तदा
सुखेन तेनिशाकच्चित व्युष्टाबुद्धि मतांवर १७

राजा मंदमुसकानपूर्वक वचनकहताभया हे बुद्धिमतांवर तुमको रात्रि कुछ सुखसे वीतिहै १७

कच्चित ज्ञानानि सर्वाणि प्रसन्नानि तवाच्युत
तथैवोपश्रिता देवी बुद्धि र्बुद्धि मतांवर १८

हे बुद्धिमतांवर तुह्मारीभ्रं सभही ज्ञानेंद्रियां कुछ ज्ञान कला संपन्नभईहै और देवी बुद्धि तुमको कछुउपस्थित वनीहै १८

वयं राज्य मनुप्राप्ता पृथिवीच वशेस्थिता
तवप्रसादाद्भगवं स्त्रिलोकगति विक्रमः १९

हे भगवन आप त्रैलोक्य गतिको अपने पराक्रमकर्के स्थापनकरणेहारेहो हम तुह्मारे प्रसादसे राज्यको प्राप्तभयेहैं समग्र पृथिवी हमारे वशभईहै १९

जयं प्राप्ता यशश्चाग्र्यं नच धर्म च्युता वयं
तंनया भाषमाणं तं धर्मराज मरिंदमं २०

हमजयको प्राप्तभयेहे उत्तम यशहमको प्राप्तभयेहे उत्तम यशहमको प्राप्तभयाहे और अपने धर्मसे चलित नहीभये यह सभतेराही प्रसादभयाहे ४०

नोवाच भगवान् किंचित् ध्यानमेवा व्यपद्यत

इति श्री राजधर्मे कृष्णाभिगमनम् ४५

हे जनमेजय शत्रुजेता धर्मराज ऐसे कहताभया उसको भगवान कृष्णजी उत्तर कछुनही कहतेभये केवलध्यानमोही स्थितरहेहे ४१ इति श्री महाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मे कृष्णाभिगमनं नाम पंचचत्वारिंशोध्यायः ४५

युधिष्ठिरउवाच किमिदं परमाश्चर्यं ध्यायस्य मितविक्रम कच्चिल्लोकत्रयस्यास्य स्वस्तिलोक परायण १ ॥ युधिष्ठिरउवाच हे भगवन् कृष्ण यह क्या परम आश्चर्यहे जो तूं अमितविक्रमहोकर कछु ध्यानकरताहे कछुइस त्रिलोकीके करणविषे परायणहे १

चतुर्थं ध्यानमार्गं त्व मालंब्य पुरुषर्षभ

अपक्रांतो यतोदेव स्तेनमे विस्मितं मनः २

हे पुरुषर्षभ तें अब जाग्रतस्वप्न सुषुप्तिसे परे चतुर्थ जो ध्यानमार्ग उसको आलंबन करके स्थितभयाहे स्थूल सूक्ष्मकारण शरीरोके अवस्थासे परे होगयाहे इस हेतुसे मेरामन विस्मितभयाहे २

निगृहीतोहि वायुस्ते पंचकर्मा शरीरगः

इंद्रियाणि प्रसन्नानि मनसि स्थापितानि ते ३

अब तेरा शरीरके पंचप्राणोका अधिकारी प्राणवायु निग्रहको प्राप्तभयाहे इंद्रिया सभही प्रसादको प्राप्तभईहे सो सत्वरूपी [illegible] कीनीहे ३

वाक्सत्वे च गोविंद बुद्धौ संविशितानि ते

सर्वे चैव गणादेव क्षेत्रज्ञे निवेशिताः ४

अब तेने सत्वरूपी शुद्धमन और वाणीसे आदलेकर इंद्रिया बुद्धितत्वजो महतत्व उसविषे लयको प्राप्तकीनीहे ४

नेंगंति तव रोमाणि स्थिराबुद्धि स्तथामनः

काष्ठकुड्य शिलाभूत निरीहश्चासि माधव ५

अब तेरी रोमभी संचरको नही करते बुद्धि स्थिरभईहे को

छकड़ीके समान तूं शिलाभूत भयाहे और निर्वासन जैसा होगयाहे ५

यथा दीपो निवातस्थो नेंगते ज्वलते पुनः
तथासि भगवन्देव पाषाण इव निश्चलः ६

जैसे निर्वात होकर दीपक अचल होताहे और प्रकाशमानभी होताहे ऐसा हे भगवन् तूंभी पाषाणसमान निश्चल होगयाहे ६

यदि श्रोतुमिहार्हामि न रहस्यं च तेहृदि
छिंधिमे संशयं देव प्रपन्नाया भियाचते ७

हे देव देव जो मे इस हेतुके श्रवण करणेमें योग्य भयाऊं और तुमको यह हेतु रहस्य नहीहे तो मे आपको शरणागत होकर याचन करताऊं मेरे संशयको आ पछेदन करो ॥ ७ ॥

त्वं हि कर्ता विकर्ता च हर्ता चैवा हर्ता च हि
अनादि निधने चाद्य त्वमेव पुरुषोत्तम ८

तुम कर्ताहो जगतके और विकार कर्ताभीहो विनाशरूपतासे हर्ता हो अविनाशी रूपतासे अहर्ता हो आदि पुरुषोत्तम अनादि निधनहो ८

त्वत्प्रपन्नाय भक्ताय शिरसा प्रणताय च
ध्यानस्यास्य यथातत्वं ब्रूहि धर्मभृतांवर ९

मे तुमको शरणागतहो भक्तहो शिरकर्के प्रणत भयाऊं इस प्रकारके अपने ध्यानके यथार्थ तत्वको आप कहो आप सर्वधर्म धरनेवालोविषे श्रेष्ठहो ९

ततः स्वगोचरे न्यस्य मनो बुद्धींद्रियाणि सः
स्मितपूर्वं मुवाचेदं भगवान्वासवानुजः १०

हे राजन् जनमेजय ऐसा वाक्य राजाका भगवानजी हृदयमें ही जानकर अपने मनको इंद्रियोकी बहिर्वृत्तिगोचर कर्के इंद्रियकोभी बहिर्वृत्ति कर्के मंदहास्य पूर्वक वासवानुज भगवान् उपेंद्रजी राजाको वचन कहतेभये १०

वासुदेव उवाच शरतल्पगतो भीष्मः शाम्यन्निव हुताशनः मांध्याति पुरुषव्याघ्र स्ततो मे तद्गतं मनः ११

वासुदेव उवाच हे पुरुषश्रेष्ठ राजन् तुमारा पितामह अब शय्या में स्थित भया है प्रशांत अग्नि जैसा शांत मन हो गया है जैसे मो को ध्यान करता है तुमने ध्यान स्थित जाना है ऐसे ही भीष्म भी मो को ध्यान करता है इसकी सर्व इंद्रियों का वृत्ति मेरे ध्यान विषे लय होगई है ताते मेरा मन भीष्म के ध्यान विषे अंतर्गत होगया है ११

यस्य ज्यातल निर्घोषं विस्फूर्जित मिवाशनेः
नसेहे देवराजोपि तमस्मि मनसागतः १२

जिस भीष्म के धनुष के चिल्ले के तल के शब्द निर्घोष वज्र पात के शब्द समान है इसको देवराज इंद्र भी नहीं सहारसका ऐसे भीष्म को मैं मन करके प्राप्त भया हूं १२

येनाभि जित्य तरसा समस्तं राजमंडलं ॥
हृता स्तिस्रस्तु ताः कन्या स्तमस्मि मनसागतः

जिस भीष्म ने अपने बल पराक्रम के योग्य करके समस्त राजमंडल के जीत कर अंबादि तीन कन्या जीत लीती है ऐसे भीष्म को मैं मन करके प्राप्त भया हूं १३

त्रयोविंशति रात्रं यो योधयामास भार्गवम्
न च रामेण निस्तीर्ण स्तमस्मि मनसागतः १४

जो भीष्म त्रयोविंशति रात्र पर्यंत परशुराम को अपने साथ युद्ध करावता भया परशुराम जिसको नहीं जीत सका ऐसे भीष्म को मेरा मन प्राप्त भया है १४

एकी कृत्येंद्रियग्रामं मनः संयम्य मेधया
शरणं मामुपागच्छ स्ततो मे तद्गतं मनः १५

जिस भीष्म ने अपने इंद्रियग्राम को मन विषे एकाग्र करके मन को बुद्धि के साथ एकाग्र किया है ऐसे भीष्म को मैं मन करके प्राप्त भया हूं १५

यं गंगा गर्भ विधिना धारयामास पार्थिवम्
वसिष्ठशिष्यं तं तात तमस्मि मनसागतः १६

जिसको भगवती गंगा अपने उदर विषे गर्भ विधी करके धारण करती भई और वसिष्ठजी ने जिसको शिक्षा कीनी है ऐसे भीष्म को मैं मन करके प्राप्त भया हूं १६

श्री॰ रा॰ पं॰ टी॰ १५३

153

दिव्यास्त्राणि महातेजा यो धारयति बुद्धिमान्
सांगांश्च चतुरो वेदांस्तमस्मि मनसा गतः १७
जो भीष्म दिव्य अस्त्रोंको अपने महातेजसे धारण करता
है षडंगसहित वेदोंको धारण करता है उसको मै मनक
र्के प्राप्त भयाऊं १७

रामस्य दयिते शिष्यं जामदग्न्यस्य पांडव
आधारं सर्वविद्यानां तमस्मि मनसा गतः १८
जो परशुरामका परम प्रेमवाला शिष्य है सकलविद्याका
यो आधारभूत है उस भीष्मको मै मनकर्के प्राप्त भयाऊं १८

सहिभूतं भविष्यच्च भवच्च भरतर्षभ।
वेत्ति धर्मविदां श्रेष्ठं तमस्मि मनसा गतः १९
जो भीष्म भूत भविष्यत् वर्तमान सर्वज्ञानको हृदयविषे
जानता है सर्वधर्मवेत्ताजनोंविषे श्रेष्ठ है उसको मै मन
कर्के प्राप्त भयाऊं १९

तस्मिन्हि पुरुषव्याघ्रे कर्मभिः स्वैर्दिवंगते
भविष्यति मही पार्थ नष्टचंद्रेव शर्वरी २०
जिस पुरुषव्याघ्र भीष्मके अपने प्रारब्धकर्मोंके अंतर्भ
ये सेते यह पृथिवी नष्टचंद्रा रात्रि जैसी सर्वज्ञानसे शून्य
होवेगी उसको मै मनकर्के गयाऊं २०

तद्युधिष्ठिर गांगेयं भीष्मं भीमपराक्रमं
अभिगम्योपसंगृह्य पृच्छ यत्ते मनोगतम् २१
हे युधिष्ठिर ऐसे गंगाजीके पुत्रको भीष्मको पासजाइकर
प्रणाम प्रार्थना करे जो तेने धर्मज्ञानका विषय कछु
पूछना है उसको प्रश्न कर जो तेरे मनका पूछना है उ
सको भीष्म कहदेवेगा २१ ॥

चातुर्विद्यं चातुर्होत्रं चातुराश्रम्यमेव च
राजधर्मांश्च निखिलान्पृच्छैनं पृथिवीपते २२
चारोवेदोंकी विद्या और चातुर्होत्र यज्ञकर्म और चारोआश्रमों
के कर्म और अखिल राजधर्मोंको भीष्मको जाइकर पूछाकर

तस्मिन्नस्तमिते भीष्मे कौरवाणां धुरंधरे
ज्ञानान्यस्तं गमिष्यंति तस्मात्त्वां चोदयाम्यहं २३

१८

२२

हे राजन् सो भीष्म जब अस्तगत होवेगा तुम्हारे कौरव वंशाके सर्व धर्मोंका धुरंधरहे सर्वकी न्याई जब अस्तहो वेगा तब सर्व प्रकारके ज्ञानधर्म अस्तहोजावेंगे इसहे तुसे मो तोको प्रेरणाकरताहूं २३

ततः श्रुत्वा वासुदेवस्य तथ्यं वचनमुत्तमं
साश्रुकंठः स धर्मज्ञो जनार्दनमुवाचह २४

हे जनमेजय सो राजा युधिष्ठिर धर्ममर्यादाका वेत्ताहै वासुदेवजीके परमतत्वरूपी वचनको सुनकर अश्रु वेगकरके जिसकंठ भराहे जनार्दनजीको वचनकहता भया २४ ॥

यद्भवानाह भीष्मस्य प्रभावं प्रतिमाधव
तथा तन्नात्र संदेहो विद्यते मम माधव २५

युधिष्ठिरउवाच हे माधव हे यादव आपने भीष्मके प्रतियो प्रभाव आपनेकहाहे सो ऐसाहीहे इसमो संदेहनहीहे २

महाभाग्यं च भीष्मस्य प्रभावं च महाद्युते
श्रुतं मया कथयतो ब्राह्मणानां महात्मनां २६

भीष्मजीका महाभाग्य और महाप्रभाव और महातेज महा त्मा ब्राह्मणोके मुखसे कहा मेनेभी प्रथम सुनाहे २६

भवांश्च कर्ता लोकानां यद्ब्रवीत्यरिसूदन
तथा तदनभिध्येयं वाक्यं यादवनंदन २७

हे कृष्ण आप तुम सर्वलोकके कर्ताहो हे मधुसूदन जैसे आपकहतेहो सो तेरावाक्यमें तैसेही कर्तव्यहे २७

यदि त्वनुग्रहवती बुद्धिस्ते मयि माधव ॥
त्वामग्रतः पुरस्कृत्य भीष्मं यास्यामहे वयं २८

हे यादवनंदन हे माधव जो आपके बुद्धिमेरे विषे अनुग्रह वतीहे तो हम तुमकोही अग्रवर्तीकरके भीष्मकेप्रतिजावेंगे २८

आवृत्ते भगवत्यर्के सहितेलोकान्गमिष्यति
त्वद्दर्शनं महाबाहो तस्मादर्हति कौरवः २९

हे महाबाहो यदभगवान् सूर्य दक्षिणायनसे फिरकर उत्त रायणको होवेगा तब भीष्मदेवलोकको जावेगा ताते सो भीष्म कुरुवंशविषे श्रेष्ठ तुम्हारे दर्शन कर णेको अवश्य योग्यहे २९ ॥

श्री॰
रा॰ध॰
टी॰
१५४

154

तव चाद्यस्य देवस्य तत्त्वैवा त्वस्य च ॥
दर्शने त्वस्य लाभः स्यात्त्वंहि ब्रह्ममयो निधिः ३०
तुम तेरे अन्तर चराचर जगतके आदयहो तुह्यारे दर्शनका
भीष्मजीको महालाभहोवेगा हे भगवन् तुमतो साक्षा
ब्रह्मतत्वके परमनिधीहो ३०
वैशंपायन॰ श्रुत्वैवं धर्मराजस्य वचनं मधुसूद
नः पार्श्वस्थं सात्यकिं प्राह रथोमे युज्यता मिति
वैशंपायनउवाच हे राजन् जनमेजय इसप्रकार धर्मराजा
के वचनको सुनकर मधुसूदन श्रीकृष्णजी पासवैठे
सात्यकीको आज्ञाकरतेभये हे सात्यके रथमेरा घोडे
जोडकर तियारकरो ३१
सात्यकि स्त्वाशु निष्क्रम्य केशवस्य समीपतः
दारुकं प्राह कृष्णस्य युज्यतां रथ इत्युत ३२
ऐसा श्रीकृष्णजीका वचन सुनकर सात्यकि कृष्णजीके
पाससे उठकर सभा मंदिरसे वाहर निकसकर दारुक सा
रथीको कहताभया माधवजीके रथको जोडकरतियार
करो ३२ स सात्यके राशिवचो निशम्य रथोत्त
मं कांचन भूषितांगं मसार गल्वर्कमयै र्विटं
कै र्विभूषितं हेम निबद्ध चक्रम् ३३
सो दारुक सारथि सात्यकिके वचनको सताबी सुनकर
र कृष्णजीके रथको सर्वांग कांचनसे भूषितकर्के तकी
या शोभायुक्त भूषण सामग्रीयुक्त कांचन चित्रवाले च
क्रोंकर्के योजना करताभया ३३
दिवाकरांशु प्रभयाशु गामिनं विचित्रना
ना मणिभूषितांतरं नवोदितं सूर्यमिव प्रता
पिनं विचित्रताल्पं ध्वजिनं पताकिनम् ३४
सुग्रीव शैब्य प्रमुखै र्वराश्वै र्मनोजवैः कांच
नभूषितांगैः संयुक्त मावेदय दच्युताय
कृतांजलि र्दारुको राजसिंह ३५
इति श्री महाभारते राजधर्मे महापुरुष
स्तवः षट्चत्वारिंशः ४६ ॥

उदयकालके सूर्य किरणोंके समान प्रभा प्रकाश संयुक्त सो रथहै अंदरसे नानाप्रकारकी मणी रत्नोंकी चित्ररचना संयुक्तहै नवीन उदयभये सूर्यके प्रभा प्रताप संयुक्तहै और विचित्र गरुडके चिन्हवाली ध्वजापताका संयुक्त रथको दारुक सारथी कृष्णजीके सन्मुख नियारकर लेआवताभया ३५ इति श्री महाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मे महापुरुषप्रभावोनाम षट्चत्वारिंशोध्यायः ४६

जनमेजयः कथंशरतल्पे शयानस्तु भारतानां पितामहः कथमुत्सृष्टवान्देहं कंच योगमधारयत् १

जनमेजयउवाच हे वैशंपायनजी प्रथम सो को तुम यह कथा कहो भीष्मजी कौरववंशके भारतवंशके राजालोकोंके पितामहहैं सो भारत युद्धके शरशय्याविषे चिरकाल स्थित होकर देहत्यागको किसविधीसे करतेभये १

वैशंपायनः शृणुष्वावहितो राजन् शुचिर्भूत्वा समाहितः भीष्मस्य कुरुशार्दूल देहोत्सर्गं महात्मनः ॥ २ ॥ वैशंपायनउवाच हे राजन् जनमेजय तुम सावधानतासे सुनो हे कुरुशार्दूल महात्मा भीष्मजीके देहत्याग विधीको मैं कहताहूं २

निवृत्तमाने त्वयने उत्तरे वै दिवाकरे समावेशयदात्मान मात्मन्येव समाहितः ३

दक्षिणायन सूर्य पलटगया जब सूर्य उत्तरायणको प्राप्तभया तब भीष्मजी अपने आत्माको बहिर्मुखतासे निवृत्तकरके अपनी बुद्धिविषे स्थिरकरताभया इसप्रकारभीष्मसावधानहोताभया ३

शुक्लपक्षस्य चाष्टम्यां माघमासस्य पार्थिव प्राजापत्ये च नक्षत्रे मध्यं प्राप्ते दिवाकरे ४

शुक्लपक्षकी अष्टमीके दिनविषे प्रजापति ब्रह्मा है देवता जिसका ऐसे रोहिणी नक्षत्रके वर्तमानकालविषे और जब सूर्यभगवान अपने मंडलके मध्यविषे प्राप्तभयाहै ऐसे ब्रह्माजीका अभिजित मुहूर्त नववियमान रहा ४ ॥

155

विकीर्णांशु दिवादित्यो भीष्मः शरशतैस्ततः
शुशुभे परया लक्ष्म्या वृतो ब्राह्मणसत्तमैः ५
ऐसे समयमें भीष्मजीने देहत्यागकरणेकी इच्छाकीनी
है जैसे सूर्यभगवान् अपनी किरणोको प्रकटकरके
शोभताहै तैसे भीष्मजी अनेक सैकडे बाणजालकरके
पूर्णदेह भयाहै सो परम शोभाके संपदाको प्राप्तभयाहै
अनेक ब्राह्मणोत्तमोकरके चारोतरफ वेष्टनभयाहै ५
व्यासेनावेद विदुषा नारदेन सुरर्षिणा ॥
देवस्थानेन वात्स्येन तथाश्मकसुमन्तुना ६
वेदव्यासकरके संयुक्तहै देवऋषी नारदमुनिकरके देवस्था
नमुनेसंयुक्तहै और सुमंतमुनि संयुक्तहै ६
तथा जैमिनिना चैव पैलेन च महात्मना ।
शांडिल्य देवराताभ्यां मैत्रेयेन च धीमता ७
तैसे जैमिनिऋषि संयुक्तहै और महात्माहै पैलमुनिसं
युक्तहै और हारीतमुनि लोमशमुनि संयुक्तहै और द
त्तात्रेयमुनि संयुक्तहै ॥ ७
असितेन वसिष्ठेन कौशिकेन महात्मना
हारीत लोमशाभ्यां च तथात्रेयेण धीमता ८
और शांडिल्यमुनि देवराजमुनि संयुक्तहै तैसे धीमान
मैत्रेयमुनिसंयुक्तहै असितमुनि संयुक्तहै वसिष्ठमुनि
संयुक्तहै विश्वामित्र मुनि संयुक्त भयाहै ८
बृहस्पतिश्च शुक्रश्च च्यवनश्च महामुनिः ॥
सनत्कुमारः कपिलो वाल्मीकि स्तुंबरुः क्रतुः
बृहस्पति जोहै शुक्रजोहै च्यवनजोहै महामुनिहै स
नत्कुमारहै कपिलमुनिजोहै वाल्मीकिमुनिजोहै क्रतु
मुनिजोहै ९॥
मौद्गल्यो भार्गवो रामस्तृणबिंदु र्महामुनिः
पिप्पलादो थ वायुश्च संवर्तः पुलहः कचः १०
मौद्गल्यमुनि परशुराममुनिः तृणबिंदुमुनिः पिप्पलाद
मुनिः वायुमुनिः संवर्तमुनि पुलहमुनि त्रितमुनि भीत
होहै १०॥
कश्यपश्च पुलस्त्यश्च क्रतुर्दक्षः पराशरः

मरीचि रंगिराः काश्यपो गोतमो गालवो मुनिः ॥

काश्यपमुनिः पुलस्त्यमुनिः क्रतुमुनि दत्तमुनि पराशर मुनि। मरीचिमुनि अंगिरामुनि काश्यपमुनि। गोतम मुनि गालवमुनि ॥

धौम्यो विभांडो मांडव्यो धौम्रकृत्साच्च भौतिकः

उद्दालको परमो विप्रो मार्कंडेयो महामुनिः १२

धौम्य मुनि विभांडकमुनि मांडवमुनि धौम्रमुनिः कृत्सा च भौतिकमुनिः उद्दालकमुनिः मार्कंडेयमुनिः १२

भास्करिः पूरणः कृष्णः सूतः परम धार्मिकः

एतैश्चान्यैः मुनिगणैः महाभागैः महात्मभिः १३

भार्गवमुनि भास्करमुनि पूरणमुनि कृष्णमुनिः और सूत पौराणिक परमधर्मका वेत्ताभी तहां स्थितभयाहै यह एते जो मुनिश्रेष्ठहैं तिन्होंकरकें भीष्मचारोंतरफ वेष्टितभयाहै अवरभी मुनिजनहै बडे महात्मा तिन्होंकरकेंभी युक्तभयाहै १३

मुद्दाद्भिः समोपेते हैतस्ये दूरव ग्रहैः ॥

भीष्मः स पुरुषव्याघ्रः कर्मणा मनसा गिरा १४

मुद्दादमहात्मकरकें युक्तहै भीष्मजैसे चंद्रमा ग्रहोंकरकें युक्तहोताहै ऐसा पुरुषोविषे श्रेष्ठ भीष्मजोहै सो कर्मकरकें मनकरकें वाणीकरकें १४

शरतल्प गतः कृष्णं प्रदध्यौ प्रांजलिः शुचिः

स्वरेण हृष्टपुष्टेन तुष्टाव मधुसूदनम् १५

शरशय्याविषे स्थितभया तोभी कृष्णजीका ध्यानकरताभया कृतांजलि होकर भगवानजीके नामोच्चारणाकरकें अपनी मानस पवित्रताकरकें हृष्टपुष्टस्वरकरकें मधुसूदनजीको स्तुतिकरताभया १५

योगेश्वरं पद्मनाभं विष्णुं जिष्णुं जगत्पतिम्

कृतांजलि पुटोभूत्वा वाग्विदां प्रवरः प्रभुः १६

भीष्मः परम धर्मात्मा वासुदेव मथास्तवत्

मधुसूदन जीकेसेहै सर्वयोगी जनोंके ईश्वरहै पद्मनाभहै

श्री० रा० पं० टी० १५९ 156

सर्वव्यापकतासे विष्णुरूपहै भक्तोंके ध्यानमात्रसे रागादिदोषोंके नाशशीलहै जिस्हे जगतके सर्वकल्पनाके प्रेरकहै ऐसे जगत्पति वासुदेव जीको परमधर्मात्मा वाणी बोलनेको तत्वविज्ञानीमें विषे श्रेष्ठ जितचित्ततासे सर्वसामर्थ्य संपन्नहै ऐसा महाप्रभाववाला भीष्मकृतांजलि होकर स्तुतिकरताभया १६

भीष्मउवाच आरिराधयिषुः कृष्णं वाचंजिगदिषामियां तया व्यास समासिन्या प्रीयतां पुरुषोत्तमः १७ ध्यानकरके आराधनकी इच्छाकरके विचारसे हेपद्रूप वाणीकोकहाचाहताहूं ऐसी मेरी वाणीकी स्तुतिकरके सर्वात्मा भगवान् पुरुषोत्तम मेरेप्रति प्रसन्नहोवे १७ शुचिं शुचिपदं हंसं तत्पदं परमेष्ठिनं युक्तं सर्वात्मनात्मानं तं प्रपद्ये प्रजापतिं १८ कैसेहै शुचिहै अपनेसे भी दोषही नहै बहोर कैसेहै सर्वातीतगतिसे शुचिपदहै जिन्हके पदप्राप्तीका रागद्वेषहीतशुद्धमार्गहै बहोर कैसेहै सर्वातीतगतिसे हंसरूपहै बहोर कैसेहै तत्वरूपहै तत्पदत्वंपदके अर्थरूप जीवेश्वरताके एक अद्वैत ईश्वर रूपहै और परमेष्ठिहै हिरण्यगर्भरूपहै बहोर देहत्रयकी सत्तारूप जीवात्मारूपहै १९

अनाद्यंतं परंब्रह्म न देवा न षयो विदुः एकोयं वेद भगवान्धाता नारायणो हरिः २०

जिसको देवता ऋषिनही जानते सो कैसेहै आदि अंतसे रहितहै कार्यकारणकल्पनासे रहितहै परसेभी परे परंब्रह्म सत्तामात्रहै जिसको एकविधाता ब्रह्माही जानताहै जो यह नारायणहै और यह हरि परमात्माहै २०

नारायणाद्दृषिगणा स्तथा सिद्ध महोरगाः देवदेवर्षयश्चैव यंविदुः परमव्ययम् २१

जिस नारायणसे ऋषिगण भयेहै तैसे सिद्ध और अनंतादि महासर्पभयेहै देवता और देवऋषि जिस नारायण से भयेहै उसी नारायणको परम अविनाशी तत्वरूप जानतेहै २१ ॥

देव दानव गंधर्वा यक्ष राक्षस किन्नराः
यं न जानंति को ह्येष कुतो वा भगवा निति २२
देवता दानव यक्ष गंधर्व राक्षस सर्वगण जिसके अंतको न
हीजानते यह भगवान नारायण कहांसे भयाहे और कौनहे २२
यस्मि न्विश्वानि भूतानि तिष्ठंतिच विशंतिच
गुणभूतानि भूतेश सूत्रे मणिगणा इव २३
जिसविषे सर्वविश्वके भूतस्थित होतेहे लयभी होतेहे स
भही नारायणके गुणरूप वनेहे जैसे सूत्रविषे मणिग
णहोतेहे २३ ॥
यस्मि न्नित्यं तते तंतौ दृढे स्रगिव तिष्ठति
सदसद्ग्रथितं विश्वं विश्वांगे विश्वकर्मणि २४
जौनसा भगवा नित्यगतीवाला ततरूपहे दृढहे उसीविषे
मालाविषे मणिगण जैसा सत असत कल्पनाकी ग्रन्थनग्र
थीवाला विश्वही विश्वकी अंगसत्ताविषे विश्वकल्पनाके
कर्मकलारूपविषे स्थितभयाहे २४
हरिं सहस्र शिरसं सहस्र चरणे क्षणं सह
स्रवाहु मुकुटं सहस्र वदनो ज्वलम् २५
जिसहरिभगवानको सहस्र शिरवाले सहस्रचरणवाले
सहस्रनेत्रवालेको सहस्रवाहु मुकुट संयुक्त सहस्रमुखो
कर्के उज्वल नारायणको कहतेहे २५
प्राहु र्नारायणं देवं यं विश्वस्य परायणं
अणीयसा मणीयांसं स्थविष्ठं च स्थवीयसा २६
जिसदेवको सर्वविश्वका परम आधार कहतेहे और सू
क्ष्मरूपतासे स्थूलरूप कहतेहे सर्वप्रकारके अणुरूपसे
भी अणुरूपको कहतेहे २६
गरीयसां गरिष्ठंच श्रेष्ठं च श्रेयसा मपि ॥
यं वाकेष्व नुवाकेषु निषत्सू पनिषत्सु च २७
अतिगरिष्ठ सेभी गरिष्ठभारी जानतेहे और श्रेष्ठविषे परम
श्रेष्ठकहतेहे जिसको वेदकी वाकोंविषे अनुवाकोंविषे
मंत्ररूप और मंत्रविचारणवाले ब्राह्मणवाकोंविषे निषत

श्री॰
रा॰ य॰
टी॰
१५०

157

मंत्ररूप और मंत्रार्थ विचारणवाले ब्राह्मणवाक्योंविषे निषत
जोहै कर्मांगसंबंधवाले देवतादिज्ञानवाले सूत्र भाष्यों वि
षे और उपनिषत् जोहै केवल आत्मज्ञानके वेदांतवाक्य
तिन्होंविषे सत्यअबाधित अखंड सत्तारूप जानंतेहै २७

गृणंति सत्यकर्माणं सत्यं सत्येषु सामसु
चतुर्भिश्चतुरात्मानं सत्वस्थं सात्वतां पतिम् २८

सत्चित् आनंद ऐसे सत्यकर्मरूपजानंतेहै और सत्यवा
क्य जोहै अर्थकी बाधारहित अर्थवाले सामवाक्य ज्येष्ठ
सामादिक तिन्होंविषे चारनामोंकरके वासुदेव संकर्षण
प्रद्युम्न अनिरुद्ध रूपक्रमसे चतुरात्मा स्वरूप ब्रह्मजीव
मन अहंकाररूप कहतेहै २८

यं दिव्यैर्देवमर्चंति गुह्यैः परमनामभिः
यस्मिन्नित्यं तपस्तप्तं यदंगेष्ववतिष्ठति २९

जिसको आत्मबुद्धि विषे स्थितभयेको भक्तजन भक्तजनों
के पतिरूपको जानतेहैं और जिसदेवको दिव्यपरमगुह्य
परमेश्वरादि नामोंकरके दिव्यऋषि अर्चनकरतेहै २९

सर्वात्मा सर्ववित्सर्वः सर्वज्ञः सर्वभावनः

जिसके निमित्तविषे अपने धर्मसे तपजो कियाहै सो ति
सके सन्नासि जिसके अंगजोहै चित्तादिक तिन्होंविषे रागादि
दोषरहित अखंड स्थितहोताहै सो भगवान् सर्वात्माहै
सर्वकर्मोकावेत्ताहै सर्वरूपहै सर्वकर्मफलकावेत्ताहै
सर्वप्रकारकी भावनाको सत्यकरदेताहै ऐसे ईश्वरको
मै शरणागतभयाहूं ३०

यं देवं देवकीदेवी वसुदेवादजीजनत् ॥
भौमस्य ब्रह्मणो गुप्त्यै दीप्तमग्निमिवारणिः ३१

जिसदेवको देवी वसुदेवसे भूमितलविषे ब्रह्मजोहै वे
द और ब्राह्मण और यज्ञादि धर्म इसकी रक्षावास्ते उत्पन्न
करतीभई जो भगवान् पृथिवीके भार निवारणेको कृष्णा
वतारभईहै ऐसी भगवानकी मै शरणागतभयाहूं ३१

य मनन्य अपेताशी रात्मानं वीतकल्मषम

दृष्ट्वा नेत्याय गोविंदं पश्यंत्यात्मान मात्मनि ३२

जिसदेवको अन्यकल्पनाकी भेदरहित पुरुष विषयभो।
गोकी आशाको त्यागकर महातपस्वीजन सर्वप्रपंचकी
आत्मारूप वासनाकलंकसे रहित प्रसंगरूप देषकर आ
नंदरूप जोहे मोक्षप्राप्ति उसके वास्ते गोविंदरूप सर्वेंद्रिय
प्रेरक सर्वांतर्यामी रूप अपने विषेही देषतेहे ऐसे परा।
मात्माको मे शरणागतभयाऊं ३२

अतिवायिंद्र कर्माणं अति सूर्यामि तेजसं
अति बुद्धींद्रियात्मानं तेप्रपद्ये प्रजापतिम् ३३

सो कैसेहे परमात्मावायु इंद्रसेभी अधिक जिसका पराक्रम
हे और सूर्य अग्निसे अधिक जिसका तेजहे बुद्धि इंद्रियां इन्हसे
भी जिसको अधिक ज्ञानहे ऐसे प्रजापति परमात्माको मे
शरणागतभयाऊं ३३ ॥

पुराणे पुरुषं प्रोक्तं ब्रह्मप्रोक्तं युगादिषु
क्षये संकर्षणं प्रोक्तं तमुपास्य मुपास्महे ३४

अतीतभये जो पुराणे कल्प तिन्होविषे सर्वविश्वके लय
वाले पुरुषको जिसको कहतेहे और युगके प्रारंभविषे स
ष्टिके वृद्धिकरणेसे जिसको ब्रह्मा कहतेहे और प्रलयकाल
विषे सभके आकर्षणसे संकर्षण कहतेहे सो सभके उ
पास्य सर्वदेवतारूपहे सो उन्हको अपने परमेश्वर जानक
र उपासनाकरतेहे ३४

यमेकं बहुधात्मानं प्रादुर्भूत मधोक्षजम्
नान्यभक्ताः क्रियावंतो यजंते सर्वकामदम् ३५

जो भगवान् एकरूपहे उसको एकरूपसेही इंद्रादि बहुत
देवता बहुरूपताके आत्मारूपसे प्रादुर्भाववालेको अन
न्यभक्तजो पुरुषहे सो अतींद्रिय रूपकोभी कर्मयोगकर्के
सर्वकामदेवने हारेको यजन करतेहे ऐसे भगवानको मे
उपासना करताहूं ३५

यमाहुर्जगतः कोशं यस्मिन्संनिहिताः प्रजाः
यस्मिंलोकाः स्फुरंतीमे जले शकुनयो यथा

जिसको जगती उत्पत्तिका कोशखजाना रूपकहतेहे जि सविषे यह प्रजा सर्वदा स्थितहे जिसविषे यह सभही लोक जलविषे हिंसादि पक्षी समान विहार करतेहे उसकोमे उपासना करताहूं ३६

ऋत मेकाक्षरं ब्रह्म यत्तत्सद सतः परम्
अनादि मध्यपर्यंतं न देवा नर्षयो विदुः ३७

हे भगवान् सदा सत्यहे एकहे अक्षरहे अविनाशीहे ब्रह्मसत्ता रूपहे सत असत जगतके कल्पनासे परेहे ऐसे आदि अंत मध्यपरिमाणसे रहितहे ऐसे चिदात्मा को देवता ऋषिभी तत्वरूपतासे नहीजानते ३७

ये त्वरा सुरगंधर्वाः सिद्धा ऋषि महोरगाः
प्रयता नित्य मर्चंति परमं दुःखभेषजम् ३८

जिसको देवता असुर गंधर्व सिद्धऋषि महानाग प रम दुःखकारी संसाररूप रोगकी औषध जानकर्के नि त्यपूजन करते ३८

अनादि निधनं देव मात्मयोनिं सनातनम्
अप्रेक्ष्य मनभिज्ञेयं हरिं नारायणं प्रभुम् ३९

जिस आद उत्पत्ति निधन अंतनहीहे और आत्मयोनिहे स्वयंभूहे सनातनहे सदा एक रूपहे अप्रेक्ष्यहे दृष्टि गोचरनहीहे और ज्ञानेंद्रियोंकर्के अनभिज्ञेय ऐसे हरि को नारायणको जगतके परमेश्वरको मे उपासना कर ताहूं ३९॥

यं वै विश्वस्य कर्तारं जगत स्तस्थुषो पतिं
वदंति जगतो ध्यक्ष मक्षरं परमं पदम् ४०

जिसभगवानको विश्वका कर्ता कहतेहे जिसको चराचर जगतकापति कहतेहे जिसको सर्वजगतके सर्वाधिका री सर्वरूप अक्षर परमपद कहतेहे उसको मे शरणाग तभयाहूं ४०॥

हिरण्यवर्णं यंगर्भ मादित्यं दैत्यनाशनं
एकं द्वादशधा जज्ञे तस्मै सूर्यात्मने नमः ४१

जिसको तेजकर्के सुवर्णके समान वर्णवाले गर्भको अ
दिति उदरविषे धारणकर्के एकरूपकोही द्वादशरूपभेद
कर्के उत्पन्नकरतीभई कैसाहै दैत्यनाशको कारणहारा
है ऐसे सूर्यरूप भगवानको नमस्कार करतेहै ४१

शुक्ले देवान्पितॄन्कृष्णे तर्पयत्यमृतेन यः
यश्च राजा द्विजातीनां तस्मै सोमात्मने नमः ४२

जो भगवान् शुक्लपक्षविषे अपनी कला वृद्धिकर्के देवग
णोंको अमृतसे तृप्तकरताहै और कृष्णपक्षविषे अपनेक
लाके भागक्रमके अमृतसे पितृनको तृप्तकरताहै यो
द्विजजाती जनोंके राजाहै ऐसे चंद्रमारूप भगवानको मे
नमस्कार करताहूं ४२

महस्तमसः पारे पुरुषं ह्यतितेजसं
यं ज्ञात्वा मृत्युमत्येति तस्मै ज्ञेयात्मने नमः ४३

जो भगवान अज्ञानरूपी तमसे मुक्तहै पुरुषरूपकर्के स
र्वगतहै अतिप्रकाशवालाहै जिसको शुद्ध असंगरूप जा
नकर संसारको मृत्युको अतीत होकर मुक्तहोते ऐसे ज्ञा
नरूपे देवताई नमस्कारहै ४३

यं बृहंतं बृहत्युक्थे यमग्नौ यं महाध्वरे
यं विप्रसंघा गायंति तस्मै यज्ञात्मने नमः ४४

जिसको बृहद्भयेको बृहत्कहतेहै जिसको अग्निविषे होम
देतेहै जिसको महायज्ञविषे यज्ञपुरुषकर्के मानतेहै जि
सको विप्रसमूह सामगायनसे गान करतेहै ऐसे वेदा
त्माके ताई नमस्कार होवे ४४

यः सुपर्णो यजुर्नाम छंदोगात्रस्त्रिवृच्छिराः
रथंतरं बृहत्साम तस्मै स्तोमात्मने नमः ४५

जिसको ऋग्वेद यजुर्वेद सामवेदोंका धामनिवास कहतेहै
और दशाका अर्थ पांच जिसकी विधिके साधनहै धानादधि
सक्त और परिवाप पुरोडाश और पयस्य यह पांच होमके अं
गहै और गायत्री उष्णिक् अनुष्टुप् बृहती पंक्ति त्रिष्टुप्
जगती यह सप्तछंद जिसके तंतुका सूत्रविस्तारहै
ऐसे यज्ञात्मा भगवानको नमस्कारहोय ४५

रा.प.
टी.
१५९

159

चतुर्भिश्च चतुर्भिश्च द्वाभ्यां पंचभिरेवच
हूयतेच पुनर्द्वाभ्यां तस्मै होमात्मने नमः

जो भगवान् यज्ञविधानमो पंचाक्षर मंत्रवर्णोंकर्के ब
होड दोवर्णवाले मंत्रकर्के बहोडदोवर्णवाले मंत्रकर्के
आहुति विधानकिया जाताहै ऐसे होमात्माको नमस्का
रहई आश्रावय ४ अस्तु श्रौषट् ४ यज २ येयजामहे
दोअक्षर वषट् २ अथवा स्वाहा ऐसे होमात्माके ताईं न
मस्कारहै ४६ ॥

५

[illegible]
[illegible] ४७

जो भगवान् सम्पूर्ण वेदपुरुषहै यज्ञ जिसका नामहै
गायत्रीछंदादिक जिसके हस्तादि गात्रहै त्रिवेदी जि
सका शिरहै रथंतर साम बृहत्साम वैकल्पिक साम जि
सके वाक्यहै ऐसे स्तोत्रात्मादेवको नमस्कारहै ४७

यः सहस्र समेसत्रे जज्ञे विश्वसृजन्नृषिः
हिरण्यपक्षः शकुनिः तस्मै हंसात्मने नमः ४८

जो भगवान् सहस्रवर्षके समयवाले प्रजापतियोंके
यज्ञमो ऋषिश्रेष्ठ भगवान् सुवर्णपंखयुक्त पक्षीरूपइ
दे भयाहै ऐसे हंसात्माके ताईं नमस्कारहै ४८

पदांगं संधि पर्वाणं स्वरव्यंजन भूषणम्
यमाहुरक्षरं दिव्यं तस्मै वागात्मने नमः ४९

श्लोकके पादजिसके अंगहै और संधि जिसके अंगग्रंथी
है स्वर और व्यंजन जिसके भूषणहै जिसको दिव्य
अक्षररूपकहतेहै ऐसी वाणीरूप परमात्माके ताईं
नमस्कारहोय ४९

यज्ञांगो यो वराहो वै भूत्वा गां मुज्जहार ह
लोकत्रय हितार्थाय तस्मै वीर्यात्मने नमः ५०

जो भगवान् यज्ञके अंगोंवाला सर्वसृष्टिमो वराहभया
है वराहरूपहोकर पृथिवीको जलसमुद्रसे उद्धारक
रताभया त्रिलोककी हितकरताभया ऐसा महावी
र्य भगवान् ताईं नमस्कारहो ५०

यः शेते योगमास्थाय पर्यंके नागभूषिते
फणासहस्र रचिते तस्मै निद्रात्मने नमः ५१
जो भगवान योगनिद्राको अंगीकारकर्के शेषनाग भूषितप
र्यंकमो शयनकरताहै शेषपर्यंकके साहे फणासहस्र
कर्के रचन कियाहै ऐसे निद्रात्मा परमेश्वरको नमस्का
रहोय ५१
य स्तनोति सतां सेतु मृतेना मृतयोनिना
धर्मार्थ व्यवहारांगै स्तस्मै सत्यात्मने नमः ५२
जो भगवान संतजनोके संसार तरणवास्ते वेदोक्त सत्यमा
र्गोंप देशकर्के पंचरात्रोक्त मार्गरूपी सेतुकल्पन क
रनाभया ऐसा सत्यधर्मात्मा ताई नमस्कारहै ५२
यं पृथग्धर्म चरणाः पृथग्धर्म फलैषिणः
पृथग्धर्मैः समर्चंति तस्मै धर्मात्मने नमः ५३
जिसको नानाप्रकारके भिन्न भिन्न आचरणवाले जन भिन्न
फलकी वांछावाले भिन्न भिन्न धर्मवाले धर्म कर्मोकर्के
अर्चाकरतेहै ऐसे धर्मात्मा परमेश्वरको नमस्कारहै ५३
यतः सर्वे प्रसूयंते ह्यनंगा त्मांगदेहिनः
उन्मादः सर्वभूतानां तस्मै कामात्मने नमः ५४
जिसके कामवासनावाले अंगधारी देहसे सर्व प्राणी मैथु
नधर्म कर्के उत्पन्न होतेहै यो भगवान कामवेगकर्के स
र्वभूतोको उन्माद करतेहै ऐसे कामात्मा भगवानको न
मस्कारहोय ५४
पंचव्यक्तिस्थ मव्यक्तं विचिन्वंति महर्षयः
क्षेत्रे क्षेत्रज्ञ मासीनं तस्मै क्षेत्रात्मने नमः ५५
जिसको पंचभूतोकी व्यक्तिके स्थितवाले देहमों स्थितक्षे
त्रज्ञआत्माको महाऋषि ढूंडतेहै ऐसा क्षेत्रात्मा भगवा
नको नमस्कार होवे ५५
यं त्रिधात्मान मात्मस्थं वृतं षोडशभिर्गुणैः
प्राज्ञः सप्तदशं सांख्या स्तस्मै सांख्यात्मने नमः ५६

श्री॰
रा॰य॰
टी॰
१६०

जिसभगवानको जाग्रतस्वप्न सुषुप्तिकी तीन अवस्थामो एकादश इंद्रिया पंचभूतोकरकै सहित षोडशविकार गुणो करकै देहविषे चेतना करणेहारे सप्तदश तत्वरूप पुरुषको सांख्यतत्व वेत्ता जानतेहे ऐसे सांख्यसिद्धांतरूप भगवानको नमस्कारहे ५६

यं विनिद्रा जितश्वासाः सत्वस्थाः संयतेंद्रियाः
ज्योतिः पश्यंति युंजाना स्तस्मै योगात्मने नमः ५७

जिसको जितनिद्र और जितप्राण योगीजनवासना रहित सत्वरूप मनविषे योगमार्गके वलकरकै ज्योतिस्वरूप अपने आत्माको देषतेहे ऐसे योगात्मा भगवानको नमस्कारहोवे ५७

अपुण्य पुण्ये परमे यं पुनर्भव निर्भयाः ॥
शांताः संन्यासिनो यांति तस्मै मोक्षात्मनेनमः ५८

जिस विद्वात्माको पापपुण्य कर्मके प्रारब्धभोगके क्षयकालमो पुनर्जन्मके भयवाले शांतात्मा संन्यासीलोक प्राप्तहोतीहै ऐसे मोक्षधर्मात्मा परमेश्वरको नमस्कारहै

योसौ युगसहस्रांते प्रदीप्तार्चि विभावसुः
संभक्षयति भूतानि तस्मै घोरात्मने नमः ५९

यो भगवान चारोयुगोंके सहस्र युगांतकालविषे प्रचंड प्रज्वलित ज्वालामाली संवर्तनामवाला अग्नि सर्वभूतोको प्रलयकालमो भक्षण करताहे ऐसे घोरात्माको नमस्कारहोय ५९

संभक्ष्य सर्वभूतानि कृत्वा चैकार्णवं जगत
वालः स्वपिति यश्चैक स्तस्मै प्राणात्मने नमः ६०

जो भगवान् प्रलयकालमो सर्वभूतोंको भक्षणकरकै एक समुद्रमय जगतको वालरूपकरकै वालरूप होयकर वटपत्रमो शयनकरताहे ऐसे माया वपुरूपधारी परमात्माको नमस्कारहै ६०

अजस्योनाभौ संभूतं यस्मिन्विश्वं प्रतिष्ठितं
पुष्करं पुष्करात्मस्य तस्मै पद्मात्मने नमः ६१

जो भगवान आप जन्मरहितहे अजहे जिसकी नाभीमो कमल उत्पन्नभया उसी कमलविषे संपूर्ण विश्वप्रतिष्ठितभयाहे ऐसे पद्माको मे नमस्कार करताहूं ६१

सहस्रशिरसे चैव पुरुषायामितात्मने
चत्वारः समुद्र पर्याय तस्मै योगात्मने नमः ६२

जो भगवान सहस्रशीर्षापुरुष और अमितस्वरूप हे चारोसमुद्र एककरणहारी जिसके योग निद्राहे ऐसे योगनिद्रात्माको नमस्कारहे ६२

यस्य केशेषु जीमूता नद्यः सर्वांग संधिषु
कुक्षौ समुद्रा श्चत्वार स्तस्मै तोयात्मने नमः ६३

जिसभगवानके केशोविषे मेघमंडलहे नदीयां सर्वांग संधिरूप नाडिकाजालमोहे और कुक्षीविषे चारो समुद्रहे ऐसे जलात्माको नमस्कारहे ६३

यस्मात्सर्वे प्रसूयेते सर्ग प्रलय विक्रियाः
यस्मिंश्चैव प्रलीयंते तस्मै हेत्वात्मने नमः ६४

जिसभगवानसे जगतके सर्गप्रलयविकार उत्पन्न होते हे जिसविषे बहोडलय होजातेहे ऐसे कारण सत्वात्माको नमस्कारहे ६४

यो निषण्णो भवेद्रात्रौ दिवा भवति विष्ठितः
इष्टा निष्टस्यच द्रष्टा तस्मै द्रष्टात्मने नमः ६५

जो भगवान् रात्रिविषे वेदाबरुता साक्षीरूप होताहे और जाग्रत स्वप्नकी अवहार दशाविषे कर्तारूपसे स्थितहोताहे आप असंगरूप सर्वभूतोंके शुभाशुभकी इष्टानिष्ट कर्मको फलभोगका द्रष्टा बनताहे ऐसे द्रष्टात्मा पुरुषको नमस्कारहे ६५

अकुंठं सर्वकार्येषु धर्मकामार्थ मुद्यते
वैकुंठस्य च यद्रूपं तस्मै कार्यात्मने नमः ६६

जो भगवान् सर्वकार्योविषे निरोध रहितहे धर्मकार्य के अर्थको उद्यतहे ऐसे वैकुंठ भगवानजीके सर्वकार्य फलसिद्धि रूपहे सो सर्वकार्यात्मा तिसको नमस्कारहे ६६

त्रिः सप्तकृत्वो यः क्षत्रं धर्मव्युत्क्रांतगौरवान्
क्रुद्धो निजघ्ने समरे तस्मै क्रोधात्मने नमः ६७
जौनसा क्षत्रीयोंका कुलधर्म मर्यादाको पलटनेको उ
द्यत भयाहै उसको मारकर्के क्रोधवान होकर तीनवेरी
सात सात प्रकारसे निक्षत्रिया पृथिवीको करताभया
ऐसे कृतात्मा परशुरामको नमस्कार होवे ६७

जो वायु सर्वभूतोंको देहविषे प्राण अपान व्यान उदान
समान नामकर्के पंचप्राणरूपसे अपनेको भिन्नकर्के
सर्वशरीरोंके चेष्टा करावताहै ऐसे प्राणवायुरूपको
नमस्कार होवे ६८

जो भगवान् युगयुगविषे मास ऋतु वर्ष कल्पनाकर्के
सर्वभूतोंके सृष्टिप्रलयको करताहै ऐसे कालात्माको
नमस्कार होवे ६९

ब्रह्म वक्त्रं भुजौ क्षत्रं कृत्स्नमूरूदरं विशः
पादौ यस्याश्रिताः शूद्राः तस्मै वर्णात्मने नमः ७०
जिसके ब्राह्मण मुखहै क्षत्री भुजाहै वैश्य पेट ऊरुस्थान है चर
णोविषे शूद्रहै ऐसे वर्णात्मा देवको नमस्कार है ७०
यस्याग्निरास्यं द्यौर्मूर्धा खं नाभिश्चरणौ क्षितिः
सूर्यश्चक्षुर्दिशः श्रोत्रे तस्मै लोकात्मने नमः ७१
जिसका अग्निमुख है स्वर्गशिरस्थान है आकाश नाभी
है चरणपृथिवीहै सूर्यनेत्र है दिशा जिसके कर्ण है
ऐसे लोकात्माको नमस्कार है ७१
परः कालात्परो यज्ञात्परात्परतरश्च यः
अनादिरादिर्विश्वस्य तस्मै विश्वात्मने नमः ७२
जो भगवान् कालसे परे है यज्ञके परेसेभी परे है आपअ
नादि है विश्वका आदिभूत है ऐसे विश्वात्माको नमस्कार
है ७२

विषये वर्तमानानां यं ते वैशेषिके गुणेः
प्राप्न विषय गोमारे तस्मै गोप्तात्मने नमः ७३
विषय वासनावाले इंद्रियोंके वृत्तिविषे वर्तमान जो प्राणीहै तिन्होंको विषय विशेषोंके रागादि दोषोंसे जिन्होंको रक्षाकरता कहतेहै ऐसे रक्षात्माको गोप्तात्मा को नमस्कारहै ७३
अन्नपानें धनमयो रसप्राण विवर्धनः
योधारयति भूतानि तस्मै प्राणात्मनेनमः ७४
२५ जो भगवान जठराग्नि भयाहै सो अन्नपान इंधनसेही प्रज्वलत होताहै रसकर्के प्राणचेष्टाकर्के सर्वभूतोंके पोषण करताहै ऐसे प्राणात्मा ताई नमस्कारहै ७४
प्राणानां धारणार्थाय योन्नं भुंक्ते चतुर्विधम
अंतर्भूतः पचत्यग्निं तस्मै पाकात्मने नमः ७५
जो भगवान सर्वभूतोंके शरीरविषे अंतर्गतभयाहै प्राणोंकी धारणावास्ते भक्ष्यभोज्य लेह्य चोष्यचार प्रकारके अन्नको जठराग्नि रूपताहै परिपक्व करताहै ऐसे पाकात्माको नमस्कारकरताहै ७५
पिंगेक्षण सटेयस्य रूपं दंष्ट्रा नखायुधम
दानवेंद्रांतकरणं तस्मै दृप्तात्मने नमः ७६
जिसका स्वरूप पीतजटा पीतनेत्रोंवालाहै और दंष्ट्रानखजिसके आयुधहै दानवोंके अंतकोकरणे हाराहै ऐसे महाघोर बलसे मदमत्त सिंहात्मा नरसिंहको नमस्कार होवे ७६
यं नदेवा नगंधर्वा न दैत्या नच दानवाः
तत्वतो हि विजानंति तस्मै सूक्ष्मात्मनेनमः ७७
जिसके अमुक स्वरूपको देवता दानव गंधर्व दैत्य तत्वसे नही जानते ऐसे सूक्ष्मात्माको नमस्कारहै ७७
रसातल गतः श्रीमान नंतो भगवान्विभुः
जगद्धारयते कृत्स्नं तस्मै वीर्यात्मने नमः ७८
जो भगवान रसातलविषे पातालविषे प्राप्तभयाहै अनंत

भगवान महाविश्रुतावाला समग्र जगतकों धारणकरताहे
ऐसे ऐसे अनंतवीर्यात्माकों नमस्कारहे ७८

यो मोहयति भूतानि स्नेह पाशानु बंधनैः
सर्गस्य रक्षणार्थाय तस्मै मोहात्मने नमः ७९

जो भगवान सर्वभूतोंको स्नेह पाशके बंधनोंकर्के सर्गम
र्यादाकी रक्षावास्ते बंधन करताहे ऐसे मोहात्माको नम
स्कारहे ७९

आत्मज्ञान मिदं ज्ञानं ज्ञात्वा यंच अवस्थितम्
यं ज्ञात्वा नाधिगच्छंति तस्मै ज्ञानात्मने नमः ८०

जेता यह सर्वप्रकारकी ज्ञानहे सो आत्मज्ञानकी अवस्था
विषे प्रतिष्टितहे इस प्रकार जिसको तत्वज्ञानकर्के जान
तेहे ऐसा ज्ञानात्माको नमस्कारहे ८०

अप्रमेय शरीराय सर्वतो बुद्धि चक्षुषे
अनंत परिमाणाय तस्मै दिव्यात्मने नमः ८१

जिसका अप्रमेय शरीरहे सर्वप्रकारसे बुद्धिनेत्रहे अनंतप
रिमाण जिसकाहे ऐसे दिव्यरूपात्माको नमस्कारहे ८१

जटिने दंडिने नित्यं लंबोदर शरीरिणे
कमंडलु निषंगाय तस्मै ब्रह्मात्मने नमः ८२

जो भगवान जटाधारीहे ब्रह्मदंडधारीहे लंबोदर शरी
रहे कमंडलु शस्त्रहस्त जिसकेहे ऐसे ब्रह्मात्माको नम
स्कारहे ८२ ॥

शूलिने त्रिदशेशाय त्र्यंबकाय महात्मने
भस्मदिग्धार्ध लिंगाय तस्मै रुद्रात्मने नमः ८३

जो भगवान शूलधारीहे सर्वदेवगणोंका ईशहे त्रिनेत्र
हे भस्मधारीहे महात्माहे भस्मलिप्त जिसका शरीर
हे अर्धांगप्रकषरूपहे ऐसे रुद्रात्माको नमस्कारहे ८३

चंद्रार्धकृतशीर्षाय व्यालयज्ञो पवीतिने
पिनाकशूलहस्ताय तस्मै उग्रात्मने नमः ८४

अर्धचंद्रमा जिसने शिरविषे कियाहे नागयज्ञोपवीत कि
याहे पिनाकशूल जिसने हस्तविषे कियेहे ऐसे अहंकारके
प्रवर्तक उग्रात्माको नमस्कारहे ८४

सर्वभूतात्म भूताय भूतादि निधनायच
अक्रोध द्रोह मोहाय तस्मै शांतात्मने नमः ८५
सर्वभूतोविषे आपही आत्मभूतभयाहे भूतोंका आदिनि
धनका साक्षीहे जिसको क्रोधद्रोह मोह नहीहे ऐसे शांता
त्माको नमस्कारहे ८५
यस्मि न्सर्वं यतः सर्वं यः सर्वं सर्वतश्च यः
यश्च सर्वमयो नित्यं तस्मै सर्वात्मने नमः ८६
जिसविषे सर्व जगतहे जिससे सभजगत बनाहे जो भग
वान सर्वरूपहे सर्वप्रकारसे सर्वकर्ताहे जोभगवान् सर्व
सत्तामयहे ऐसे सर्वात्माको नमस्कारहे ८६
विश्वकर्म नमस्तेस्तु विश्वात्म न्विश्वसंभव
अपवर्गस्थ भूतानां पंचानां परत स्थितः ८७
हे भगवान् आप विश्वकल्पनाके कर्मकर्ताहो विश्वके आत्माहो
विश्वके उपलब्धीके स्थानहो आप सर्वभूतोके मोक्षस्थिति
वालेहो और पंचभूतोसे परेस्थितहो ८७
नमस्ते त्रिषु लोकेषु नमस्ते परत स्त्रिषु
नमस्ते दिक्षु सर्वासु त्वंहि सर्वमयो निधिः ८८
तुमकोही त्रिलोकीविषे सर्वरूपतासे नमस्कारहे और त्रिलो
कीसे परेभी नमस्कारहे तुम सर्वसत्तामय निधीहो सर्वदि
शांविषे भीनमस्कारहे ८८
नमस्ते भगव न्विष्णो लोकानां प्रभवाप्यय
त्वंहि कर्ता हृषीकेश संहर्ता चा पराजितः ८९
हे भगवन् हे विष्णो तोको सदा नमस्कारहे तुमलोकोके
उत्पत्तिलय रूपहो तुमही कर्ताहो सर्वइंद्रियोकी वृत्तिप्रका
शवाले ईश्वरहो और संहारकर्ताहो आप अपराजितहो ८९
न हि पश्यामि ते भावं दिव्यं हि त्रिषु वर्त्मसु
त्वां तु पश्यामि तत्वेन यत्ते रूपं सनातनम् ९०
जो तुम्हारे त्रिलोकी विषे दिव्यप्रभावहे उत्पत्ति स्थिति लयमा
र्गविषे उसको मै नहीजानता जोमै जानता तोको तत्वरूप वि
चारकर्के तेरे सनातन रूपको देषलेता ९०

श्री
वि. प.
टी.
१६३

163

दिवं ते शिरसा व्याप्तं पद्भ्यां देवी वसुंधरा
विक्रमेण त्रयोलोकाः पुरुषोसि सनातनः ५१

देवलोक तेरे शिरकर्के व्याप्तहे चरणोंकर्के वसुंधरादेवी व्याप्तहे विक्रमकर्के तीनलोक व्याप्तहे तूंसनातन आदिपुरुषहे ५१

दिशोभुजा रविश्चक्षु वीर्यं शुक्रः प्रजापतिः
सप्तमार्गा विरुद्धास्ते वायो रमित तेजसः ५२

दिशा आपकी भुजाहे सूर्य तेरा चक्षुहे वीर्य शुक्रतेरा प्रजापतिहे जेते वायुसंचारके सप्तप्रकार प्रवहु आवहादिक मार्गहे सो तेरी सत्ताकर्के व्याप्तहे ५२

अतसी पुष्प संकाशं पीतवाससमच्युतं
ये नमस्यंति गोविंदं न तेषां विद्यते भयं ५३

हे भगवन् तेरास्वरूप अतसीपुष्प समानहे पीतवस्त्रवाला हे ऐसे अविनाशी गोविंदभगवानको तोको जो पुरुष नमस्कारकरतेहे तिन्हको भयनहीहोता ५३

एकोपि कृष्णस्य सकृत्प्रणामो दशाश्वमेधावभृथेन तुल्यः दशाश्वमेधी पुनरेति जन्म कृष्णप्रणामी न पुनर्भवाय ५४

जो कृष्णको किसीने एकभी प्रणामकीना सो दशअश्वमेधयज्ञोके अभिषेकसमान फलदाता होताहे परंतु कृष्णप्रणाम विषे उससे एता विशेषहे दशाश्वमेधी पुरुष बहोड जनमको प्राप्तहोताहे कृष्णको प्रणामकर्ता बहोड जन्मको नहीलेता ५४

कृष्णे रताः कृष्ण मनुस्मरंति रात्रौ च कृष्णं पुनरुत्थिताये ते भिन्नदेहाः प्रविशंति कृष्णं माज्यं यथा मंत्रहुतं हुताशे ५५

जोपुरुष कृष्णविषे रतहे कृष्णको दिनमो स्मरण करतेहे रात्रिविषे कृष्णको स्मरण शयनकरते पुन उठकर कृष्णको प्रणामकरतेहे सोकृष्णरूपहोताहे जब देहसे भिन्न होतेहें तब कृष्णविषे प्रवेशकरतेहे जैसे मंत्रविधिसे किया होम अग्निविषे सो अग्निरूप होताहे ५५

नमो नरक संत्रास रक्षामंडल कारिणे
संसार निम्नगावर्ते तरिकाष्ठाय विष्णवे ९६

हे भगवन् नमस्कार है आप नरकके अतित्रासमे रक्षाक
र्के सभको मंगल करणेहारे हो संसार नामवाले महानदी
के तारणेकी नदीके नौका काष्टरूप विष्णुको नमस्कार
वारवार करताहूं ९६

नमो ब्रह्मण्य देवाय गो ब्राह्मण हिताय च
जगत् हिताय कृष्णाय गोविंदाय नमो नमः ९७

ब्रह्मदेव कृष्णको नमस्कार है जो भगवान् गो ब्राह्मण हित
कारी है और जगतके हितकारी है ऐसे कृष्णको गोविंदको
नमोनम नमस्कार है ९७

प्राणकांतार पाथेयं संसारोच्छेद भेषजम्
दुःखशोक परित्राणं हरि रित्यक्षर द्वयम् ९८

प्राणांतकालका महा दुर्गम प्रयाण है उसविषे पाथेय जो
मार्गका भोजन सो कृष्णनाम है और संसार रोगका छेदना
का परम औषध है दुःखशोकसे रक्षाकरणेको परम सहाय
है सो क्या है हरि यह दो अक्षरका नाम महाफलकारी है

यथा विष्णुमयं सत्यं यथा विष्णुमयं जगत्
यथा विष्णुमयं सर्वं पाप्मानो नश्यते तथा ९९

जैसा विष्णुमय सत्यधर्म है जैसा विष्णुमय जगत है जैसा वि
ष्णुमय सर्वप्रकारका धर्मकर्म है तैसे पापहमारा नाश
होजावे ९९ ॥

त्वं प्रपन्नाय भक्ताय गतिमिष्टां जिगीषवे
यच्छ्रेयः पुंडरीकाक्ष तद्ध्यायस्व सखोत्तम १००

हे भगवन् मे आपको शरणागतहूं और आपका भक्तहूं
इष्ट उत्तम गतिको जीता चाहताहूं जो कछु मेरा कल्याण
कर्तव्य है उसको अंप अपनी कृपासे चिंतनकरो १००

इति विद्यातपो योनि रयोनि र्विष्णुरीरितः
वाग्यज्ञेनार्चितो देवः प्रीयतां मे जनार्दनः

जो कृष्ण भगवान ब्रह्मविद्याके और तपके और योगमार्गके
योनि उत्पत्तिस्थान है विष्णुभगवान है सो भगवान् परमदेव
ता मैने अपनी वाणी विस्तारके यज्ञकर्के पूजन किया है ऐसे

९८

जनार्दन भगवान्सो परसदा प्रसन्नहोवे

वैशंपायनउवाच एतावदुक्त्वा वचनं भीष्मस्तद्गत मानसः नमस्कृत्यैव कृष्णाय प्रणाम मकरोत्तदा

वैशंपायनउवाच हे जनमेजय भीष्मजी राजावचन कहिकर कृष्णविषे अंतर्गत मनहोकर कृष्णभगवानजीको मेरे नमस्कारहोवे ऐसे कहिकर बहोड प्रणामकरताभया १०२

अभिगम्यतु योगेन भक्तिं भीष्मस्य माधवः
त्रैलोक्य दर्शनंज्ञानं दिव्यं दत्वाययौहरिः १०३

कृष्णभगवानकी भीष्मकी भक्तिको अपने योगबलसे जानकर त्रैलोक्यदर्शनवाले दिव्यज्ञानदेतेभये १०३

तस्मिन्नुपरते शब्दे ततस्ते ब्रह्मवादिनः ॥
भीष्मं वाग्भि र्बाष्पकंठा स्तमानर्चु र्महामतिं १०४

जब भीष्मका स्तुति शब्द अंतर्भूतभया तब जेते तहां ब्रह्मवादी रहे सो आनंदके अश्रुवेगसे बद्धकंठहोकर मधुरवचनोंकर्के भीष्मको स्तुतिकरतेभये १०४

ते स्तुवंतश्च विप्राग्र्याः केशवं पुरुषोत्तमम्
भीष्मंच शनकैः सर्वे प्रशशंसुः पुनः पुनः १०५

और सो सभही विप्रश्रेष्ठ पुरुषोत्तम केशवजीको स्तुतिकरतेभये बहोड भीष्मको सभही पुनः पुनः धन्यधन्यकर्के प्रशंसाकरतेभये १०५

विदित्वा भक्तियोगं तु भीष्मस्य पुरुषोत्तमः
सहसोत्थाय संहृष्टो यान मेवान्वपद्यत १०६✕

केशवः सात्यकिश्चापि रथेनैकेन जग्मतुः ✕

हे राजन् जनमेजय पुरुषोत्तम भगवान भीष्मके भक्तियोगको जानकर तत्काल उठकर प्रसन्नहोकर रथकीही आरयाम होतेभये केशव और सात्यकि एकरथकर्के हीजातेभये ॥ १०६

अपरेण महात्मानौ युधिष्ठिर धनंजयौ ॥
भीमसेनो यमौ चोभौ रथमेकं समाश्रिताः १०७

और दूसरे रथकर्के युधिष्ठिर अर्जुन जातेभये और भीमसेन नकुल सहदेव तीनो एकरथकर्के जातेभये १०७

कृपो युयुत्सुः सूतश्च संजयश्च परंतपः

तै रथैः नगराकारैः प्रयाताः पुरुषर्षभाः
नेमि घोषेण महता कंपयंतो वसुंधरां १८

और कृपाचार्य युयुत्सु और संजय सारथी यह एक रथकर्के जातेभये सो सभही पुरुषश्रेष्ठ नगर समान विशालरथों कर्के जातेभये रथचक्रोंकी नेमीके शब्दकर्के पृथिवीके कंपायमान करतेभये १८

ततोगिरः पुरुषवर स्तवेरिताः द्विजेरिताः पथि सुमनाः सुशुश्रुवे कृतांजलिं प्रणत मथा परेज ने सकेशिहा मुदित मनाभ्यनंदत १९

इति श्री शांतौ राजधर्मे भीष्म स्तवराजः ४७

हे जनमेजय तब मार्गविषे सभलोक पुरुषवरजो श्रीकृष्ण तिन्होंको स्तुति संयुक्त वाणीको मुनिवरोने कहे हुई श्रवण करती भई और लोकभी मार्गविषे कृष्णजीको कृतांजलिहो कर प्रणामकरतेभये तिन्होंको कृष्णजी कृपादृष्टिकर्के मधुर वाणीकर्के सभको प्रसन्न करतीभये १९

इति श्री महाभारते शतसाहस्र्यां संहितायां वैयासिक्यां शांतिपर्वणि राजधर्मे भीष्मस्तवराजः सप्तचत्वारिंशोध्यायः ४७

वैशंपायनः ततः स च हृषीकेशः स च राजा युधिष्ठिरः कृपादयश्च ते सर्वे चत्वारः पांडवाश्च ते १

वैशंपायनउवाच हे जनमेजय तदनंतर सो कृष्ण भगवान सो राजा युधिष्ठिर सो सभही कृपाचार्यादिक और भीमादिक चारपांडवभी १

रथैस्ते नगरप्रख्यैः पताका ध्वजशोभितैः
ययु राशुः कुरुक्षेत्रं वाजिभिः शीघ्रगामिभिः २

सर्वकहे जो नगर समान विशाल रथ तिन्होंकर्के पताका ध्वजोंकी शोभा संयुक्त भयेहे शीघ्रगती वाले तुरंगो कर्के तत्कालही कुरुक्षेत्रकों जातेभये २

ते वतीर्य कुरुक्षेत्रं केशमज्जास्थि संकुलम्
देह न्यासः कृतो यत्र क्षत्रियैस्तै र्महात्मभिः ३

सो सभही कुरुक्षेत्रको जाइकर रथोंसे उत्तरकर देषतेभये

जहां महात्मा क्षत्रियोंने रणकर्के देहत्याग कियाहै कैसाहै कुरुक्षेत्र केश मज्जा अस्थि समूहकर्के जहां तहां संकुलभयाहै ३

गजाश्व देहास्थि चयैः पर्वतैरिव संचितम्
नरशीर्ष कपालैश्च शंखैरिव च सर्वशः ४

हाथी घोड़े तहां मरेहैं उन्हके अस्थि समूहकर्के पर्वतजैसी राशीतहां वनीहै मनुष्योंके शिर कपाल तहां कैसे दृष्टहोतेहैं जैसे सर्वत्र शंखपात्रोंकर्के समूहकर्के व्याप्त मृत्युकी पानभूमि दृष्टहोतीहै ४

चिता सहस्र प्रचितं वर्मशस्त्र समाकुलम्
आपानभूमिं कालस्य तदाभुक्तोज्झितामिव ५

और चितासहस्रों कर्के और चर्मकी ढाला शस्त्रोंकर्के संकुल कुरुक्षेत्रभयाहै मानोकालकी खान पानकी भूमिकाहै खानपानकर्के कालने त्यागदीतीहै ५

भूतसंघानु चरितं रक्षोगण निषेवितम्
पश्यंतस्ते कुरुक्षेत्रं ययुराशु महारथाः ६

वहोउ कैसाहै कुरुक्षेत्र भूतसमूहके संचारवालाहै और मांसाहारी राक्षसोंके गणोंने सेवन कियाहै उसको देखते सभही सो महारथी शीघ्रतहांसे जातेभये ६

गच्छन्नेव महाबाहुः सर्वयादव नंदनः
युधिष्ठिराय प्रोवाच जामदग्न्यस्य विक्रमं ७

हे जनमेजय मार्गमें जाते श्रीकृष्णजी सर्वयादवोंके आनंदकारीहैं रणक्रीडाको स्मरणकर्के सो राजा युधिष्ठिर प्रतिपरशुरामजीके पराक्रमको कहतेभये ७

अमी रामह्रदाः पंच दृश्यंते पार्थ हरतः
येषु संतर्पयामास पितॄन् क्षत्रिय शोणितैः ८

हे पार्थ यहपांच परशुरामके सरोवरसे दृष्टहोतेहैं तिन्होंविषे परशुराम पितरनको क्षत्रियोंके रुधिरकर्के तर्पणकरताभया ८ ॥

त्रिः सप्तकृत्वो वसुधां कृत्वा निःक्षत्रियां प्रभुः
इहेदानीं ततो रामः कर्मणो विरराम ह ९

इक्कीसवार पृथिवीको निःक्षत्रिया करके इहांही परशुरामसंग्रा
म कर्मसे विरक्तभयाहै ९

युधिष्ठिर उवाच त्रिःसप्त कृत्वा पृथिवीं कृत्वा निःक्ष
त्रियां पुरा रामेणेति यथा प्रोक्तं मत्र मे संशयो महान् १०

युधिष्ठिर उवाच हे कृष्णजी जो परशुराम पृथिवीको इकीश
वार निःक्षत्रियाकर्के रणसे विरक्त होगयाहै यह वृत्तान्त आ
पने कहाहै इसविषे मोको महासंशयभयाहै १०

क्षत्रबीजं यथा दग्धं रामेण यदुपुंगव
कथं भूयः समुत्पत्तिः क्षत्रस्यामितविक्रम ११

हे यदुपुंगव जो क्षत्रियोंकाबीज परशुरामनेदग्धकर दियाहै
हे अमितविक्रम बहोड क्षत्रियोंकाकुल कहांसे उत्पन्नभयाहै ११

महात्मना भगवता रामेण यदुपुंगव
कथमुत्सादितं क्षत्रं कथं वृद्धिमुपागतं १२

महाघोर रथयुद्धकर्के कोटीसंख्याकर्के क्षत्रिय परशुरामने
मारेहैं ऐसे क्षत्रियोंके शरीरोंके रुधिरकर्के पृथिवी परशुराम
ने पूर्णकीनीहै १२

महता रथयुद्धेन कोटिशः क्षत्रियाः हताः
तथा भूश्च महीकीर्णा क्षत्रियैर्वदतां वर १३

हे वचन बोलनेवालेविषे श्रेष्ठहै यदुशार्दूल भार्गवरामने य
ह क्षत्रियोंका कुलकौन हेतुसे समाप्तकियाहै कुरुक्षेत्रविषे
महात्मा भार्गवने ऐसा घोरकर्म क्यों कियाहै १३

किमर्थं भार्गवेणेदं क्षत्रमुत्सादितं पुरा
रामेण यदुशार्दूल कुरुक्षेत्रे महात्मना १४

एतन्मे छिंधि वार्ष्णेय संशयं तार्क्ष्यकेतन
आगमोहि परः कृष्ण त्वत्तो नो वासवानुज १५

हे वृष्णिवंशके जन्मवाले गरुडवाहन ऐसे मेरे संशयकों आ
पछेदनकरो हे कृष्ण हे वासवानुज उपेंद्र हमारेको तुमही
सर्वशास्त्रोंके निधिहो १५

श्री·
रा·ध·
टी·
१९९

166

वैशंपायनः तते यथावत्सगदाग्रजः प्रभुः शशंस तस्मै निखिलेन तत्वतः युधिष्ठिरायाप्रति भोजसे तदा यथा भवत्क्षत्रिय संकुला मही १९ ॥

इति श्री रामोपाख्याने अष्टचत्वारिंशोध्यायः ४८

वैशंपायनउवाच हे राजन् जनमेजय तदनंतर सोगदाग्रज। प्रभु श्रीकृष्ण जो राजाने प्रश्न किया उसको यथार्थतत्वकरके राजा युधिष्ठिरको जिसप्रकार युद्धविषे कुरुक्षेत्रविषे पृथिवी क्षत्रियोके शरीरोकरके पृथिवी जैसे पूर्णभई है ऐसे राजा युधिष्ठिर प्रतिकहतेभये १९ इति श्री महाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मे भार्गवोपाख्याने अष्टचत्वारिंशोध्यायः ४८

वासुदेवउवाच शृणुकौंतेय रामस्य प्रभावो यो मया श्रुतः महर्षीणां कथयतां विक्रमं तस्य जन्मच १

वासुदेवउवाच हे कौंतेय युधिष्ठिर परशुरामके प्रभावको तुम मेरे मुखसे श्रवणकरो और उसका जन्मसुनो १

यथा च जामदग्न्येन कोटिशः क्षत्रिया हताः
उद्भूता राजवंशेषु ये भूयो भारते हताः २

जैसे परशुरामने कोटिसंख्या क्षत्रियमारेहै सोई पृथिवीविषे राजवंशोविषे उत्पन्नभयेहै इस भारत युद्धविषे मारेहै २

जह्नो रजस्तु तनयो वल्लकाश्व स्तु तत्सुतः
कुशिको नाम धर्मज्ञ स्तस्य पुत्रो महीपते ३

जह्नुराजाको रजनामा पुत्रभया उसको पालभया पालकाकुशभया काशुका पुत्र ३

उग्रं तपः समा तिष्ठ त्सहस्राक्ष समो भुवि
पुत्रं लभेय मजितं त्रिलोकेश्वर मित्युत ४

उग्रकोय उग्रतपवाला भया इंद्रके समान प्रतापवाला भया सो यमराजको जीतनेहारे लोकेश्वर नाम जिसका प्रसिद्ध कहतेहै ४ ॥

तमुग्र तपसं दृष्ट्वा सहस्राक्षः पुरंदरः
समर्थं पुत्र जनने स्वय मेवात्यपद्यत ५

ऐसे उसको उग्रतप करतेको देखकर सहस्राक्ष जो इंद्र सो

पुत्र उत्पन्निवास्ते तपकर्के इंद्र आप आइकर पुत्र होताभया ५

पुत्रत्वमगमद्राजंस्तस्य लोके यथेश्वरः
गाधिर्नाम्ना भवत्पुत्रः कौशिकः पाकशासनः ६

उसके पुत्रभावको इंद्र आप प्राप्त होताभया इस प्रकार गाधिराजा भया सो साक्षात् पाकशासन इंद्रही होताभया ६

तस्य कन्या भवद्राजन्नाम्ना सत्यवती प्रभो
तां गाधिर्भृगुपुत्राय सोर्चीकाय ददौ प्रभुः ७

हे राजन् उसकी कन्या सत्यवती नामकर्के होई भई उस कन्याको भृगुके पुत्रको ऋचीक नामधारी मुनिको गाधिराजा महाप्रभु देताभया ७

तस्याः प्रीतः स शीलेन भार्गवः कुरुनंदन
पुत्रार्थं श्रपयामास चरुं गाधेस्तथैव च ८

हे कुरुनंदन उस सत्यवतीके सत्यशील पतिव्रताधर्मकर्के ऋचीकभार्गव प्रसन्न होताभया सत्यवतीके पुत्रवासते और गाधि राजाके पुत्रवासते पुत्रोत्पत्तिवाले चरुको दो पात्रोंविषे अग्निहोत्रकी अग्निविषे पकावताभया ८

आहूयोवाच तां भार्यां सोर्चीको भार्गवस्तदा
उपयोज्यस्त्वयं त्वया मात्रा परं तव ९

सो ऋचीक भार्गवमुनि अपनी सत्यवती भार्याको कहताभया यह चरु तैने और तेरे माताने भोजन करणा ९

तस्यां जनिष्यते पुत्रो दीप्तिमान् क्षत्रियर्षभः
अजय्यः क्षत्रियैर्लोके क्षत्रियर्षभसूदनः १०

तेरी माताको इस चरुके प्रभावसे पुत्र होवेगा महातेजस्वी क्षत्रियोविषे श्रेष्ट होवेगा सो क्षत्रियोंको अजेय होवेगा क्षत्रियश्रेष्ट राजोंको मारणेहारा होवेगा १०

तवापि पुत्रं कल्याणि धृतिमंतं शमात्मकं
तपोन्वितं द्विजश्रेष्ठं चरुरेषो विधास्यति ११

हे कल्याणि तोको भी जो पुत्र होवेगा महाधृतिमान शांतआत्मि तपोनिष्ठ होवेगा ब्राह्मणोविषे श्रेष्ट होवेगा ऐसे पुत्रको यह चरु करदेवेगा ११

श्री॰ वा॰ पं॰ टी॰ १६७

167

इत्येव मुक्ता तां भार्यां सोऽर्चीको भृगुनंदनः
तपस्य भिरतः श्रीमान् जगामा रण्य मेव हि १२
हे राजन् सो भृगुनंदन ऋचीक मुनि भार्याको सत्यवतीको
कहकर तपविषेही रत होकर शोभा संयुक्त वनकोही
जाताभया १२

एतस्मि न्नेव कालेतु तीर्थयात्रा परोन्नृपः
गाधिः सदारः संप्राप्तः सोऽर्चीकस्या श्रमे प्रति १३
उसी कालविषे राजा गाधि तीर्थयात्रा प्रसंगसे भार्यासहि
त ऋचीकके आश्रमप्रति आइ प्राप्त होताभया १३

चरुद्वयं गृहीत्वा च राजन् सत्यवती तदा
भर्तु र्वाक्यं तदाव्यग्रा मात्रे हृष्टा न्यवेदयत् १४
हे राजन् तव सत्यवतीकी माता अपने चरुको सत्यवतीको
देतीभई औरु सत्यवतीकी चरुको आपने वास्ते लेलेतीभई १४

माता तु तस्याः कौंतेय दुहित्रे स्वं चरुं ददौ
तस्याश्चरु मथाज्ञाना दात्मसंस्थं चकारह १५
सत्यवतीकी माता अपने चरुको सत्यवतीको देतीभई औरु
सत्यवतीके चरुको आपनेवास्ते लेलेतीभई १५

अथ सत्यवती गर्भं क्षत्रियांतकरं तदा
धारयामास दीप्तेन वपुषा घोरदर्शनं १६
इस चरुके प्राशनसे सत्यवतीको गर्भमो ब्राह्मण आगया
उसको देखकर ऋचीक अपने भार्या जो देवरूपणी सत्यवती
उसको कहताभया १६ ।

तामृचीक स्तदा दृष्ट्वा तस्या गर्भगतं द्विजम्
अब्रवीद्भृगुशार्दूलः स्वां भार्यां देवरूपिणीम् १७
मातासि वंसिता भद्रे चरुव्यत्यास हेतुना
भविष्यतिहि ते पुत्रः क्रूरकर्मात्य मर्षणः १८
हे भद्रे तुं तेरी माताने अज्ञानसे चरुके बदलनेसे वंचनाको
प्राप्तकीनी है इसहेतुसे तेरापुत्र महाक्रूरकर्मा महाक्रोधी
महातेजस्वीहोवेगा १८

उत्पत्स्यति च ते भ्राता ब्रह्मभूत स्तपोधनः

१४

विश्वं हि ब्रह्म तमहः त्वयैः तव समाहितं १९

और माता तेरीको चरूमाधानके प्रभावसे तेरा भ्राता ब्राह्मण स्वभाववाला होवेगा तेरे चरूविषे मैने ब्रह्मतेज स्थापन किहा रहा १९

और क्षत्रियतेजका प्रभाव तेरी मातावाले चरूविषे कल्पन कियारहा अब चरूके बदलनेसे तोको ब्राह्मभूतपुत्र नहीहोवेगा २०

मातस्ते ब्राह्मणो भूया त्तव च क्षत्रियः सुतः

सैव मुक्ता महाभागा भर्त्रा सत्यवती तदा २१

तेरी माताको ब्राह्मभूतपुत्रहोवेगा और तोको क्षत्रभूतपुत्रहोवेगा जब भर्ताने सत्यवतीको ऐसाकहा २१

क्षत्रवीर्यं च सकलं तव मात्रे समर्पितम्

विपर्ययेण ते भद्रे नैतदेवं भविष्यति २२

पपात शिरसा तस्मै वेपंती चाब्रवी दिदम्

नार्होसि भगवन्नद्य वक्तु मेवं विधं वचः २२

ब्राह्मणा पसदं पुत्रं प्राप्स्यसीति हि मां प्रभो

तब सत्यवती अपने भर्ताके चरणोविषे कंपायमानहो कर शिरकर्के प्रणाम करती भई ऐसे वचन कहती भई हे भगवन् अब तू मोको ऐसावचन कहनेको योग्यनहीहै अपनेकहा तेरापुत्र ब्राह्मणोविषे क्रूरस्वभाव होवेगा २२

ऋचीकउवाच नैष संकल्पितः कामो यथाभद्रे तथा

त्वयि उग्रकर्मा समुत्पन्ना चरूव्यत्यास हेतना २३

ऋचीकउवाच हे भद्रे मैने तेरेपुत्रवासे ऐसे कामनावाला संकल्प नही कियारहा चरूके बदलनेसे तेरापुत्र उग्रकर्मा होवेगा २३ ॥

रा० री० प० १६८

168

सत्यवत्युवाच इच्छे लोकान पिसुने स्रजेथाः किंपु
नः सते शमात्मक मन्नं पुत्रं दात मर्हसि मे प्रभो २४

सत्यवत्युवाच हे मुने जो तं इच्छाकरे ना लोकोकी सष्टिभी
ओरही करे कैया तं अपने पुत्रकों ओर स्वभावनहीं करस
केगा मोको सोम्यहत्तिवाले पुत्रकी वांछाहे उसीको तुम
सिद्धकरो २४ ॥

ऋचीकउवाच नोक्तं पूर्वा न्तते भद्रे स्वैरेष्वपि क
दाचन किंतु नाग्निं समाधाय मंत्रवञ्चरु साधने २५

ऋचीकोवाच हे भद्रे मैने मिथ्यावचन कदापि पूर्वनहीकहा
ओर मे अग्निविषे मंत्र संस्कारके चरुको वदल देवोगा २५

इष्ट मेतत्पुरा भद्रे जाते च तपसा मया।
ब्रह्मभूतंहि सकलं पितु स्तव कुलं भवेत् २६

यह कछु देवगतीका प्रभावही भया तेरे तपकर्के तेरे पि
ताकाकुल उस चरुके स्वभावसे ब्रह्मभूत ब्राह्मणभी हो
वेगा २६ ॥ ॥ सत्यवत्युवाच ॥

काम मेवं भवे त्पौत्रो ममेद तव च प्रभो
शमात्मक महं पुत्रं लभेयं जपतां वर २७

सत्यवत्युवाच हे मुने हे प्रभो अच्छा अब तेरा संकल्प।
ऐसाही होवे इसी प्रकारका तेरापुत्रहोवे मोको पुत्रशांति
स्वभाववालाहोवे ऐसी मेरी इच्छा सिद्धकरो २७

ऋचीकउवाच पुत्रे नास्ति विशेषोमे पौत्रे च वर व
र्णिनि यथा त्वयोक्तं वचनं तथा भद्रे भविष्यति २८

ऋचीकउवाच हे वरवर्णिनि मोको पुत्रविषे ओर पौत्रविषे
विशेषनहीहे अच्छा जैसा तेने कहा ऐसेही होवेगा २८

वामदेवउवाच ततः सत्यवती पुत्रं जनयामास भा
र्गवं तपस्यभि रतं शांतं जमदग्निं यत व्रतम् २९

वामदेवउवाच हे राजन् तव सत्यवती जामदग्नि नामवा
ले भार्गवपुत्रको जन्मती भई कैसाहे महातपविषे रतहे
ओर शांतिवृत्तिहे कैसीहे सत्यवती पतिव्रताहे २९

विश्वामित्रं च दायादं गाधि कुशिक नंदनः
यं प्राप्य ब्रह्म समितं विश्वे ब्रह्मगुणैर्युतम् ३०
और कुशिकनंदन गाधि राजा जोहै सो विश्वामित्रनामवाले पुत्रको प्राप्तहोताभया कैसाहै तपोनिधिहै जिस विश्वामित्रको ब्रह्मतेज प्राप्तहोताभया ब्रह्मतेजकी विश्वकी सृष्टिको आनंदकरणेहारे संपूर्ण ब्रह्मगुणोंकरकें संयुक्त है ३० ॥ ऋचीको जनयामास जमदग्निं तपोनिधिम् सोपि पुत्रेह्य जनय जमदग्निः सुदारुणं
हे राजन् सत्यवतीकी जमदग्नि पुत्र ऋचीकने उत्पन्नकिया सो महातपोनिधि होताभया सोजमदग्निभी महाउग्र स्वभाववाले पुत्रको उत्पन्नकरताभया ३१
सर्व विद्यांतगं श्रेष्ठं धनुर्वेदस्य पारगम्
रामं क्षत्रिय हंतारं प्रदीप्त मिव पावकम् ३२
संपूर्णविद्याका पारगामी महाश्रेष्ठ धनुर्वेदके अंगोंकापारगामीहै राम जिसका नामहै क्षत्रियोंको मारणेहाराहै प्रचंड अग्निजैसा तेजस्वीहै ३२
तोषयित्वा महादेवं पर्वते गंध मादने
अस्त्राणि वरयामास परशुं चाति तेजसं ३३
हे राजन् सो भार्गवराम जमदग्निका पुत्र गंधमादन पर्वतविषे शिवजीको आराधनकर्के प्रसन्नकरके अस्त्रविद्याको वरलेताभया और अतितेजवाले परशु आयुधकोभी वरा सेलेताभया ३३
स तेना कुंठधारेण ज्वलिता नल वर्चसा
कुठारेणा प्रमेयेण लोकेष्व प्रतिमो भवत् ३४
सो भार्गवराम अकुंठित धारावाले परशुको प्राप्तहोताभया कैसाहै परशु प्रज्वलित अग्निसमान जिसका तेजप्रकाशहै जिसकर्के परशुराम लोकविषे प्रबलबल होताभया
एतस्मि न्नेव कालेतु कृतवीर्यात्मजो बली
अर्जुनो नाम तेजस्वी क्षत्रियो हैहयाधिपः ३५
हे राजन् उसीकालविषे कृतवीर्य राजाका पुत्र महाबली

श्री॰
रा॰ य॰
टी॰
१६९

169

अर्जुन नामसे प्रसिद्ध महातेजस्वी क्षत्रियराजा हैहय देशका स्वामीहोताभया ३५

दत्तात्रेय प्रसादेन राजा बाहुसहस्रवान्
चक्रवर्ती महातेजा विप्राणा माश्वमेधिके ३६

दत्तात्रेयके प्रसादसे सो राजा बाहुसहस्रवान् होताभया चक्रवर्ती महातेजस्वी भयाहै पृथिवीको अश्वमेधयज्ञ विषे ३६ ददौ स पृथिवीं सर्वां सप्तद्वीपां सपर्वताम्
स्वबाहुस्त्र बलेनाजौ जित्वा परम धर्मवित् ३७

सप्तद्वीप सप्तसागरसहित और पर्वतमर्यादा संयुक्त अपने बाहुबलसे जीतकर परम धार्मिकभया ब्राह्मणोंको अश्वमेध यज्ञविषे दक्षिणादेताभया ३७

सहस्रबाहु र्विक्रांतः प्रादा द्भिक्षा मथाग्नये
तर्पिते न च कौंतेय भिक्षित श्चित्र भानुना ३८

सो राजा बुभुक्षित अग्निने अपनी क्षुधा शांतिवास्ते ब्राह्मण रूपकर भिक्षावास्ते याचनकिया अपने सहस्रबाहु बल कर्के अग्निको भिक्षा देताभया ३८

ग्रामान् पुराणि राष्ट्राणि घोषांश्चैवाग्नु वीर्यवान्
जज्वाल तस्य बाणाग्रा श्चित्रभानु र्दिधक्षया ३९

जबकार्तवीर्य अर्जुनने भिक्षादीनी तब अग्निवीर्यकर्के पृथिवीको ग्रामोको पुरोंको राजमंडलको राजाके बाणोंके द्वारसे प्रज्वलित करताभया सबको दग्धकरणेकी वांछा करताभया ३९ ॥

सतस्य पुरुषेंद्रस्य प्रभावेण महौजसः
ददाह कार्तवीर्यस्य शैलानथ वनस्पतीन् ४०

सो अग्नि पराक्रमवाले कार्तवीर्य राजाके प्रभावकर्के संपूर्ण पृथिवीके वृक्षोंको पर्वतोंको दग्धकरताभया ४०

स शून्य माश्रमं रम्य मापवस्य महात्मनः
ददाह पवनेनेद्धः चित्रभानुः सहैहयः ४१

वढोउ सो अग्नि आपव मुनिके शून्य आश्रमको कार्तवीर्य की तेजसमाकर्के संयुक्तभयाहुआ दग्धकरताभया के

अग्निहे पवनकर्के प्रज्वलितभयाहे ४१

आपवस्तु ततोरोषा च्छशापार्जुन मच्युत
दग्धेश्रमे महावाहो कार्तवीर्यणवीर्यवान् ४२

तव आपवनामवाला वसिष्टमहामुनिः महाक्रोधकर्के कार्तवीर्यको शापदेताभया यह मेरा कार्तवीर्यणेवाणेकर्के दग्धकियाहे ४२

त्वया न वर्जितं यस्मा न्ममेदं हि महद्वनम्
दग्धं तस्मा द्रणे रामो वाहूं स्ते छेत्स्यतेर्जुन ४३

हे राज तेने मेरे वनको दग्धकरते अग्निसे वचाया नहीतेरे सहायकर्के अग्निने दग्धकिया ताते परशुराम तेरे सहस्त्र भुजाको छेदनकरेगा ४३

अर्जुनस्तु महातेजा वलीनित्यं शमात्मकः
ब्रह्मण्यश्च शरण्यश्च दाता शूरश्च भारत ४४

हे राजन् सोकार्तवीर्य महातेजवाला महावलीहे सदाशांतहृतिहे ब्राह्मण्यभीहे और शरणागत पालकभीहे दाताभीहे ४४ ॥

नाचिंतयं त्तदा शापं तेन दत्तं महात्मना
तस्य पुत्रा स्तु वलिनः शापेना सन्पितुर्वधे ४५

तोभी भवितव्यका वलसे ब्राह्मणके दिये शापको चिंतनन हीकरताभया उसराजाके पुत्र महावलवानहे पिताको शापदिया ईसप्रकार कुपित भयेहे ब्राह्मणोंके वधकरणेको उद्यत होतेभये ४५

निमित्ता दवलिप्तावै नृशंसाश्चैव सर्वदा
जमदग्नि धेनुवत्सं मानिन्यु र्भरतर्षभ ४६

दैवगतीके निमित्तसे सभही सभही मदमत्तभयेहे अति वलवान् अतिक्रूर जमदग्निके धेनुको मार्गसे लेजातेभये ४६

अज्ञातं कार्तवीर्येण हैहयेंद्रेण धीमता
तन्निमित्त मभूद्युद्धं जामदग्न्ये महात्मनः ४७

धेनुका हरणकार्तवीर्यणे नहीजाना सोकार्तवीर्य महाबुद्धि उस धेनुहरणके निमित्त जमदग्निके साथ कार्तवीर्य

का युद्ध होताभया तहां परशुरामकाभी कार्तवीर्यके साथ युद्धभयाहे ४७

ततोऽर्जुनस्य बाहूंस्तान् छित्वा रामो रुषान्वितः
तेऽश्रमेते ततो वत्सं जामदग्न्यः स्वमाश्रमम् ४८

तब परशुराम क्रोध संयुक्तभया कार्तवीर्यार्जुनकी स हस्रभुजोंके परशुकर्के काटदेताभया धेनुको लेआवता भया उसका बछा राजाके अंतपुरविषे भ्रमताभया त हांसे बछाकोबी अपने आश्रमको लेआवताभया॰

प्रत्यानयत राजेंद्र तेषां मंतपुत्रा त्वभुः॥
अर्जुनस्य हता ते तु संभूयाद्वइयसदा ४९

कार्तवीर्यके पुत्र जोहे सो एकत्र होकर्के महामूढभयेहे

गत्वाश्रम समेवुहा जामदग्ने महात्मनः
अपायत भल्लाग्रैः शिरःकाया नराधिप ५०

सो तब जमदग्निके शिरको भल्लबाणोंकर्के देहसे काटक र पृथिवीमो गिरायदेतेभये सो तब जमदग्निके आश्रमे को क्रुद्धहोकरे १ ५०

समित्कुशार्थं रामस्य निर्यातस्य यशस्विनः
ततः पितृवधामर्षी रामः परम मन्युवान् ५१

हे राजन् परशुराम समिधा कुशावास्ते वनको गयारहा जब परशुरामने पिताका वधसुनकर महाक्रोध कियाहे

निःक्षत्रियां प्रतिश्रुत्य महीं शास्त्रम गृह्णान
ततः स भृगुशार्दूल कार्तवीर्यस्य वीर्यवान् ५२

उसकालविषे निःक्षत्रिया पृथिवी करणेकी प्रतिज्ञाक र्के शस्त्रपाणी होकर सो परशुराम भृगुवंशामो शार्दू लहे महावीर्यवान् कार्तवीर्यके पुत्रोविषे मारणकी इ छाकरताभया ५२

विक्रम्य निजघानाशु पुत्रा नैपात्रांश्च सर्वशः
स हैहय सहस्राणि हत्वापरम मन्युवान् ५३

अपने पराक्रमकर्के कार्तवीर्यके पुत्रोंको उन्होंकेभी पुत्र पौत्रोंको मारताभया मारकर्केभी महाक्रोधी होताभया

४९

५१

५३

चकार भार्गवो राजन् मही शोणित कर्दमा
स तथाशु महातेजाः कृत्वा निःक्षत्रियो मही
सो परशुराम तब पृथिवीको हजारो हैहय क्षत्रियोके मारके पृथिवीमो रुधिरके पंकसे पूर्णकरताभया सो महातेजस्वी परशुराम इसकालविषे पृथिवीको निःक्षत्रिया करताभया ५४
कृपया परया विष्टो वन मेव जगामह
ततो वर्ष सहस्रेषु समतीतेषु केषुचित् ५५
इस पृथिवीको निःक्षत्रियाकर्के आपवनकोजाताभया तब से केतक वर्ष सहस्र जब बीतगये ५५
क्षेमसे प्राप्तवांस्तत्र प्रकृत्या कोपनः प्रभुः
विश्वामित्रस्य पौत्रस्तु रैभ्यपुत्रो महातपाः ५६
तब परशुराम बहोड क्षत्रियोके अनादर वचनको श्रवण करताभया सो स्वभावकर्के परमकोपवानहे विश्वामित्रका पौत्र रैभ्यकापुत्र महातपस्वी इसका संवादहोताभया ५६ ॥
परावसु र्महाराज क्षिप्त्वाह जनसंसदि
येते ययाति पतने यज्ञे सन्तः समागताः ५७
परावसु राजा जोहे सोअनादरकर्के लोकसभाविषे करताभया हे महाराज जोजो राजे ययाति नगरविषे यज्ञ समाजमो आयेरहे ५७
प्रतर्दन प्रभृतयो राम किं क्षत्रियानते
मिथ्या प्रतिज्ञो रामत्वं कथसे जनसंसदि ५८
प्रतर्दनादिक हे परशुराम सो नही क्षत्रीरहे तेरी प्रतिज्ञा मिथ्याभईहे तेने निःक्षत्रियाकरणेकी पृथिवीमो प्रतिज्ञाकीनीहे ५८ भयात्क्षत्रिय वीराणां पर्वतं समुपाश्रितः
सा पुनः क्षत्रियशतैः पृथिवी सर्वतस्तृता ५९
तू क्षत्रियोके भयसे महेंद्र पर्वतको आश्रितभयाहे सो पृथिवी अब शतसहस्र क्षत्रियोकर्के पूर्णभईहे ५९
परावसो र्वचः श्रुत्वा शस्त्रं जग्राह भार्गवः ६०
हे राजन् ऐसे वचनको श्रवणकर्के परशुराम पुनः शास्त्रग्रहण करताभया ६०

ततो ये क्षत्रिया राजन् शतशस्तेन वर्जिताः
ते विवृद्धाः महावीर्याः पृथिवी पतयो भवत् ९१
पूर्वले दिग्विजयमें जोकडे शरणागत त्यागरहे सो ब
होड वधगये महावीरभये पृथिवीके राजा होगयेहे ९१
सपुन स्तान् जघानाशु बालानपि नराधिप
गर्भस्थैस्तु महीव्याप्ता पुनरेवा भवत्तदा ९२
परशुरामउसकालमें फेर शस्त्रग्रहणकर्के मारताभया
तब बलवानही करताभया वालककोभी मारताभया
गर्भस्थको नहीं मारताभया तो फेरभी क्षत्रीबहोत होते
भये पृथिवी क्षत्रियोंकर्के पूर्णहोती भई ९२
जातं जातं स गर्भं तु पुनरेव जघान ह
अरक्षंस्च सुतान्कांश्चित् तदा क्षत्रिय योषितः ९३
तब गर्भिणी जो जो राजपत्नी होय उसको तहां तहां पाइ
कर जहां जहां वालक होइ उसको जातमात्रको मारताभया
त्रिः सप्तकृत्वा पृथिवीं कृत्वानिःक्षत्रियां प्रभुः
दक्षिणा मश्वमेधांते कश्यपाया ददत्ततः ९४
इस प्रकार इकीसवार क्षत्रियोंको मारकर निःक्षत्रिया पृ
थिवी अकारके अश्वमेध यज्ञके अंतविषे काश्यपक्षत्रियों
के शेषरक्षणवास्ते स्रुवयुक्त हाथकर्के अप्रयदीताके
दक्षिणा ग्रहणकालमें परशुरामको कहताभया ९४
स क्षत्रियाणां शेषार्थं करेणोद्दिश्य कश्यपः
स्रुवकग्रहवता राजे ततो वाक्य मथाब्रवीत् ९५
हे राजन् सो काश्यप क्षत्रियोंके शेष रक्षणवास्ते स्रुवयुक्त
हाथकर्के अप्रयदीताके दक्षिणा ग्रहण कालमें पर
शुरामको कहताभया ९५
गच्छतीरं समुद्रस्य दक्षिणस्य महामुने
नते मद्विषये राम वस्तव्य मिह कर्हिचित् ९६
हे महामुने अब तुम दक्षिण समुद्रके तीरमें जाओ तोको
मेरे देशविषे वासकरतव्यनहीं कदापि बनता ९६
ततः शूर्पारकं देशं सागर स्तस्य निर्ममे
सहसा जामदग्न्यस्य सो परांत महीतले ९७

तब परशुराम दक्षिण समुद्रके तीरमो वासकेवास्ते स
से स्थान याचनकरताभया समुद्र उसके वासवास्ते सूर्पा
रक शतयोजन करदेताभया तब परशुराम तहां शीघ्रजाता
भया सो देशपश्चिम समुद्रके तीरका पृथिवीका प्रसिद्धभयाहै ६०

कश्यपस्तां महाराज प्रतिगृह्य वसुंधरां
कृत्वा ब्राह्मण संस्थां वै प्रविष्टः सुमहद्वनम् ६८

हे राजन् काश्यप ब्राह्मण परशुरामसे पृथिवीको लेक
र जहां तहां ब्राह्मणोंको स्थापन करके आपतपकरणे
को वनमों प्रवेशकरताभया ६८

ततः शूद्राश्च वैश्याश्च यथा स्वैर प्रचारिणः
अवर्तंत द्विजाग्र्याणां दारेषु भरतर्षभ ६९

तब पृथिवीमो राजदंड विना शूद्र और वैश्य स्वेछाचारसे
विचरतेभये द्विजराजोंकी [illegible]विषे प्रवृत्तहोतेभये ६९

अराजके जीवलोके दुर्बला बलवत्तरैः
पीड्यंते नहि वित्तेषु प्रभुत्वं कस्यचित्तदा ७०

पृथिवी अराजक होगये यह जीवलोकमो दुर्बलोंको
बलवाले पीडाकरतेभये किसीको वित्तमोभी पृथिवीका
प्रभुत्वका अभिमान नहीहोताभया ७०

ततः कालेन पृथिवी पीड्यमाना दुरात्मभिः
विपर्ययेण तेनाशु प्रविवेश रसातलम् ७१

तब कोई कालबीतनेसे पृथिवी दुरात्मा लोकोंकरके पीडि
तभई वर्णधर्मके उलट पलट होनेकरके पृथिवीकी स
ता पातालको प्रवेशहोतीभई ७१

अरक्ष्यमाणा विधिवत् क्षत्रियै धर्म रक्षिभिः
तां दृष्ट्वा द्रवतीं तत्र संत्रासात्स महामनाः ७२

हे राजन् धर्मरक्षा करणेहारे क्षत्रियोंकरके पृथिवी अरक्ष्य
माणभई सो अपनी सत्ताके त्यागकर रसातलको जब
चली तब पृथिवीको पलायन करतीको देखकर पृथि
वी अधर्म संत्राससे महामनस्वी ॥ ७२

ऊरुणा धारयामास कश्यपः पृथिवीं ततः
धृता तेनोरुणायेन तेनोर्वीति महीस्मृता ७३

श्री.
रा.ध.
टी.
१७२

कश्यप मुनि पृथिवीको अपनी ऊरुस्थानकर्कै धारणक
रताभया कश्यपमुनीने पृथिवीको ऊरुकर्कै धारणकि
या ताते पृथिवी ऊर्वी नामकर्कै विख्यातभईहै ७३

रक्षणार्थं समुद्दिश्य ययाचे पृथिवी तदा
प्रसाद्य कश्यपं देवी वरयामास भूमिपं ७४

रक्षणकरणेकी वांछाधारकर्कै पृथिवी काश्यप ब्राह्म
णकी पुत्री समानभई ताते काश्यपी नामभी पृथिवी
का भयाहै सो पृथिवी काश्यप मुनिको प्रसन्नकर्कै व
रमांगती भई ७४

पृथिव्युवाच सन्ति ब्रह्मन्मया गुप्ताः स्त्रीषु क्षत्रिय
पुंगवाः हैहयानां कुले जाता स्ते संरक्षन्तु मां मुने ७५

पृथिव्युवाच हे ब्रह्मन् मेने संरक्षणकिये क्षत्रियपुंगव मे
रेविषे गुप्तरूप स्थितहै हैहय राजोंके कुलकेहै सो आप
की कृपासे मोको रक्षाकरे ७५

अस्ति पौरव दायादो विदूरथ सुतः प्रभो
ऋक्षैः संवर्द्धितो विप्र ऋक्षवत्यथ पर्वते ७६

एक पुरुवंशका क्षत्रिय विदूरथका पुत्रहै सो ऋक्षोवि
षे वधाहै सो ऋक्षवान् पर्वतविषे अब विद्यमानहै ७६

तथानुकंपमानेन यज्वनाप्यमितौजसा
पराशरेण दायादः सौदासस्याभिरक्षितः ७७

तैसे पराशरणे भार्गवरामके यज्ञकरणेमो परशुराम
से अनुकंपा कृपाकराइकरके सौदासराजाका पुत्र अ
पने अमित तपोबलकर्कै रक्षितकियाहै ७७

सर्वकर्माणि कुरुते शूद्रवत्तस्य स द्विजः
सर्वकर्मेत्यभिख्यातः स मां रक्षतु पार्थिवः ७८

सो पराशरके गृहमो शूद्रके समान सर्वकर्म करताहै
सो सर्वकर्मा नामहै सो मोको रक्षाकरे ७८

शिबिपुत्रो महातेजा गोपतिर्नाम नामतः
वने संवर्द्धितो गोभिः सोऽभिरक्षतु मां मुने ७९

शिबीराजाका पुत्र महातेजस्वी है नामसंज्ञासे गोपतीहै
वनविषे गोउके साथभयाहै सो मोको रक्षाकरे ७९

प्रतर्दनस्य पुत्रस्य वत्सो नाम महाबलः
वत्सैः संवर्द्धितो गोष्ठे सम्यो रक्षत पार्थिवः ८०
हे मुने प्रतर्दन राजाका पुत्र वत्सनाम धारीहे महाबली
हे सो गोधनविषे बढाहे सो राजा मोको रक्षाकरे ८०
दधिवाहन पौत्रस्तु पुत्रो दिविरथस्य च ॥
गुप्तः स गौतमे नासी द्गङ्गातीरेभि रक्षितः ८१
दधिवाहनका पौत्र दिविरथका पुत्र गौतमजीने रक्षणकि
याहे सो गंगातीरविषे रक्षण कियाहे ॥ ८१
बृहद्रथो महातेजा भूरिभूति परिष्कृतः
गोलांगूले महाभागो गृध्रकूटाभि रक्षितः ८२
हे मुने बृहद्रथ राजा महा तेजाहे बहोत विभूतिकरके लि
प्तभयाहे गो लांगूल वानरोविषे गृध्र कूट पर्वतमो
रक्षितहे सो महाभाग्य शीलहे ८२
मरुत्तस्य त्ववाये च रक्षिता क्षत्रियात्मजाः
मरुत्पति समावीर्यं समुद्रेणाभि रक्षिताः ८३
औेर राजा मरुतके वंशमो उत्पन्नभये क्षत्रीपुत्रहे सो इंद्रस
मान पराक्रमीहे सो समुद्रने अपने द्वीपांतरोविषे रक्ष
णकियेहे ८३
एते क्षत्रिय दायादा स्तत्र तत्र परिश्रिताः
अकारा द्वेमकारादि जातिं नित्यं समाश्रिताः ८४
एते क्षत्रियपुत्र राजा जहां तहां वियमानहे सो लोहका
र चित्रकारादि जाती भेदोंको आश्रितभयेहे शिल्पवृ
त्तिकर जीवतेहे ८४
यदि मा मभिरक्षेति ततः स्थास्यामि निश्चला
एतेषां पितरश्चैव तथैव च पितामहाः ८५
जो मोको यहराजे तुलारे प्रसादसे रक्षाकरे तबसे
निश्चलहोकर स्थितहोतीहो आलप्रणोसे स्थितनहीहो
ती जेते राजे मेने कहेहे इनके पिता पितामह जोरहे ८५

मदर्थं निहता युद्धे रामेणा क्लिष्टकर्मणा
तेषा मपचितिश्चैव महा कार्या महाभुजे ८६
सो मेरे अर्थमो महाघोर कर्मवाले परशुरामने युद्धमो मारे हे उन्हकी मेने प्रसन्न होकर प्रतिष्ठाकर्तव्यहे ८६

नचाहं कामये नित्य मतिक्रांतेन रक्षणम्
वर्तमानेन वर्तेयं तन्क्षिप्रं संविधीयतां ८७
हे महाभुजे मे अतिलंघित मर्यादा वालेसे अपना रक्षणकिया नही चाहती जो समान दृष्टिकर्के रक्षाकरे तिससे आपमेरी रक्षा सेताबीकरो ८७

वासुदेवउवाच ततः पृथिव्या निर्दिष्टां स्तान्समानीय कश्यपः अभ्यषिंच न्महीपाला न्क्षत्रिया न्वीर्य संमतान् ८८
वासुदेवउवाच हे राजन् तदनंतर जो राजा क्षत्री कुलके पृथिवी नेकहेहे उन्हको बुलाइकर कश्यपजी अभिषेक करतेभये यह राजे क्षत्रिवंशके तव होतेभये वीर्यपराक्रम कर्के प्रसिद्धहोतेभये ८८

तेषां पुत्राश्च पौत्राश्च येषां वंशाः प्रतिष्ठिताः
एव मेत त्पुरावृत्तं यन्मां पृच्छसि पांडव ८९
इन्हके पुत्र पौत्र जो भये उन्हकी वंश पृथिवी मों प्रतिष्ठित भयेहे इस प्रकार हे पांडव हे राजन् जो तेने प्रश्नकिया सो मेने तुमसे कहाहे ८९

वैशंपायन: एवं ब्रुवं स्तेच यदु प्रवीरो युधिष्ठिरे धर्मभृतां वरिष्ठे रथेन तेनाशु ययौ महात्मा दिशः प्रकाशन् भगवा न्निवार्कः ९०
वैशंपायनउवाच हे जनमेजय वासुदेव भगवान् इसप्रकार धर्मवेत्ता जनोविषे श्रेष्ठजो राजा युधिष्ठिर उसको वृत्तांतको निवेदन मार्गमो कहतेहुए अतिप्रकाशवाले अपने रथकर्के दिशोको प्रकाशकरतेहे जैसे सूर्यतेजकर्के प्रकाशकरताहे तैसे प्रकाशमानभयेहे शीघ्रजातेभये ९० इति श्रीमहाभारते शांतिपर्वणि राजोपाख्यानेमेकोनपंचाशः ॥ ४९ ॥

वैशंपायनउ० ततो रामस्य तत्कर्म श्रुत्वा राजा यु
धिष्ठिरः विस्मयं परमं गत्वा प्रत्युवाच जनार्दनं १
वैशंपायनउवाच तदनंतर राजा युधिष्ठिर परशुरामके ऐसे
कर्मको सुनकर परम विस्मयको पाइकर जनार्दनजीके
प्रतिवचन कहताभया १

अहो रामस्य वार्ष्णेय शक्रस्येव महात्मनः
विक्रमो वसुधा येन क्रोधा न्निःक्षत्रियाकृता २

हे कृष्णजी परशुरामका कर्म अहो आश्चर्यरूपहे इंद्रसेभी
अधिकहे जिसपरशुरामने क्रोधसे पृथिवी एकविंशति वार
निःक्षत्रियाकीतिहे २

गोभिः समुद्रेणतथा गोलांगूलर्क्ष वानरैः
गुप्ताः राम भयोद्विग्नाः क्षत्रियाणां कुलोद्वहाः ३

जिस परशुरामके भयकर्के व्याकुलभये क्षत्रीयोके कुलतार
कराजे गौओंकर्के समुद्रकर्के गोलांगूलोकर्के वानरोकर्के
रक्षित भयेहे ३

अहो धन्यो नृलोकोयं सभाग्याश्च नराभुवि
यत्र कर्मेदृशं धर्म्यं द्विजेन कृत मित्युत ४

अहो आश्चर्यरूप यह मनुष्यलोकहे धन्यहे और इसके
मनुष्यभी महाक्रांति योग्यहे जहां एक मनुष्यमात्र ब्राह्म
णने अपनी प्रतिज्ञा पालनरूपी महा कठिनधर्म किया
याहे और क्या आश्चर्य ऐसाहे ४

कथयंतौ कथांतात तावच्युत युधिष्ठिरौ
जग्मतु र्यत्रगांगेयः शरतल्प गतः प्रभुः ५

हे जनमेजय इसप्रकारकथा कहतेहुए कृष्णऔर युधिष्ठिर
जहांभीष्म महाप्रभु शरशय्यामे स्थितभयाहे तहांजाइप्राप्तहोते
भये ५ ततस्ते ददृशु र्भीष्मं शरप्रस्तर शायिनं
स्वरश्मिजाल संवीतं सायं सूर्यं समप्रभं ६

तदनंतर सो सभही शरशय्याविषे शयन करणेहारे भी
ष्मको तहां जाइकर देखतेभये कैसाहै भीष्मजैसे अपनी
किरणजाल संयुक्त सायंकालका सूर्य तेजकर्के विरा

174

जमानहोताहै तैसे शरशय्यामे विराजमानहै ६

उपास्यमानं मुनिभिः देवैरिव शतक्रतुं
देशे परमधर्मिष्ठे नदीमोघवतीमनु ७

कैसाहै भीष्म परमधरमवाले कुरुक्षेत्रदेशमे मोघवती नदीके तटमे मुनिगणोकरके सेव्यमानाहै जैसे देवतागण संयुक्त इंद्र शोभताहै ७

दृष्ट्वा देव तमालोक्य कृष्णो राजा च धर्मजः
चत्वारः पांडवाश्चैव तेषां शारद्वतादयः ८

हे जनमेजय इसतेही भीष्मको देषकर कृष्णदेव और धर्मज्ञ राजायुधिष्ठिर भीमादिक चारो पांडव और कृपाचार्यादिक सभही ८

अवस्कंद्याथ वाहेभ्यः संयम्य प्रचलं मनः
एकीकृत्येंद्रियग्राममुपतस्थुर्महामुनीन् ९

रथोंसे उतरकर मनको एकाग्रकर्के इंद्रियोंको संयमकर्के महामुनीयोके मंडलके पास जाइ प्राप्तहोतेभये ९

अभिवाद्य तु गोविंदः सात्यकिस्ते च पार्थिवाः
व्यासादीनृषिमुख्यांश्च गांगेयमुपतस्थिरे १०

तहां प्रथम गोविंदजी और सात्यकि और सभही राजा युधिष्ठिरादिक व्यासादि मुख्यमुनि जनोको पृथक पृथक नमस्कारकर्के गांगेय भीष्मजीके समीपजाइ स्थितहोतेभये १०

ऋषिमुनिको प्रदक्षिण कर्के गोविंदजी ५

तपो वृद्धं तथा दृष्ट्वा गांगेयं यदुकौरवाः
परिवार्य ततः सर्वे निषेदुः पुरुषर्षभाः ११

तिसी प्रकार तपोवृद्ध भीष्मको यादव और कौरव पांडव नमस्कारकर्के चारोतरफ घेरकर सभही महात्मा पुरुष बैठजातेभये ११

ततो निशाम्य गांगेयं शाम्यमानमिवानलं
किंचिद्दीनमना भीष्ममिति होवाच केशवः १२

तदनंतर भीष्मको देखा जैसे अग्निशांतहोवनीजाताहै तैसे शांतरूप देषकर स्नेहलज्जा शोककर्के दीनमन भये कृष्णजी इसप्रकारहो शोककर्के वचन कहतेभये १२

कच्चिज्ज्ञानानि सर्वाणि प्रसन्नानि यथा पुरा
कच्चिन्नव्याकुला चैव बुद्धिस्ते वदतां वर १३

हे वचन बोलनेवाले बुधजनो विषे श्रेष्ठ भीष्मजी तोको कछु ज्ञान विषय प्रथमकाल जैसे निर्मल भासते हैं क छु तुह्मारी बुद्धि आकुलतो नही भई है १३

शराभिघात दुःखोत्थं कच्चिद्गात्रं न दूयते
मानसादपि दुःखाद्धि शारीरं बलवत्तरम् १४

तुह्मारा देहके गात्र बाण घातके दुखसे दुखी तो नही होता है प्रभुजी मानस दुखसेभी शरीरका दुःख बलवान होता है अति पीडा करता है १४

वरदानात्पितुः कामं छन्दमृत्युरसि प्रभो
शांतनोर्धर्मनित्यस्य नत्वेतन्मम कारणं १५

तुह्मारे पिता शंतनु महाधर्मकी निष्ठावाले रहे उन्हके वरदानसे तुम स्वेच्छामृत्यु प्रसिद्ध हो परंतु देहदुःख सहारणेमो वरदान हेतु नही बनता १५

सूक्ष्मोपि हि देहे वै शल्यो जनयते रुजं
किं पुनः शरसंघातैश्चितस्य तव पार्थिव १६

देहविषे कंटक वेधमात्र भी महापीडाकों करता है और जिसको अनेक शरोंके घात भये है सो कैसे पीडाकों नही करे यह आश्चर्य है १६

कामं नैतत्तवाख्येयं प्राणिनां प्रभवाप्ययौ
उपदेष्टुं भवाञ्छक्तो देवानामपि भारत १७

हे गांगेय यह हमको निश्चय है जो तोको ऐसा कहना नही बनता जौनसे तुम सर्वलोकोके उत्पत्ति प्रलयको जानते हो हे भारत तुम देवता गणको उपदेश करणेको समर्थ हो १७

यच्च भूतं भविष्यच्च भवच्च पुरुषर्षभ
सर्वं तज्ज्ञानवृद्धस्य तव पाणाविवाहितं १८

जौनसे तुम पुरुषश्रेष्ठ हो भूत भविष्यत् वर्तमान सभही ज्ञान ज्ञानकरके वृद्ध तुह्मारे हाथविषेही स्थित जैसा सदा बना है १८

श्री॰
वा॰य॰
टी॰
१२५

125

संहारश्चैव भूतानां धर्मस्य च फलोदयः
विदित स्ते महाप्राज्ञ त्वं हि धर्ममयो निधिः १९
सर्वभूतोंका संहार प्रकार परलोकमें धर्मकर्मका फलोदय और इस लोककाभी कर्मफलोदय तुमको विदितहै तुम सर्वप्रकारके धर्मज्ञानमुख्य निधिरूपहो १९

त्वां हि राज्ये स्थितं स्फीते समग्रांगमरोगिणं
स्त्री सहस्रैः परिवृतं पश्यामी वोर्ध्वरेतसम् २०
हे भीष्मजी जब तुम पहिली अवस्थाविषे महा समृद्धि वाले राज्यमें स्थितभये और समग्र अंगवाले देहविषे रोगबाधासे रहितभये उसकालमें स्त्री सहस्र संयुक्तरहे तोभी तुमको ऊर्ध्वरेताही हमजानतेहैं २०

ऋते शांतनवा द्भीष्मा त्रिषु लोकेषु पार्थिव
सत्यधर्मा महावीर्या च्छूरा द्धर्मैक तत्परान् २१
हे तातजी हम त्रिलोकी विषे शांतनुके पुत्र भीष्म विना और सत्यधर्मकी निष्ठावाले महाक्रमवाले महाशूरमा तत्री धर्मकाभी एकनिष्ठ परायणवाले और शूरवीर जनोंको नहीजानते २१ ॥

मृत्युमावार्य तपसा शरसंस्तर शायिनः
निसर्ग प्रभवं किंचि न्नच तातानु शुश्रुम २२
जिसने अपने बलकर्के मृत्युको परे हटकर्के शरशय्यामें दीर्घकाल शय्याकीनीहै ऐसा स्वभावसे हि महाप्रभाव वाले और शूरमा जनोंको कहीं कदाचितभी नही सुनती २२

सत्ये तपसि दाने च यज्ञाधि करणे तथा
धनुर्वेदे च वेदे च नीत्यां चैवानु रक्षणे २३
और सत्यवचनकी धर्मनिष्ठासे तपकी निष्ठामें और दानधर्म की निष्ठाविषे यज्ञादिकर्मकांडकी निष्ठाविषे और धनुर्वेद की निष्ठामें और वेद अध्ययनमें और नीति विस्तारमें और प्रजापालनके धर्मविषे तुम्हारे जैसे किसी औरको नही सुनते २४

त्वं हि देवा न्सगंधर्वा न्ससुरा न्यक्ष राक्षसान्

शक्तस्त्वकरणे नैव विजेतुं नात्र संशयः २४

हे भीष्म तुम देवता गंधर्व गण संयुक्त और असुरोंको यक्षो
को राक्षसोंको सकल त्रैलोकमो एक रथ कर्के ही जयकरणे
ही जयकरणेको समर्थहो इसमो संशय नहीहै २४

आनृशंस्यं शुचिं दांतं सर्वभूत हिते रतम्
महारथं त्वत्सदृशं न किंचिदनुशुश्रुम २५

और क्रूरता रहित अति पवित्र आचारवाले और इंद्रियो
के संयमवाले और सर्वभूतोंके हितकार्यमो रत और महार
थी तुम्हारे समान किसी औरकी त्रिलोकीमो नही सुनते

सत्वं भीष्म महाबाहो वसूनां वासवोपमः
नित्यं विप्रैः समाख्यातो नवमो नवमो गुणैः

हे भीष्मजी सो तुम वसुमंडलविषे इंद्र वसुके समानहो
विप्रजनोंने इसलोकोंसे विख्यात कहाहै अष्टवसु जगत
मो प्रसिद्धहै तुमतो अष्टवसुगणके समग्र अंशाकला सं
युक्त नवम वसु जैसेहो सभसे गुण संपदाकर्के हीन न
हीहो २६

अहं च त्वाभि जानामि यस्त्वं पुरुषसत्तम
त्रिदशेष्वपि विख्यातः स्वशक्त्या पुरुषोत्तम २७

मैभी तुमको जानताहूं जोनसे तुम पुरुषोंविषे उत्तमहो
तुम देवगणोविषेभी अपनी शक्तिकर्के उत्तमपुरुषकहेहो

मनुष्येषु मनुष्येंद्र न दृष्टो न च मे श्रुतः ॥
भवतो वा गुणैर्युक्तः पृथिव्यां पुरुषः क्वचित् २८

हे मनुष्येंद्र मनुष्योविषे तुम समान उत्तम नदेखाहै न
श्रवण कियाहै तुम्हारे स्वल्पगुणोंकर्के युक्त पुरुषभी पृथि
वीविषे कहीं दृष्टनहीं भया २८

त्वं हि सर्वगुणैः राजन् देवानप्यतिरिच्यसे
तपसा हि भवान् शक्तः स्रष्टुं लोकांश्चराचरान् २९

हे राजन् तुम सर्वगुणोंकर्के देवतोंसेभी अपनी महिमा
अधिक करतेहो अपने तपकर्के लोकोविषे चराचर जीवो

श्री॰
रा॰प॰
टी॰
१७९

170

को इलनेमो सामर्थवानहो २९

किं पुन श्चात्मनो लोका तुत्तमा तुत्तमै शुणैः
तदस्य तच्च मानस्य ज्ञातीनां संक्षयेन वै ३०

तो तुमको अपने जो लोकहे तिन्को उत्तमगुणोकर्के उत्तम करणेको नही समर्थहे क्या ऐसा संशय नही तेरे विषे नही बनता किंतु तुं अपने लोकोको आपही उत्तमकर लेवेगा ताते यह जो पांडुपुत्रहे सो अपनी जाती के जोहे तुम जैसे महात्मा गुरु पितामहादिक तिन्के क्षयकरके शोक संतापसे दुखी भयाहे ३०

ज्येष्ठस्य पांडुपुत्रस्य शोकं भीष्म व्यपानुद।
येहि धर्माः समाख्याता श्चातुर्वर्ण्यस्य भारत ३१

ऐसे पांडुका ज्येष्ठपुत्र युधिष्टिरहे इसके मनसे शोकको तुम निहत्तकरो जो धर्मचारवर्णोके शास्त्रमो कहेहे हे भारत सभको इस प्रतिकहो ३१

चातुराश्रम्य संयुक्ताः सर्वे ते विदिता स्तव
चातुर्विद्ये च ये प्रोक्ता श्चातुर्होत्रे च भारत ३२

चारो आश्रमोके धर्म संयुक्त जो चारवर्णोके धर्महे सो सभही तुमको विदितहे चारवेदोकी विद्याविषे जो धर्म कहाहै और चातुर्होत्रविषे जो धर्मकहेहै हे भारत सोभी तुमको विदितहे ३२

योगे सांख्ये च नियता ये च धर्माः सनातनाः
चातुर्वर्ण्यस्य यश्चोक्तो धर्मो न स्म विरुध्यते ३३

योगशास्त्रमो सांख्ययोगमो यो नियमहे और सनातन मोक्षधर्म जो हे सो सभ तुमको विदितहे और जो चारोवर्णोके प्रतिलोम उत्पत्तिवाले वर्णसंकरोके धर्मकहेहे ३३

सेव्यमानो स वैयाख्यो गांगेय विदित स्तव
प्रतिलोम प्रसूतानां वर्णानां चैव यः स्मृतः ३४

देशजाति कुलानां च जानीषे धर्मलक्षणम्
वेदोक्तं यच्च शिष्टोक्तं सदैव विदितं तव ३५
और देशजाति कुलोंके धर्मके लक्षणको तुमजानतेहो
यो वेदोक्त धर्म है शिष्टजनोक्त धर्म है सो सभही तुम
को विदित है ३५
इतिहास पुराणार्थाः कार्त्स्न्येन विदितास्तव
धर्मशास्त्रं च सकलं नित्यं मनसि संस्थितम् ३६
और इतिहास पुराणोंका अर्थ तुमको सब विदित है ध
र्मशास्त्र संपूर्ण तुम्हारे मनमे सभस्थित है ३६
ये च केचन लोकेस्मिं नर्थाः संशय कारकाः
तेषां छेत्ता नास्ति लोके त्वदन्यः पुरुषर्षभ ३७
हे पुरुष सत्तम जोकोई इसलोकविषे संशयकारी अर्थहै
तिन्हको छेदनेहारा इसलोकविषे तुमसे और नहीं है ३७
स पांडवेयस्य मनः समुत्थितं नरेंद्र शोकं व्यप
कर्ष मेधया भवद्विधा ह्युत्तम बुद्धि विस्तरा विमु
ह्यमानस्य नरस्य शांतये ३८ ॥ इति श्री राज
धर्मे पंचाशत्तमः ५० ॥ ॥
सो तुम इस पांडव राजके मनमे शोक उदे भया है हेन
रेंद्र उसको आप अपनी शुद्धबुद्धिकरके निवृत्तकरो जो तु
म जैसे उत्तमबुद्धि विस्तारवाले है संशय समुद्रमे मग्न
भये पुरुषके मोहशांतिकरणेवास्ते समर्थ बने है ३८
इति श्री महाभारते शांतिपर्वणि पंचाशत्तमोध्यायः ५०
वैशंपायनः श्रुत्वातु वचनं भीष्मो वासुदेवा
स्य धीमतः किंचिदुन्नाम्य वदनं प्रांजलि र्वाक्यम
ब्रवीत् १ ॥ भीष्मउवाच ॥ वैशंपायनउवाच
हे जनमेजय इसप्रकार वासुदेवजीके वचनको श्रवणक
र भीष्मपुत्रवको कछुउठाइकर प्रांजलि होकर वचन क
हते भये १ ॥ भीष्मउवाच
नमस्ते भगवन् विष्णो लोकानां प्रभवाप्यय
त्वं हि कर्ता हृषीकेश संहर्ता चापराजितः २

श्री. रा. प. टी. १७७

177

भीष्मउवाच हे भगवन् कृष्ण आपके ताईं नमस्कार है तु
मलोकोंके उत्तम प्रलयके आधार हो लोकोंके कर्ता हो
संपूर्ण इंद्रियोंके प्रेरक और संहारकर्ताभी हो और अपरा
जित हो किसीनेभी कदापिनहीं जीते २

विश्वकर्मन्नमस्तेस्तु विश्वात्मन्विश्वसंभव
अपवर्गस्थ भूतानां पंचानां परतः स्थितः ३

विश्वकल्पना तुह्मारा कर्म है तुमको नमस्कार होय तुम
विश्वके आत्मा हो विश्वके संभव हो और लोकोंके मोक्षक
रणेवाले पंचभूत कल्पनासे परे हो ३

नमस्ते त्रिषु लोकेषु नमस्ते परतस्त्रिषु
योगीश्वर नमस्तेस्तु त्वं हि सर्वपरायणः ४

तुम त्रिलोकीविषे व्याप्तभयेको नमस्कार है विश्वसे बा
ह्यव्यापकको नमस्कार है सर्व प्रकारकी विश्वकल्पनाके
आधारभूत तुमही हो ४

मत्संश्रितं यदात्थ त्वं वचः पुरुषसत्तम ॥
तेन पश्यामि ते भावान्दिव्यान्हि त्रिषु वर्त्मसु

हे पुरुषोत्तम जो तुमने मेरेविषे समस्तज्ञान सामर्थ्यक
हा है उसी ज्ञान सामर्थ्यकरके त्रिलोकी विषे दिव्यभावो
को संपूर्णजानताहूं ५

तच्च पश्यामि गोविंद यत्ते रूपं सनातनम्
सप्तमार्गा निरुद्धास्ते वायोरमिततेजसः ६

हे गोविंद जो तेरा सनातनरूप है उसकोभी तुह्मारे प्र
सादसे जानताहूं तुह्मारे प्रबलतेजसे वायुके सप्तमा
र्ग सब रोके गये हैं ६

दिवं ते शिरसा व्याप्तं पद्भ्यां देवी वसुंधरा
दिशो भुजौ रविश्चक्षुः वीर्ये शुक्रः प्रतिष्ठितः ७

स्वर्गलोक पर्यंत तुह्मारे शिरकरके व्याप्त है दिशा भुजा
है सूर्य नेत्र है वीर्यविषे शुक्र प्रतिष्ठित है ७

अतसीपुष्पसंकाशं पीतवाससमच्युतम्
वपुर्ह्यनुमिमीमस्ते मेघस्येव सविद्युतः ८

तुह्मारा स्वरूप अतसी पुष्पसमान श्यामहै पीतवस्त्रसे

एतहे अविनाशीहे उसको हमलोक मनकर्के अनुमा नकरतेहे बिजली संयुक्त जैसा मेघका स्वरूपहे ८

त्वत्प्रपन्नाय भक्ताय गतिमिष्टां जिगीषवे
यच्छ्रेयः पुंडरीकाक्ष तद्ध्यायस्व सुरोत्तम ९

ताते हे पुंडरीकाक्ष मे आपका शरणागत भक्तहो श्रेष्ट गतीको लेना चाहताऊं मेरे जिससे कल्याणहोय उसको आपही ध्यानकरो आप सर्वदेव जनोविषे श्रेष्ठहो ९

वासुदेव उ० यतः खलु पराभक्तिः मयिते पुरुषर्षभ ततो मया वपुर्दिव्यं त्वयि राजन्प्रदर्शितं १०

वासुदेवउवाच हे पुरुषश्रेष्ठ तेने मेरे विषे श्रेष्ठ पराभक्तिकीनीहे ताते मेने तोको अपना दिव्यरूप दिखायाहे १०

नह्यभक्ताय राजेंद्र भक्तायानृजवे नच ॥
दर्शयाम्यहमात्मानं नचाशांताय भारत ११

हे राजेंद्र ऐसे रूपको अभक्तको नही दिखायता कुटिलवंचका हृतिको नहीदिखावता अशांत पुरुषको नही दिखावता ॥ ११

भवांस्तु मम भक्तश्च नित्यं चार्जव मास्थितः
दमे तपसि नित्ये च दाने च निरतः शुचिः १२

हे भारत आपमेरे भक्तहो सदाशांत मार्गमो स्थितहो दमविषे स्थितहो नित्य तपविषे नित्यत्यागविषे स्थितहो सदाशुद्धिहृतिहो १२

अर्हस्त्वं भीष्म मां द्रष्टुं तपसा स्वेन पार्थिव
तव ह्युपस्थिता लोका येभ्यो नावर्तते पुनः १३

हे भीष्म तुम अपने तपकर्के मोको देखने योग्यहो तोको ऐसे लोकवनीहे जिनको पाइकर बहोड पुनरावृत्ति संसारमो नही होती १३

पंचाशतं षट् च कुरुप्रवीर शेषं दिनानां तव जीवितस्य ततः शुभैः कर्मफलो दयैस्त्वं समेष्यसे भीष्म विमुच्य देहम् १४

हे कुरुप्रवीर पंचाशदिन और छपदिन तुमारी शरशय्या विषे जीवन रहणाकी अवधिहे तदनंतर शुभकर्मो

के फलोदयकर्के तम शरीरको त्यागकरोगे तव मुक्त हो वेगे भीष्मका युद्ध महाभारत रणमे दशदिनभया त व भीष्मकी शरशय्याभई उसके अनंतर आठदिनमो युद्धकी समाप्ती भई उसके अनंतर षोडश दिनपर्यंत दुर्योधनकी अशोच समाप्ति इसक्रमसे चोबीसदिनभ ये पंचविंशदिनमो सभको आद्धदानकिया षट्विंश दिनमो नगर प्रवेशभया सप्तविंशदिनमो राज्याभिषे कभया अष्टाविंशदिनमो अधिकारीजनोका आश्वास नभया ऊनत्रिंशदिनमो भीष्मके समीपमो सभकी प्रा प्तिभई उसदिनसे उपरंत तीसदिनवाकी भीष्मके प्राणप्रयाणकेहै १४

एते हि देवा वसवो विमाना न्यास्थाय सर्वे ज्वलिताग्निकल्पाः अंतर्हितास्त्वां प्रतिपा लयंति काष्ठां प्रपद्यंत यदक्पतंगं १५

हे राजन् यह सभही देवता और अष्टवसु विमानोवि षे स्थितभयेहे सभही प्रज्वलित अग्निसमान तेजकर्के प्रकाशमानाहे अंतर्भूत होकर तम्हारे देहत्यागकी प्र तीक्षा उडीककरतेहे जैसे देवता उत्तरायण सूर्यको प्रति शादि धर्मकर्मकी प्रतीक्षाकरतेहे १५

व्यावृत्तमात्रे भगवत्युदीचीं सूर्ये दिशं कालव शं प्रपन्ने गंतासि लोकान्पुरुषप्रवीर नाव र्तते यानुपलभ्य विद्वान् ॥ १६

जवसूर्य भगवान उत्तरदिशाकी गतीको प्राप्तहो वेगा तव तमकालके वशहोवेगे हेपुरुषवीर तवा ही तम उत्तमलोकोको प्रयाणकरोगे जिसगतीको पा इकर तत्ववेत्ता योगीजन वहोड पुनरावृत्तिको नही प्राप्तहोते १६

अमुं च लोकं त्वयि वीर याते ज्ञानानि नक्ष्यं त्य खिलानि भीष्म अतस्त्व सर्वे तव सन्नि कर्षं समागता धर्मविवेचनाय १७ ॥

हे भीष्म जब तुम इस लोकके।को त्यागकर उत्तमलोकको जावेगे तब सर्वप्रकारके ज्ञाननाशको प्राप्तहोवेगे इस हे तुसे हम सबही तुह्मारे समीप धर्मकर्मकी विवेकप्राप्ती वास्ते आयेहे १७ ॥

ततः ज्ञाति लोको पहत श्रुताय सत्याभि संधाय युधिष्ठिराय प्रब्रूहि धर्मादि समाधियुक्तं सत्य वचो स्वा मि नुदाश्व शोकं १८ इति श्री राजधर्मे एक पंचाशतमोध्यायः ५१ ॥

तातेयहराजा युधिष्टिर अपनी ज्ञातीके गुरुपितामहादि वधके शोककर्के इसको शास्त्रज्ञान नष्ट होगयाहे और यह राजा सत्यधर्मकी निष्टावालाहे इस धर्मार्थ कामके धर्मविवेकके उपदेशकरो और समाधीके सिद्धिवाले मोक्ष धर्मभी कहो सत्यवचन श्रवणकर्के इसके शोकको आप निहत्तकरो १८ ॥ इति श्री महाभारते शांतिपर्वणि राजध र्मे एक पंचाशतमोध्यायः ५१ ॥

वैशंपायनउवाच ततः कृष्णस्य तद्वाक्यं धर्मार्थ सहितं हितं श्रुत्वा शांतनवो भीष्मः प्रत्युवाच कृतांजलिः १

वैशंपायनउवाच हेजनमेजय शांतनूका पुत्र भीष्मजोहे सो कृष्णजीके धर्मार्थ सहित हित वचनको श्रवणकर्के कृतांज लिहोकर कृष्णजीके प्रतिवचन कहताभया १ ॥

लोकनाथ महाबाहो शिव नारायण च्युत तव वाक्य मभिश्रुत्य हर्षेनास्मि परिप्लुतः २

भीष्मउवाच हे लोकनाथ हे महाबाहो आप शिवहो क ल्याणरूपहो नारायणहो अच्युत अविनाशीहो तुह्मारे वाक्यको श्रवण कर्के मे हर्षजलकर्के पूर्णतलभयाहूं २

किं चाहं मभि दास्यामि वाक्यं ते तव सन्निधौ यदा वाचो गतं सर्वं तव वाचि समाहितम् ३

किंचित् वाक्यमें तुह्मारे सन्मुख कहताहूं जो कछु वा ग्वाणी जाल समूहमें धर्मज्ञानका विचार साराहे सो सब तुह्मारी वाणीविषे संपूर्ण बनाहे ३

श्री॰
ग॰ध॰
टी॰
१२५

179

यच्च किंचि त्कृतं लोके कर्तव्यं क्रियते च यत्
त्वत्तस्तन्निस्सृतं देव लोके बुद्धि मतो हितं ४

जो कछु लोकविषे कृतकार्यहे जो कर्तव्य बाकीहे जो किया जाताहे सो भूत भविष्यत वर्तमान त्रिकालवर्ती तुह्मारे से ही निकसाहे हेदेवलोकविषे आपके प्रसादसेही बुद्धिस ना होतीहे ४

कथयेद्देव लोकं यो देवराज समीपतः
धर्म कामार्थ मोक्षाणां सोर्थं स्त्रया त्ववाग्रतः ५

जो पुरुष देवलोकमा स्थित देवराजको देव लोकका आचार विचार समीप जाइकर कहे तैसे धर्मार्थ काम मोक्ष धर्मोके निर्णयको आपके समीपकहे आप सर्वज्ञ ईश्वर हो आपके आगे अल्पज्ञ मनुष्य मात्रक्या कहेगा ५

शराभितापा द्व्यथितं मनो मे मधुसूदन
गात्राणि चावसीदंति नच बुद्धिः प्रसीदति ६

तथापि आपकी आज्ञामोको परम लाभहै परंतु बाणोंके घा तसे मेरा मन व्यथायुक्त भयाहे अंगभी मेरे दुःखितहे बुद्ध मेरे वाक्य बोलनेमों प्रसन्न नही होती ६

नच मे प्रतिभा काचि दस्ति किंचि त्प्रभाषितुं
पीड्यमानस्य गोविंद विषानल समैः शरैः ७

अब मोको बोलनेको कछु सत्तानहीहे विषाग्निसमान बाणघातोकर्कै मे पीडित भयाऊं मोको कछु सुधनहीहे

वलं मे प्रजहातीव प्राणाः संत्वरयंति च
मर्माणि परितप्यंति भ्रांत चित्त स्तथाप्यहं ८

अब मोको शरीरबल त्यागकरता जैसा बनाहे प्राणमेरे मोसे शीघ्रचले जातेहे मेरे सभही मरम संतापको प्राप्तभयेहे तैसे हीमे भ्रांतचित्तभीभयाहूं ८

दौर्बल्या त्सजते वाक्मे स कथं वक्तु मुत्सहे
साधुमे त्वं प्रसीदस्व दाशार्ह कुलनंदन ९

ऐसी दुर्बलतासे मेरी वाणीभी गलित होतीहे सो ऐसा मे कहनेको कैसे उत्साहकरो हे यदुनंदन आप मोपर बलीनतासे प्रसन्नहो ९ ॥

तत्त्वमस्व महाबाहो न त्वया त्किंचिदच्युत
त्वत्सन्निधौ च सीदेत वाचस्पति रपि ब्रुवन् १०
आप मोपर यही कृपाकरो जो मोसे कछुनही बोला जावे
तो क्षमाकरो और तुम्हारे सो हमने बृहस्पतिभी कायर
होजावे १० ॥
न दिशः सं प्रजानामि नाकाशं नच मेदिनी
केवलं तव वीर्येण तिष्ठामि मधुसूदन ११
मे तो अब दिशोंकोभी अच्छीतरा नही जानता आकाश
कोभीजानतानही पृथिवीकोभी नहीजानता ऐसा पीड़ा
करके व्यथित भयाहूं केवल आपके कृपाबलसे प्राणधा
रणाकर्के स्थितभयाहूं ११
स्वय मेव प्रभो तस्मा द्धर्मराजस्य यद्धितम्
तद्ब्रवीत्वाशु सर्वेषा मागमानां त्वमागमः १२
ताते हे महाप्रभो जो इस धर्मराजका हितहै उसको आ
पही शीघ्रकहो संपूर्ण शास्त्रोके ज्ञानका आपही परम निधि
हो १२ कथं त्वयि स्थिते कृष्णे शाश्वते लोककर्तरि
प्रब्रूयां मद्विधः कश्चि द्गुरौ शिष्य इव स्थिते १३
आपसनातन लोककर्ताहो आपकी प्रत्यक्षताविषे मेरे
जैसा दीनपुरुष उपदेश कहनेको कैसे समर्थहोवे जैसेस
र्वज्ञगुरुके सन्मुख अल्पज्ञ शिष्यकहनेको समर्थनहीहोता १३
वासुदेवउ[illegible] उपपन्न मिदं वाक्यं कौरवाणां धुरंधरे
महावीर्ये महासत्वे स्थिते सर्वार्थ दर्शिनि १४
वासुदेवउवाच हे भीष्मजी आप कौरव वंशकी मर्यादाके
धुरंधरहो महापराक्रमीहो महामनस्वी बडी स्थिरनिष्ठा
वालीहो सर्वार्थ ज्ञान दृष्टिहो जो आपनेकहा अभिमान
त्यागकर्के जो तुम्हारे विषे सो वाक्य उचितहै १४
यस्य मामात्थ गांगेय बाण घात रुजं प्रति
गृहाणात्र वरं भीष्म मत्प्रसाद कृतं विभो
हे गांगेय जो तुमने बाणोकी घातपीडाकी आकुलता

श्री॰
रा॰ प॰
टी॰
१८॰

180

कहीहे इसका वर अब मोंसि ग्रहणकरो मेरे प्रसादसे
इसकार्यकी सिद्धिभये जानो १५

तेन ग्लानिर्न ते मूर्छा न दाहो नच ते व्यथा
प्रभविष्यंति गांगेय क्षुत्पिपासे नचापि ते १६

हे गांगेय अब तोकों वाणपीडाकी आकुलता नहोवेगी
मूर्छा नहोवेगी व्यथा नहोवेगी और क्षुधा तृषाभी तोको
नहोवेगी १६

ज्ञानानि च समग्राणि प्रतिभास्यंति तेनघ
नच ते कश्चिदासक्ति बुद्धेः प्रादुर्भविष्यति १७

सभप्रकारके ज्ञान तुमको उपस्थितहोवेंगे और तुम्हारी
बुद्धीकी आशक्तता नही उदे होवेगी १७

सत्वस्थं च मनो नित्यं तव भीष्म भविष्यति
रजस्तमोभ्यां रहितं घनै र्मुक्त इवोडुराट् १८

अब तुम्हारा मन शुद्ध सत्व ज्ञानविषे स्थित होवेगा रजो
गुण तमोगुणके धर्म दुःख शोक मोह जोहे इन्हसे तु
म्हारा मन रहित होवेगा १८

यद्यच्च धर्म संयुक्त मर्थयुक्त मथापि वा
चिंतयिष्यसि तत्राग्र्या बुद्धिस्तव भविष्यति १९

जोजो विषय तुम धर्मयुक्त अर्थयुक्त चिंतनकरेगा उसवि
षे तुम्हारी बुद्धि अति निपुण होवेगी १९

इमं च राजशार्दूल भूतग्रामं चतुर्विधम्
चक्षु र्दिव्यं समाश्रित्य द्रक्ष्यस्यमितविक्रम २०

हे राजशार्दूल यह जेता चारप्रकारका चराचरभूतग्राम
है उसको दिव्यदृष्टि पाइकरके तुम हस्तामल जैसा प्रत्य
क्षदेखोगे जैसे जलविषे मीन देखतेहैं २०

संसरंतं प्रजाजालं संयुक्तो ज्ञान चक्षुषा
भीष्म द्रक्ष्यसि तत्वेन जले मीन इवामले २१

हे अमित विक्रम जेता यह प्रजाजालहै सो संसाररूपावि
षे जन्मजरा मरणादि प्रवाहविषे जैसे आवा गमनकोक

रताहे उसकी जलविषे मीनकी न्याई प्रत्यक्ष देखोगे २१
वैशंपायनउवाच ततस्ते व्यास सहिताः सर्वएव म
हर्षयः ऋग्यजुः सामसहितैः वचोभिः कृष्णमर्चयत
वैशंपायनउवाच हे जनमेजय तदनंतर स कौरव पांडव
व्यासादि संयुक्त सबही महाऋषिगण ऋग यजुः साम सहित
वचनोकर्के कृष्णजीको स्तुति पूर्वक पूजा करतेभये २२
ततः सा वर्तवं दिव्यं पुष्पवर्षं नभस्तलात्
पपात यत्र वार्ष्णेयः सगांगेयः सपांडवः २३
सर्वऋतकी विकास संपदाकी पुष्पवर्षा आकाशासे जहांगां
गेय भीष्म औैर कृष्णजीहे ऊपर पडतीभई २३
वादित्राणि च सर्वाणि जगुश्चाप्सरसां गणाः
नचाहित मनिष्टं च किंचि तत्र प्रदृश्यते २४
आकाशविषे देवगणोके वाजंत्रशब्द होतेभये अप्सरोंके गण
नृत्यकरतेभये उसकालसे अहित अनिष्ट उत्पात लक्षण
नहीहोताभया २४
ववौ शिवः सुखो वायुः सर्वगंधवहः शुचिः
शांतायां दिशि शांतैश्च शब्दैः मृगपक्षिणः २५
उसकालमो पवन कल्याणरूप स्वच्छ स्पर्शकारी वोढताभ
या सर्वप्रकारकी पवित्रगंध पवनकाहोताभया शांता दि
शाविषे, शांतरूपी मृगपक्षी विचरतेभये २५
ततो मुहूर्तो द्भगवा न्सहस्रांशु दिवाकरः
दह न्वन मिवै कांते प्रतीच्यां प्रत्य दृश्यत २६
तदनंतर मुहूर्त कीलवीतेमो भगवान् सहस्रकिरणके प्र
काशवाला दिनकर्ता सूर्यजोहे सो मानो वनको दग्धकरता
हे येसा रक्तवर्णहोकर पश्चिमदिशाके एकभागविषे अस्त
होता दृष्टहोताभया २६
ततो महर्षयः सर्वे समुत्थाय जनार्दनं
भीष्ममामंत्रयां चक्रु राजानं च युधिष्ठिरं २७
तब महाऋषि जोहे सबही उठकर जनार्दन भगवानको भी
ष्म गांगेय जीको राजा युधिष्ठिरको संध्यादि सायंकाल कृत्य
करणेको आशीर्वाद प्रणामकर्के बुलायकर जातेभये २७
ततः प्रणाम मकरो त्केशवः सहपांडवः

श्री
रा.प.
टी.
१८१

सात्यकिः संजयश्चैव सह शारद्वतः कृपः २८

तब केशव भगवानजी और पांचो पांडव सात्यकि संजय कृपाचार्यभी मुनि मंडलको सभही प्रणाम करते भये २८

ततस्ते धर्मनिरताः सम्यक्तै रभिपूजिताः

श्वः समेष्याम इत्युक्त्वा यथेष्टं त्वरिता ययुः २९

सो सभही मुनिगण स्वधर्मनिष्ठावाले सभन पूजन किये कल फेर आवेंगे ऐसे कहिकर यथेष्ट आश्रमोंको जाते भये २९

तथैवाभ्येत्य गांगेयं पांडवाः केशवस्तथा

प्रदक्षिणमुपावृत्य रथानारुरुहुः शुभान् ३०

तैसे ही पांडव और केशवजी भीष्मको प्रदक्षिणा कर्के प्रणाम कर्के प्रातकाल फेर आवेंगे ऐसे कहिकर शुभ रथोंको सभ आरोहण करते भये ३०

ततो रथैः कांचन चित्रकूबरै महीधराभैः समदैश्च दंतिभिः हयैः सुपर्णैरिव चाशुगामिभिः पदातिभिश्चात्तशरासनादिभिः ३१

तदनंतर सभही कांचन चित्र रचनावाले कूवर भागवाले रथोंसे पर्वतोके समान भारी विस्तारवाले तिन्होंऔर मदमातंगोकर्के और गरुड वेगवाले तुरंगोकर्के और शीघ्र गतिवाले पैदलोकर्के और सुंदर धनुषोकर्के शोभायमान सभही पांडव और केशवजी नगरको जाते भये ३१

ययौ रथानां पुरतो हि सा चमूस्तथैव पश्चादति मात्रसारिणी पुरश्च पश्चाच्च यथा महानदी तमृक्षवंतं गिरिमेत्य नर्मदा ३२

ततः पुरस्ताद्भगवान्निशाकरः समुत्थितस्तामभिहर्षयंश्चमूं दिवाकरापीतरसा महौषधीः पुनः स्वकेनैव गुणेन योजयन् ॥ ३३

तदनंतर भगवान् पूर्व दिशाविषे उदय भयाहै महारथीओंको और सेनाकों हर्षकरावताहै और सूर्यने पान कियाहै रस जिन्हका ऐसीया जो पृथिवीकी महा औषधीहै उन्हको

अपनी अमृत किरणोंकर्कै शीतलतासे पोषण करताभ
या चंद्रमा दृष्टहोताभया ३३

ततः पुरं सुरपुर संमितद्युतिं प्रविश्यते यदुवृषपां
डवास्तदा यथोचितान्भवन वरा न्समाविशन् श्र
मान्विता मृगपतयो गुहाइव ३४ इतिश्री महाभा
रते शांतिपर्वणि राजधर्मे द्विपंचाशत्तमोध्यायः ५२

तब कृस्नजी यदुश्रेष्ठऔर पांडव देवपुरके समानशोभासे
पदायुक्त नगरको प्रवेशकर्कै अपने अपने मंदिरोको गिरि
कंदराको मृगराजोकीन्याई दिनके मार्गश्रम युक्तभये सभ
हीजातेभये ३४ इतिश्री शांतिपर्वणि राजधर्मे द्विपंचाश
त्तमोध्यायः ५२ ॥

वैशंपायनउवाच ततः शयन माविश्य प्रसुप्तो म
धुसूदनः याममात्रार्ध शेषायां यामिन्यां प्रत्यबुध्यत

वैशंपायनउवाच तब रात्रिविषे केशवजी सभही पांडव
शय्याविषे स्थितहोकर निद्राको पाइकर सभही शयन कर
तेभये जब अर्थप्रहर रात्रिशेषरही तब मधुसूदन भग
वानजाग्रतहोतेभये १

सध्यानपथ माविश्य सर्वज्ञानानि माधवः
अवलोक्य ततः पश्चा दध्यौ ब्रह्म सनातनं २

तब श्रीकृस्नजी ध्यानमार्गको प्रवेशकर्कै सर्वप्रकारकी ज्ञा
नप्रकार देषकर्कै सनातन निर्गुण सगुण ब्रह्मको ध्यानक
रतेभये २

ततस्तुति पुराणज्ञाः रक्तकंठाः सुशि
क्षिताः अस्तुवन्विश्वकर्माणं वासुदेवं प्रजापतिं ३

उसकालविषे स्तुतिकरणेहारे वंदिजन मधुरकंठ स्वरवाले
अपनीविद्याके शिक्षासंपन्न जोरहे सो विश्वके पालक वासु
देव प्रजापतिको स्तुतिपाठकरतेभये ३

पठंति पाणि स्वनिका स्तथा गायंति गायनाः
शंखा नथ मृदंगांश्च प्रवादयंति सहस्रशः ४

हस्त स्वरवाले हस्त स्वरकर्कै पाठकरते भये गायनकरणेहारे
गायनकरतेभये औैर शंखमृदंगोको हजारलोक बजावतेभये ४

1

श्री॰
शा॰प॰
टी॰
१८२

182

वीणा पणव वेणूनां स्वन श्चाति मनोरमः
सहास इव निस्तीर्णः शुश्रुवे तस्य वेश्मनः ५
वीणापणव वेणू वजंत्र जोहे सो अति मनोरम धनिसे बजतेभये ऐसा गावन बजावन शब्द कृष्णजीके मंदिर सुंदर हास्य जैसा श्रवण होताभया ५

ततो युधिष्ठिरस्यापि राज्ञो मंगल संहिताः
उच्चेरु मधुरा वाचो गीत वादित्र निःस्वनाः ६
उसीकालविषे युधिष्ठिर राजाके मंदिरकाभी मंगलाचार संयुक्त स्तुतिशब्द श्रवणहोताभया तहां मधुरवाणी उचे स्वरसे उदेभईहे और गीतवाद्यशब्दभी मधुरश्रवण होतेभये ६

ततउत्थाय दाशार्हः स्नानःप्रांजलि रच्युतः
जप्त्वा गुह्यं महाबाहु रग्नीना श्रित्य तस्थिवान् ७
तब श्रीभगवानजी शय्यासे उठकर शौचविधिसंयुक्त स्नान करके संध्योपासनकरके गुरूपदिष्ट गोप्यमंत्रको जपकरके अग्निहोत्रकरके स्थितहोतेभये ७

ततः सहस्रं विप्राणां चतुर्वेदविदां तथा
गवां सहस्रेणैकैकं वाचयामास माधवः ८
सहस्र गोदान चतुर्वेदवेत्ता ब्राह्मणोंको संकल्प पढाइकर देतेभये उसके अनंतर कृष्णभगवानजी गोसे आदलेकर मंगलदर्शन करतेभये ८

मंगलालंभनं कृत्वा आत्मान मवलोक्य च ॥
आदर्शे विमले कृष्णः ततः सात्यकि मब्रवीत् ९
इसप्रकार मंगलदर्शनकरके आज्यपात्रमे मुखदेखकर निर्मल दर्पणमे मुख अपना देखतेभये तब सात्यकिको वचनकहते भये ९ गच्छशैनेय जानीहि गत्वा राज निवेशने
अपि सज्जो महातेजा भीष्मं द्रष्टुं युधिष्ठिरः १०
हे शैनिपुत्र तुमराजाके मंदिरको जाइकर खबर लेआवो राजा युधिष्ठिर महातेजस्वीहे सोभी कृष्णजीके दर्शन करणेको तियार भयाहे १०

ततः कृष्णस्य वचनात् सात्यकि रुपवि
त्वायचो उपगम्य च राजानं युधिष्ठिर मभाषत ११

तव कृष्णजीके वचनसे सात्यकि सतावी जाताभया राजाके स
मीप जाइकर युधिष्ठिरको कहताभया ११

युक्तो रथवरो राजन्वासुदेवस्य धीमतः
समीपमापगेयस्य प्रयास्यति जनार्दनः १२

हे राजन् महाबुद्धि जो श्रीकृष्ण उसका उत्तम रथ तियार किया
हे श्रीकृष्ण भीष्म गांगेयके समीपको जावेगा १२

भवत्प्रतीक्षः कृष्णोसौ धर्मराज महाद्युते
यदत्रानंतरं कृत्यं तद्भवान्कर्तुमर्हति १३

हे महातेजवाले धर्मराज कृष्णजी तुम्हारे आगमनको देखर
हेहे जो तुमने अबकरणाहै सो सतावी करो १३

एवमुक्तः प्रत्युवाच धर्मपुत्रो युधिष्ठिरः १४

ऐसा कहा तो धर्मपुत्र युधिष्ठिरबी कहताभया १४ ॥ ॥

युधिष्ठिरउवाच युज्यतां मे रथवरः फाल्गुना प्रति
म द्युते न सैनिकैस्तु यातव्यं यास्यामो वयमेव हि

हे फाल्गुन हे अर्जुन मेरा रथवर जोडकर सतावी लेआवो अ
ब सेनावाली लोक नही जावे हमही सेना विना जावेगा १५

न च पीडयितव्यो मे भीष्मो धर्मभृतांवरः
अंतःपुरः सराश्चापि निवर्तंतु धनंजय १६

भीष्मजी धर्मवेत्ता जनोविषे श्रेष्ठहै उनको सेनाकर्के लोभन
हीकरणा अंतःपुरवासी लोकभी अंतःपुरको फिरजावे १६

अद्य प्रभृति गांगेयः परंगुह्यं प्रवक्ष्यति ॥
ततो नेच्छामि कौंतेय पृथक्जनसमागमं १७

आजसे लेकर भीष्मगांगेयजी परम गोप्य धर्मरहस्यकों क
हेंगा इसहेतुसे मूढजनके समाजको मे इच्छा नही करता १७

वैशंपायनः स तद्वाक्यमथाज्ञाय कुंतीपुत्रो धनंजयः
युक्तं रथवरं तस्मा आचचक्षे नरर्षभः १८

वैशंपायनउवाच हे जनमेजय धनंजय अर्जुन ऐसे वचनको
सुनकर जाइकर पुन आइकर राजाको कहताभया हे महा
राज रथ तुम्हारा जोडकर तियार कियाहै १८

ततो युधिष्ठिरो राजा यमौ भीमार्जुनावपि

1853

भूतानीव समस्तानि यथुः कृष्ण निवेशनम् १९
तब राजा युधिष्ठिर नकुल सहदेव भीम अर्जुनभी रथारूढ
होकर मानो पृथिव्यादि पंचभूत एकत्र भयेहै इसप्रकार कृ
ष्णजीके निवासस्थानको जातेभये १९

आगच्छतस्तथ कृष्णोपि पांडवेषु महात्मसु
शैनेय सहितो धीमा रथ मेवान्वपद्यत २०
कृष्णजीभी पांडवोंके आवन कालविषेही सात्यकि संयुक्तही
रथारूढ होकर मार्गमो प्राप्तहोतेभये २०

रथस्थाः संविदं कृत्वा सुखां पृष्ट्वा च शार्वरी
मेघघोषैः रथवरैः प्रययुस्ते नरर्षभाः २१
सो सभही रथमो स्थितही अन्योन्य जयशब्द प्रणामादि समा
चारकरके रात्रिकी सुखभोगवार्ताकी पृछाकरके मेघगर्ज
नाके घोषवाले रथोंकर्के सभही महारथी जातेभये २१

बलाहकं मेघपुष्पं शैब्यं सुग्रीव मेवच
दारुक श्चोदयामास वासुदेवस्य वाजिनः २२
पांडवोका समागम जब भया तब दारुक सारथी मेघपुष्प ब
लाहक शैब्य सुग्रीव नामवाले चारघोडायुक्त कृष्णजीके रथा
को [illegible]

तेहया वासुदेवस्य दारुकेन प्रचोदिताः
गां खुराग्रै स्तदाराजं ल्लिखंतः प्रययुस्तदा २३
हे जनमेजय सो कृष्णजीके रथके घोडे वेगकर्के आकाशको ग्रा
सकरतेहै और खुराग्रोकर्के पृथिवीकों विदारणकरे जातेहै ऐसे
वेगकर्के दारुक सारथी शीघ्रचलावताभया २३

ते ग्रसंत इवाकाशं वेगवंतो महाबलाः
क्षेत्रं धर्मस्य कृत्स्नस्य कुरुक्षेत्र मवातरन् २४
हे जनमेजय सो सभही महारथी महाबली रथोके वेगकर
के आकाशको ग्रासकरते जैसे संपूर्ण क्षत्रीधर्मका क्षेत्रजो कु
रुक्षेत्र उसको सताबी प्राप्तहोतेभये २४

ततो ययु र्यत्रभीष्मः शरतल्पगतः प्रभुः
आस्ते महर्षिभिः सार्धं ब्रह्मादेवगणो र्यथा २५
तदनंतर सभही तहां जातेभये जहां भीष्म गांगेय शरशय्या

मो स्थितभयाहे महाऋषी समूहकर्के सेवितहे जैसे ब्रह्मा जी देवगणोंकर्के संयुक्त होताहे २५

ततो वतीर्य गोविंदो रथात्तच युधिष्ठिरः
भीमो गांडीव धन्वाच यमौ सात्यकि रेवच २६

तव गोविंदजी रथसे उतरकर सो राजा युधिष्ठिर भीमसेन औ र गांडीव धन्वा अर्ज्जुन और नकुल सहदेव यह दोनो और सात्यकी भी रथोसे उतरकर २६

ऋषीनभ्यर्चयामासुः करानुद्यम्य दक्षिणान्
स तैः परिवृतो राजा नक्षत्रै रिवचंद्रमाः २७

अपने अपने देहने हाथोके उठायकर ऋषीजनोको प्रणाम कहकर पूजाकरतेभये सो भीष्म कृष्णादि महारथी संयुक्त ऐसा शोभताहे २७

अभ्या जगाम गांगेयं ब्रह्माण मिव वासवः २८

तव राजा युधिष्ठिर भीष्मजीको समीपजाताभया जैसे ब्रह्माजीके समीपको इंद्रजाताहे २८

शरतल्पे शयानंत मादित्यं पतितं यथा
स ददर्श महाबाहु भयाच्चागत साध्वसः २९

इति श्री महाभारते राजधर्मे भीष्माभि
गमने त्रिपंचाशत्तमोध्यायः ५३ ॥

महावाहोजो भीष्म उसको देषताभया कैसाहे शर शय्यामो स्थितहे जैसे सूर्य पृथिवीमो पडाहोवे देषकर भयसे कछुव्याकुल जैसा होताभया २९ इति श्री राजधर्मे भीष्माभिगमने त्रिपंचाशत्तमोध्यायः ५३ ॥

जनमेजयउवाच धर्मात्मनि महावीर्ये सत्यसंधे
जितात्मनि देवव्रते महाभागे शरतल्पगते च्युते १

जनमेजयउवाच हे वैशंपायनजी भीष्मगांगेय जोहे सो महाधर्मात्मामहाभये महापराक्रमीभये सत्यधर्मकी दृढनिष्ठावालेभये जितचित्तभये देवलोक प्राप्तिकी व्रतनिष्ठावाले भये ऐसे महाभागभये शरशय्याकी भूमिविषे पडेहे १

शयाने वीरशयने भीष्मे शांतनु नंदने
गांगेये पुरुषव्याघ्रे पांडवैः पर्य्युपासिते २

वीर शय्याविषे शय्याभये ऐसे शांतनु राजाके पुत्र और गं

गाजीके गर्भसे उत्पन्नभयेहे ऐसे पुरुषश्रेष्ठ भीष्मजी पांड वोकर्के सेवितभये जब २

काः कथाः समवर्तंत तस्मिन्वीर समागमे
हतेषु सर्व सैन्येषु तन्मे शंस महामुने ३

तब सर्वसेनाके वीरलोक रणविषे मारेगयेहे बाकीजो र हे महावीर पांडव उन्हका भीष्मके साथ समागमभया ऐ से समाजविषे कौन कौन कथा वार्ता प्रवृत्तभईहे उन्हको आपमेरे प्रतिकहो ३

वैशंपायनउवाच शरतल्पगते कृसे कौरवाणां धुरं धरे आजग्मुः ऋषयः सिद्धा नारद प्रमुखा नृप ४

वैशंपायनउवाच हे जनमेजय भीष्मजी कौरवोके धर्मक र्मकी मर्यादाके धुरंधर जब शरशय्याविषे पडेहे उसकाल विषे सभही ऋषीलोक सिद्धलोक नारदसे मुख्य तहां आइ प्राप्त भयेहे ४ ॥

हतशिष्टाश्च राजानो युधिष्ठिर पुरोगमाः
धृतराष्ट्रश्च कृष्णश्च भीमार्जुन यमास्तथा ५

महाभारत युद्धसे हतशेष जो राजाहे युधिष्ठिरादिक और धृतराष्ट्रराजा और कृष्णजी और भीम अर्जुन नकुल सहदेव यह सभही तहां आनप्राप्त होतेभये ५

तेभिगम्य महात्मानो भारतानां पितामहं
अन्वशोचंत गांगेय मादित्यं पतितं यथा ६

सो सभही महात्मा लोक भारतोके पितामहको भीष्म जीको समागम करके शरशय्यामो स्थित भूमितलविषे पडे सूर्यके न्याईं देखकर गांगेय भीष्मजीको बहोत शो चना करतेभये ६

मुहूर्त मिव च ध्यात्वा नारदो देवदर्शनः
उवाच पांडवान्सर्वान् हतशिष्टांश्च पार्थिवान् ७

तब नारद देवऋषीजी मुहूर्तभर ध्यान जैसे स्थितीकर्के पां डवोको और हतशेष राजालोकोको वचनकहतेभये ७

प्राप्तकालं समाचध्वं भीष्मायं मनुपृच्छतां
अस्त मेति हि गांगेयो भानुमानिव भारत ८

प्राप्तकाल वाणीकी समाचारको कहतेभये यहभीष्मजीहे इन्हको अब तुम पूछाकरो यह गंगापुत्र अब सूर्यके अस्तका लको प्राप्तहोताहै ८

अयं प्राणानुत्सृजन्स्तं सर्वैभ्यनुगच्छत ।
कृत्स्नान्हि विविधान्धर्मांश्चातुर्वर्ण्यस्य वेत्ययं ९

यह अब आवते उत्तरायणमें प्राणत्यागकरणे चाहताहै तुम सभही इसको पूछाकरो चातुर्वर्णके धर्मोको यह सभजानताहै ९

एष वृद्धः परांल्लोकान् संप्राप्नोति तनुंत्यजन्
ते शीघ्रमनुयुंजीध्वं संशयान्मनसि स्थितान् १०

यह भीष्म महावृद्धहे देहत्यागकरताहै उत्तमलोकोंकोजाताहै इसको तुम सतावीहे अपने मनके विषे स्थितजो जो संशयहे तिन्हकीपूछाकरो १०

एवमुक्ताः नारदेन भीष्ममीयुः नराधिपाः
प्रष्टुं त्वा शक्नुवंतस्ते वीक्षांचक्रुः परस्परम् ११

हे जनमेजय नारदजीने जब ऐसा कहा तब सभही राजा लोक भीष्मजीके निकट प्राप्तभयेहे पूछाकरणेको कोईनहो पितामहजीको समर्थनही भया सभही अन्योन्य मुखको देखतेभये ११

अथोवाच हृषीकेशं पांडुपुत्रो युधिष्ठिरः
नान्यस्त्वदेवकीपुत्रा शक्तः प्रष्टुं पितामहः १२

तब राजा युधिष्ठिर यदुश्रेष्ठ मधुसूदनजीको कहताभया

अव्याहर यदुश्रेष्ठ त्वमग्रे मधुसूदन ॥
त्वं हि नस्तात सर्वेषां सर्वधर्मविदुत्तमः १३

हे तात हमारे विषे सभसे धर्मवेत्ताजनोविषे तुमही श्रेष्टहो तुमही भीष्मपितामहजीको प्रथम पूछाकरो १३

एवमुक्तः पांडवेन भगवान्केशवस्तदा
अभिगम्य दुराधर्षं प्रव्याहरयदच्युतः १४

हे जनमेजय पांडवराजाने जबऐसा कहा तब भगवानकेशव

जी अखंड प्रभाववालेहे सो महाप्रभाववाले भीष्मजीको नि
कटप्राप्त होकर वचन कहतेभये १४

वासुदेवउवाच कच्चित्त्वेन रजनी व्युष्टाते राजसत्त
म विस्पष्टलक्षणा बुद्धिः कच्चित्त्वोपस्थिता नव १५

वासुदेवउवाच हे राजसत्तम भीष्म हम आपको कुशलपूछा
करतेहे यह रात्री तुमको कछु सुखकर्के वीतीहे स्फुटज्ञा
नशक्तिवाली वुद्धि तुमको उपस्थितभईहे १५

कच्चि ज्ञानानि सर्वाणि प्रतिभांति च ते नच
न ग्लायते च हृदयं न च ते व्याकुलं मनः १६

जेते ज्ञानके उत्तम विषयहे सो तुमको स्फुरणाकरतेहे हे अन
घ तुम पापफलसे रहितहो तुम्हारा हृदय ओर मन व्याकुल
तो नहीभयाहे १६

भीष्मउवाच दाहो मोहः श्रमश्चैव क्लमो ग्लानि स्तथा
रुजा तव प्रसादा द्गोविंद सद्यः प्रतिगतानिमे १७

भीष्मउवाच हेवार्ष्णेय हेकृष्ण मेरी शरीरका दाह ओर भ्रम
ओर कातरता ओर व्याकुलता ओर पीडा बाणघातोकी तुम्हा
रे प्रसादसे मेरी तत्कालही सभ हर भईहे १७

यच्च भूतं भविष्यच्च भवच्च परम द्युते ॥
तत्सर्वं मनुपश्यामि पाणौफल मिवार्पितं १८

जो भूत भविष्यत् वर्तमान ज्ञान विषयहे सो सभही हे पर
म प्रभाववाले कृष्णजी तुम्हारे प्रसादसे मे अपने करतल
विषे स्थितफलकी न्याई देषताहुं १८

वेदोक्ता श्चैव येधर्मा वेदांताधि गताश्चये
तान्सर्वान् संप्रपश्यामि वरदाना न्नवाच्युत १९

जोनसे धर्मविषय वेदोक्तहे ओर जो धर्मविषय वेदांत ज्ञा
नशास्त्रके उपकारीहे तिन्हको वरदानकर्के मे प्रत्यक्षदे
षताहुं॥ १९ ॥

शिष्टैश्च धर्मो यः प्रोक्तः सचमे हृदि वर्तते
देशजाति कुलानां च धर्मज्ञोस्मि जनार्दन २०

ओर भी शिष्टजनोने धर्मकहाहै सो सभही मेरे हृदयविषे।

अब हढभयाहूं हे जनार्दन अब मे देशजाती कुलधर्म
काभी तत्ववेताभयाहूं २०

चतुर्षाश्रमधर्मेषु योर्थः सच हृदिस्थितः
राजधर्माश्च सकलो नवगच्छामि केशव २१

और चार आश्रमो विषे जो धर्म कर्मका अर्थविषयहे सोभी मे
रेहृदयमों स्थितभयाहूं और जेते राजधर्महे तिन्हको संपूर्ण
जानताहूं २१ ॥

यश्च यच्च वक्तव्यं तद्वक्ष्यामि जनार्दन
तव प्रसादाद्धि शुभा मनो मे बुद्धिराविशत् २२

हे केशव जनार्दन जिस विषयविषे जोवक्तव्यहे उसको मे
अबकह देताहूं तुह्मारे प्रसादसे मेरी बुद्धि शुभभईहे मन
को आइप्रविष्टभईहे २२

युवे वास्मि समाहृत्य त्वदनुध्यान हृंहितः
वक्तुं श्रेयः समर्थोस्मि त्वत्प्रसादाज्जनार्दन २३

अब मे तुह्मारे प्रसादसे युवान जैसा समर्थ भयाहूं तुह्मारे
ध्यानके प्रसाद मे तो सर्वप्रकारसे समर्थभयाहूं २३

स्वयं किमर्थं भगवान् श्रेयो न प्राह पांडवं
किंते विवक्षितं चात्र तदाशु वद माधव २४

हे माधव तुह्मारे प्रसादसे मे तो सर्वप्रकारसे समर्थ भयाहूं
तोभी मेरे मनविषे यह संशय बनाहे आपइस पांडव राजा
को कल्याण मार्गको क्यो नही कहते क्या तुह्मारी वक्तव्य
ताकी इछाहे उसको मेरेप्रति सतावीकहो २४

वासुदेव उवाच यशसः श्रेयस श्चैव मूलं मां विद्धि
कौरव मतः सर्वेभि निर्हृता भावा सद सदात्मकाः २५

वासुदेव उवाच हे कौरव राजन् यशका और कल्याणमूल तुम
मोकोजानो जेते शुभ अशुभभाव जगतमोहे सो सभही
मोसे बनेहे २५

शीतांशु श्चंद्र इत्युक्तो लोके को विस्मयिष्यति
तथैव यशसा पूर्णे मयि को विस्मयिष्यति २६

जैसे कोईपुरुष चंद्रमाको शीतकिरणकहे तो चंद्रमा यशसो
कमो विख्यात नहीहोता तेसे मोको यशाकर्के पूर्णजो कहे तो
मेरा यश पृथिवीमो विख्यात नही होता २६

श्री॰
रा॰प॰
टी॰
१८६

186

आधेयंत्व मया भूयो यश स्तव महाद्युते ॥
ततो मे विपुला बुद्धिः त्वयि भीष्म समर्पिता २७
ताते आधेय यशवस्तहै सो किसी आधारविषे होइतो आ धारका यश विख्यात होताहै इस हेतुसे तमको आधारक कै तुम्हारा यशविख्यात करणेको सर्वज्ञानवाली बुद्धितुम्हा रे हृदयविषे सावधान कीनीहै २७
यावद्धि पृथिवीपाल पृथ्वीयं स्थास्यते ध्रुवा
तावत्तवा त्वयाकीर्तिः लोका नत्र चरिष्यति २८
हे पृथिवीपाल जब लग यह पृथिवी बनरहेगी तब लग तेरी कीर्ति निश्चयकर्कै अखंडही सर्वलोकोको सदैव विचरती र हेगी २८ यस्य त्वं वक्ष्यसे भीष्म पांडवायानुपृच्छते
वेद प्रवाह इवते स्थास्यते वसुधातले २९
हे भीष्मजी यह पांडव राजा तमको प्रश्नकरेगा जोजो तुम इस इस राजाको धर्म निर्णय कहोगे सो सो वेदवाक्य जैसा पृथि वीतलमे प्रथित होवेगा २९
यश्चैतेन प्रमाणेन योक्ष्यत्यात्मान मात्मना
सफले सर्व पुण्यानां प्रेत्यचानु भविष्यति ३०
जो पुरुष तुम्हारे वाक्य प्रमाणकर्कै अपने आत्माको धर्मकर्म मार्गकर्कै संस्कार संयुक्त करेगा सो सर्व पुण्योके फलको परलोकमे अनुभव करेगा ३०
एतस्मा त्कारणा द्भीष्म मति र्दिव्या मया हिते
दत्ता यशो विप्रथये त्कथं भूय स्तवेति च ३१
इसकारणसे हे भीष्म मेने तोको दिव्यज्ञानवाली मतीदीनी है तेरे यशको लोकविख्यातकरणेवास्ते सर्वधर्मोविषे नि पुणता विख्यातकीनीहै ३१
याव द्धि प्रथते लोके पुरुषस्य यशो भुवि ।
तावत्तस्या त्वयाकीर्ति र्भवतीति विनिश्चिता ३२
हे भीष्म जब लग उत्तम पुरुषका यशलोके प्रथितहोताहै तब लग उसकी कीर्ति लोकविषे अक्षयबनी रहतीहै ३२
राजानो हतशिष्टा स्त्वां राजन्नभित आसते
धर्मानन्त्र पृच्छंत स्तेभ्यः प्रब्रूहि भारत ३३

हे राजन् जैसे हतशेष यह राजा लोक है तुह्मारेको सेवते है अपनी धर्ममर्यादाको चाहते है आप इन्होंको नियोगकरो इन्होंको नियोगकरो इन्होंको कल्याणमार्गका उपदेशकरो २२

भवान्हि वयसा वृद्धः श्रुताचार समन्वितः
कुशलो राजधर्माणां सर्वेषा मपराश्च ये २४

आपदेहकी अवस्थाकर्के वृद्धहो तपकर्केभी वृद्धहो और राजधर्मोके वेत्ताहो और धर्मभी सभ तुमको विदित है २४

जन्म प्रभृतिते कश्चि द्वृजिनं न ददर्शह ॥
ज्ञातारं सर्वधर्माणां त्वां विदुः सर्वपार्थिवाः २५

जन्मसे लेकर तुह्मारे विषे दोष कलंक कोईनही देषताभया सभही पृथिवीके राजालोक सर्वधर्मोके ज्ञाताजानतेहै २५

तेभ्यः पितेव पुत्रेभ्यो राजन् ब्रूहि परं नयं
ऋषयश्चैव देवाश्च त्वया नित्य मुपासिताः २६

ताते हे भीष्मजी जैसे पिता पुत्रोको उपदेश करताहै तैसे तुमभी परसंतापकी निवृत्तिवासे सभको धर्ममार्गकहो आप परंतप नामसे प्रसिद्धहो तुमने ऋषि और देवता सभ ही नित्यउपसान किये है २६

तस्मा द्वक्तव्य मेवेदं त्वयावश्य मशेषतः
धर्मं शुश्रूष माणेभ्यः पृष्टेन च सताम्बुनः २७

ताते तुमने यह धर्मतत्व अशेषतासे अवश्यवक्तव्यहै यह सभही तुमसे धर्मश्रवणकी वांछावालेहै और तुमको पृछा करतेहै इन्होंको आपधर्म कहने योग्यहो २७

वक्तव्यं विदुषा चेति धर्म माहु र्मनीषिणः
अप्रति ब्रुवतः कष्टो दोषो हि भविता प्रभो २८

धर्मवेत्ता पुरुषने सभको धर्ममार्ग वक्तव्यहै मनस्वी लोक यही श्रुतिधर्मकहतेहै जो धर्मवेत्ता नही कहेतो महाकष्ट है तुमकोभी नही कहने महादोषहोताहै २८

तस्मा त्पुत्रैश्च पौत्रैश्च धर्मा न्पृष्टा सनातनान्
विद्वा ञ्जिज्ञासमानै स्त्वं प्रब्रूहि भरतर्षभ २९

हे भरतर्षभ ताते तुमको तुह्मारे पुत्र पौत्रेने पूछे जो धर्म है यह तुह्मारेसे धर्मोके जिज्ञास मानहै इन्होंको सनातन धर्मोको प्रसन्न होकरकहो २९

श्री॰
शा॰प॰
टी॰
१८७

(187)

इतिश्री महाभारते शतसहस्र संहितायां शांतिपर्वणि रा
जधर्मे चतुः पंचाशत्तमोध्यायः ५४

वैशंपायनउवाच अथाब्रवीन्महातेजा वाक्यं कौरव
नंदनः हंतधर्मा न्प्रवक्ष्यामि दृढेवाङ्मनसी मम १
वैशंपायनउवाच हेजनमेजय कौरवनंदन भीष्म इसके
अनंतर कृष्णजीको यह वचन कहताभया भीष्मउवाच
हंत तुम सभही सुनो मै अबधर्मोको कहताहूं मेरे मन
ऊर वाणी दोनो दृढभयेहै १

तव प्रसादा द्गोविंद भूतात्मा ह्यस्मि शाश्वतः
युधिष्ठिरस्तु धर्मात्मा मां धर्मा नपृच्छतु २
हे गोविंद तेरे प्रसादसे मो अब पवित्रमन भयाहूं ऊर स्थि
रबुद्धि भयाहूं यह राजा युधिष्ठिर धर्मात्माहै सो मोको पृ
छाकरे २ ॥ ॥

एवं प्रीतो भविष्यामि सर्वा न्वक्ष्यामि चाखिलान्
यस्मि न्राजर्षभे जाते धर्मात्मनि महात्मनि ३
तो मोको राजा युधिष्ठिर पृछाकरे तो इसप्रकार प्रसन्नहोता
हूं सर्वप्रकारके धर्मोको कहताहूं जोनसा यह राजाहै सो आ
पीधर्मात्माहै महात्माहै इसके जन्महो नेमो ३

अहृष्य न्नृषयः सर्वे स मां पृच्छतु पांडवः
सर्वेषां दीप्त यशसां कुरूणां धर्मचारिणां ४
यादव ऊर पांडव सभहर्षको प्राप्तभयेहै सो पांडवराजा
मोको पृछाकरे जेते कौरव वंशीहै सो सभही धर्मचारी
भयेहै सभके ऊर यश ऊर गुण ऊर तेजके प्रकाश
इस राजाके समान नहीहै ४ ॥

यस्य नास्ति समः कश्चि त्स मां पृच्छतु पांडवः
संबंधीन तिथीन्भृत्यान् संश्रिताश्चैव यो भृशं ५
सो यह राजा धर्मात्मा मोको धर्मज्ञानकी वांछासे पृछा
करे जिसके समान ऊर उत्तम पुरुष नहीहै सो राजा यु
धिष्ठिर मोको धर्मपृछाकरे ५

यस्मिन्राजश्च तेजश्च समो पृच्छतपांडवः
धृति र्दमो ब्रह्मचर्यं क्षमा धर्मश्च नित्यदा ६
स मां नयति सत्कृत्य स मां पृच्छतु पांडवः ६

धृति और दम और ब्रह्मचर्य जिसको तथा धर्मभी नित्य वि
द्यमानहै और जिसविषे ओज और तेज सदा विद्यमानहै सो रा
जा मोको प्रहणकरै जो राजा अपने संबंधी जनोको और भृत्यजनो
आश्रितजनोको सभको अतिप्रिय जानकर समानदृष्टिसे स
न्मानकरताहै सो पांडवमोको ग्रहणकरै ६
सत्यं दानं तपः शौर्यं शांति दाक्षम संभ्रमः
यस्मि न्नेतानि सर्वाणि स मां पृच्छतु पांडवः ७
सत्य और दान और तैसे शूरवीरता शांति और कर्मकुशलता
और असंभ्रम जिसविषे यह सभही नित्यविद्यमानहै सो
पांडवराजा मोको ग्रहणकरै ७
सत्यनित्यः क्षमानित्यो ज्ञाननित्यो तिथि प्रियः
यो ददाति सतां नित्यं स मां पृच्छतु पांडवः ८
जो राजा सत्यनिष्ठावालाहै क्षमा नित्यहै ज्ञान नित्यहै अतिथि
प्रियहै जो सत्पात्रोको सदादान देताहै सो पांडवमोको ग्रहणकरै
इज्याध्ययन नित्यश्च धर्मे च निरतः सदा
शांतः श्रुत रहस्यश्च स मां पृच्छतु पांडवः ९
यो राजा यज्ञमो अध्ययनमो नित्यरतहै सदा कर्म धर्म निर
तहै शांतचित्तहै रहस्य धर्मके शास्त्र जिसको श्रुतहै सो पां
डव मो को ग्रहणकरै ९
यो न कामा न्न संरंभा न्नभया न्नार्थ कारणात्
कुर्या दधर्मं धर्मात्मा स मां पृच्छतु पांडवः १०
जो राजा कामसे नही धर्मको त्यागकरता न कार्यातिशय
व्याकुलतासे न भयसे न त्राससे न अर्थ कारणसे अधर्म
को करताहै ऐसा धर्मात्मा पांडवराजा मोको ग्रहणकरै १०
वासुदेवउवाच लज्जया परयो पेतो धर्मराजो युधि
ष्ठिरः अभिशाप भयाद्भीतो भवंतं नोप सर्पति ११
वासुदेवउवाच हेभीष्मजी जो राजा युधिष्ठिर जोहै सो धर्म
राजाहै परमलज्जा संयुक्तहै लोकनिंदासे भयभीत होकर त
म्हारे पास ग्रहणकरणेको नही प्राप्तहोता ११
लोकस्य कदनं कृत्वा लोकनाथो विशांपते
अभिशाप भयाद्भीतो भवंतं नोप सर्पति १२
हे विशांपते सो राजा युधिष्ठिर राज्यकारणसे लोकका

अतिक्षय करके लोकनाथ भयाहै सो लोक निंदासे भयभीत
होकर आपकी इछ्याकरणेकी समीपनही प्राप्तहोता १२

पूज्या मान्याश्च भक्ताश्च गुरून् संबंधि बांधवान्
अर्थो हानिशुभि र्भित्वा भवंति नोप सर्पति १३

जौनसा तुह्मारे जैसे पूज्य ओर मान्य ओर भक्त ऐसे अपने संबंधि
जैसे बांधवजोहै सो युद्धविषे बाणादि घातके अयोग्यहै तिन्ह
को बाणोंकर्के भेदकर्के लज्जाकर्के इछ्याकर्के तुह्मारे समी
पनही प्राप्तहोताहै १३

भीष्मउवाच ब्राह्मणानां यथाधर्मो दान मध्ययनं
तपः क्षत्रियाणां तथा कृष्ण समरे देह पातनम्

भीष्मउवाच हेकृष्णजी ब्राह्मणोंको जैसे दान अध्ययन तपजैसे
अपना कुलधर्मकहाहै तैसे क्षत्रीयोंको रणविषे देहपात क
रणा अपनाभी शत्रूकाभी एही स्वधर्महै १४

पितॄ न्पितामहा न्भ्रातॄन गुरून्संबंधि बांधवान्
मिथ्या प्रवृत्ता न्यः संख्ये निहन्या द्धर्म एवसः १५

जो क्षत्रीराजा होकर धर्ममर्यादा त्यागकरणेहारे पितॄनको
पितामहोंको भ्रातरोंको गुरूनको अवर संबंधि बांधवोंको
मिथ्याचार प्रवृत्तभये को रणविषे मारे सो उसक्षत्रीको अपना
स्वधर्महीहै १५ ॥

समय त्यागिनो लुब्धान् गुरून् पि च केशव
निहंति समरे पापान् क्षत्रियोयः सधर्मवित् १६

हे कृष्णजी जोपुरुष धर्ममर्यादाको त्यागकरे सो गुरुभी होवे ऐसी
पापीलोभी जनोको रणविषे मारे सो क्षत्री धर्मवेत्ता होताहै १६

योलोभान्न समीक्षेत धर्मसेतुं सनातनं
निहंति समरेयस्तं क्षत्रियो वै सधर्मवित् १७

जो दुष्टपुरुष लोभसे सनातन धर्ममर्यादाको सेतुरूपधर्मोको
नहीमानता उसको जो रणमो मारे सो क्षत्री धर्मवेत्ता होताहै

लोहितोदां केशतृणां गतशैलां ध्वजद्रुमाम्
महीकरोतियुद्धेषु क्षत्रियोयः सधर्मवित् १८

जोक्षत्री रक्तप्रवाहको जलनदीको केशतृण संयुक्त ओर अश्व
गज शरीरोके पर्वतवाली ओर ध्वजारूप वृक्षोंवाले युद्धवि

से रणभूमिको करताहे सो क्षत्री धर्मवेत्ता कहाहे १८

आहूतेन रणे नित्यं योद्धव्यं क्षत्रबंधुना
धर्म्यं स्वर्ग्यं च लोक्यं च युद्धं हि मनुरब्रवीत् १९

क्षत्रिबंधुने रणविषे बुलायेसे जाइकर धर्मयुद्धकर्तव्यहे क्षत्री
को धर्म कर्म स्वर्गलोककी प्राप्तिवास्ते धर्मयुद्धही मनुप्रजा
पतिने कहाहे १९

वैशंपायनउवाच एवमुक्तस्तु भीष्मेन धर्मपुत्रो
युधिष्ठिरः विनीतवदुपागम्य तस्थौ संदर्शनेग्रतः २०

वैशंपायनउवाच हेजनमेजय जब भीष्मने ऐसावचनकहा
तब धर्मपुत्र युधिष्ठिर जोहे सो महादीन जैसा नम्रहोकर
भीष्मजीके पास जाइकर दर्शन गोचरता विषे स्थितहोताभ
या २०

अथास्य पादौ जग्राह भीष्मश्चाभिननंदते
मूर्ध्नि चैनमुपाघ्राय निषीदेत्यब्रवीत्तदा २१

उसकालविषे राजा भीष्मजीके चरणोंको हाथोंकर्के ग्रह
ण करतीभया भीष्मजी आशीर्वाद कहकर प्रसन्नकरता
भया शिर विषे सूंघकर हे राजन् अब तुम बैठो
ऐसे कहताभया २१

तमुवाचाथ गांगेयो वृषभः सर्वधन्विनां
मां पृच्छ तात विस्रब्धं मा भैस्त्वं कुरुसत्तम
इति शांतौ राजधर्मे पंचपंचाशः ५५

वहांउ भीष्मजी राजाको कहतेभये हे तात मोको तूं पूछो
कर कैसेहे गंगापुत्र भीष्म संपूर्ण धनुषधारी योधागण
विषे श्रेष्टहे सो ऐसे कहते भये हे तात मोको तूं पूछो
कर भीति मतकरे २२ इतिश्री महाभारते शांति
पर्वणि राजधर्मेषु पंचपंचाशत्तमोध्यायः ॥ ५५

वैशंपायनः प्रणिपत्य हृषीकेशमभिवाद्य पि
तामहं अनुमान्य गुरून्सर्वान्पर्यपृच्छद्युधिष्ठिरः १

वैशंपायनउवाच हे जनमेजय राजा युधिष्ठिर राजा हृषी
केशभगवानको नमस्कारकर्के पितामह भीष्मजीको
नमस्कारकर्के और संपूर्ण गुरुलोकोंको नमस्कार मान
कर्के अपने भीष्म पितामहजीको पूछाकरताभया १

युधिष्ठिरउ॰ राज्ञां वै परमो धर्म इति वेदविदो विदुः
महांत मेतं भारं च मन्ये तद्ब्रूहि पार्थिव २ ॥
युधिष्ठिरउवाच हे पार्थिव आप राजधर्मके वेत्ताहो राज
लोकोंको प्रजापालन रूप परम धर्महै इस प्रकार वेदवे
त्ताकहतेहै यह महाभारीहै मे ऐसे मानताहूं आप
मोको प्रथमराजधर्मही कहो २

राजधर्मान्विशेषेण कथयस्व पितामह
सर्वस्य जीवलोकस्य राजधर्मः परायणं ३
आपमोको विशेषकर्के राजधर्मका स्वरूपकहो हे पिताम
हजी सर्वप्रकारके इस जीवलोकका आश्रय राजधर्मही
कहाहै ३ ॥

त्रिवर्गो हि समासक्तो राजधर्मेषु कौरव
मोक्षधर्मश्च विस्पष्टः सकलोत्र समाहितः ४
धर्म अर्थ कामरूपी त्रिवर्ग राजधर्म विषेही मिश्रितहै हे कौ
रव श्रेष्ट मोक्षधर्मभी संपूर्ण राजधर्म विषेही स्पष्टवनाहै ४

यथा हि रश्मयो श्वस्य द्विरदस्यां कुशोयथा
नरेंद्र धर्मो लोकस्य तथा प्रग्रहणं स्मृतम् ५
जैसे तुरंग गोवशाकरणेको अंकुशावनाहै तैसे रश्मीवाग
समर्थहै और जैसे हस्तीको वशाकरणेको अंकुशावनाहै
तैसे सर्वलोकके वशाकरणेको राजधर्म अंकुशावनाहै

तत्र चेत्संप्रमुह्येत धर्मे राजर्षि सेविते
लोकस्य संस्था नभवे त्सर्वव्याकुलीभवेत् ६
ऐसा राजधर्म पुरातन सकल राजऋषीयोने सेवाहै उस
विषे मोको मोह होवेगा तो लोकमर्यादानहीं वनेगे
उसकर्के संपूर्ण लोक आकुलव्याकुल होवेगा ६

उदय न्हि यथा सूर्यो नाशयत्य शुभं तमः
राजधर्मा स्तथा लोका संक्षिपेत्य शुभांगतिं ७
जैसे सूर्य उदय होताहो सकल लोकविषे अशुभकारी
अंधकारको निवृत्तकरताहै तैसे सर्वधर्म राजलोकको प्रका
शकरके अशुभगतीको संक्षिप्तकरताहै ७

तदग्रे राजधर्मा न्हि मदर्थं त्वं पितामह

प्रब्रूहि भरतश्रेष्ठ त्वं हि धर्मभृतांवरः ८
हे पितामह तातें तुम मेरे कल्याणवासते राजधर्मोंकोहि
कहो हेभरतश्रेष्ठ तुम सर्वधर्मवेत्ता जनोंके धर्मधारण कर
णेहारे विषे श्रेष्ठहो ८
आगमस्तु परस्त्वत्तः सर्वेषां नः परंतप
भवंतंहि तथा बुद्धो वासुदेवो भिमन्यते ९
हे परंतप तुमसे परे हमको और शास्त्रका आगम प्रमाण
नहीं है वासुदेवजी तुमको बुद्धिज्ञानमों अधिकमानते
हे ९ भीष्मउवाच नमो धर्माय महते नमः कृष्णाय
वेधसे ब्राह्मणेभ्यो नमस्कृत्य धर्मान्वक्ष्यामि शाश्व
तान् १० भीष्मउवाच महाप्रभाव संयुक्त धर्म कर्मरूपी भ
गवानको नमस्कारहै और कृष्णभगवानजीको नमस्कारहै
कैसेहैं कृष्णजी ज्ञान विचारवाली बुद्धिके दाताहैं मैं सर्ववि
द्या संपन्न ब्राह्मणोंको नमस्कारकर्के वेदमार्गकी परंपरा
से प्रवृत्त होते जातेहैं १०
शृणु कार्त्स्न्येन मत्तस्त्वं राजधर्मान्युधिष्ठिर
निरुच्यमानान्नियतो यच्चान्यदपि वांछसि ११
हे युधिष्ठिर तूं राजधर्मको संपूर्णतासे श्रवणकर कैसेहैं
राजधर्मयुक्ति पूर्वककहे जातेहैं जो औरभी वांछाश्रवण
कीकरताहै सो भी मो सेसुनो ११
आदावेव कुरुश्रेष्ठ राज्ञा रंजन काम्यया
देवतानां द्विजानां च वर्तितव्यं यथाविधि १२
हे कुरुश्रेष्ठ प्रजारंजन कामनाकर्के आदविषे ब्राह्मणोंके
प्रति देवतागणोंके प्रति ब्राह्मणोंको यथाविधि सत्कारकर्तव्य
है १२ देवतान्यर्चयित्वा हि ब्राह्मणांश्च कुरूद्वह
आनृण्यं याति धर्मस्य लोकेन च सम्मर्च्यते १३
जो राजा देवता गणोंको ब्राह्मण जनोंको यथाविधि पूजा
कर लेताहै सो धर्मसे अनृणताको प्राप्तहोताहै और
लोककर्के पूजित होताहै १३
उत्थानेन सदापुत्र प्रयतेथा युधिष्ठिर

श्री॰
रा॰ य॰
टी॰
१५॰

नह्युत्थान मृते दैवे राज्ञा मर्थं प्रसादयेत् १४
हे पुत्र राजाने सदा चढाई करणेमो भवितव्यहे चढा
ई विना दैव जो भावी राजाको अर्थसिद्धि नहीकरदेता १४

साधारणं द्वयं ह्येत दैव मुत्थान मेव च
पौरुषं हि परं मन्ये दैवं निश्चित्य मुच्यते १५
हे राजन् पुरुषार्थ और प्रारब्धकर्म दोनों समानहे इन्हदो
नोविषे हम पुरुषार्थको अधिक मानतेहे पुरुषार्थकर्के
दैवकर्मका निश्चयहोताहे १५

विपन्ने च समारंभे संतापो मास्म वैकृथाः
घटश्चैव सदात्मानं राज्ञा मेष परो नयः १६
जो पुरुषार्थकर्के कार्यका प्रारंभकिया विगडजावे तो पश्चा
त्तापमतकरो पुन पुरुषार्थ प्रयत्नकरो राजा लोकोका य
ही नीति मार्गहे १६ ॥

नहि सत्या दृते किंचि द्राज्ञां वै सिद्धिकारकं
सत्यं हि राजा निरतः प्रेत्य चेह च निंदति १७
राजा लोकोका अपने सत्यधर्म पालनेके पुरुषार्थवि
ना और कार्यसिद्धीकरणा नहीहे अपने सत्यधर्मके पु
रुषार्थमो जो राजा दृढकरताहे सो परलोकमो इहाभी
सदा आनंदको भोगताहे १७

ऋषीणा मपि राजेंद्र सत्य मेव परं धनम्
तथा राज्ञा परं सत्या न्नान्य द्विश्वासकारणं १८
हे राजेंद्र ऋषीलोकोकोभी अपना सत्यधर्म पालना परम
धनहे तेसे राजा लोकोकोभी अपने सत्यपालन विना औ
र कार्यसिद्धिका विश्वास कारण नहीहे १८

गुणवान् शीलवान्दांतो मृदु र्धर्म्यो जितेंद्रियः
सदर्शः स्थूललक्ष्यश्च न भ्रश्येत सदाश्रयः १९
जो राजा सरलता उदारता गंभीरतादि गुणवानहे अपने व
र्णोके आचारवालाहे और दांतहे दृढचित्तहे और दयाक
र्के मृदुहे दृढधर्म निष्ठावालाहे लोभादि रहित जितवि
त्तहे और प्रसन्न दर्शनवालाहे और महाभारी कार्यकीवी

१९०

ह्यावालाहे कार्यसिद्धिके अनुसार वक्रधन दाताहे ऐसा रा
जा राज्यसंपदासे भ्रष्टनही होता १९

आर्जवं सर्वकार्येषु श्रयेथाः कुरुनंदन
पुनर्नय विचारेण त्रयी संवत्सरेण च २०

हे राजन् सर्वकार्य्यो विषे आर्जवजो अकुटिलता इसको आश्रय
कर्तव्यहे परंतु अपनी नीति विचारसे कर्तव्यहे अपने छिद्रो
का प्रगटदेषणा और अपने मंत्रका गोपन करणा पराये मंत्र
भेदकरलेना और ऊहापोह विचारकर्के साधक बाधक युक्ति
साधन कर्तव्यहे ऐसे विचारकर्के अकुटलता कर्तव्यहे २०

मृदुर्हि राजा सततं लंघ्यो भवति सर्वशः
तीक्ष्णाश्चो द्विजते लोक स्तस्मा दुभय माचर २१

जो राजा केवल मृदु होवे तो आज्ञा भंगसे अनादरको प्राप्तहो
ताहे जो सदा उग्रदंडवाला होइ तो विश्वासविना सेवापात्र
नही होता ताते राजाने देशकाल कार्यकी सिद्धि असिद्धी फ
लविचार करके सौम्यता क्रूरता कर्तव्यहे २१

अदंड्या श्चैव ते पुत्र विप्राश्च वदतां वर ॥
भूत मेतत्परं लोके ब्राह्मणा नाम पांडव २२

हे राजन् तमदंडदोनो कार्योंकी अधिकारीहो अपना पुत्र धर्म
निष्ट ब्राह्मण यह राजाको अदंडहे इन्हको दंडका फल इहा
होताहे परलोकमेभी होताहे २२

मनुना चैव राजेंद्र गीतौ श्लोकौ महात्मना
धर्मेषु स्वेषु कौरव्य हृदि तौ कर्तु मर्हसि २३

हे राजन् दंडविधिविषे मनुप्रजापतिने दो श्लोक कहेहे इन्ह
को तूं अपने राजधर्मकेविचारविषे हृदयेविषे स्थिरकरणेयो
ग्यहे २३ अद्भ्योग्नि र्ब्रह्मतः क्षत्र मश्मनो लोह मुत्थितं
तेषां सर्वत्रगं तेजः स्वं स्वयोनिषु शाम्यति २४

जलोसे अग्निउत्पन्नहोवे और ब्राह्मणोसे क्षत्री उत्पन्न होवे पा
षाण लोहा उत्पन्न होताहे अग्नि और क्षत्री और लोहा इन्हका
तेजसर्वगतहे अपनी उत्पत्ति स्थानमे प्रहत होताहे तो
शांतहो जाताहे २४

अयो हंति यदाश्मान मग्निना वारि हन्यते
ब्रह्म च क्षत्रियो द्वेष्टि तदा सीदंति तेत्रयः २५

लोहा पाषाणको तोडताहे अग्निकर्कै जलशोषहोताहे ब्राह्म
णकी तर्जोजो द्वेषकर्ताहे तव इन्द्र तीनोकी शांतहष्टहोती
तव तीनोवणि शांतहोजातेहे २५

एवं कृत्वा महाराज नमस्या एवते द्विजः
भौमं ब्रह्म द्विजश्रेष्ठा धारयंति समर्चिताः २६

हे राजन् ऐसे विचारकर ब्रह्मधर्मवाले ब्राह्मण आपकी न
मस्कारयोग्यहे यह ब्राह्मणभूमिगत ब्रह्मदेवहे यह पूजा
कर्केही राज्यसंपदाको धारतेहे २६

एवं चैव नरव्याघ्र लोकत्रय विख्यातकाः
निगृह्णा एव सततं वाङ्भ्यांयेस्युः तादृशाः २७

हे नरव्याघ्र ब्राह्मणोको पूजा नहीकरेतो त्रिलोकीमो प्रभ
गतीका ख्यानकरतेहे इन्हको पात्रापात्र विचारकर्कै दान
करणेकर्कै अपने वशकर्तव्यहे २७

श्लोकौ चोशनसा गीतौ पुरातात महर्षिणा
तान्निबोध महाराज त्वमेकाग्र मनानृप २८

इस प्रस्तावविषे दो श्लोक शुक्रनीतिमो शुक्रनी भीकहेहें उ
नकोभी तुमसुनकर एकाग्रमनसे विचारकरो २८

नचस्य शास्त्र मायांत मपि वेदांतगं रणे
निगृह्णीया त्स्वधर्मेण धर्मापेक्षी नराधिपः २९

जो अपने सन्मुख शस्त्र उठायकर आवे सो वेदांत पारगामी
भी होवे उसको शस्त्रके उठानेसेही दंडकरे उसके शस्त्रकु
डाइदेवे स्वधर्मकर्कै उसको वशकरे प्राणांतकर्कै २९

विनश्यमानं धर्मं हि योभिरक्षेत्स्वधर्मवित्
नतेन धर्महा सस्या त्मन्युस्तं मन्युमृच्छति ३०

जहां विनाशहोवे तहां दंडकर्कै धर्मकी रक्षाकरे तहां दं
डरूप हिंसा करणेकर्कै उसका पापही उसको दंडकरा
ता दंडकर्ताको पापनही होता ३०

एवं चैव नरश्रेष्ठ रक्ष्या एव द्विजातयः ॥
स पराधानपि हिता न्विषयांते समुत्सृजेत् ३१

हे नरश्रेष्ठ ऐसे जानकर ब्राह्मण मात्रसे रक्षणीयहे अ
पराध सहित भी होवे तो अपने देशविषयके अंतविषत्या
गदेवे ३१

अभिशस्त मपि ह्येन क्षपायेत विशांपते
ब्रह्मघ्ने गुरुतल्पेच भ्रूणहत्ये तथैव च ३२
इन्होका अपराधभी होवेतो अपने देशविषयके जो ब्र
ह्मघातीहे गुरुस्त्रीगामीहे गर्भघातीहे ३२
राज द्विष्टे च विप्रस्य विषयांते विसर्जनं
विधीयते न शारीरं भय मेषां कदाचन ३३
राजाका द्वेषकारीहे इन्हके अपने देशके अंतमो विसर
जेनकरे ब्राह्मणोको शरीरदंडकाभय कदापि नहीहे ३३
दयितास्च नरं तेस्युः भक्तिमंते द्विजेषु ये ॥
न कोशः परमो न्योस्ति राज्ञा पुरुष संचयात
राजा ऐसे पुरुषो विषे दयाकरे जो ब्राह्मण धर्मकी पा
लना करणे हारेहे राजाको पुरुष संग्रहसे परे और
खजाना अधिकनहीहे ३३
दुर्गेषु च महाराज षट्सु ये शास्त्रनिश्चिताः
सर्वदुर्गेषु मन्यंते नरदुर्गं सुदुस्तरं ३४
षट् प्रकारके राजाको कर्तव्य निर्जल देशका दुर्ग जल
प्रायदेशदुर्ग पृथ्वीदुर्ग वनदुर्ग पर्वतदुर्ग नरदुर्ग इस
प्रकारके षट्दुर्गोविषे नरदुर्ग दुर्जयहे ३४
तस्मा नित्यं दयाकार्या चातुर्वर्ण्ये विपश्चिता
धर्मात्मा सत्यवा क्चैव राजा रंजयति प्रजाः ३५
ताते राजाने चातुर्वर्ण्ये धर्म मर्यादामो दयाकर्तव्या दंडक
के धर्मरक्षा कर्तव्यहे जो राजा धर्मात्माहे सत्यवचन करा
णेहाराहे सो राजा प्रजाको रंजनकरताहे ३५
नचक्षांतेन ते नित्यं भाव्यं पुत्र समंततः
अधमो हि नरो राजा क्षमावा निव कुंजरः ३६
हे पुत्र तेने सदाही क्षमायुक्त नही होना यो राजा अधर्मवि
षे दंडनही सो राजा अधर्मरूप होताहे धर्मविरोधी होना
हे क्षमावाली हाथी जैसे परवश होताहे ३६
क्षममाणं नृपं नित्यं नीचः परिभवे जनः
हस्तिहंता राजस्येव शिरएवा वरुक्षति ३७

श्री.
रा. टी.
१५२

192

क्षमाकरणे हारे राजाको नीच जनभी अनादर करताहे
जैसे क्षमावाले हाथीका महापर्वत शिरविषे आरूढहो
ताहे ३७ ॥

तस्मान्नैव मृदुर्नित्यं तीक्ष्णो नैव भवेन्नृपः
वसंतार्क इव श्रीमान् न शीतो नच घर्मदः ३८

ताते हेराजन् सदा क्षमाशील मतहोय सदा अतितीक्ष्ण
मतहोय वसंतकालके सूर्य समान नशीत नउष्णतेज
ऐसा राजा दो स्वभाव समानहोय ३८

प्रत्यक्षेणानुमानेन तथौपम्यागमैरपि
परीक्ष्यास्ते महाराज स्वे परे चैव नित्यशः ३९

हे राजन् राजाने मनुष्योंके परीक्षा प्रत्यक्ष उपकार अप
कार द्वाराकर्तव्यहे और नेत्रमुखकी आकृतिद्वारा अनुमा
न कर्तव्यहे और कार्यांतरकी सिद्धि असिद्धी दृष्टांत उप
मानकरकै कर्तव्यहे और सामुद्रक शास्त्रोक्तलक्षणद्वारा
भी शुभाशुभपरीक्षा कर्तव्यहे ३९

व्यसनानि च सर्वाणि त्यजेथा भूरिदक्षिण
नचैव न प्रयुंजीत संगं तु परिवर्जयेत् ४०

हेभूरिदक्षिणाकरणेहारे राजन् व्यसनतो तेने सदात्या-
गकरणे मृगया और द्यूत दिवानिद्रा परनिंदा श्रवण स्त्री-
जित और मदपान व्यर्थश्रवण वृथा यात्रागीतश्रवण नृ-
त्यदर्शन यहकामके दशव्यसनहे परदोषारोप अविचा
रहिंसा प्राणिद्रोह ईर्षा असूया वाक पारुष्य दंडपारु
ष्य सर्वत्र दूषण दृष्टि यहक्रोधके व्यसन आठहे इस प्रका
र सभही अष्टादश व्यसनहे इन्होविषे मृगया मद्य द्यू
त उग्रदंड उग्रवाक्य और वाक दूषण यहसभ अवश्य
त्याज्यहे उन्हका सर्वप्रकार परिहार किंतु अतिप्रसंगता
करे ४० ॥

लोकस्य व्यसनी नित्यं परिभूतो भवत्युत
उद्वेजयति लोकं च योऽति द्वेषी महीपतिः ४१

हे राजन् लोभका व्यसनी राजा अनादरको प्राप्तहोताहे अ
तिलोभवाला प्रजाद्रोही होताहे ४१ ॥

भवितव्यं सदा राज्ञा गर्भिणी सह धर्मिणा
कारणं च महाराज शृणु येनेद मिष्यते ४२
हे महाराज राजाने गर्भिणी स्त्रीके समान आचारकर्तव्यहै
इसका कारण सुनो जिसकर्के मैने ऐसा तुमको कहाहै ४२
यथा हि गर्भिणी हित्वा स्वप्रियं मनसो नुगम्
गर्भस्य हित मादत्ते तथा राज्ञाप्य संशयम् ४३
जैसे गर्भिणी स्त्री अपने मनके अनुकूलहित आहारको त्या
गकर गर्भक्षेमको चाहतीहै तैसे राजानेभी अपना हितत्या
गकर्के लोकहितकर्तव्यहै ४३
वर्तितव्यं कुरुश्रेष्ठ सदा धर्मानु वर्तिना
स्व प्रियं तु परित्यज्य यद्यल्लोकहितं भवेत् ४४
सदाही हे कुरुश्रेष्ठ धर्म मर्यादा प्रजापालन सदाकर्तव्यहै ई
सवास्ते अपने प्रिय सुखको त्यागकर्के जो लोकहित होइ
सो कर्तव्यहै ४४
न संत्याज्यं च ते धैर्यं कदाचि दपि पांडव
धीरस्य स्पष्ट दंडस्य नभयं विद्यते क्वचित् ४५
हे पांडव तैने धैर्य्य कदापि नही त्यागना जो राजा धैर्य्यकर्के
स्पष्ट दंडकरे उसको भय कहीभी विद्यमाननहीहै ४५
परिहासेस्च भृत्यै स्ते नात्यर्थं वदतांवर
कर्तव्यो राज शार्दूल दोष मत्र हिमे शृणु ४६
हे वदतांवर भृत्योंके साथ हास्य नबोलनाकरे हे राजशा
र्दूल इसमो जो दोषहै उसको श्रवणकरो ४६
अव मन्यंति भर्तारं संहर्षा दुपजीविनः
स्वे स्थाने नच तिष्ठंति लंघयंति च तद्वतः ४७
अति परिचयसे उपजीवी लोक अपने स्वामीको अवमानक
रतेहै अपने अपने अधिकार स्थानमो नही स्थित होने राज
तद्वको उल्लंघन करतेहै ४७
प्रेष्यमाणा विकल्पंते गुह्यं चा प्यनु युंजते
अयाच्यं चैव याचंते भोज्या न्याहारयंतिच
कार्यकी आज्ञाविषे संशयकरदेतेहै राजाके गोप्यमंत्रको प्र

कष्ट करदेतेहे जो राजाको अदेय उसकोभी याचन राजा
के भोजन योग्य खान पान पदार्थको आप खान पा
न करतेहे ४८ ॥

क्रुध्यंति परिदीप्यंते भूमिपायाधि तिष्ठति
उत्कोचैर्वंचना भिश्च कार्याण्यन्तु विहंति च ४९

राजाके सन्मुखक्रोधकर्के उत्तरदेतेहे राजासेअधिक
अपना तेजकरतेहे राजासे अधिक अपना ऐश्वर्यकरले
तेहे लोकोसे इर्ष्याकरके वंचनाकरके राजकार्योके बिगाड
देतेहे ४९ ॥

जर्जरं चास्य विषयं कुर्वंति प्रतिरूपकैः
स्त्रीरक्षिभिश्च सज्जंते तुल्यवेषा भवंति च ५०

और राजाके देशको कृत्रिम शासनाकर्के निर्वितकरदेतेहे
राजाके अंतपुर रक्षाके लोकोके साथ मिलकर राजाके
समान होकर अंतःपुर प्रवेशकरा चाहतेहे ५०

वातं निष्ठीवनं चैव कुर्वते चास्य सन्निधौ
निर्लज्जा राजशार्दूल व्याहरंति च तद्वचः ५१

हे राजशार्दूल राजाके समीप जभानी देहकी अकडानी
करतेहे और खासीका थूकना छिंकादिशब्द उत्कट कर
तेहे ऐसे निर्लज्ज होजातेहे राजाका गोप्य वचनभी
लोकविषे प्रकटकरतेहे ५१

हयं वा दंतिनं वापि रथं वा न्टप संमतं ॥
अभिरोहंत्य नादृत्य हर्षिले पार्थिवस्पर्द्धी ५२

राजाकी सवारीका घोडा अथवा हाथी और रथ राजाकाजो
अतिप्रिय उसको अनादरकर्के आप चढजातेहे जो रा
जा भृत्योसाथ हर्षके परिहास करताहे भृत्य उसको नही
मानते ५२ ॥

इदं ते दुष्करं राजन्निदं ते दुश्चेष्टितम्
इत्येवं सुहृदो वाचं वदंते परिषद्गताः ५३

हे राजन् यहकार्य तुमको औखाहे कदापिनहीबनता य
हतेरी दुष्टचेष्टाहे इसप्रकार सुहृद मालक बनकर सभा
मों सहुकहतेहे ५३

क्रुद्धे चास्मिन्नुह्यंत्येव नच हृष्यंति पूजिताः
संघर्षशीलाश्च तदा भवंत्यन्योन्यकारणात् ५४
राजा क्रोधकरे तो ग्रन्योन्यहरसदेतेहे जो राजाको छलवकसकरे
तो प्रसन्न नही होते ग्रन्योन्यवैर विरोध कारणसे राजाकेसा
थ झगडतेहे ५४ ॥
विस्रंसयति मंत्रं च विवृण्वंति च दुष्कृतम्
लीलया चैव कुर्वंति सावज्ञास्तस्य शासनम् ५५
राजाके मंत्रका विश्वास घात करतेहे राजाके छिद्र जो होय
उसको प्रकटकरतेहे और राजाकी ग्रनादरकर्के खेलजानतेहें
ग्रलंकारे च भोज्ये च तथा स्नानानुलेपने
क्रियमाणे नरव्याघ्र स्वस्थास्तस्योपशृण्वतः ५६
राजाका भूषण भोजनवस्त्र स्नान पदार्थ ग्रनुलेपनादिप्रकार
हरलेजावे तो राजाके वचन सुनकर्के उदासीनतासे स्व
स्थरहतेहे ५६
निंदंते स्वानधीकारान्संत्यजंत्येव भारत
न वृत्त्या परितुष्यंति राजदेयं हरंति च ५७
राजाने ग्रपने अधिकारदियेसे उन्हको निंदाकरतेहे त्यागदे
तेहे जवाब उत्तर करदेतेहे राजाकी दीनी वृत्तिकर्के संतुष्ट
नही होती राजाको दातव्य पदार्थको ग्रापहरलेतेहे ५७
क्रीडितुं तेन चेच्छंति ससूत्रेणेव पक्षिणा
ग्रस्मत्प्रणेयो राजेति लोकांश्चैव वदंत्युत ५८
राजाके साथ खेलने चाहतेहे जैसे सूत्रकर्के बांधा पंछी ऐसे
राजाको ग्रधीन करलेतेहे यह राजा हमारे ग्रखतियारहे
हमराजासे कुछ दिवेगे ऐसे लोकोको उलट पलट करदेतेहे
एते चैवापरे चैव दोषाः प्रादुर्भवंत्युत
नृपतौ मार्दवोपेते हर्षुले च युधिष्ठिर ५९
इति श्री महाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मे षट्
पंचाशत्तमोध्यायः ५६ ॥
हे राजन् मृदुहोवे परिहास शीलहोवे तो एते यह दोष और
ग्रवरभी ग्रनेकदोष राजाके शिथिलतामो होतेहे ताते भृत्यो
के साथ राजा हर्षनाकरे ५९ इति श्री शांतौ राजधर्मे षट्पं
चाशत्तमोध्यायः ५६

श्री
रा.प.
टी.
१९४

194

भीष्मउवाच नित्योद्युतेन वैराज्ञा भवितव्यं युधिष्ठिर
प्रशास्यते हि राजाहि नारीवो द्यमवर्जिता १

भीष्मउवाच हे युधिष्ठिर पूर्व तमको राजधर्मको सूत्रभूतकहाहै राजा सदा पुरुषार्थ शीलहोवे इसीकरके प्रशस्त राजधर्मी होताहै राजा और इन्हकी नारी उद्यम रहितहोवे तो लोकमों प्रतिष्ठाकों नहीं पावते १

भगवानुशना श्चाह श्लोक मत्र विशांपते
तदिहैकमना राजन्वदतः मन्निबोधमे २

इस अर्थमो भगवान् शुक्राचार्य एक श्लोकोको कहतेभये उसको मे कहताऊं आप मोसे एकाग्र मन होकर श्रवणकरो २

द्वाविमौ ग्रसते भूमिः सर्पो बिलशयानिव
राजानं चा विरोद्धारं ब्राह्मणं चा प्रवासिनं ३

यह भूमि दो पुरुषोको ग्रसतरूप जानकर मूषकोकों सर्पकी ग्रसलेतेहै ऐसे दो पुरुष कौनहै जोनसा राजा पृथिवीके जयवास्ते शत्रुजनोसे विरोधनहीकरे और ब्राह्मण वेदाध्ययनवास्ते और यती सर्वत्यागवासते वनको नहीजावे ३

तदेतन्नरशार्दूल हृदि त्वं कर्तुमर्हसि
संधेया नभि संधत्स्व विरोध्यांश्च विरोधय ४

ताते हे नरशार्दूल इसबातको तूं हृदयविषे दृढकरणे योग्य है जो संधिकरणे योग्य राजालोकहै उन्हके साथ संधिकर जो राजालोक विरोध योग्यहै उन्हके साथ विरोधकर ४

सप्तांगस्य च राज्यस्य विपरीतं यआचरेत्
गुरुर्वा यदि वा मित्रं प्रतिहंतव्य एवसः ५

राज्यके सात अंगहै एक जो स्वामीभाव अमात्यभाव सुहृदभाव कोशराष्ट्र दुर्गबल इन्हो अंगोकरके संपन्न सप्तांगराज्य कहाहै उसका विरोधी जो होवे सो गुरुहोवे वा मित्र होवे वा और जो कोई कैसा प्रियसंबंधी होय सोअवश्य हंतव्यहै ५

मरुत्तेनेह राज्ञावै गीतः श्लोकः पुरातनः
राजाधिकारे राजेंद्र बृहस्पति मते पुरा ६

हे राजेंद्र इसी प्रकारका श्लोक पुरातनराजा मरुत्तनेभी कहाहै राजाधिकारी सो राजा बृहस्पति मतिमों प्रवृत्तभयाहै ६ ॥

गुरो रप्यव लिप्तस्य कार्याकार्यमजानतः
उत्पथः प्रतिपन्नस्य दंडो भवति शाश्वतः ७

गुरुभी होय अपने धर्मसे प्रमत्तहोय शुभअशुभकार्य अका र्यको नजाने उलटे मार्गमे प्रवृत्तहोय उसकोभी दंडकरणानि श्चितहे गुरोको पर्वतादि दुर्गमदेशको प्राप्तकरणा और ऐसा होय उसका वधकरणाही निश्चितहे ७

बाहोः पुत्रेण राज्ञा च सगरेण च धीमता
असमंजा सुतो ज्येष्ठस्त्यक्तः पौरहितैषिणा ८

हे राजन् बाहुराजाकापुत्र राजा सगरभया उसने अपनाज्येष्ठ पुत्र असमंजा पुरवासी लोकोंको हितवांछाकर्के त्यागदियाहे ८

असमंजा सरय्वांसो पौराणां बालका न्नृप
न्यमज्जय दतः पित्रा निर्भत्स्य स विवासितः ९

सो असमंजा सगरका ज्येष्ठपुत्र नगरवासी लोकोंके पुत्रोंको लेलेकर सरयूनदीमों डुबाइ देता भया ताते राजाने अवमा न अनादर भर्त्सनकर्के पुरसे निकास दियाहे ९

ऋषिणो द्दालकेना पि श्वेतकेतुर्महातपाः
मिथ्याविप्रा नुपचरन् संत्यक्तो दयितः सुतः १०

उद्दालक ऋषीणेभी श्वेतकेतु अपनापुत्र महातपस्वी सो बालणोको मिथ्यावचनके आचारसे अतिप्रिय पुत्रभी त्या ग दियाहे १० ॥

लोकरंजन मेवात्र राज्ञां धर्मः सनातनः
सत्यस्य रक्षणं चैव व्यवहारस्य चार्जनं ११

लोक रंजनाही राजाको राजधर्म सनातन बनाहे और सत्य धर्मका रक्षणकरणा और व्यवहारकी मर्यादा उपार्जनकरणी ११

न हिंस्या त्परवित्तानि देयंकाले च दापयेत्
विक्रांतः सत्यवाक् क्षांतो नृपो न चलते पथः १२

राजा अपने करग्रहणके प्रतिबंधकर्के नाशनहीकरे और भृत्यजनोंको सेवाके अवश्यदेय मजूरीको देदेवें तैसेंहीवि ग्रे परिपकथान्योंको रोककर्के वर्षादिउपद्रवकर्के। सदाप राक्रम शीलहोय और सत्यवचन अपनाकरे और क्षमावान् होवे सो राजा शुभमार्गसे चलितनही होता १२

आत्मवांश्च जितक्रोधः शास्त्रार्थगत निश्चयः
धर्मे चार्थे च कामे च मोक्षे च सततं नरः १३

आत्मवान् जितचित्तहोवे जितक्रोधहोवे शास्त्रार्थमें कृतनि
श्चयहोवे पूर्वाह्नविषे धर्मचिंताकरे मध्याह्नविषे अर्थचिंताक
रे अपराह्नविषे कामचिंताकरे अपररात्रविषे योगचिंताक
र्के मोक्षपरायणहोवे १३ ॥

त्रय्यां संवृत मंत्रश्च राजा भवितु मर्हति
वृजिनं च नरेंद्राणां नान्य स्यारक्षणात्परं १४

त्रयी विद्याविषे गूढमंत्र राजाहोने योग्यहै राजालोकोंको
प्रजाके अरक्षणसे अधिक संकट नहीहै १४

चातुर्वर्ण्यस्य धर्माश्च रक्षितव्या महीक्षिता
धर्म संकर रक्षा च राज्ञां धर्मः सनातनः १५

और चारोवर्णोके धर्मराजाने अवश्यरक्षणीयहै धर्मसंकर
होवनेकी रक्षाही राजालोकोंका सनातन धर्महै १५

न विश्वसे च्च नृपति र्नैवा त्यर्थं च विश्वसेत्
षाड्गुण्य गुणदोषांश्च नित्यं बुद्ध्यावलोकयन् १६

राजा अतिविश्वास शीलनहोवे और अत्यंतविश्वास शीलभी
नहोवे और षड्गुण जोहै संधि विग्रह यात्रा आसनं द्वैधीभा
व सेनाबलके दो भाग करण दुर्गादि स्थानका आश्रय इ
स प्रकारके षाड्गुण्यके गुणदोषोंको अपनी बुद्धिकर्के
आपविचारकरे अब इन्हके विचारको स्थायीराजा बलवा
न होय तो यायी राजाको संधिकर्तव्यहै समान बलहोवे
दोनो तो विग्रह कर्तव्यहै जो युद्धादि करणेंमें दुर्बलहै उ
सको दुर्गादि स्थानको आक्रमण करणा इसी प्रकारयायी
बलवानहोय तो स्थायीको अपने दुर्गादिस्थानकी रक्षावास्ते
दृढ आसनकरणा जो स्थायी यायीको समान बलहोय तो
अर्द्ध बलकर्के दुर्गरक्षा कर्तव्यहै अर्धबलकर्के अन्नपान नि
रोधकरणा अपनेविषे दुर्बलता होय तो प्रबल मित्रांतरके
आश्रयकर्के युद्धकर्तव्यहै यह जो षड्गुणहै इन्हके प्रयोग
विषे जयपराजय करणेहारेहै गुणदोष जोहै कोश दंड सेना
बलादि अधिकन्यूनताको राजा अपनी बुद्धिकर्के अपनी नि
श्चयकरे १६ ॥

छिद्रं छिद्रदर्शी नृपति र्नित्य मेव प्रशस्यते
त्रिवर्गे विदितार्थस्य गुप्तचारो पधिस्मय: १
जो राजा शत्रूके छिद्रोंको देषलेताहै अपने छिद्रोंको गुप्तकरताहै शत्रूके सप्तांग राज्यमो अपने चारादि प्रवेशद्वारा दृढता शिथिलता देषलेवे और अपने सप्तांग राज्यविषेभी शत्रूके चारादि प्रवेशद्वारा जो छिद्र दर्शनहै उसको यत्नसे गोपनकरे और राजा त्रिवर्गमो धर्म अर्थ कामविषे तत्ववेत्ता होय और गुप्त चारोपधिहोवे गुप्तचार होवे प्रछन्न गुप्त जिसके चार आवते जातेहै और उपधिका होताहै चारादि द्वारके परके जो अमात्यमंत्री आदिक तिन्हको इत्यादि दानकर्के उन्हको भेदलेना इसप्रकार गुप्तचारोप निधिहोवे अब चारोके नियोग स्थाननीतिशास्त्रमो कहतेहै मंत्री और पुरोहित युवराज सेनापति और पंचम द्वारपाल और जोनसा शिष्टजन अंतःपुरवासीहै और कारागारका अधिकारी और द्रव्यसंग्रहकारी और कृत्य अकृत्योविषे द्रव्यप्रयोगकरणेहारा नवमहै और स्थान स्थानकाद्रष्टा और नगराध्यक्ष और कार्य निर्माणकर्ता और धर्माध्यक्ष और सभाध्यक्ष और दंडपालयह पंद्रमा षोडशमा दुर्गपालकहै और देशराष्ट्रकापालक और बनकूटवाल यह अष्टादशस्थान राज्यकेहै इन्होविषे सर्वत्र चारो और अपने देशमो विषे और पराये राज्यमोभी नियुक्तकरे पाषंडी वेशवालेकरे अन्योन्यविषे अज्ञातहोवे अपने राज्यविषे मंत्रीको युवराजको और पुरोहितको संपूर्ण अंगोके इष्टाकरे

१

कोशस्यो पार्जनरति र्यम वैश्रवणो पम:
वेत्ता च गुण दोषस्य स्थानवृद्धि क्षयात्मन: २
और राजा अपने कोशखजानाकी उपार्जना विषे रतिकरे और दंडकरणेमो प्रसादकरणेमो यमके समान कुवेरके समान होवे और स्थानवृद्धि क्षयस्वरूपके गुणदोषका वेत्ताहोवे और दशावर्ग चिंतकहोवे अमात्य राष्ट्र दुर्ग कोश दंड यह प्रकृतिपंचक अपना और प्रकृति पंचक पराया इसप्रकारके दशवर्गकी चिंतावालाहोवे अपना स्थानका स्थिति उसका कर्त्ता अपना अधिक होय तो वृद्धिकर्ता होताहै पराये का स्थितिकर्त्ता अधिक होय तो क्षयकर्ता होताहै २

अभृतानां भवेद्भर्ता भृतानां मन्ववेक्षकः ॥
नृपतिः सुमुखः स्मयात् स्मितपूर्वाभिभाषिता १९

हे राजन् जो हत्ति रहितहै सो अभृतहै उन्हको पोषण करके भरणकरै और जौनसे पोषणकरके भरणहै सो भृतहै तिन्हकी चिंतनाकरे राजा सभको सुंदरमुखदिखावे मंद मुसकाना पूर्वक वचन भाषी होवै १९

उपासिता च वृद्धानां जित तंद्रि रलोलुपः
सतां वृत्ति स्थितमतिः संतोषी चारुदर्शनः २०

न चाददीत वित्तानि सतां हस्तात् कदाचन
असज्जनेभ्यः समादद्यात् सज्जनेभ्यः प्रतिपादयेत् २१

जो संतजन शुद्धचित्तहै अपने धर्मकर्म निष्ठाकरके शांत चित्तहै उन्हके हस्तसे द्रव्यलेवै और जौनसे अधर्मवृत्तिवाले धर्मकर्म शांतिवृत्ति रहितसे उन्हसे द्रव्यग्रहणाकरलेवै नही लेवे तो द्रव्यके प्रमादकरके अधर्मको करतेहै ताते असंतजनोसे द्रव्यलेकर धर्मकर्मवास्ते संतजनोकेदेवै २१

स्वयं प्रहर्ता दाता च वश्यात्मारम्यसाधनः
काले दाता च भोक्ता च शुद्धाचार स्तथैव च २२

आपही दाता और वश्यवर्ती जिसका आत्मामन शुद्धीहै और रमणीक जिसके कार्य साधनहोवे उत्तमकाल और योग्य कालमो भोगभोक्ता होवै २२

शूरा भक्ताः संहार्यान् कुले जातान् रोगिणः
शिष्टान् शिष्टाभि संबंधान् मानिनो न वमानिनः

ऐसा राजा जोहै सो अपने राज्यमो उत्तम अधिकारीको अपने सहायकरके कैसे होवे शूरमा होवै लोभादिकरके अपने को नही त्यागे और शत्रुपने वशवर्ती न होवे और कुलपरंपरासे उत्तम कुलके होवै और रोगरहित होवे शिष्ट समाचारवाले होवे शिष्ट समाचारवाला जिन्हका परिवारभी होवे और हया किसीको अपराध विना अवमान नही करे २३ ॥

विद्या विदो लोकविदः परलोकान्ववेक्षकान्
धर्मे च निरतान्साधून चलानिव २४
और अपने कुलके धर्म कर्मकी विद्यावाले होवे और लोकम र्यादाके वेत्ताहोवे और पुण्य पापकर्के परलोकगतीके चिंतकहोवे और धर्मचिंतामो परायणहोवे और साधूहोवे और पर्वतोके समान धर्ममार्गको अचलहोवे २४
सहायान्सततं कुर्याद्राजा भूमि परिष्कृतः
नैश्च तत्सो भवे द्भोगैः छत्रमात्राज्ञया धिकः २५
ऐसे प्रधान लोकोको अपने राज्यकार्यके सहायकरे परंत संपदाकर्के संपन्नकरे आप उन्होके समानही खान पानादि भोक्ताहोवे केवल छत्रादि राज्यचिन्ह और आज्ञा इसीको अपनेविषे अधिक नहीमाने २५॥
प्रत्यक्षा च परोक्षाच्च हति स्थास्य भवे त्समा
एवं कुर्वन्नरेंद्रो पि न खेद मिह विंदति २६
प्रत्यक्ष वृत्ति परोक्षवृत्ति इनमो अधिकारी जनोविषे राजाकी आज्ञानुसारीहोवे आज्ञाभंगराजाको कोई नहीकरे ऐसेकरणेहारा राजाकदापि खेदकोनही प्राप्तहोता २६
सर्वाभिशंके न्पति यश्च सर्व हरो भवेत्
सक्षिप्र मनृज्ज लोभः स्वजने नैव वध्यते २७
जो राजा सभकी शंकाकरे विश्वास किसीका नहीकरे और सभसे सर्वस्वहरे सो राजा सत्यधर्म रहितहोताहै लोभकर्ताहोसो शीघ्रही अपने सेवकोकर्केही वधाजाताहै मारावीजाताहै २७ शुचिस्तु पृथिवी पालो लोक चित्त ग्रहेरतः
नापत त्यरिभि ग्रस्तः पतित श्चाव तिष्ठते २८
जो राजा शुद्धधर्मवालाहै लोकोके चित्तवशकरणेमो रतहै सो राजा शत्रुकर्के राज्यसे भ्रष्टनहीहोता जो कदाचित् शत्रुग्रस्तहै तोभी अपने राज्यसे भ्रष्टनहीहोता २८ राज्यभ्रष्टहोवे तोभी सत्तावीउठ्रवडा होताहै
अक्रोधनोह्यव्यसनी मृदुदंडो जितेंद्रियः
राजा भवति भूतानां विश्वास्यो हिमवानिव
जो राजा क्रोधरहितहै व्यसनरहितहै और मृदु दंडहै और जितचित्तहै ऐसा राजा सर्वभूतोका विश्वास पात्र हिमाचलप

वेत जैसा सभका सेवनीय होताहे २९

प्राज्ञस्त्यागगुणोपेतः परं रंध्रेषु तत्परः
सुदर्शः सर्व वर्णानां नयापनय वित्तथा ३०

जो राजा प्रजारंजनविषे प्राज्ञहे और त्यागगुणोंकर्के संयुक्त हे शत्रुगणोंका छिद्रदर्शनहे सुंदर आनंद करणेहारा दर्शन जिसकाहे और सर्ववर्णोंके धर्माधर्मके नीति अनीति के विभागकरजानताहे सो राजा उत्तमहे ३०

क्षिप्रकारी जितक्रोधः सुप्रसादो महामनः
अरोष प्रकृति र्युक्तः क्रियावान विकत्थनः ३१

प्राप्तकाल कार्यका शीघ्रकारीहे और जितक्रोधहे और सुंदर प्रसाद गुणसंयुक्तहे और अक्रोध अधिकारि जनसंयुक्तहे क्रियासिद्धि संयुक्तहे और अपने अधिक बुद्धिको उपकारक कैभी नहीकथन करता सो राजा उत्तमहे ३१

आरब्धान्येव कार्याणि सुपर्यव सितानि च
यस्यराज्ञः प्रदृश्यंते सराजा राजसत्तम ३२

जिसराजा कार्य आरंभ मात्रसेही सिद्धफलदृष्टहोतेहे सो राजा राजसत्तमहे इसराजाको सभ अधिक मानतेहे ३२

पुत्राइव पितुर्गेहे विषये यस्य मानवाः
निर्भया विचरिष्यंति सराजा राजसत्तम ३३

जैसे पुत्र अपने पिताके गृहमो निर्विक्षेपसुखी रहतीहे तैसे जिसके रक्षाकर्के संपूर्ण प्रजालोक निर्विक्षेप सुख संयुक्तहे सो राजा उत्तमहे ३३

स्वकर्म निरता यस्य जना विषय वासिनः
असंगातरता दांताः पाल्यमाना यथाविधिः ३४

जिसके देशनिवासी जन अपने पिताके गृहमो निर्विक्षेप सुखीरहतेहे धर्मकर्म विषे निरतहे अन्योन्य विरोध रहितहे और यथाविधि पाल्यमानहे सो राजा उत्तमहे ३४

वश्या नेया विधेयाश्च नच संघर्षशीलिनः
विषये दान रुचयो नरा यस्य स पार्थिवः ३५

जिसके देशनगरवासी जन धनको दानभागकर्के प्रगट दिखावतेहे नीति अनीति जानतेहे अपने देह सुखको नही

जानते राजा प्रणीत धर्मविषे रतहे सो राजा राजोत्तमहे ३५

जिस राजाकी विषयवासीजन राजाके वश्यहे और नीति मार्गके वेत्ताहे देह भोगकी इक्षानही वृथानही करते राजा की आज्ञासे केवल धर्मशीलहे और दानचर्याविषे जिनकी प्रीतिहे और पिताके गृह सब समान सुखसेवीहे सो राजा ही उत्तम गुणीहे ३६

न यस्य कूटं कपटं न माया नच मत्सरः
विषये भूमिपालस्य तस्य धर्मः सनातनः ३७

जिस राजाकी प्रजाविषे कूट कपट नहीहे ना मायाहे न स्पर्धा हे माया मत्सरनहीहे उसके देशमो सदा धर्म कर्म बनाहे ३७

यस्य चाराश्च मंत्राश्च नित्यं चैव कृता कृताः
न ज्ञायंतेहि रिपुभिः सराजा राज्यमर्हति ३८

जिस राजाके चार और मंत्र नित्यप्रति किये और ना किये शत्रुलोकको ज्ञाननही होते सो राजा राज्यकरणेको योग्यहोताहे ३८

यः सत्करोति भूतानि ज्ञेये पौरहिते नरः
सतां वर्त्मानुग स्वामी सराजा राज्यमर्हति ३९

जो राजा प्रजाको शस्त्राभ्यासकर्के शास्त्रज्ञानको और ज्ञानके ज्ञेय वस्तुकोभी सत्कार करताहे और जेते पुरवासी लोक तिन्होके सभके सुख दुःखको अपने समान जानताहे संतजनोके अनुसार मार्ग जिसके मनमोहे सो राजा राज्यकरणेको योग्यहोताहे ३९

श्लोक श्चायं पुरागीतो भार्गवेन महात्मना
आख्याने रामचरिते नृपति प्रतिभारत ४०

हे राजन् महात्मा भार्गव मुनीने यह राजधर्मका श्लोक कहाहे रामचरित्रके आख्यानमो राजाके प्रतिकहाहे हे भारत उसको तुमसुनो ४०

राजानं प्रथमं विंदे ततो भार्यां ततो धनं

राजन्य सति लोकस्य कुतो भार्या कुतो धनम् ५१

सब लोकोने प्रथम राजाकी रक्षा कर्तव्यहै पश्चात् अपनी स्त्री और कुटुंबके रक्षा कर्तव्यहै तदनंतर धनकी रक्षा कर्तव्यहै जो राजा जहां नहीं होवे तहां लोककी भार्या कुटुंब कहां रहताहै और धन कहां रहताहै ५१

तस्माद्राज्ये राज्यकामानां नान्यो धर्मः सनातनः

ऋते रक्षां तु विस्पष्टां रक्षा लोकस्य धारिणी ५२

ताते राज्याके राज्यमों राज्य सबकी कामना युक्त ऐसे को और सनातन स्थितीवाला धर्मभी रक्षाकी प्रसिद्धता विना बनता नहीं है रक्षा जो है सो लोक मर्यादाको धारण करतीहै ५२

प्राचेतसेन मनुना श्लोकौ चेमा उदाहृतौ

राजधर्मेषु राजेंद्र तौ विहैकमनाः शृणु ५३

हे राजेंद्र प्राचेतस दक्षमनुने राजधर्मविषे दो श्लोक कहे हैं उन्हको तुम एकाग्र मनकर्के श्रवणकरो ५३

षडेतान्पुरुषो जह्यात् भिन्नां नावमिवार्णवे

अप्रवक्तारमाचार्यमनधीयानमृत्विजम् ५४

जो पुरुष अपने कल्याणको वांछा करताहै षट्प्रकारके प्राणीयोंको त्यागकरे जैसे फूटी नावको समुद्रतरणेमो त्यागकरतेहै षट्प्राणी कौनहै जो आचार्य गुरुहोकर शास्त्र ज्ञानसे अपनेको हित अहित विवेक नहीं करे और ऋत्विक अपना पुरोहितादि धर्मकर्मका अधिकारीहै सो अपनी वेद वियाको न अध्ययनकरे ५४

अरक्षितारं राजानं भार्यां चाप्रियवादिनीम्

ग्रामकामं च गोपालं वनकामं च ना...नम् ५५

इति श्री राजधर्मे सप्तपंचाशत्तमोध्यायः ५७॥

और जो राजा सबकी रक्षा नहीं करे और जो भार्या अप्रिय वचनको कहतीहै और ग्रामकी मालकी चाहनेवाला गोपाल और धनकी इच्छावाला नापितादि अपना भृत्यजनहै इन्ह षट् प्रकारके ऐसी प्राणीयोंका विश्वास नकरे ५५

इति श्री महाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मे सप्तपंचाशत्तमोध्यायः॥ ५७ ॥

भीष्मउवाच एतत्ते राजधर्माणां नवनीतं युधिष्ठिर
बृहस्पति र्हि भगवा न्नान्यं धर्मं प्रशंसति १

भीष्मउवाच हे युधिष्ठिर यह राजधर्मोका भाषण जैसा सारकहाहै जोनसा यह रक्षा धर्महै सो न्यायसे नीतिसे रहित न होवे इसको बृहस्पति भगवान् कहताहै १

विशालाक्ष श्च भगवान् काव्य श्चैव महातपाः
सहस्राक्षो महेंद्र श्च तथा प्राचेतसो मनुः २

भगवान् विशालाक्ष श्रीशिवजीभी कहतेहै भगवान् शुक्राचार्यभी इसको कहतेहै सहस्र नेत्र इंद्रभी इसको सारकहतेहै प्राचेतस मनुभी इसको सार कहताहै २

भारद्वाज श्च भगवां स्तथा गौरशिरा मुनिः
राजशास्त्र प्रणेतारो ब्रह्मण्या ब्रह्मवादिनः ३

और भगवान भारद्वाज मुनिभी इसको सारकहतेहै और जे ने राजधर्मके वेत्ता ब्रह्मवादी मुनिहै सो राजरक्षाकोही नीती शास्त्रका सारकहतेहै ३

रक्षा मेव प्रशंसंति धर्मं धर्मभृतां वर ॥
राज्ञां राजीव ताम्राक्ष साधनं चात्रमे शृणु ४

हे धर्मभृतांवर राजालोकोको रक्षाधर्म सर्वधर्मोके सार उत्तम कहाहै अब इसके साधनोको तमसुनो ४

चारश्च प्रणिधि श्चैव काले दान ममत्सरात्
युक्त्या दानंनचा दान मयोगेन युधिष्ठिर ५

गुप्त गमागम करणेहारा चारहोताहै हलकारा जिसकोकहतेहै और प्रगट गमागम करणेहारा प्रणिधी होताहै जिसको दूत अथवा वकील कहतेहै और नलव और मजूरीका यथा विधि युक्तिसे दानकरणा दंडका और करका उपाय युक्तिविना ग्रहण नही करणा ५

सतां संग्रहणं शौर्यं दाक्ष्यं सत्यं प्रजाहितम्
प्रजार्जवे रार्जवै श्च शत्रुपक्षस्य भेदनं ६॥

हे युधिष्ठिर गुणी जनोका और संतजनोका संग्रह करणा और शूर वीरताकाभी संग्रह यत्नकरणा और व्यवहार देखणेका चातुर्यभी संग्रह करणा और सत्यधर्मकर्के प्रजाकिहि

199

भी करणी और प्रजाकाहित सावधानतासे करणा और कपट
के उपाय और सूधे उपायकर्के शत्रुपक्षका भेदकरणा ६

केतनानां च जीर्णाना मवेक्षा चैव सीदताम्
द्विविधस्य च दंडस्य प्रयोगः कालचोदितः ७

और नवीन निवासस्थानकरणेहे और जो पुरातनहे गृहादि नि
वासस्थानहे उन्हकेभी टूटे फूटेकी सावधानतासे रक्षाविधि
करणी और शरीरदंड और धनदंड इन्हका प्रयोग देशकाल वि
चारदेखकर करणा ७ ॥

साधूना मपरि त्यागः कुलीनानां च धारणम्
निचयश्च निचेयानां सेवा बुद्धिमता मपि ८

और साधु संतजन गुणीजन तिन्हका त्यागनही करणा और अप
ने उत्तमधर्म मर्यादावाले कुलीन जनोका पालन पोषणसे
रक्षण करणा और संग्रहकरणे योग्यहे, जो बुद्धिवान्हे
उन्हकी सेवा कर्तव्यहे ८ ॥

बलानां हर्षणं नित्यं प्रजाना मन्व वेक्षणम्
कार्येषु खेदः कोशस्य तथैव च विवर्धनम् ९

जो सेनाबलहे तिन्हको नित्य हर्षणकरणा और प्रजाके लो
कोंका विचारसे दर्शनकरणा और राज्यके कार्य व्यवहार क
रणेमे खेदकरणा अपने कोशखजानेकी वृद्धिकरणी ९

परपक्षे ष्वविश्वासः पौर संघात भेदनम्
अरिमध्यस्थ मित्राणां यथाव च्चा न्ववेक्षणं १०

और अपने तकडे आई करणी और अंतःकरणविषे धर्मी लोको
कोभी दृढविश्वास नहीकरणा उन्हके द्वारेभी शत्रुजनरूप ब
दलकर भेद लेतेहे जो अपना अरिजो मध्यस्थ उदासीन वृ
त्तिवाला और मित्रइन्हकोभी चिंतनकरणा १०

उपजाप श्च भृत्यानां मात्मनः पुरदर्शनम्
अविश्वासः स्वयं चैव परस्या श्वासनं तथा ११

और शत्रुजनकर्के अपने भृत्योका भेदविचारकरणा अपनेपु
रविषे विचारकर्के देखणा अपना विश्वासनही देना परके
विश्वासकरणा सभको आश्वासन दिलकी आशा चढाइ दे
णी ११ ॥

नीतिधर्मानुसरणं नित्य मुत्थान मेव च
विग्रहणा मनवज्ञाने नित्यं चा,नार्थ वर्जने १२

और नीतिधर्मके अनुसार प्रजापालन करणा और नित्य पुरुषार्थ प्रयत्नकरणा और खोटे अधर्म हूनिवाले जनोको अपनेसे दूरकरणा १२

उत्थाने हि नरेंद्राणां बृहस्पति रभाषत
राजधर्मस्य तन्मूलं श्लोकां श्चा,त्र निबोधमे १३

और नित्य उत्थान चढाई करणी इसीको बृहस्पतिने राजधर्मका मूलकहाहै इसविषे एकश्लोक कहाहै उसको आपसुनो १३

उत्थाने नामृतं लब्ध मुत्थानेना सुराः हताः
उत्थानेन महेंद्रेण श्रेष्ठं प्राप्तं दिवी,ह च १४

चढाईके उद्यमकर्के देवगणोने दैत्योंसे अमृतलाभ भयाहै इसी उद्यमकर्के महेंद्रने त्रिलोकी विषे असुरभी मारेहै इसी उद्यमकर्के महेंद्रने त्रिलोकीविषे महत्पदपायाहै १४

उत्थानवीरः पुरुषो वाग्वीरा नधितिष्ठति
उत्थानवीरा न्वाग्वीरा रमयंत उपासते १५

जो पुरुष उद्यमके वीरहै सो वाणीके वीरोको जीतलेतेहै सभसे अधिकहोतेहै उद्यमकारी वीरोको वाणीकी औरवी रभी सदैव सेवा करतेहै १५

उत्थान हीनो राजा पि बुद्धिमा न,पि नित्यशः
अप्रधर्षणीयः शत्रूणां भुजंगइव निर्विषः १६

हे राजन् उद्यमहीन राजा बुद्धिमानभी होइ तोभी शत्रुगणो कर्के नित्यही अनादर योग्य होताहै निर्विष सर्प जैसा सभ के वशहोताहै १६

न च शत्रु रवज्ञेयो दुर्बलोपि बलीयसा ॥
अल्पोऽपि हि दहत्यग्नि र्विषम ल्पं हिनस्ति च १७

जो शत्रु निर्बलभी होइ तो उसकी उपेक्षा बलवालेने भी कदा पिनही करणी अग्निस्वल्पभी होवे सो कालपाइकर बढकर दग्ध करताहै विष स्वल्पभी मारदेताहै १७

एकांगेना पि चो द्भूतः शत्रु र्दुर्ग मुपाश्रितः
सर्वं तापयते देश मपि राज्ञः समृद्धिनः १८

शत्रुजीतहै सो सेनाके चार अंगोविषे हस्ती तुरंगरथ पैदल ३ न्होविषे एक अंग करकेभी हष्टभयाहोए और दुर्गस्थानमें स्थित होइ तो चारो अंगोकी बृद्धिवाले कों भी पीडाकरताहै १८

राज्ञो रहस्यं न द्वाक्यं यथार्थं लोक संग्रहः
छिद्रं यथा स्य जिह्म स्य कारणेन च यद्भवेत् १९

जो राजाको अपनी सहृदताकर्के रहस्य वचनहै और जो राजा को शत्रुजयवास्ते सेनालोकादि संग्रहकरणाहै जोनसा शत्रुजयवास्ते कुटिलताहै जो राजाको किसी अंगकी हीनता है एते दोषोको अपनी अकुटलतादि उपायकर संहरणदेवे और लोकोके दंडक्रियावास्ते आप धर्म कर्म निष्ठाके क्रियाको करे २० युक्ता स्य कार्यं वृजिन मार्जवे नैर्द निष्ठयेत् दंभनार्थं च लोकस्य धर्मिष्ठामाचरेत्क्रिया २०

राज्यं हि सुमहत् तंत्रं धार्यते ना कृतात्मभिः
न शक्यं मृदुना वोढु मायास स्थान मुत्तमं २१

हे राजन् राज्य जोहै सो महाभारी आडंबरहीं यह केवल क्रूरहत्तिकर्के धाराजाता और केवल सौम्यता सेभी नही प्रहत होता यह महा प्रयत्नका स्थानहै २१

राज्यं सर्वामिषं नित्यं मार्जवेने ह धार्यते
तस्मा त्मिश्रेण सततं वर्तितव्यं युधिष्ठिर। २२

यह सर्भराज्यका भोग्यपदार्थहै एकसे नहीबनता इसकारणसे सभसे समेतिकर्के होताहै ताते सभसे विचारकर्के दंडकर्के रक्षाकर्के वर्तमान होकरकर्तव्यहै २२

यद्यप्य स्य विपत्तिः स्या द्रक्षमाणस्य वै प्रजाः
सो प्यस्य विपुलो धर्म एवं ह्यसा हि भूमिपः २३

जो राजा प्रजाको रक्षा करताहै और इसको किसी अंगकी हीनताहोइ तोभी रक्षाकरणेसे इसको महाधर्म फलदेताहै राजालोक रक्षाहत्तीही होताहै २३

एष ते राजधर्माणां लेशः समनु वर्णितः
भूय स्ते यत्र संदेहः तद्ब्रूहि कुरुसत्तम २४

हे युधिष्ठिर कुरुसत्तम यह मेने तोको राजधर्मोका एकदेश कर कछु लेशकहाहै बहोड इसविषे संदेहहै इसको फेर

वैशंपायनउवाच ततो व्यासस्त्र भगवान् देवस्थानोच

एवच वासुदेवः कृपश्चैव सात्यकिः संजय स्तथा २५

वैशंपायनउवाच हे जनमेजय तदनंतर व्यासजी भगवान् दे वस्थानादिक और मुनिगणभी वासुदेवजी कृपाचार्य और सा त्यकि संजय यह सभही श्रोताजन २५

साधु साधिति संहृष्टाः पुष्पमाणे विवानुनैः

अस्तवं स्त्र नरव्याघ्रं भीष्मं धर्मभृतां वर २६

साधु साधु ऐसे कहकर हृष्टभयेहे प्रफुलित भयजैसे मुखों करके नरव्याघ्र जोहे भीष्मजी धर्मधारी जनोविषे श्रेष्ठतिन्हकी स्तुतिकरतेभये २६

ततो दीनमना भीष्म मुवाच कुरुसत्तमः ॥

नेत्राभ्या मस्त्र पूर्णाभ्यां पादौ तस्य शनैः स्पृशन् २७

भीष्मजीके साधुवादके अनंतर कुरुसत्तम राजा युधिष्ठिर जो हे सो संशयकर्के दीनमुख भयाहे अस्त्रपूर्ण नेत्रोकर्के व्याकु लदृष्टिहोकर भीष्मजीके चरणोंको मंद मंद स्पर्शकरताहे वचन कहता भया २७

ॐ इदानी ससंदेहे प्रणामि त्वो पितामह

उपैति सविता ह्यस्ते रस मापीय पार्थिवं २८

हे पितामहजी जो मोको अब संदेह उसको सवेरे आइकर कहोंगा अब सूर्यभगवान पृथिवीके रसको पानकर्के अस्त होनेको जाताहे २८

ततो द्विजाती नभिवाद्य केशवः कृपश्च ते चैव

युधिष्ठिरादयः प्रदक्षिणी कृत्य महानदीसुतं

ततो रथा नारुरुहु र्मुदान्विताः २९ ॥

हेजनमेजय तदनंतर केशव भगवानजी कृपाचार्य और युधिष्ठि रादिक पांडवजोहे सो सभही महानदी गंगाके पुत्रको भीष्म जीको प्रदक्षिणाकर्के प्रणामविचारकर्के प्रसन्न मनहोकर अपने अपने रथोंको आरूढहोतेभये २९

दृशद्वतीं चा प्य वगाह्य सुव्रताः कृतोदकार्थाः कृ तजप्यमंगलाः उपास्य संध्यां विधिव त्परंतपाः

ततः पुरं विविशु र्गजाह्वयं ३० ॥

श्री॰
रा॰प॰
टी॰
२०१

इति श्री राजधर्मे अष्टपंचाशत्तमोध्यायः ५८
मार्गविषे दृषद्वती नदीको अवगाहनकर्के सबही त्रिकाल संध्या कर्मके व्रतधारीहे जलस्पर्शादि पूर्वक जपमंगलकर्के सायंसंध्याको विधिवत उपासनकर्के सबही चोरादि दुर्जनको संतापकरणेहारे बड़ेउ रथोको आरूढहोकर हस्तिनापुरको प्रवेशकरते भये ३० इति श्री महाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मे अष्टपंचाशत्तमोध्यायः ५८ ॥

वैशंपायनउवाच ततः कल्ये समुत्थाय कृतपूर्वाह्णिकक्रियाः ययुस्ते नगराकारैः रथैः पांडव यादवाः १

वैशंपायनउवाच हे जनमेजय तदनंतर सबही रात्रिविषे सुखभोग संयुक्त निद्राकर्के रात्रिको वितायकर्के प्रातःकालमों उठकर स्नान संध्या पूजादि पूर्वाह्णिकक्रिया समग्रकर्के सो सबही युधिष्ठिरादि पांडव कृष्णादि यादव नगराकार विशालरथोकर्के भीष्मजीको दर्शनजातेभये १

प्रतिपद्य कुरुक्षेत्रं भीष्ममासाद्य चानघ
सुखांच रजनी पृष्ट्वा गांगेयं रथिनां वरं २

कुरुक्षेत्रको पहोंचकर्के भीष्मजीके समीप जाइकर सुखसे बीती रात्रीको पूछकर्के भीष्मजीको प्रदक्षिणादि समाचारकर्के २ ॥

व्यासादी नभिवाद्यर्षी न्सर्वै ते चाभिनंदिताः
निषेदुरभितो भीष्मं परिवार्य समंततः ३

व्यासादि ऋषिगणोको प्रणामकर्के सबके आशीर्वादादि अभिनंदनको प्राप्तहोतेभये बड़ेउ भीष्मजीको मध्यकर्के चारोतरफ आसनोविषे बैठजातेभये ३

ततो राजा महातेजा धर्मराजो युधिष्ठिरः
अब्रवीत्प्रांजलिर्भीष्मं प्रतिपूज्य यथाविधि ४

तत्कालही महातेजवाला राजा धर्मराजा युधिष्ठिर जोहे सो भीष्मजीको विधिवत पूजाकर्के हस्तांजलि होकर वचन कहताभया ४ ॥ युधिष्ठिरउवाच

य एष राजन् राजेति शब्दश्चरति भारत
कथमेष समुत्पन्नस्तन्मे ब्रूहि परंतप ५

युधिष्ठिरउवाच हेराजन् हेभारत वंशीजी पूर्वले दिनका मो को संदेहहै उसको आपकहो यह जो राजाविषे राजशब्द प्र वृत्तभयाहै सो कैसे उत्पन्नभयाहै हे पंरतजी जैसे यह प्रवृत्त भयाहै उसको मेरे प्रति आपकहो ५

तुल्यपाणि भुजग्रीव स्तुल्य बुद्धीन्द्रियात्मकः
तुल्य दुःख सुखात्मा च तुल्यपृष्ठ मुखोदरः ६

राजा नामवाला मनुष्य जोहै सो संपूर्ण पुरुषजातीके समान पाणि भुजा ग्रीवादि अंगवालाहै और बुद्धि इंद्रियादि स्थान भी सभके समानहै और तुल्यहै इसका आत्मा सुख दुःखवा लाहै और पृष्ठ मुखउदरभी इसके सभ मनुष्योंके समानहै ६

तुल्य शुक्रास्थि मज्जा च तुल्य मांसा सरोव च
निश्वासो छ्वास तुल्यश्च तुल्य प्राण शरीरवान् ७

और शुक्रसे उत्पन्न मज्जादि धातवालाहै तुल्यही इसके मांस रक्तअस्थि आदिकहै और स्वास उच्छ्वासादीभी इसके सभको तुल्यहै और तुल्यही इसका शरीर प्राणसत्तावालाहै ७

समान जन्म मरणः समः सर्वै गुणैः नृणां
विशिष्ट बुद्धीन् शूरांश्च कथ मेको धितिष्ठति ८

और सभके समान इसको जन्म मरणहै यह राजारूपी म नुष्य सर्वगुणोंकरके सर्व मनुष्योंके समानहै यह सर्वसमान होकरके विशेष बुद्धिवाले शिष्टजनोंको सर्वप्रकारसे सूरमा और गुणीजनोंको यह एकही आज्ञाकरकेही वश्यकरलेताहै ८

कथ मेको महीं कृत्स्नां शूर वीरार्य संकुलाम्
रक्षत्य पिच लोकांश्च प्रसाद मभि वांछति ९

यह एकही संपूर्ण पृथिवीको शूरवीर शिष्टजन संयुक्तकेसे रक्षाकरताहै और संपूर्ण लोकोंको प्रसादको प्राप्तकरताहै ९

एकस्य तु प्रसादेन कृत्स्नो लोकः प्रसीदति
व्याकुले चाकुलः सर्वो भवतीति विनिश्चयः १०

एकही राजाकी प्रसन्नता करके सभही लोक केसे प्रसन्नताए को करताहै एक राजाकी व्याकुलता विषे सभही लोककेसे व्याकुलताको प्राप्तहोताहै यह निश्चय करके दृष्टहोताहै १०

एत दिच्छाम्यहं श्रोतुं त त्तेन भरतर्षभ
कृत्स्नं तन्मे यथा तत्वं प्रब्रूहि वदतां वर ११

हे भरतर्षभ इस हेतुको मे तत्वकर्के सुना चाहताहूं हे व
दतांवर वचन कहना जनोंविषे आपश्रेष्टहो इस हेतुको में
तत्वकर्के मेरे प्रतिकहो ११

नैत त्कारणं मल्पं हि भविष्यति विशांपते
यदेकस्मिन् जगत्सर्वे देववद्याति सन्नतिं १२

हे विशांपते यह कारण स्वल्पनहीं होवेगा जो एकही इस रा
जाविषे संपूर्ण जगत प्रणाम करताहै देवता समान इस रा
जाको मानताहै १२ ॥

भीष्मउवाच नियत स्त्वं नरव्याघ्र शृणु सर्व मशेष
तः यथा राज्यं समुत्पन्न मादौ कृतयुगे भवत् १३

भीष्मउवाच हे नरव्याघ्र हेराजन् तूं स्थिरचित्त होकर अशेष
से सभही श्रवणकर जैसे राज्यकर्म प्रथम पूर्वले सत्ययुग
विषे उत्पन्नभयाहै १३

नैव राज्यं न राजासी न्न च दंडो न दांडिकः
धर्मेणैव प्रजाः सर्वा रक्षंतिस्म परस्परम् १४

पूर्वले कृतयुगविषे ना राज्य बनाहै न राजा बनाहै न किसीको
दंडहोताभया सभही प्रजा अपने धर्मस्थित होताभया अन्योन्य
विषे अन्योन्यरक्षाकरतेभये १४

पाल्यमाना स्तथा न्योन्यं नरा धर्मेण भारत
खेदं परमुपाजग्मु स्तत स्तान्मोह आविशत् १५

इस प्रकार सभही मनुष्य परस्पर रक्षाकर्के धर्मको पालना कर
तेभये बहोड परस्पर रक्षाकर्के परम खेदको प्राप्तहोतेभये
तब सभको मोह उदे होताभया १५

ते मोह वश मापन्ना मनुजा मनुजर्षभ ॥
प्रतिपत्ति विमोहाच्च धर्म स्तेषा मनीनशत् १६

हे मनुजोत्तम सबही लोक तब अज्ञान मोहको प्राप्तहोकर
योग्य अयोग्य कार्य निर्णयको नहीं जानतेभये तब इनका
धर्मकर्म सभनाशको प्राप्तहोताभया १६

नष्टायां प्रतिपत्तौ च मोहवश्या नरा स्तदा
लोभस्य वशमापन्नाः सर्वे भरत सत्तम १७

जबकार्य्याकार्य्यकी ज्ञानकी सिद्धि नष्टभई सभही मोहके
वशहोगये तब सभको लोभप्रवेशकरताभया १७

अप्राप्यस्याभिमर्षेन ऊर्वं तो मनुजा स्वतः
कामो नामा पर स्तत्र प्रतिपद्यत वै प्रभो १८
सभही अप्राप्त मनुष्य अप्राप्त पदार्थकोभी वांछाकरते भये
तब उन्हको कामनामवा और लोभका रूपप्राप्तहोताभया १८
तांस्तु कामवशं प्राप्ता रागो नामाभि संस्पृशन्
रक्ताश्च नाभिजानंति कार्याकार्यं युधिष्ठिर १९
जब मनुष्योंको कामकी वशूपता प्राप्तभई तब रागभी उन्हको
प्राप्तहोताभया हे युधिष्ठिर रागकर्के कार्य्य अकार्य वदोउ क
छुनही जानतेभये १९ ॥
अगम्यागमनं चैव वाच्यावाच्यं तथैव च
भक्ष्याभक्ष्यं च राजेंद्र दोषादोषं च नात्यजन् २०
वदोउ अगम्यागमनको और वाच्यावाच्यको और भक्ष्य अभक्ष्यको
दोष अदोषको करलेते भये कछु दोषको नही त्यागतेभये २०
विप्लुते नरलोके वै ब्रह्म चैव ननाश ह ॥
नाशाच्च ब्रह्मणो राजन्धर्मो नाशमथागमत् २१
हे राजेंद्र इसप्रकार सभलोक विपरीत होगये तब उन्हको वे
द ज्ञान नाशको प्राप्तहोताभया वेदज्ञानके नाशसे यज्ञादिध
र्मभी नाशको प्राप्तहोताभया २१
नष्टे ब्रह्मणि धर्मे च देवांस्त्रासः समाविशत्
ते त्रस्ता नर शार्दूल ब्रह्माणं शरणं ययुः २२
जब ब्रह्मरूप वेद नष्टभया यज्ञादि धर्मभी नष्टभया तब दे
वतात्रासको प्राप्तहोतेभये हे नरशार्दूल सो सभही देवता त्रास
को पाइकर ब्रह्माजीकी शरणको प्राप्तहोते भये २२
प्रसाद्य भगवंतं ते देवं लोकपितामहं
ऊचुः प्रांजलयः सर्वे दुःखवेग समाहताः २३
सो सभही सो देवता ब्रह्माजीको प्रणामस्तुतिकरके प्रसन्नक
रके लोकपितामहजो ब्रह्मा इसको प्रांजलि होकर अपने दुः
खकोकहतेभये दुखवेगकर्के सभही आकुलभयेहे २३
भगवन्नरलोकस्थं ग्रस्तं ब्रह्म सनातनम्
लोभ मोहादिभिर्भावै स्ततो नो भयमाविशत् २४
हे भगवन् नरलोकविषे वेदधर्म यज्ञयागादि सभनष्ट भयाहे

श्री
वा.प.
टी.
२०३

203

इस कारणसे हमको वडोत त्रास उपजाहै २४

ब्रह्मणश्च प्रणाशेन धर्मो व्यनशत् दीश्वर
ततः स्म समतां याताः मर्त्यैस्त्रिभुवनेश्वर २५

ब्रह्मवेदके प्रणाशकर्के धर्मप्रणाशकर्के धर्म सभही नष्ट हो गयाहै ताते हमसभ मनुष्योंके तुल्यताकी प्राप्तभयेहै २६

अधोवर्षा वयं ह्यासन् मर्त्याश्चोर्ध्वप्रवर्षिणः
क्रियाव्युपरमात्तेषां ततो गच्छाम संशयं २६

हे त्रिभुवनेश्वर हमतो जलकर्के पृथिवीको अधोवर्षी करतीहै और मनुष्य जोहै सो यज्ञादिको कर्के ऊर्धको वर्षाकरतेहै तो हमको अग्निद्वारसे अमृतभोजनहोताहै मनुष्योंके क्रियालोपसे हम अमृत प्राप्तिके संशयको प्राप्तभयेहै २६

अत्र निःश्रेयसं यन्न स्तद्ध्यायस्व पितामह
त्वत्प्रभावसमुत्थोसौ प्रभावो न विनश्यति २७

अब यहां जोकल्याण मार्गहोवे उसको आप चिंतनकरो तुम अपने प्रभावसे सर्व सामर्थ्यवानहो हमारा यज्ञभाग स्वभाव नाशको नही प्राप्तहोवे २७

तानुवाच सुरान् सर्वान् स्वयंभूः भगवांस्ततः
श्रेयोहं चिंतयिष्यामि व्येतु वो भीः सुरर्षभाः २८

भीष्मजी राजाको कहतेहै हे राजन् तब स्वयंभूः भगवान् ब्रह्माजी तदनंतर सर्वदेवगणोको वचन कहता भया तुह्मारे कल्याणको हमचिंतन करतेहै हे सुरर्षभो तुह्मारे भीती निवृत्त होजावे २८॥

ततोऽध्यायसहस्राणां शतं चक्रे स्वबुद्धिजं
यत्र धर्मस्तथैवार्थः कामश्चैवाभिवर्णितः

ऐसे कहकर ब्रह्माजी राजधर्मोके शतसहस्रोके अध्याय अपनी बुद्धिसे कल्पन करतेभये जिसमो धर्म और अर्थ और काम यह निश्चयकर्के वर्णन कियेहै २९

त्रिवर्ग इति विख्यातो गण एष स्वयंभुवा
चतुर्थो मोक्ष इत्येव पृथगर्थः पृथग्गुणः ३०

उस शास्त्रका त्रिवर्ग गण यह नाम ब्रह्माजीने विख्यात कियोहै इसमो पृथक् चतुर्थवर्ग मोक्षवर्ग कियाहै सो त्रिवर्ग

से पृथगर्थवालाहै पृथक् गुणवालाहै त्रिवर्ग प्रवृत्तिमार्ग प्रधानहै और मोक्षवर्ग निवृत्ति मार्गप्रधानहै ३०

मोक्षस्या ऽपि त्रिवर्गोऽन्यः प्रोक्तः सत्वं रज स्तमः
स्थानं वृद्धि क्षय श्चैव त्रिवर्ग श्चैव दंडजः ३१

हे राजन् मोक्षमार्गमोभी धर्म अर्थ कामरूपी त्रिवर्गबनाहै उसके भाग भेद सत्व रज तमो गुणहै उसकर्के स्थानवृद्धि क्षययह त्रिवर्ग राज दंडसे बनताहै दंडकर्के सभस्थानो की स्थिति होतीहै और दंडकर्केही वाणिज्य कर्मकी वृद्धि होतीहै और दंडसेही चौरादि उपद्रवका क्षयहोताहै यह क्रमसे सत्व रज तमके भावहै ३१

आत्मा देश श्च काल श्चा ऽप्यु ऽपायः कृत मेव च
सहायाः कारणं चै ऽव षट्वर्गो नै ऽतिः स्मृतः ३२

अब नीतिमार्गके षट्वर्गको कहतेहै प्रथमतो अपने आत्मा है जिसको चित्तकहतेहै सो चित्त जोहै से नीति बलसे प्रजा को स्थिर न होवे तो स्थिर होजातेहै और देशखोटाभी होवे तो नीति बलसदेशहोताहै और काल जिसके विचारसे कदाचित् कलिभी होजातीहै और उपाय जो साधन सो भीक रण बनतेहै और कृतकृत्यकर्के निवृत्तहोताहै सो प्रयोजन सिद्धिहै और मित्र सुहृद आदि सहाय यह षडवर्गहै जो यह जहां विकलभी होवे तो नीतिकर्के सकल संपूर्णहोतेहै इन्हका मूलकारण नीतिहै नीतिविषेही यह चित्तादि षट् वर्गस्थितहै ३२॥

त्रयी चान्वीक्षिकी चै ऽव वार्ता च भरतर्षभ
दंडनीति श्च विपुला विद्या स्तत्र निदर्शिताः ३३

और त्रयी जोहै सो वेदोक्त कर्मकांड और आन्वीक्षिकी ज्ञानकांड और वार्ता वाणिज्यादि जीविकाकांड और दंडनीति पालन विद्या इस प्रकारके धर्म अर्थ काम त्रिवर्गके स्वरूप निर्णय ब्रह्माके किये शतसहस्र अध्यायवाले राजधर्म विषे कहेहै ३३

अमात्यरक्षा प्रणधी राजपुत्रस्य लक्षणं
चारस्य विविधो पायः प्रणिधेयः पृथग्विधः ३४

अब यह कहतेहै भेदशंकाकर्के अपने मंत्री लोकभी रक्षणीयहै

श्री॰ रा॰ ध॰ टी॰ २॰४

उन्हके भेदवासते शुभरूप चार जो हलकारे सो वर्णणीय हे चार कैसे होवे ब्रह्मचर्यादि वेषकर्के अनेक भिन्नरूप होवे सो चार एक एक स्थानमों तीन तीन कर्तव्य हे ३४

साम भेदः प्रदाने च ततो दंड श्च भारत
उपेक्षा पंचमी चाऽत्र कार्त्स्येन समुदाहृते ३५

अब राजनीतिके उपाय साम और भेद और प्रदान द्रव्यदान और दंड यह चार हे और इन्हके देशकाल विचारवास्ते उपेक्षा पंचमी उपाय रूप कहीहे सो उदासीनता दिखानेसे होतीहे जिसको वकथ्यान कहतेहे यह उपायभी सभ ब्रह्माजीके राजधर्ममों कहेहे ३५

मंत्रश्च वर्णितः कृत्स्न स्तथा भेदार्थ एव च
विभ्रम श्चैव मंत्रस्य सिद्ध्य सिद्ध्यो श्च यत्फलं ३६

और तहांही संपूर्ण मंत्रभी वर्णन कियाहे और भेदकास्वरूप प्रयोजन भी कहाहे और मंत्रका विभ्रमभी भेदवास्ते कहाहे और सिद्धि असिद्धीका जो शुभफल अशुभफल सोभी कहाहे ३६

संधि श्च त्रिविधा भिन्नो हीनो मध्य स्तथोत्तमः
भय सत्कार वित्तार्त कार्त्स्येन परिवर्णितः ३७

हे राजन् संधिके तीनप्रकार हे हीन और मध्यम भयकर्के संधी अधमहे परस्पर सत्कारकर्के मध्यम संधीहे द्रव्यलेकर संधि उत्तमहे यह संपूर्ण ब्रह्मोक्त राजधर्ममों वर्णन कियाहे ३७

यात्राकाला श्च चत्वार स्त्रिवर्गस्य च विस्तरः
विजयो धर्मयुक्त श्च तथार्थ विजय श्च ह ३८

और राजधर्मविषे द्रव्यत्यागके चारकाल लिखेहे मित्रवृद्धिका त्यागकालहे और कोशवधानेकी वृद्धीका त्यागकालहे अपने जो शत्रु तिन्हके नाशवास्ते त्यागकालहे और परमोदे अपनी संबंधीजन उन्हकी शोक निवृत्तिवास्तेभी द्रव्यत्याग का कालहे ३८

आसुर श्चैव विजयः तथा कार्त्स्येन वर्णितः
लक्षणं पंचवर्गस्य त्रिविधं चात्र वर्णितम् ३९

और असुर विजय कालभी राजधर्ममों कहाहे जैसे तलावी सेना रात्रिविषे सोई पड़ीही मारके अश्वत्थामाको विजयभ

याहे और पंचवर्गका लक्षण कहाहे सो कैसाहे मंत्रीलोक अ
पने राज्यकादेश और दुर्गस्थान और सेनाबल और पंचमकोश
खजाना यह पंचवर्गहै सो भी उत्तम मध्यम अधम भेदकरके
त्रिविधवर्णन कियाहे ४९

प्रकाशश्चाप्रकाशश्च दंडो थ परिकीर्तितः
प्रकाशोष्टविधस्तत्र गुह्यस्य च सविस्तरः ५०

प्रकाशरूपहे अप्रकाशरूपहे और दंडरूपहे प्रकाशपंचव
र्ग अष्टप्रकारकाहे और सातवेंनोहे सो अप्रकाशहे इन्हकाभी
विस्तार कहाहे ५०

रथनागा हयाश्चैव पादाताश्चैव पांडव
विष्टिर्नावश्चराश्चैव देशिका इति चाष्टमं ५१

रथ और गज और तुरंग और पेदल और विष्टीभारवाहक औ
र नावें भेडी जलतरणके साधन और चार हलकारे लोक
और सर्वप्रकारकी दशाविद्याके चतुर गुरुलोक यह प्रकाशरू
प अंगहे ५१

अंगान्येतानि कौरव्य प्रकाशानि विलक्षणं
जंगमाजंगमाश्चोक्ता श्चूर्णयोगा विषादयः ५२

और अप्रकाशभी पंचवर्गहे इन्हका स्वरूपभी सुनो जंगम अजं
गम चूर्णयोग विषादिकहे जंगम सर्पवृश्चिकादिक अजंगम
रक्तशृंगादिक दंडरूपहे कूष्मी आदिक प्रसिद्धहे और चूर्णयो
ग औषधादि चूर्णादिक जलाशयादिकोवास्ते और कालकूटादि
विषभी कहेहे हे कौरव्य युधिष्ठिर यह अप्रकाशरूप पंच
वर्गके अंगहे ५२॥

स्पर्शे चाभिवहार्ये वा उपांशु विविधः स्मृतः
अरिर्मित्रमुदासीन इत्येते प्य नुवर्णिताः ५३

यह प्राशादि स्पर्शमें और भोजनादिको विषे और मारणादि प्र
योगविषे तीन प्रकारसे कहेहे और अरिमित्र उदासीन इन्ह
के स्वरूप भी कहेहे ५३

कृत्स्ना मार्गगुणाश्चैव तथा भूमिगुणाश्च ह
आत्मरक्षण माश्वासः स्पशानां चान्ववेक्षणं ५४

और सर्वप्रकारके गृहनक्षत्रादि संचारके सर्वतोभद्रादि चक्रगु
णकहेहे और चोरासी भूमिगुण कोमल तेजके कहेहे और यंत्र

मंत्रादि विधिकर्के आत्मसंरक्षणभी कहाहे सभका आश्वासन मनको उल्लासकरणा यहभी कहाहे और रथादि सर्वविद्याका देखणा परीक्षाभी कहीहे ४४

कल्पना विविधा श्चापि स्नागा रथवाजिनां
व्यूहाश्च विविधाभिख्या विचित्रं युद्धकौशलम् ४५

और हाथी घोडे रथ इन्हकर्के युद्धियोगकी नानाप्रकारकी कल्पना कहीहे और चक्रव्यूह क्रौंचव्यूह शाकटव्यूहादि नामवाले अनेकव्यूहभी कहेहे और भी विचित्र प्रकारका युद्धकौशल भी कहाहे ४५

उत्पाता श्च निपाता श्च सयुद्धं सपलायितम्
शास्त्राणां पालनं ज्ञानं तथैव भरतर्षभ ४६

उत्पातयुद्ध आपजाइ पडने कर्के निपातयुद्ध आपजाइ पडने कर्के निपातयुद्ध पीछे अपने लगाइकार रोगकर्के युद्धकरणा और पलायन युद्धदेश कालबल विचारकरणाभी कहाहे औ र शस्त्राका शिकली करणादि पालन और तीक्ष्णतादि ज्ञान भीकहाहे ४६

बलप्रसन्न प्रक्षेव तथैव बलहर्षणम्
पीडाश्चा पदकाल श्च परिज्ञानं च पांडव ४७

हे पांडव और अपने बलविषे प्रसन योगका विचारकरणा औ र तैसे बलको हर्षकराइदेनाभी कहाहे और बलकोपीडा और आपदाकालका परिज्ञान परीक्षाभि कहीहे ४७

तथा ख्यात विधानं च योग संचार एवच
चौरै राटविकै श्चोग्रैः परराष्ट्रस्य पीडनम् ४८

और तैसेही ख्यातविधानजोहे दुंदुभी भेरी नगारी आदिक उन्हको अभिमंत्रण कर्के यात्रादि प्रसिद्धि करणी और योग जोहे पताकादिकोविषे मंत्र यंत्रादि योगकर्के संचारकर्के पराई सेनाका संमोहन करणाभी कहाहे और उग्रजोहे चोरी लूटकरणेहारे तिन्हाकर्के शत्रुजनके राज्यका पीडाकरणा भी कहीहे ४८ ॥

अग्निदै र्गरदै श्चैव प्रतिरूपक कारकैः
श्रेणि मुख्योप जापेन वीरुध श्छेदनेन च ४९

और अग्निलगावने हारे विषदेवने हारे और प्रतली प्रतिष्ठा

दि प्रयोगकरणाहोवे तिन्होंकर्के शत्रुगणके देशराष्ट्रको विगाड
देनाभी कहाहै और श्रेणी मुख्यजोहै सेनाके स्वामी तिन्हके
भेदनकरके और हलधान्यादिछेदन कर्के परराष्ट्रको पीडा
करणाभी कहीहै ४९

दूषणेन च नागानां मातंक जननेन च
आराधनेन भक्तस्य प्रत्ययो पार्जनेन च ५०

और हस्ति घोडे आदिक वाहन सवारीको मंत्र यंत्र औषधी यो
गकर्के विकार करदेना और रोग महामारी आदिक उत्पन्न
कर्केभी परराष्ट्रको पीडनकरणा और धनदान पालनकादि
विश्वासदेकर्केभी परराष्ट्रका पीडनकहाहै इसप्रकार परग
ष्ट्रका पीडनकहाहै ५०

समांगस्य च राज्यस्य ह्रासवृद्धि समंजसम्
कृत सामर्थ्य योगा च राष्ट्रस्य च विवर्धनम् ५१

अब अपने राष्ट्रके व्यवहारको कहतेहैं हे राजन् अपने स
मांगराज्यके हानिवृद्धि जोहै और समानताको विचारकर्तव्य
कहाहै और कृतकार्योकी सामर्थ्यसेभी अपने राष्ट्रका व
र्द्धनयोगभी कहाहै ५१

अरिमध्यस्य मित्राणां सम्य क्चोक्तं प्रपंचनम्
अवमर्दः प्रतीघात स्तथा चैऽव बलीयसां ५२

और अपने अरिमध्यस्थ मित्र जो राजालोक तिन्हके व्यवहारका
प्रपंचनभी सम्यक् प्रकारसे कहाहै और बलवान जो राजालो
क है तिन्हकी पीडाका प्रतिघातजोहै तांप्रयोगसेभी कहाहै ५२

व्यवहारः सुसूक्ष्मश्च तथा कंटक शोधनम्
श्रमो व्यायाम योगश्च त्यागो द्रव्यस्य संग्रहः ५३

और लोकोंका दिनरात्रके समाचारका सूक्ष्मव्यवहारभीकहाहै
और कंटकजोहै खललोक तिन्हका उन्मूलनादि व्यवहारक
हाहै और श्रमजोहै मल्लक्रीडादि और व्यायाम शस्त्रप्रयोगाभ्या
स लक्ष्यभेदनादि प्रयोग और द्रव्यत्याग दानकरणा और द्रव्यका
संग्रहइसोभी कहाहै ५३

अभृतानां च भरणं भृतानां वा न्ववेक्षणं
अर्थस्य काले दानं च व्यसने वा प्रसंगिता ५४

206

जौनसे वृत्तिरहित जोहे तिन्हका वृत्तिकर्के पोषणकर्के तिन्हे
की वृत्तिपोषणावनीहे उन्हकी हानि वृद्धिको विचारकरणा
द्रव्यके संग्रहका देशपात्रविषे दानकरणा व्यसनजोहे मृगतम
यादितिन्होमे असंगता कहीहे ५४

तथा राजगुणा श्चैव सेनापति गुणा श्च ह
कारणं च त्रिवर्गस्य गुणदोषा स्तथैव च ५५

तैसे राजाके गुणकहेहे सेनापतिके गुणभी कहेहे राजाके गु
ण उत्थान मात्रादिहे सेनापति गुणशीलता शौर्यादिकहे
धर्मार्थकाम त्रिवर्गका कारण कहाहे और गुणदोषभी कहेहे ५५

दुष्टेङ्गितं च विविधं वृत्तिश्चैवानु वर्तिनाम्
शंकितत्वं च सर्वस्य प्रमादस्य च वर्जनम् ५६

और दुष्टचेष्टाभी कहीहे और अपने सेवाके अनुकूलजनोकी
उन्हकी वृत्तिकरणेभी कहेहे राजाने सभका गुणदोषोकी शं
का करणी कहीहे और देशकाल अधिकारविना प्रसादवक
सीसादि वर्जन भी कहाहे ५६

अलब्धलाभो लब्धस्य तथैःव च विवर्द्धनम्
प्रधानं च विवृद्धस्य पात्रेभ्यो विधिव त्ततः ५७

अलब्धद्रव्यका लाभयोग कहाहे और लब्धपदार्थको वृद्धहोव
नेमो पात्रविषे विधिकर्के प्रदानकहाहे ५७

विसर्गो,र्थस्य धर्मार्थं कामहेत्वक मुच्यते
चतुर्थं व्यसना त्राते तथैःवा,त्रानुवर्णितं ५८

और द्रव्यका प्रयोग धर्मवासते अर्थवासते कामवास्ते युक्तिक्रमक
र्के कहाहे और चतुर्थद्रव्यप्रयोग संकटनिवृत्तिवास्तेकहाहे ५८

क्रोधजानि तथोग्राणि कामजानि तथैःव च
दशोक्तानि क्रमप्रोक्त व्यसना,न्यत्र चैःव ह ५९

और देखानन क्रोधमूलव्यसन षट्प्रकारके कहेहे और काम
के देहके व्यसनभी दशप्रकारके कहेहे ५९ ॥

मृगयाक्षा स्तथापानं स्त्रियश्च भरतर्षभ
कामजान्या हु राचार्याः प्रोक्तानी ह स्वयंभुवा ६०

मृगया अक्षक्रीडा द्यूतव्यसन पान मद्यादिकोका और स्त्रीजित
भाव यते व्यसनोको आचार्य लोककामसे बनेकहे कहेहे

सो ब्रह्माजीने भी आपकहेहे ९०

वाक्पारुष्यं तथोग्रत्वं दंडपारुष्यमेव च
निग्रहो ह्यात्मन स्त्यागः परस्वहरणमेव च ९१

वाणीकी कठोरता और उग्रस्वभाव और दंडपारुष्य दंडादिप्रहार सर्वस्वादि हरण और सभके आचार व्यवहारका प्रतिबंध जोहे सो निग्रह कहाहे और संपूर्ण पदार्थका हरणकरण यह क्रोधके व्यसन कहेहे ९१

यंत्राणि विविधान्येव क्रियास्तेषां च वर्णिताः
अवमर्दः प्रतीघातः केतनानां च भंजनम् ९२

अनेक यंत्रोके भेद लिखकररखे कहेहे यंत्रोकी साधन क्रियाभी बहोतकहीहे शत्रु राज्य विषे पीडाकरणीकहीहे और प्रतीघात दंडरूपतासे कहीहे और परराज्यके विषे निवासस्थानो उठेना भी कहाहे ९२ ॥

चैत्यद्रुमाववर्दश्च रोधः कर्मानुशासनम्
अवस्करोथ यासनं तथो पायाश्च वर्णिताः ९३

और परराष्ट्रविषे छायाहरोकाछेद और अन्नपान आमीका निरोधकरणा कृषी कर्मके अंतमो फलनाशकरणा कहाहे और मासादि उपायभी कहेहे ९३

पणवानक शंखानां भेरीणां च प्रधिष्टिर
उपार्जने च द्रव्याणां परिमर्दश्च नानिष्टट् ९४

और पणवानक शंखादि वाद्योंका भेरी आदि वजंत्रोका विनाशकर और द्रव्योकी उपार्जनाका विनाशकरणा यह क्रोधके षट्व्यसनकहेहे ९४

लब्धस्य च प्रशमनं सतां चैवाभिपूजनम्
विद्वद्भिरेकीभावश्च दान होम विधिस्तथा ९५

राज्यलाभविषे पुरवासीजन रत्नादिक प्रशमन कर्नेमहे और संतजनोकी पूजाकरणी कहीहे विद्यावानलोके एकताभावकरणा कहाहे दान विधानहोम विधानभी कहाहे ९५

मंगलालभने चैव शरीरस्य प्रतिक्रिया
आहार योजने चैव नित्य मास्तिक्य मेव च

और स्वर्णादि मंगलवस्तुका स्पर्शलिखाहे और अपने शरीरकी अलंकार क्रियाकहीहे आहार योजना सभको कहीहे नि

त्य ग्रास्तिक बुद्धि कर्तव्यकहीहे ८६

एकेन च यथो थेयं सत्यत्वं मधुरा गिरः

उत्सवानां समाजानां क्रिया केतनजास्तथा ८७

एकही असहाय राजाने जिसप्रकार उत्थानकरणा ओर स
त्यवचन कहना ओर मधुरवाणी सदाउच्चारकरणी कहीहे
ओर वसंतोत्सवादि अष्टिनी राजनादि विधीकरणी कहीहे
ओर सभा समाजादि यथा विधीकरणी कहीहे ओर धजा रो
हणादि ग्रहशांति वास्तुपूजा होमादि विधि कहीहे ८७

प्रत्यक्षाश्च परोक्षाश्च सर्वाधिकरणेषु च

वृत्ते भरत शार्दूल नित्यं चैवान्ववेक्षणम् ८८

ओर प्रत्यक्ष अथवा परोक्षजनोके उपवेशनस्थानो विषे चौ
कादि स्थानो विषे वलिदान होमपूजादि विधिकहीहे हे भरत
शार्दूल सभलोकोकी शुभाशुभ वृत्तिका नित्यप्रति विचार
करणा कहाहे ८८

अदंड्यत्वं च विप्राणां युक्त्या दंड निपातनं

अन्वजीवि स्वजातिभ्यो गुणेभ्यश्च सगुद्भवः ८९

ओर वेदवृत्ति संपन्न ब्राह्मणोको अदंड्यता कहीहे ओर दंड वि
धीका प्रयोगकरणा अपने अनुसारजी वीजन ओर अपनी
जातिकेजन ओर गुणीजन इन्हकी यथाधिकार मान्यता
करणी कहीहे ८९ ॥

रक्षणं चैव पौराणां राष्ट्रस्य च विवर्द्धनम्

मंडलस्था च याचिंता राजन् द्वादशराजिकी ७०

ओर समस्त नगरोके पुरवासी जनोकी चोर रोग उत्पात दुर्भि
क्षादिकोसे रक्षाकरणी कहीहे ओर अपनी राष्ट्रकी वृद्धिकर
णी कहीहे ओर द्वादश राज मंडलस्थ राजोकी अरिमित्र उ
दासीनताकी चिंता कर्तव्यकहीहे अपने राज्यसे चारदिशाके
जो राजेहे सो अरिकहेहे इन्हकी साथ अपनी राष्ट्रकी सीमा
विवाद सदाहोताहे इन्हसेपरे चारदिशाके राजे मित्रहे सो
अपनी राष्ट्रकी सीमावास्ते मध्यस्थ राजाके साथ मैत्री करते
हे ओर इन्हसेभी जो परेके चार दिशाके राजेहे सो मध्यस्थ
राजाकी सीमासे दूरवर्तीहे इन्हके साथ सीमा विवादनही
ताते उदासीन कहीहे इन्हकी बलाबल चिंता नित्यकर्तव्यहे

ह्रासप्रतिविधा चै, व शारीरस्य प्रतिक्रिया
देशजाति कुलानां च धर्मः समनुवर्णिताः ७१
और ह्रासप्रतिविधा बदलना तरेकी शारीरके संस्कारक्रिया वे
यकशास्त्रमे प्रसिद्ध शौचस्नान अभ्यंग मर्दनादि क्रियाहे सो
देशजाति कुलधर्मोके भिन्न भिन्न सम्यक् प्रकारसे वर्णनकीनी
हे ७१ धर्मस्या,र्थस्य कामस्य मोक्षस्याप्यनुवर्णिताः
उपाया स्त्वार्थ लिप्सा च विविधाः भूरिदक्षिण ७२
हे राजन् धर्म अर्थ काम मोक्ष यह विचारो इस शास्त्रमे कहे
हे और सामदान भेद दंडादि उपायभी कहेहें हे भूरिदक्षिणाके
दाता राजन् अर्थ लिप्साजोहे स्वकार्यकी प्रयोजन सिद्धी सो
बहोत प्रकारसे कहीहे ७२
मूलकर्म क्रिया श्चात्र माया योगाश्च वर्णिताः
दूषणं स्रोतसां चैव वर्णितं च स्थिरांभसां ७३
और मूलक्रियाजोहे कोशावनानेकी वढावनेहारी कृषी आ
दिक क्रियाकारण प्रकार सो बहोत कहेहे और माया योग
शत्रूके साथ छलविद्यावाले सो भी कहेहे और जलप्रवाहके
मार्गजोहे सो तडागादि स्थिर जलाशयोके उन्हको तोडदेने
आदिक अनेक दूषण विधानकहेहे ७३
यैर्यैः रुपायै र्लोकस्तु न चले दार्य वर्त्मनः
तत्सर्वं राजशार्दूल नीतिशास्त्रे ऽभिवर्णितं ७४
हे राजशार्दूल जिन्ह जिन्ह उपायोंकर्के लोक अपने अपने
वर्णाश्रम धर्म कर्मसे नही चलित होवे और शिष्टजनोके प्र
धान मार्गसे नही चलितहोवे सो सो सभही नितिशास्त्र
मों वर्णन कियेहे ७४
एत त्कृत्वा शुभं शास्त्रं ततः स भगवा न्प्रभुः
देवा नुवाच संहृष्टः सर्वान् शक्र पुरोगमान् ७५
हे राजन् सो भगवान प्रभु ब्रह्माजी इसप्रकारके राजधर्मरूपी
शुभशास्त्रको सम्यक प्रकारकर्के इंद्रादि सर्वदेवता गणोको प्र
सन्नहोकर कहताभया ७५
उपकाराय लोकस्य त्रिवर्ग स्थापनायच ॥

श्री॰
रा॰ प॰
टी॰
२९८

208

नवनीतं सरस्वत्याः बुद्धिरेषा प्रभाविता ७६
मेने यह नीतिशास्त्र लोकोंके उपकारवासते और धर्मार्थ
काम त्रिवर्ग स्थानवाले सर्वशास्त्रोंकी अधिदेवता जो वा
ग्वाणी सरस्वती उसका सार नवनीत माखण जैसा बुद्धिवि
षे प्रभावकर्के कहाहे ७६

दंडेन सहिता ह्येषा लोकरक्षणकारिका
निग्रहानुग्रहरता लोकान नुचरिष्यति ७७

यह इसनीतिशास्त्रके बुद्धि दंडविधि संयुक्त होइ तो लोक
संरक्षणकरतीहे यह निग्रहधर्मी जनोको और धर्मीजनोको
अनुग्रहकरणेकर्के [illegible]

दंडेन नीयते चेदं दंडं नयति वा पुनः
दंडनीति रिति ख्याता त्रीलोका नभिवर्तते ७८

दंडकर्के यह धर्मको वृद्धिकरतीहे अथवा धर्मकर्के दंडको
प्रसिद्धकरतीहे दंडनीति इसका प्रधान नामहे नीतिवेत्ता
पुरुषके द्वारसे लोकविषे विचरेगी ७८

षाड्गुण्य गुणसारैषा स्थास्यत्य ग्रे महात्मसु
धर्मार्थ काममोक्षं श्च सकला ह्यत्र शाहिता ७९

स्वामी अमात्यादि षट्गुणका सारभूत यह दंडनीतिसे सोम
हात्मा राजालोंको विषे स्थितकरेगी धर्म अर्थ काम मोक्ष य
ह सभही इसमें शस्त्रशास्त्रकी रीतिसे कहेहे ७९

ततस्तां भगवान् नीतिं पूर्वं जग्राह शंकरः
बहुरूपो विरूपाक्षः शिव स्थाणु रुमापतिः ८०

हे राजन् इसप्रकार ब्रह्माजीने यह नीतिशास्त्रकराहे इसको
प्रथम शिवजी सर्वजगतके कल्याणवास्ते ग्रहण करने भये
कैसेही शिवजी नीतिशास्त्रके प्रचारवास्ते बहुतरूपभया
है दंडनीतिवास्ते विरूप नेत्रकर्के विरूपाक्षभयाहे जगत
की पालनावास्ते शिव कल्याणरूपभयाहे दंडनीतिवास्ते वि
रूप नेत्रकर्के विरूपाक्षभयाहे जगतकी पालनावास्ते इसकी
स्थितीवासते आपस्थाणुरूपनासे ध्यानस्थित होकर विचारक
रताहे और संमतिवास्ते उमापति भयाहे ८०

प्रजाना मायुषो ह्रासं विज्ञाय भगवान् शिवः
संचिक्षेप ततः शास्त्रं महत्ब्रह्मणा कृतं ८१

सो शिवजी भूलोकवासी प्रजाको आयुषाकी हीनताको जानकर
ब्रह्माजीने शतसहस्र अध्याय विस्तारकिये इसनीतिशास्त्रको अ
ल्पायुलोकोंकी धारणावास्ते संक्षेपकरतेभये ८१

वैशालाक्ष मिति प्रोक्तं तदिंद्रः प्रतिपद्यत
दशा,ध्याय सहस्राणि सुब्रह्मण्यो महातपाः ८२

विशालाक्ष शिवजीने कहाशास्त्र इंद्रको ताते वैशालाक्षयह इ
सशास्त्रका नामप्रसिद्धभयाहै इसको इंद्रप्राप्तहोताभया सो इं
द्रभी ब्रह्मण्यभया महातपकर्के ८२

भगवानपि तच्छास्त्रं संचिक्षेप पुरंदरः
सहस्रैः पंचभिस्तात यदुक्तं बाहुदंतकं ८३

इस शास्त्रको प्रथमयुगसे बहोड अल्पायु लोकको जानकर शा
स्त्रधारणाकी निष्ठावास्ते इंद्रभी संक्षेपकरताभया पंचसहस्र अ
ध्यायोकर्के यह शास्त्र प्रसिद्धभया तब इस नीतिशास्त्रका बा
हुदंतकनाम भयाहै ८३॥

अध्यायानां सहस्रैस्तु त्रिभिरेव बृहस्पतिः
संचिक्षेपेश्वरो बुद्ध्या बार्हस्पत्यं यदुच्यते ८४

बहोड बृहस्पती भी इस नीतिशास्त्रको अतिअल्पायुषो लोक
हितवास्ते तीनसहस्र अध्यायोकर्के संक्षेपकरताभया तब नी
तिशास्त्रको बार्हस्पत्य नामकर कहतेभये ८४॥

अध्यायानां सहस्रेण काव्यः संक्षेपमब्रवीत्
तच्छास्त्रममितप्रज्ञो योगाचार्यो महायशाः ८५

बहोड शुक्राचार्यभी इसनीतिशास्त्रको एकसहस्र अध्यायोकर
के संक्षेपकरताभया कैसाहै शुक्राचार्य अमित बुद्धीहै नीतिशा
स्त्रकायोगाचार्यहै नीतिशास्त्रके प्रयोगकर्के महायश संयुक्तहै ८५

एवं लोकानुरोधेन शास्त्र मेतन्महर्षिभिः॥
संक्षिप्त मायु र्विज्ञाय मर्त्यानां ह्रास मेव च ८६

हे राजन् यह नीतिशास्त्र इसप्रकारसे मनुष्योंकी आयुषाऔर
बुद्धिबलको कमती जानकर महर्षी जनोने अतिसंक्षिप्त कि
याहै ८६ ॥

अथ देवाः समागम्य विस्नु मूचुः प्रजापतिं
एको यो,ऽर्हति मर्त्येभ्यः श्रैष्ठ्यं वै तं समादिश ८७

हे राजन् यह नीतिशास्त्र इसप्रकारसे पूर्व बनाहै अब इसकी धारणावाले राजाकी उत्पत्तिको कहतेहैं जब यह नीति प्रवृत्तभया तब सबही देवतागण विस्नुरूप प्रजापतिको समागमकर्के वचनकहतेभये हेभगवन् जोकोई एक इसशास्त्रको धारणविषे श्रेष्ठहोवे जिसमों तुह्मारा विशेषकर्के श्रेष्ठ अंशवाला मनुष्योंसे अधिक मनुष्यरूपहोवे उसको आपको दिखाइदेवो ८७

ततः संचिंत्य भगवा न्देवो नारायणः प्रभुः
तैजसं वै विरजसं सो,सृज न्मानसं सुतं ८८

तदनंतर भगवान् विस्नु नारायणदेव महाप्रभु जोहै सो इस नीतिशास्त्रके धारणकी अधिकारी विचारकर्के अपने प्रधान तेजके अंगकर्के विरजस नामवाले मानस पुत्रको मानसेही सृजतेभये ८८ ॥

विरजास्तु महाभागाः प्रभुत्वं भुवि नै,च्छत
न्यासायै वा भव द्बुद्धिः प्रणीता तस्य पांडव ८९

हे पांडवराजन् विरजा महाभाग्यशाली जब उत्पन्नभया सो जगतके प्रभुताको नहीवांछाकरताभया उसकी बुद्धि त्यागवासेही प्रवृत्तहोतीभई ८९

कीर्ति मांस्तस्य पुत्रोभू त्सो,पि पंचातिगो भवत्
कर्दम स्तस्य तु सुतः सो,प्य तप्य महत्तपः ९०

उसका पुत्रकीर्तिमान भयाहै सोभी पंच इंद्रियोंकी वासनासे अतीत होताभया राज्यकी इच्छाको नहीकरताभया उसका पुत्र कर्दमहोताभया सोभी राज्यकी इच्छाको त्यागकर केवल तपही तपताभया

प्रजापतेः कर्दमस्य त्व,नंगो नाम वै सुतः
प्रजा रक्षयिता साधु र्दंडनीति विशारदः ९१

हे राजन् उसकर्दम प्रजापतीका पुत्र अनंगनामराजा होताभया सो प्रजाको रक्षाकरणेमो सावधान होताभया दंडनीति विषे चतुरहोताभया ९१

अनंगपुत्रो मेधावी नीतिमान भिगम्य वै
प्रतिपेदे महाराज्य मथें द्रिय वशो भवत् ९२

हे राजन् अंगकापुत्र मेधावीभया सो नीतिमान् भया नीतिशास्त्रको प्राप्तहोकर्के महाराज्यको पाइकर इंद्रियभोगो के वशभी होताभया १२

मृत्योस्तु दुहिता राजन् सुनीथा नाम मानसी
प्रख्याता त्रिषु लोकेषु या सा वेन मजीजनत् १३

हे राजन् मृत्यु प्रजापतीकी पुत्री सुनीथा नामकर्के मानसी कन्याभई जगतविषे विख्यानभई सो अंगसे वेननामधारी पुत्रको जन्मतीभई १३

तं प्रजा स्तु विधर्माणं राग द्वेष वशानुगम्
मंत्रपूतैः कुशैर्जघ्नु ऋषयो ब्रह्मवादिनः १४

सो राजा वेनविषय वशवर्ती होनेसे विधर्म जानकर अनुराग नहीं करतीभई उसको संपूर्ण प्रजाविषे अधर्मवृत्तिजानकर क्रोधकर्के मंत्रपूत कुशालेकर्के कुशाप्रहारोकर्के कुशाप्रहारोकर्के ब्रह्मवादी ऋषिलोक मारदेतेभये १४

ममंथुः दक्षिणं चोरुं ऋषय स्तस्य मंत्रतः
ततो स्य विकृतो जज्ञे ह्रस्वांगः पुरुषो भुवि १५

उसकी संतानवासते उसीकी दक्षिणऊरूस्थानको मंत्रोकर्के मथनकरतेभये तब उसके ऊरूस्थानसे विकृतरूप ह्रस्व अंगोवाला एकपुरुष उत्पन्न होताभया सो पृथिवीविषे स्थितहोताभया १५

दग्धस्थूल प्रतीकाशो रक्ताक्षः कृष्णमूर्धजः
निषीदेत्येव मूचु स्त ऋषयो ब्रह्मवादिनः १६

उसके अंग दग्ध और स्थूल आकारवाले होतेभये उसको देखकर ब्रह्मवादी ऋषी कहते भये निषीद तूं पृथिवीविषे बैठजा १६ तस्मा न्निषादः संभूतः क्रूरः शैल वनाश्रयः
ये चान्ये विंध्यनिलया म्लेच्छाः शतसहस्रशः १७

ताते उसका नाम निषादभया सो महाक्रूरकर्मा भया पर्वतो विषे वनवासकरणेहारा भया उसीसे निषादभये और विंध्य पर्वतवासी म्लेच्छलोक शतसंख्योके होतेभये १७

भूयो स्य दक्षिणं पाणिं ममंथुस्ते महर्षयः
ततः पुरुष उत्पन्नो ज्वलनोर्क इवापरः १८

श्री॰
रा॰ध॰
टी॰
२१०

हे राजन् तब महाऋषिलोक उसीवेनके दक्षिणहस्तको मंथे
करके मथनकरतेभये तहांसे एकपुरुष महासुंदर उत्पन्नभया
स्वरूपकरके द्वितीयइन्द्रधारी साक्षात् इंद्रजैसाही भयाहे ९८

कवची बद्ध निस्त्रिंशः सशरः सशरासनः
वेदवेदांगवि चैव धनुर्वेदे च पारगः ९९

कैसा सो पुरुषभया कवचधारीहे जिसने तरवार अपनेकटी
स्थानमों बांधीहे और बाणकरके संयुक्तहे और धनुषकरके सं
युक्तहे और वेदवेदांगतत्ववेत्ताहे धनुर्वेदका महाचतुरहे
सर्वप्रकारसे पारगामीहे ९९ ॥

तं दंडनीतिः सकला श्रिता राजन्वरोत्तमम्
ततस्तु प्रांजलिर्वैन्यो महर्षीस्तानुवाचह १००

ऐसा सो संपूर्ण नरवरोंविषे उत्तमराजा रूपभयाहे उसको
दंडनीति आपही उपस्थितहोतीभई हे राजन् सो वेनसे उत्प
न्नभया महापुरुष प्रांजलिहोकर महाऋषीओंको कहताभया

सुसूक्ष्मा मे समुत्पन्ना बुद्धिर्धर्मार्थदर्शिनी
अनया किं मया कार्यं तन्मे तत्वेन शंसत १

हे ऋषयः मोको आपके प्रसाद धर्मार्थ दर्शिनवाले सूक्ष्मबु
द्धि उत्पन्नभयेहे इसबुद्धिकरके मेनेक्या कर्तव्यहे उसको आप
आज्ञाकरो १०१

यन्मां भवंतो वक्ष्यंति कार्यमर्थ समन्वितम्
तदहं वै करिष्यामि नात्र कार्या विचारणा २

जो कछु मोको आप अर्थसंयुक्त आज्ञाकरोगे उसीको मैकरेगा
इसमो आपने विचारणा नही करणी २

तमूचुस्तत्र देवास्ते ते चैव परमर्षयः
नियतो यत्र धर्मो वै तमशंकः समाचर ३

उसको तहा देवता जो रहे और जेते ऋषीरहे सो सभही कहते
भये तोको राजधर्मका नियमहे हमारी आज्ञासे असंगहो
कर राजधर्मकोही लेकर ३ ॥

प्रिया प्रिये परित्यज्य समः सर्वेषु जंतुषु
काम क्रोधौ च लोभं च मानं चो त्सृज्य दूरतः ४

अपने प्रिय अप्रियको त्यागकर सर्व जीवो विषे क्रोधको त्यागक

१००

कामको क्रोधको लोभको मानको हरसे त्यागकरके राजधर्म
को तूं प्रवृत्तकर १०४

यश्च धर्मात्प्रविचले लोके कश्चन मानवः
निग्राह्यस्ते स्वबाहुभ्यां शश्वद्धर्ममवेक्षता ५

जो कोई मनुष्य धर्मसे चलितहोवे सो तेने तत्कालही अपने
भुजोंकरके ग्रहणकरके उसी कालविषे तेने दंडकरके निग्रहकरके
शासनाकरके योग्यहै सम्यक् प्रकारसे अपने राज्यधर्मको वि
चारकरके अवश्य तेने दंडनीयहै १०५

प्रतिज्ञां चाधिरोहस्व मनसा कर्मणा गिरा
पालयिष्याम्यहं भौमं ब्रह्म इत्येव चासकृत ६

जो तूं अपने मुखसे प्रतिज्ञा करेगा उसको दृढहोकर मनकरके
कर्मकरके वाणीकरके आरोहण करने अवश्यकरेगा ऐसेवारं
वार विचारसे अंगीकार करले ६ ॥

यश्चा,त्र धर्मो नित्योक्तो दंडनीति व्यपाश्रयः
तमशंकः करिष्यामि स्ववशेन कदाचन ७

जो तोको धर्म दंड नीतिके आश्रयवाला कहाहै उसको मे
निःशंक करेगा अपने विषय भोगके मे कदापि परवश नहो
वेगा ऐसे प्रतिज्ञाको दृढकर ७

अदंड्या मे द्विजाश्चेति प्रतिजानीहि हे विभो
लोकं च संकरात्कृत्स्नं त्रातास्मीति परंतप ८

हे परंतप यह तें प्रतिज्ञाकर अपने ब्रह्मकर्मवाले ब्राह्मणश
रीर अदंड्यहै और संपूर्ण लोकेको मे धर्मसंकरसे रक्षा अव
श्य करेगा ८ ॥

वैन्यस्ततस्तानुवाच देवान् ऋषि पुरोगमान्
ब्राह्मणा मे महाभागा नमस्याः पुरुषर्षभाः ९

हे राजन् वेणका पुत्र ऐसा वाक्य श्रवणकरके ऋषिपूर्वक सर्वदे
वता गणोंका यह वचन कहताभया ब्राह्मण जोहै सो महाभा
गहै और पुरुषोंविषे श्रेष्ठही तसभी मम महाभागहो पुरुषो
विषे श्रेष्ठहो ब्राह्मण मेने नमस्कार पूर्वक पूजनीयहै ९

एवमस्त्विति वैन्यस्तु तैरुक्तो ब्रह्मवादिभिः
पुरोधाश्चाभवत्तस्य शुक्रो ब्रह्ममयो निधिः १०

सो वेणराजा ब्राह्मणोंने कहा जो तेने कहा सो ऐसीही होवे इसप्रकार ब्रह्मवादी ऋषिगणोंने कहा तब वेणराजा राजधर्मको अंगीकार करता भया इसका पुरोहित शुक्राचार्य संपूर्ण वेद शास्त्रोंका निधीहोताभया १०

मंत्रिणो वाल खिल्याश्च सारस्वत्यो गणास्तथा
महर्षि भगवान् गर्ग स्तस्य सांवत्सरोभवत् ११

मंत्री इसके बालखिल्य मुनिहोतेभये और सारस्वत ऋषिगणभी होतेभये और गर्गाचार्य शांतिक पौष्टिक कर्मका ज्योतिषी होताभया ११

आत्मना ष्टम इत्येवं श्रुति रेषा परा न्नृप
उत्पन्नौ वंदिनौ चा:स्य तत्पूर्वौ सूत मागधौ १२

हे राजन् वेणराजा विष्णुभगवान जीसे अपने सहित अष्टमराजा राजधर्मका होताभया यह मनुष्योंविषे श्रुति पुरातन प्रसिद्ध होतीभये प्रथम विष्णु १ विरजा द्वितीय २ कीर्तिमान तृतीय ३ कर्दमचतुर्थभया ४ अनंग पंचमभया ५ अतिबल मेधावी षष्टभया ६ वेन सप्तम भया ७ पृथुवैण्य अष्टमराजाभया ८ और वंदीपुरुष दो उत्पन्न भये सो राजासे प्रथमभये जिन्हके नामसूत और मागधभयेहें १२

तयोः प्रीतो ददौ राजा पृथु र्वैण्यः प्रतापवान्
अनूपदेशं सूताय मगधं मागधाय च १३

तिन्होने यथार्थ स्तुती भगवानजीकी कीनी तब पृथुराजा महाप्रतापी उन्हकी स्तुतिकर्के प्रसन्नभया अनूपदेशको सूतको प्रतिदेताभया और मगधदेशको मागधके प्रतिदेताभया १३

समतां वसुधा याश्च स सम्यग्गुपपादयन्
वैषम्यं हि परं भूमे रासी दिति च नः श्रुतम् १४

और पृथिवीके समताको सम्यक प्रकारसे करताभया हे राजन् उसके पूर्व पृथिवीका अत्यंत विषमता होतीभये यह हमने सुमसे सुनाहे १४

मन्वंतरेषु सर्वेषु विषमा जायते मही उज्जहार

ततो वैन्ये शिलाजाले समंततः ११५

पृथुसे पूर्व मन्वंतरोविषे पृथिवी अतिविषमहोतीभई उसीका रणसे वैण्यपृथु जोहै सो पृथिवीका शिलाजाल जोहै जिसको जहां तहां से एकत्र कारके स्थापनकरता भया १५

धनुष्कोट्या महाराज तेन शैला विवर्द्धिता
सहितस्तानाच देवेन शक्रेण विबुधै सह १६

हे महाराज पृथुराजाने धनुषकोटीकर्के पर्वतोका जालपृथिवीसे निवृत्त कियाहै उसके प्रतापको देवराज इंद्र सहारलेता भया संपूर्ण देवतागणोके साथ और इंद्रमिलकर्के १६

ऋषिभिश्च प्रजापालैः ब्राह्मणैश्चाभिषेचितः
तं साक्षात्पृथिवी भेजे रत्नान्यादाय पांडव १७

ऋषिगणोके साथ और पृथिवीके पालनेहारे राजा लोकोके साथ ब्राह्मणोने राजा पृथुको अभिषेककीना तो तो पृथिवी देवी अपने अंतर्गत संपूर्ण रत्नोंकों लेकर आपसाक्षात् रूपकर्के आइकर सेवाकरतीभई १७ ॥

सागरः सरितां भर्ता हिमवांश्चाचलोत्तमः
शक्रश्च धनमक्षय्यं प्रादात्तस्मै युधिष्ठिर १८

हे पांडव हे राजन् सागर जो समुद्र सो संपूर्णनदीओका स्वामी है और हिमाचल पर्वतोविषे श्रेष्टहै और इंद्रजोहै सो राजापृथुकों अक्षयधन यह समही देतेभये १८

रुक्मं चापि महामेरुः स्वयं कनक पर्वतः
यक्षराक्षस भर्ता च भगवान्नरवाहनः १९

हे राजन् राजा युधिष्ठिर स्वर्णपर्वत महामेरु जो है सो स्वर्णोको लेकर राजा पृथुको आपदेताभया और यक्षराक्षसोंका भर्ता नरवाहन जो कुबेर सो राजा सोभी पृथुराजाको सेवा करताभया १९ ॥

धर्मे चार्थे च कामे च समर्थं प्रददौ धनम्
हया रथाश्च नागाश्च कोटिशः पुरुषास्तथा २०

धर्मके निमित्त अर्थके निमित्त कामके निमित्त पृथुराजाको देताभया उत्तम घोडे और उत्तम रथ और उत्तम गज और अने... क पुरुष कोटिसंख्याके २०

प्रादुर्बभूव वैन्यस्य चिंतना देव पांडव ॥
न जरा न च दुर्भिक्षं नाधयो व्याधयस्तथा २१

पृथुराजाके ध्यानकरणेसेही महाप्रतापसेही प्रगटहोतीभये और पृथुराज्याके राज्यमो जरानही होतीभई दुर्भिक्षनहीहोता भया आधी व्याधीभी नही होती भई २१

सरीसृपेभ्य स्तेनेभ्यो न चान्योन्यात्कदाचन
भयमुत्पद्यते तत्र तस्य राज्ञो भि रक्षणात् २२

हे राजन् राजा पृथुके रक्षाकरणेसे प्रजाको सर्पोसे भयनहीहोता भया और परस्पर कामक्रोध लोभसेभी भयनही होताभया उसके राज्यमो किसीकोभी किसीप्रकारका भयनही होताभया २२

आपस्तस्तंभिरे चास्य समुद्र मभियास्यतः
पर्वताश्च ददु र्मार्गं ध्वजभंगश्च नाभवत् २३

जो राजा पृथु समुद्रको लंघकर पारजानेकी इछाकरे तो उसको समुद्रके जलके अपना स्तंभनकरके मार्गदेते भये पर्वतभी तभी उसको मार्गदेते भये राजाके पृथुके रथकी ध्वजाकी भंगभी नही होताभया २३

तेनेयं पृथिवी दुग्धा सस्यानि दशसप्त च
यक्ष राक्षस नागैश्चा भीप्सितं यस्य यस्य यत् २४

हे राजन् उस राजा पृथुने इस पृथिवीको दोहनकिया तो जिसका जिसका जो जो इष्टभोजनरहा सो सो सभही पृथिवीके दोहनसे दशप्रकारके अष्टप्रकार अष्टादशधान्योको देतीभई राजा पृथुकी आज्ञाकरके यक्ष राक्षस नागोने और देवदानवपर्वतोने सर्वप्राणीयोने पृथिवीको दोहनकिया तो जिसका जिसका जोजो इष्टभोजनरहा सो सो सभही पृथिवीके दोहनसे सभको प्राप्त होताभया २४

तेन धर्मोत्तरश्चा ऽयं कृतो लोको महात्मना
रंजिताश्च प्रजा सर्वा स्तेन राजेति शब्द्यते २५

उस राजा पृथूने यह त्रैलोक्य धर्मकर्म प्रधानकिया ऐसे महात्माराजाने अपने राजधर्मकरके संपूर्ण प्रजाको रंजनकिया तो ते उसको राजा कहतेहै २५

ब्राह्मणानां क्षतत्राणा त्ततः क्षत्रियउच्यते

प्रथिता धर्मतश्चेयं पृथिवी बहुभिः स्मृता २९

ब्राह्मणोंको अधर्मघातके तत्तसे त्राणकरता भया ताते क्षत्रिय उसका कहाहे और धर्म कर्म विष होतप्रकारोंकर्के वहोत विस्तारको प्राप्तकीनी ताते पृथिवीनामको पृथुराजाके संबंधसे भईहे २९ ॥

स्थापनं चाकरोद्विष्णुः स्वयमेव सनातनः

नातिवर्तिष्यते कश्चिद्राजंस्त्वामिति भारत ३०

हे राजन् विष्णुभगवान् उसी राजाकी आज्ञामर्यादाको आप स्थापनकरतेभये हे राजन् पृथो तेरी आज्ञाको इसजगतमो कोईनही बदलेगा ऐसा विष्णुभगवान्कहकर ३७

तपसा भगवान्विष्णुराविवेश च भूमिपम्

देववन्नरदेवानां नमते यं जगन्नृप ३८

राजाके स्वरूपविषे अपने तेजोमय तपके भागसे आपप्रवेश करतेभये हे राजन् इसी हेतुसे देवता समान नरदेवराजाको संपूर्णजगत नमस्कारकरताहे ३८

दंडनीत्या च सततं रक्षितं तं नरेश्वर

नाधर्षयेत्तथा कश्चिच्चारनिष्यंद दर्शनात् ३९

ताते हे नरेश्वर राजाने दंडनीतिकर्के प्रजाकी रक्षाकर्तव्यहे उसका यही यत्नहे जो चारोंके निष्पंदकर्के संचारकर्के लोकवर्तांतको देषकर प्रजापालन दंडनीतिसे कर्तव्यहे ३९

शुभं हि कर्म राजेंद्र शुभत्वायोपकल्पते

आत्मना कारणैश्चैव समस्येह महीक्षितः ३०

हे राजेंद्र राजका शुभकर्म जोहे सोई सर्वलोककर्के शुभ करणेका हेतुहे इसीकारणसे राजाने आपने चित्तकर्के सर्व प्रकारके क्रियायोगोंकर्के सभको समान दृष्टिकर्के पालनकर्तव्यहे ३०

को हेतुर्यद्वशे तिष्ठेल्लोको दैवाद्दृते गुणान्

विष्णुर्ललाटाच्च कमलं सौवर्णमभवत्तदा ३१

हे राजन् युधिष्ठिर तेने मोको यह प्रश्न कियाहे जो राजाके सर्वजगत वशमें होताहे इसका कौनहेतुहे हे महाराज

श्री॰
रा॰ध॰
टी॰
२१३

दैवशरणविना यह कैसे बनाहे त्रिलोकके ललाटमें सुवर्णक मलहोतामया ३१

श्रीः संभूता यतो देवी पत्नी धर्मस्य धीमतः
श्रियः सकाशा दर्थश्च जातो धर्मेण पांडव ३२

इसी कमलसे लक्ष्मी देवी धर्मभगवानकी पत्नी भईहे उ सी ज्ञान ऐश्वर्य संपन्न भगवानके प्रभावसे लक्ष्मी देवीसें अर्थ उत्पन्नभयाहे ३२

अर्थो धर्म स्तथैवार्थः श्री श्च राज्ये प्रतिष्ठिता
सुकृतस्य क्षयाच्चैव स्वर्लोकाद् देत्य मेदिनी ३३

हे पांडव इसी अर्थसे धर्म कर्म होताहे वहोइ धर्म कर्मसे अर्थ होताहे अर्थकर्के राज्यविषे राज्य लक्ष्मीकी संपदाप्र तिष्ठितहोतीहे धर्मकर्मकर्के पुरुष स्वर्गभोगको प्राप्तहो ताहे जब स्वर्गभोगका क्षयहोनेको प्रवृत्त होताहे उसके भोगसे पुरुष पृथिवीको प्राप्तहोताहे ३३

पार्थिवो जायते तात दंडनीति विशारदः
महत्वेन च संयुक्तो वैसवेन नरो भुवि ३४

तब पृथिवी विषे राजा होताहे हे तात सो राजा दंडनीति विषे चतुरहोताहे कि भगवानजीकी महिमाके वैसव अंशसं युक्तपृथिवीविषे सो पुरुष राजा होताहे ३४

बुद्ध्या भवति संयुक्तो माहात्म्यं चाधि गच्छति
स्थापितं ते ततो देवै र्न कश्चि दति वर्तते ३५

वहोइ सो राजा लोकोत्तर बुद्धि संयुक्त होताहे ताते सर्वलो को विषे अधिक महिमाको प्राप्तहोताहे इसीकारणसे देव ता जनोने इस राजा वैसव अंशस्थापन कियाहे ताते इसरा जाके वचनको इसलोकविषे कोई बदलनहीं सकता ३५

तिष्ठ त्येकस्य च वशे तं चेदं न विधीयते
शुभं हि कर्म राजेंद्र शुभत्वा यो पकल्पते ३६

हे राजेंद्र इसी हेतुसे एक राजाके वशमें संपूर्ण जगत स्थित होताहे इसी वार्तामें संदेहनहीं कोई करता शुभक र्महे ताते शुभफलको कल्पना किवासते बनाहे ३६

तुल्य लोकस्य यन्नाये लोको वचसि तिष्ठति

यो स्य यो स्य मुखं पश्येत् तमास्यं सोऽस्य वशानुगः
सुभगं चार्थवन्तं च रूपवन्तं च पश्यति ३७
यह राजा शरीर के स्वभावकर्के लोक तुल्यदेखके वचनसो लो
क सभ उपस्थित होताहै जोजो पुरुष इसके मुखको देखताहै सो
सो पुरुष इसके वशवर्ती होताहै सुंदर और अर्थसिद्धिवाला रूप
वान् मनुष्य इस मुखदर्शनसे होताहै ३७
महत्वात्तस्य दंडस्य नीतिर्विस्पष्टलक्षणा
नयश्चारश्च विपुलो येन सर्वमिदं ततं ३८
इस राजाको दंडनीतिका सामर्थ्य बनाहै ताते इसलोकविषे
नीति स्पष्टलक्षण संयुक्त विद्यमानहै और नीतिका आचार वि
चारभी अत्यंत विस्तारसे बनाहै जिसकर्के यह सभही जगत
व्याप्तभयाहै ३८
आगमश्च पुराणानां महर्षीणां च संभवः
तीर्थवंशश्च वंशश्च नक्षत्राणां युधिष्ठिर ३९
हे राजन् युधिष्ठिर नीतिशास्त्रविषे पुराणोंका आगमबनाहै
और महाऋषिजनोंका आचार विचार धर्म संभव बनाहै ती
र्थोंका वंशविस्तार और नक्षत्रोंका वंशविस्तारभी नीतिशास्त्रसोहै ३९
सकलं चातुराश्रम्यं चातुर्होत्रं तथैव च
चातुर्वर्ण्यं तथैवात्र चातुर्विद्यं च कीर्तितं ४०
संपूर्ण आश्रमोंका आचार विचार धर्म और चातुर्होत्र विधान औ
र चारेवर्णोंका आचार विचारधर्म और चारवेदोंकी विद्या सोभी
नीतिशास्त्रमोंकहेहै ४०
इतिहासाश्च वेदाश्च न्यायः कृत्स्नश्च वर्णिताः
तपो ज्ञानमहिंसा च सत्यासत्ये नयः परः ४१
इतिहास चारवेद न्यायशास्त्र संपूर्ण युक्तिसंपन्न नीतिशास्त्रमो
है और तपज्ञान अहिंसा सत्य असत्य और सभही प्रकारका उ
त्तमन्याय राजनीति मोहीहै ४१
वृद्धोपसेवा दानं च शौचं उत्थानमेव च
सर्वभूतानुकंपा च सर्वमत्रोपवर्णितम् ४२
और वृद्धोंकी सेवा और दानधर्म स्त्रत्वधर्म और यात्राका उत्थान

श्री॰
रा॰ध॰
टी॰
२१४

सर्वभूतोविषे दया यह सभही इसमे वर्णन कियाहे ५२

भुवि स्वर्गे पाताले यच्च तत्र सर्वं समर्पितम्
तस्मिन्नैनात्सहे शास्त्रे पांडवे तत्र संशयः ५३

हे पांडव जो कछु भूलोकका वृत्तांत जाताहे सो सभही पितामह जीके कहे और पातालकाधर्म और ऊर्द्धलोकका वृत्तांतजाताहे सो सभही पितामहजीके कहे नीतिशास्त्रमे कहाहे ५३

ततो जगति राजेंद्र सततं शब्दितं बुधैः
देवाश्च नरदेवाश्च तुल्या इति विशांपते ५४

हे विशांपते राजन् उसी पितामह शास्त्रसे यह नीतिशास्त्रमे बुधलोकोने नीतिशास्त्र जगतमें प्रसिद्ध कियाहे इसीकारण से देवता विष्णुलोकसे लेकर नरदेव राजालोक तुल्यप्रभाव वालेहें १५४

एतत्ते सर्वमाख्यातं महत्त्वं प्रतिराजसु
कात्स्न्येन भरतश्रेष्ठ किमन्यदिह वर्तते १५५

इति श्री शांतिपर्वणि राजधर्मे ध्यायः ५९

हे युधिष्ठिर यह सब राजलोकोके महात्मके ऊपर तिरेकोक हा और का इस्थे कहताहे ५५॥ ॥ इति श्री महाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मे ऊनषष्टितमो ध्यायः ॥ ५९॥

वैशंपायनः ततः पुनः स गांगेय मभिवाद्य पितामहं प्रांजलि र्नियतो भूत्वा पर्यपृच्छद्युधिष्ठिरः १

वैशंपायनउवाच हे जनमेजय इसके अनंतर राजा युधिष्ठिर जोहे सो गांगेय जोहे सो भीष्मपितामह उनको नमस्कार वंदना करके प्रांजलि सावधान होकर बहोड प्रश्नकरताभया १

युधिष्ठिरउ॰ को धर्मः सर्ववर्णानां चातुर्वर्ण्यस्य के पृथक् चतुर्वर्णाश्रमाणां च राजधर्माश्च के मताः २

युधिष्ठिरउवाच हे भरतर्षभ सर्ववर्णोके साधारण धर्मकोनहे और चारवर्णोके पृथक पृथक धर्मकोनहे और चार आश्रमोके पृथक पृथक धर्मकोनहे और राजधर्म भीयकोनहे २

केन वै वर्द्धते राष्ट्रं राजा केन विवर्द्धते
केन पौराश्च भृत्याश्च वर्द्धते भरतर्षभ

और राजोकी राष्ट्र किसकर्के बढताहे और राजा आपकाकर्के ब

ढनाहे ओर शत्रुपुरवासी लोकक्या करके बढतेहे ओर भृत्यलोक क्याकर्के बढतेहे ३

कोशं दंडं च दुर्गं च सहायान्मंत्रिणस्तथा
ऋत्विक्पुरोहिताचार्यान् कीदृशान्वर्जयेन्नृपः ४

ओर कोशके स्वरूपको ओर दंडको स्वरूपको ओर दुर्गके स्वरूपको ओर राजाके सहाय लोकोके लक्षण ओर मंत्रियोके लक्षण ओर ऋत्विक् लक्षण पुरोहितके लक्षण आचार्यको लक्षणकहो ओर ऋत्विक पुरोहित आचार्य मंत्री आदिक राजानें केसे कर्तव्यहे ओर केसे वर्जनीयहे यहकहो ४

केषु विश्वसितव्यं स्याद्राज्ञां कस्यांचिदापदि
कुतो वात्मा दृढं रक्ष्यस्तन्मे ब्रूहि पितामह ५

हे पितामहजी राजानें केसे पुरुषोविषे विश्वासकर्तव्यहे ओर राजाको किसीकालकी आपदाआयप्राप्त होवे तो कहा विश्वास कर्तव्यहे कोन प्रकारसे कहासे आत्मरक्षा कर्तव्यहे जिसप्रकारको मेरे प्रतिकहो ५

भीष्मउवाच नमो धर्माय महते नमः कृष्णाय वेधसे
ब्राह्मणेभ्यो नमस्कृत्य धर्मान्वक्ष्यामि शाश्वतान् ६

भीष्मउवाच हेराजन् प्रथमप्रभावसंपन्न धर्म भगवानको नमस्कारकर्के पुनः कृष्ण भगवानजी विश्वका विस्तारकरणेहारेको नमस्कार ओर धर्मकर्मके वेत्ता ओर वक्ता जो ब्राह्मदेवता तिन्हको नमस्कारकर्के इन्हके प्रसादसे मे ध्रुव सनातन युगयुगांतरके प्रमाणभूत सकलधर्मोके यथामति कहताहूं ६

अक्रोधः सत्यवचनं संविभागः क्षमा तथा
प्रजनः स्वेषु दारेषु शौचमद्रोह एव च ७

प्रथम सर्वसाधारण सर्व वर्णोके धर्म कहताहूं अक्रोधक्या क्रोधको त्यागकरणा सत्यवचन करणा द्रव्यका उपार्जन देवता पितर अतिथि कुटुंबको यथाभागदेना ओर क्षमाकरणी ओर अपने दाराविषे संतानकरणी ओर देहका शौच मनका शौचकरणा ओर द्रोहको त्यागकरणा ७

आर्जवं भृत्यभरणं नवैते सार्ववर्णिकाः
ब्राह्मणस्य तु यो धर्मः स्तं ते वक्ष्यामि केवलं ८

श्री॰
शां॰प॰
टी॰
२१५

215

और आर्जव अकुटिलता और आश्रित भृत्योंका अन्नवस्त्रादिक
कै पोषणकरणा यह वर्णोके साधारण धर्म कहेहे ८ ॥

दम मेव महाराज धर्म माहुः पुरातनम्
स्वाध्याया भ्यसनं चैव तत्र कर्म समाप्यते ९

अब ब्राह्मणवर्णके जो केवल धर्महे तिन्हको कहतेहे हे महारा
ज प्रथम ब्राह्मणका मुख्यधर्म दमही पुरातन कहाहे और अपने
वेदके स्वाध्यायका अभ्यास इसीकर्के ब्राह्मणका ब्रह्मकर्म सि
द्धहोताहे ९ ॥

तं चे द्वित्त मुपागच्छे द्वर्तमानं स्वकर्मणि
अकुर्वाणं विकर्माणि शांतं विज्ञान तर्पितं

हे राजन् जो ब्राह्मणको अपने ब्रह्मकर्मकी निष्ठाकरके अ
याचित शुद्धधन प्राप्तहोवे तो सो ब्राह्मण निषिद्धकर्मको नक
रे शांतवृत्तिहोवे ज्ञान विज्ञानकर्केही तृप्तहोवे इसवृत्तिक
र्के कदाचित धनप्राप्त होवेतो १०

कुर्वीता पत्य संतान मथो दद्या द्यजेत च
सं विभज्य हि भोक्तव्यं धनं सद्भि रितीर्यते ११

देवऋण पितृऋण मनुष्यऋणकी मुक्तिवास्ते संतानवृद्धिक
रे और नित्यदानभीकरे यज्ञभी करे धनको विभागबांटक
र्के भोक्तव्यहे यह संतजनोने कहाहे ११

परि निष्ठित कार्यस्तु स्वाध्याये नैव ब्राह्मणः
कुर्या दन्य न्नवा कुर्या न्मैत्रो ब्राह्मण उच्यते १२

ब्राह्मण जोहे सो अपने स्वाध्यायकर्केही ब्रह्मकर्मकी का
र्यनिष्ठाको सिद्धहोताहे अपने स्वाध्यायसे अधिक अध्यय
नकरे अथवा नाकरे सो ब्राह्मण मैत्रब्राह्मण कहाहे
क्रोधलोभादि वर्जनसे सभका मित्रहोताहे १२

क्षत्रिय स्यापि यो धर्म स्तं ते वक्ष्यामि भारत
दद्या द्राजन्न याचेत यजेत चन याजयेत् १३

हे भारत अब क्षत्रीके यो धर्महे तिन्हको कहतेहे क्षत्रीदान
देवे याचनप्रतिग्रहणकरणाकरे आपयज्ञकर्मकरे कि
सिसे याजन नाकरावे १३

नाध्यापये दधीयेत प्रजाश्च परिपालयेत्

नित्यो युक्तो दस्युवधे रणे कुर्यात् पराक्रमम् १४

आप स्वाध्यायका अध्ययनकरे अध्यापन नहीकरावे प्रजाको ध
र्मकर्के पालनकरे नित्यही दंडनीति विषे उद्यतहोवे चोरादिको
के वधविषे सदाउद्यमकरे ओर रणविषे पराक्रमकरे १४

ये तु क्रतुभि राजानः श्रुतवंतश्च भूमिपाः
य एवा हवजेतार स्त एषां लोकजित्तमाः १५

जोनसे राजालोक यज्ञोकर्के यजनकरतेहे ओर राजनीतिका श्र
वणकरतेहे ओर जो राजे रणको जीतनेहारेहे उन्हको लोक
जितविन तपस्वी लोकोके प्राप्तहोतेहे इस लोकको जीतकर
स्वर्गलोककोभी जीततेहे महाजेताहोतेहैं १५

अविक्षतेन देहेन समराद्यो निवर्तते
क्षत्रियो नास्य तत्कर्म प्रशंसंति पुराविदः १६

जो क्षत्रिरणमों जाइकर अपने शरीरको शस्त्रप्रहारकर्के घात
किये विना रणसे फिर आवताहे उसकी रणत्यागरूपी कर्मको
पुराणे राजधर्मको जाननेहारे प्रधानलोक प्रशंसानही करते
निंदाकरतेहैं १६

एवं हि क्षत्रबंधूनां मार्ग शक्रः प्रधानतः ॥
नाऽस्य कृत्यतमं किंचि दन्य द्दस्युनिबर्हणात् १७

हे राजन् इसप्रकारका क्षत्रबंधुजनोका प्रधानधर्ममार्गहे क्षत्रीज
नोको शत्रुवध ओर चोरवध इन्हसे ओर धर्म कर्मनहीहे १७

दान मध्ययनं यज्ञो राज्ञां क्षेमो विधीयते
तस्माद्राज्ञा विशेषेण योद्धव्यं धर्म मीप्सिता १८

दानकरणा अध्ययनकरणा ओर यज्ञकरणा यह क्षत्रीको सु
खसंपदाके धर्महे ताते राजाने अपने धर्म कर्मकी सिद्धिवास
ते शत्रुके साथ चोरोकी साहसी ओके साथ युद्धही धर्म कर्म
की वांछावासते कर्तव्यहे १८

स्वेषु धर्मेष्व वस्थाप्य प्रजाः सर्वा महीपतिः
धर्मेण सर्व कृत्यानि शमनिष्ठानि कारयेत् १९

राजा जोहे सो प्रजाको अपने धर्मोविषे व्यवस्थासे स्थापनक
र्के धर्मकर्केही सर्वकार्योको शमनिष्ठाको प्राप्तकरे १९

परिनिष्ठितकार्यस्तु नृपतिः परिपालनात्
ऊर्यादन्यन्न वा कुर्यादैन्द्रो राजन्य उच्यते २०

हे राजन् राजा जो है सो प्रजाके पालनेसेही अपने कार्यनिष्ठा को समाप्तकरताहै प्रजापालनेसे सदा कृतकृत्य होवे और दान यज्ञादिक कर्मकरे नाकरे सो राजा इंद्रक्षत्री कहाहै २०

वैश्यस्यापि हि यो धर्मस्तं ते वक्ष्यामि शाश्वतं
दानमध्ययनं यज्ञः शौचेन धनसंचयः २१

अब वैश्यकीभी जो धर्महै उन्हको कहतेहैं दानकरणा अध्ययन करणा शुद्धव्यापार कृषि आदिकसे धनसंग्रहकरणा २१

पितृवत्पालयेद्वैश्यो युक्तः सर्वान्पशूनिह
विकर्म तद्भवेदन्यत्कर्म यत्स समाचरेत् २२

वैश्य पशुपालकर्मको सदा उद्यमसे करे इसको त्यागकर वैश्य और कर्मजो करे सो उसको विकर्महैं २२

रक्षया स हि तेषां वै महत्सुखमवाप्नुयात्
प्रजापतिर्हि वैश्याय सृष्ट्वा परिददौ पशून् २३

सो वैश्य पशुजातीकी रक्षासेही महासुखको प्राप्तहोताहै प्रजापति भगवान् सृष्टि कर्मकरके पशुजातिको रक्षावास्ते वैश्य को देताभया २३

ब्राह्मणाय च राज्ञे च सर्वाः परिददे प्रजाः
तस्य वृत्तिं प्रवक्ष्यामि यच्च तस्योपजीवनं २४

ब्राह्मणको और राजाको संपूर्ण प्रजाधर्म कर्मकी मर्यादा रक्षा वास्ते दीती तातें वैश्यका धर्म पशुपालनहीहै अब वैश्यके उपजीवन वृत्ति कहतेहैं नित्यवृत्ति उसकी षट्धेनू प्रसूतिवाली होवे तिन्हविषे एकधेनुका दुग्ध वैश्यगोरक्षाकी उपजीवका मजूरीपावे और जब वर्षहोजावे तब गोशतसे एक गोयुग्म तलबपावे एक गौ एक वृषभसे पावे २४

षण्णामेकां पिबेद्धेनुं शताच्च मिथुनं हरेत्
लब्धाच्च सप्तमं भागं तथा शृंगे कलां खुरे २५

जो वाणिज्यकरे तो जो व्यापारसे लाभआवे उसलाभका सप्तमांश अपने धनीसेपावे इसीप्रकार पराईखेती विषेभी लाभका सप्तमांशलेवे २५

सस्यानि सर्व बीजाना मेषां सांवत्सरी भृतिः
न च वैश्यस्य कामः स्या न्न रक्षेयं पशू निति २६

और वर्ष पीछे सर्व सर्व बीजोकी खेती वर्षकी उसकी कहीहे वैश्यको ऐसी कामना न होवे जो मे पशुरक्षा न करेगा २६

वैश्ये चे च्छति नान्येन रक्षितव्याः कथंचन
शूद्रस्या पि हि यो धर्म स्तं ते वक्ष्यामि भारत २७

जो वैश्य पशुरक्षा किया चाहे तो और पशुवर्ण पशुरक्षा नहीं करे अब शूद्रका जो स्वधर्महे उसको कहतेहे २७

प्रजापति र्हि वर्णानां दासं शूद्र मकारयत्
तस्मा च्छूद्रस्य वर्णानां परिचर्या विधीयते २८

हे भारत प्रजापति भगवान् शूद्रको सृजकर्के शूद्रको दासधर्म ही करदेताभया ताते शूद्रने ब्राह्मण क्षत्री वैश्योकी सेवाही कर्तव्यहे २८

तेषां शुश्रूषणा च्चैव मह त्सुख मवाप्नुयात्
शूद्र एता न्परिचरे त्रीन्वर्णा ननुपूर्वशः २९

शूद्र तीनवर्णोके सेवा कर्के ही महासुखको प्राप्त होताहे ताते शूद्र इन्ह तीन वर्णोकी परिचर्या क्रमसे करे प्रथम ब्राह्मणोकी सेवाकरे पुन क्षत्रीके सेवा पुन वैश्यकी सेवाकरे २९

संचयां श्च न कुर्वीत जातु शूद्रः कथंचन ॥
पापीया न्हि धने लब्ध्वा वशीकुर्या द्गरीयसः ३०

धन संग्रह शूद्र कदापि न करे संग्रहसे पापीहोताहे धनको पाइकर अपने गुरुजोहे तीन वर्ण तिन्हसे सेवाकराणे कर्के उन्हको अवमान करेगा ३०

राज्ञा वा समनुज्ञातः कामं कुर्वीत धार्मिकः
तस्य वृत्तिं प्रवक्ष्यामि यच्च तस्यो पजीवनम् ३१

जो राजा धनसंग्रहकी आज्ञाकरे तो राजाकी आज्ञासे सेवाधर्म जानकर्के अपने लोभकर्के नकरे अब शूद्रकी वृत्ति कहते जिसकर्के उपजीवन होवे ३१

अवश्य भरणी यो हि वर्णानां शूद्र उच्यते
छत्रं वेष्टन मौशीर उपान द्व्यजना नि च ३२

श्री॰
शा॰प॰
टी॰
२१७

217

हे राजन् तीन वर्णोने शूद्रको अवश्य पोषण कर्तव्य है छत्र
और पोषाणादि वेष्टन और उपानह पंखादि विक्रयकर्के उपजी
वनकरे तीन वर्णोने उससे एते पदार्थोंका मोल उसकोदेना ३२

छत्रवेष्टनानि देयानि शूद्राय परिचारिणे ॥
अधार्याणि विशीर्णानि वसनानि द्विजातिभिः ३३

जोनसा शूद्र अपनी सेवा करताहे उसको अपने पुरातन
वस्त्रदेने आप उन्होने जीर्ण पुरातन वस्त्रनही धारणे ३३

शूद्रायैव प्रदेयानि तस्य धर्मधनं हि तत्
यं च कंचिद् द्विजातीनां शूद्रः शुश्रूषुरावजेत् ३४

पुरातन जीर्णवस्त्र तीनवर्णोने शूद्रोको हि देने उसका ओही ध
नहे शूद्र तीनवर्णों विषे जिसके शुश्रूषा करणे आवे ३४

कल्प्यां तेन तु ते प्राहुर्वृत्तिं धर्मविदो जनाः
देयः पिंडो न पत्याय भर्तव्यौ वृद्ध दुर्बलौ ३५

उसी वर्णोने उसकी वृत्तिका उपजीवन कर्तव्य हे जो शूद्र अनप
त्य अपुत्र होइ तो उसको तीर्थ महालयादि विषे उसका स्वा
मी पिंडदेवे ३५ ॥

शूद्रेण तु न हातव्यो भर्ता कस्यां चिदापदि
अतिरेकेण भर्तव्यो भर्ता द्रव्यपरिक्षये ३६

और शूद्रने अपनी पोषण करणेहारा स्वामी अतिकठिन आ
पदामोभी परित्याग नही करणा अपनी कुटुंब पालनासे
अधिक अन्नादि संपदाकर्के अपनी स्वामीका पोषण कर्तव्य हे ३६

नहि स्वमस्ति शूद्रस्य भर्तृहार्यधनो हि सः
उक्तस्त्रयाणां वर्णानां यज्ञस्तस्य च भारत ३७

और शूद्रको अपनी सेवा लब्ध धनमो अपना सत्व नहीहे भर्ता
को उसका द्रव्यका स्वामीभावहे यह प्रमाण धर्मशास्त्रमो क
हाहे हे राजन् यह तीन अधनहे धनके स्वामी नहीहे तीन
कौनहे भार्या और शूद्रहे हल अरु और सुत जिसकी पास वश
वर्ती यह हो तैसे इन्हके स्वामी कहाहे जिससे यह धनीव
नेहे इस शूद्रको तीनवर्णोंको भोजनका पाक यज्ञ लिखाहे
तीनवर्णोंकी पाकशालामो अन्नदानकहाहे ३७

स्वाहाकार वषट्कारो मंत्रः शूद्रे न विद्यते
तस्माच्छूद्रः पाकयज्ञैः यजेत व्रतवान् स्वयं ४८

स्वाहाकार स्वधाकार वषट्कार वेदमंत्र शूद्रविषे नहीहे
ताते शूद्र पाकयज्ञकर्के यजनकरे यह शूद्र उपनयनादि
श्रौत व्रतोसे हीनहे अव्रतहे इस हेतुसे पाकयज्ञ जोहे
रुद्रयज्ञ ग्रहशांति वैश्वदेवादि यज्ञ उन्हका अधिकारीहे ४८

पूर्णपात्रमयी माहुः पाकयज्ञस्य दक्षिणाम्
शूद्रः पैजवनो नाम सहस्राणां शतं ददौ
ऐंद्राग्नेन विधानेन दक्षिणा मिति नः श्रुतं ४९

पाक यज्ञकी दक्षिणा पूर्णपात्रमयी कहीहे अब पूर्णपात्रका
परिमाणकहतेहे अष्टमुष्टि किंचित् परिमाणकहाहे सो किं
चित् ग्राह्यहोवे तो ग्रुसकलहोताहे और सो पुष्कलचारहोवे
तो पूर्णपात्रकहाहे यही पूर्णपात्र शूद्रने गोदान दक्षिणा
स्थानमो दानमहे शूद्रको नाममंत्र अथवा पौराणिक मंत्र
यज्ञहोमादिकोविषे शूद्रपद्धतीमों कहेहे हे राजन् पैजव
न नामवाला शूद्र एकभयाहे ऐंद्राग्न यज्ञविधिविषे पूर्णपा
त्रोंके सहस्रोका एकशत दक्षिणादेताभया ऐसा हमने श्रु
तिवृत्तांतोविषे सुनाहे ४९

यतो हि सर्ववर्णानां यज्ञस्तस्यैव भारत
अग्रे सर्वेषु यज्ञेषु श्रद्धायज्ञो विधीयते ५०

हे राजन् यद्यपि शूद्रको अमंत्रयज्ञका अधिकारकहाहे तो
भी यह शूद्र तीनवर्णोंकी सेवाकरताहे तीन वर्णजो जो
यज्ञकरतेहे उन्होंके यज्ञोकाफल सेवाकर्के शूद्रको सर्वय
ज्ञोका फलप्राप्तहोताहे सर्वयज्ञोविषे श्रद्धायज्ञ विशेष
फलको करताहे ५०

दैवतं हि महच्छ्रद्धा पवित्रं यजतां च यत्
दैवतं हि परं विप्राः स्वेन स्वेन परस्परम् ५१

हे राजन् श्रद्धा परमदेवताहे श्रद्धाही यज्ञकारी जनोविषे प
रमपवित्रहे श्रद्धाकर्के तीन वर्णोंकी सेवा शूद्रकरताहे
और ब्राह्मणभी परमदेवताहे ब्राह्मणयज्ञकरतेहे शूद्र
सेवा करताहे इन्हको परस्पर अपने अपने कर्मका उपकार

श्री
य.प.
टी.
२१८

फलहोताहै ताते शूद्रको ब्राह्मणद्वारा यज्ञकरणेका फल हो जाताहै ५१ ॥

अयज्ञ निह मयैले नैलैः कामैः समाहितैः
संसृष्टा ब्राह्मणा देव त्रिषुवर्णेषु सृष्टयः ५२

तीन जो वर्णहै सो यज्ञोंकर्के यजन करते भये जो जो साधन सामग्री अनेक कामभोगो कर्के होतीहै इसके वास्ते शूद्रोके साथ ब्राह्मणोको संबंध बनाहै औरे तीनवर्ण क्षत्रियादिक ब्राह्मणोसेही उत्पन्न भयाहै ताते परम्परा सृष्टि संबंध कर्के शूद्रको यज्ञफलका अधिकार बनाहै ५२

देवाना मपि देवाये यद्ब्रूयु स्ते परं हितं ॥
तस्माद्वर्णैः सर्वयज्ञाः संसृज्यंते न काम्यया ५३

हे राजन् देवगणोकोभी देवता ब्राह्मणहै जो कहेंगे ब्राह्मण सो परम हितहै ताते ब्राह्मणोके वचनसे संपूर्णवर्णोके साथ सभही परस्पर उपकारकर्के स्वभाव संबंधको करतेहै यज्ञकामनाकर्के संबंधको नही करते ५३

ऋग्यजुः सामवि त्पूज्यो नित्यं स्याद्देववद्द्विजः
अनृग्यजु रसामा च प्राजापत्य उपद्रवः ५४

इसविषे अबहेतकहतेहै ब्राह्मण जोहै सो ऋग्यजुः सामका वेत्ताहै ताते देवताके समान पूजनीय कहाहै शूद्रजोहै सो ऋग्यजुः सामका अधिकारी नहीहै तोभी उपद्रवहै सेवा संबंधकर्के ब्राह्मणोके उपद्रवा समीपको द्रवति क्या जाइप्राप्त होताहै औरे प्राजापत्यहै प्रजापतिसे सृष्टिद्वारा उत्पन्न भयाहै दासदानविषे इसको प्रजापति देवता का उच्चारणा करतेहै अभिप्राय ब्राह्मण ब्राह्मणको जैसे अग्निदेवता ककहतेहै इंद्रः क्षत्रियः क्षत्री इंद्र देवताक कहतेहै तैसे शूद्रको प्रजापति देवताक कहतेहै ५४

यज्ञो मनीषया तात सर्ववर्णेषु भारत
नास्य यज्ञहुतो देवा ईहंते ते तदेजनाः ५५

औरे तैसेही मनकर्के मानसयज्ञ करणेद्वारा सर्ववर्णोविषे मख्यहै इसके यज्ञकर्मको देवता औरे जनभी नही । वांछाकर्ते इति न ऐसे नकहो अपित यहते एव चाहते हीहै

सो ईहते श्रद्धाहुतयज्ञहै ताते सभही देवता मानसयज्ञमें श्रद्धाहुतभागको लेतीहीहै ४५

ततः सर्वेषु वर्णेषु श्रद्धायज्ञो विधीयते ॥

दैवं दैवतं ब्राह्मणाः स्वेन नित्यं परा न्वर्णा नायज्ञन्नैव मासीत् अधर्मो वितानः संसृष्टो वैश्यो ब्राह्मणे सिषु वर्णेषु यज्ञसृष्टः ४६

ताते सर्ववर्णोविषे श्रद्धाहुतयज्ञका अधिकार बनाहै जो तुम प्रश्न करोगे अग्निहोत्र हीन अमंत्रकैं शूद्रको पाकयज्ञोविषे कैसे अधिकार होताहै उत्तरकहतेहैं ब्राह्मण आपदेवताहै तीन वर्णोका आपही असाधारणदेवताहै मुख्यदेवताहै सो वर्णो के अपने प्रत्यक्षदेवताहै अपने यजमान जोहै तीनवर्ण तिन्हको यज्ञनहींकरावतेहै किंतु करावतेंहीहै अमुककामनावास्ते अमुक यजमानने मोको वरणदियाहै उसको निमित्तकर्कै मै आचार्य कर्मको करताहूं इसप्रकार यजमानकेवास्ते यज्ञविधिको करतेभये उस यज्ञका फलयजमानको होताहै जो श्रौतविधानसे अधरव्या नीच अग्निकार्यका विस्तार वैश्यादि वर्णोविषे होताहै तो लौकिक विवाहादि संस्कारोविषे अग्नीभी वैश्यादि यजमानके आवताहै उसको गृह्यपद्धतिके मंत्रोका संस्कारहोताहै ताते ब्राह्मण तीनोवर्णो विषे यज्ञकर्मकर्कै संसृष्टभयाहै मिलितभयाहै ४६

तस्माद्वर्णा ऋजवो ज्ञातिवर्णाः संसृज्यते तस्य विकार एव एकं साम यज्ञ एकं ऋगेका विप्रश्रेका निश्चये तेषु दृष्टः ॥ ४७

हे राजन् जिस हेतुसे ब्राह्मण तीनोवर्णोविषे क्षत्रियादिको विषे यज्ञविधिकर्कै मिलाहै ताते सभही वर्ण यज्ञ विधीविषे समानहै जेते ज्ञातिमात्र वर्णहै सो ब्राह्मणके विकारहै क्षत्रियादि कन्याविषे ब्राह्मणसे होतेहै सो ज्ञातिविवेकाविषे मूर्धाभिषिक्तादि नामधारक ज्ञातिविषे धर्म कर्मसे जन्म संबंधसे ब्राह्मण संसृष्टभयेहै और भी एकहेतुहै उसको भी आपनिश्चयकरो प्रथमतो सृष्टिके आदविषे एकविप्र ब्रह्माही ब्राह्मण होताभया ब्रह्मासेभी प्रथम ब्राह्मणवर्णही उत्पन्नभया उसीसे संपूर्ण वर्णोकी संतानभईहै ताते

सभही वर्ण ब्राह्मणहै इहां इह दृष्टांतहै अकारो वै सर्वावाक अकारही संपूर्णवाणीहै सोई ककारादि स्पर्शरूप पंचविंशति वर्णभेदकर्के बहुरूप भईहै जैसे अकारही सर्व वर्ण रूपहै तैसे ब्राह्मणही यज्ञकर्मके संबंधकर्के सर्व वर्णोका मूलभूतहै ताते ब्रह्माही ब्राह्मणादि वर्णरूपहै सर्व वर्णोको यज्ञादि कर्मका ब्राह्मणद्वारा अधिकारहै इसहेतुसे शूद्रको अमंत्रक पाकयज्ञादि अधिकार बनाहै ५७

अथ गाथा यज्ञगीताः कीर्तयंति पुराविदः
वैखानसानां राजेंद्र मुनीनां भिक्षुभिक्षुणां ५८

हे राजन् अहा यज्ञवासने एकगाथा विष्णुभगवानजीने कही है उसको पुरातन शास्त्रवेत्ता कहतेहै वैखानस मुनिजोहै सो यज्ञकरणेकी वांछा करतेभये तहां यह गाथा प्रवृत्तभईहै ५८

उदिते नुदिते वापि श्रद्दधानो जितेंद्रियः
वह्निं जुहोति धर्मेण श्रद्धा वै कारणं महत् ५९

उदितभया अथवा संपदाका उदेभया अथवानही ॥

वेदविधिमो कहाहै सूर्यउदेभया अथवा नहींभया श्रद्धायुक्त जितेंद्रि पुरुष अग्निको अपने धर्म कर्मकर्के होमको अग्निहोत्र करताहै उसको होमकाफल अवश्य प्राप्तहोताहै ५९

एककर्म समस्त तत्सर्वं यदेककर्म तदुत्तरम्
बहूनि यज्ञरूपाणि नानाकर्म फलानि च ६०

ऋग्वेदके बह्वृच ब्राह्मणविषे षोडशकल अग्निहोत्र कहाहै जो पूर्वला अग्निहोत्र किया विधिसे किया जो उत्तर अग्निहोत्र भी विधिसे तो बाकीके षोडशहोत्रभी यज्ञरूप बहोतहै सोभी नानाकर्म फलवाले होजातेहै ६०

नास्ति यः संप्रजानाति ज्ञान निश्चय निश्चितः
द्विजाति श्रद्धया पेतः स इष्टुं पुरुषो र्हति ६१

उनको जो ज्ञान निश्चयवाला पुरुषजानताहै ऐसा जो द्विजहै श्रद्धायुक्त सो पुरुष यज्ञपुरुष विष्णुको यजन करणेको योग्यहोताहै ६१

स्तेनो वा यदि वा पापो यदि वा पापकृत्तमः
इष्टुमिच्छति यज्ञं यः साधु मेव वदंति तम् ६२

हे राजन् स्तेन चोर होय पापीहोय अथवा महापातकादि करणिहारा अति चोर पापीहोय जो श्रद्धाकर्के यज्ञभग

वान् जिसको यजनकरा चाहताहै उसको सभही देवता मु
नि साधुकहतेहै ५३

ऋषय स्तं प्रशंसंति साधु वै तद संशयम्
सर्वथा सर्वदा वर्णो यष्टव्य मिति निर्णयः ५३

उसको सभही ऋषी साधुसेभी अति उत्तम साधुको कहकर प्रशं
सा करतेहै इसविषे संशयनहींहै याते सभही महात्मालोक
यत्नकरणाही कहतेहै जिस पुरुषने शुभफलके अनुभवकी
वांछाहोवे उसने अवश्य श्रद्धाकर्के यज्ञकर्म कर्तव्यहै ५३

न हि यज्ञ समं किंचि त्रिषु लोकेषु विद्यते
यस्माद्यष्टव्य मित्याहुः पुरुषेणा नुसूयते ५४

सर्वथा सर्वप्रकारसे यज्ञकरणा यही सभशास्त्रोंका निश्चयहै य
ज्ञके समान त्रैलोक्य विषे ओैर धर्म कर्म नहीहै ५४

श्रद्धा पवित्र माश्रित्य यथाशक्ति यथेच्छया ५५
इति शांतौ राजधर्मेषु षष्टितमोध्यायः ६०

श्रद्धाही पवित्र साधनहै ओैर श्रद्धाही पवित्रविधीहै श्रद्धा उत्तमय
ज्ञहै श्रद्धाही उत्तमफलहै श्रद्धाविना कृतकर्म अकृतहोताहै ५५
इतिश्री महाभारते शतसहस्र्यां शांतिपर्वणि राजधर्मे षष्टित
मोध्यायः ६० ॥ ॥

भीष्मउवाच आश्रमाणां महाबाहो शृणु सत्य पराक्र
म चतुर्णा मपि नामानि कर्माणि च युधिष्ठिर १

भीष्मउवाच हे सत्यपराक्रम हे युधिष्ठिर चारवर्णोंके धर्मकर्मतो
को कहेहै हे महाबाहो अब चार आश्रमोंके धर्मको कहतेहै
प्रथम तुम चार आश्रमोंके नाम कहतेहै तदनंतर कर्म
उन्हकेभी कहतेहै १ ॥

वानप्रस्थं भैक्ष्यचर्यं गार्हस्थ्यं च महाश्रमम्
ब्रह्मचर्याश्रमं प्राहु श्चतुर्थं ब्राह्मणै र्वृतम् २

हे राजन् वानप्रस्थ आश्रम भिक्षाचारीहै ओैर गृहस्थाश्रम सभसे
बडाहै ताते यह महाआश्रम ओैर ब्रह्मचर्य आश्रम प्रथमहै ओै
र चतुर्थ संन्यास आश्रमहै यह दो आश्रम ब्राह्मणोंके व्रतरूपहै २

जटा धारण संस्कारं द्विजाति त्व मवाप्य च
आधानादीनि कर्माणि प्राप्य वेद मधीत्य च ३

जब इसका जन्महोताहै तो जातकर्मादि संस्कारोंके अनंतर ब

चूडाकर्मको मुंडन संस्कारको प्राप्तहोकर्के वहोड जपधारण
रूप उपनयनके अनंतर ब्रह्मचर्य आश्रमकर्के द्विजातिभाव
को प्राप्तहोकर्के वेदोंके अध्ययनकर्के प्राप्तहोकर अग्न्याधाना
दिसंस्कार गृहस्थाश्रमविधीसे करे प्रजजन्मादिकर्के उनके
उपनयन विवाहादि कर्के वानप्रस्थाश्रमको जावे ३

सदारो वाप्यदारो वा आत्मवा नंयते न्द्रियः
वानप्रस्थाश्रमं गच्छे त्कृत कृत्यो गृहाश्रमात् ४

दारासहितजावे अथवा दारारहितहोकरजावे आत्मावेत्ताहोय
जितेंद्रियहोवे परंतु गृहस्थाश्रमसे कृतकृत्यहोजावे ४

तत्रा रण्यक शास्त्राणि समधीत्य स धर्मवित्
कुर्धरेणा प्रव्रजिता गच्छत्यन्तरसान्ततामः ५

वानप्रस्थाश्रमविषे प्राप्तहोकर तहां वानप्रस्थोविषे धर्मशास्त्रो
मोहे अरण्यवासविधीके उनको पटलेवे श्रवणभीकरे वानप्र
स्थधर्मका वेत्ताहोवे कुर्दरेताहोवे जो इसप्रकार वनविषे प्रव्र
ज्याकरे तो देहत्यागकर्के अक्षर सान्तताजोहे कैवल्यमुक्तिउ
सको प्राप्तहोताहै ५

एतान्येव निमित्तानि मुनीना मूर्धरेतसाम्
कर्तव्यानीह विप्रेणा राजन्नादौ विपश्चिता ६

हे राजन् एहीनिमित्त उर्दरेता मुनिवरोंकेहे ब्राह्मणने ब्रह्म
चर्यविषे कर्तव्यहे प्रथम आश्रममोही आदकर्तव्यहै ६

चरित ब्रह्मचर्यस्य ब्राह्मण[illegible] विष्णोपते
भैक्ष्यचर्यास्वधीकारः प्रशस्त इहमोनिनः ७

जिस ब्राह्मणने ब्रह्मचर्य करलिया और ब्रह्मचर्यसेही मोक्षवां
छाकरे भिक्षाचारीकी वृत्तिकर कहाहै ७

यत्रा स्तमित शायीस्या न्निराशी रनिकेतनः
यथोपलब्ध जीवीस्या न्मुनिर्दांतो जितेंद्रियः ८

जहां सूर्य अस्तहोय तहां शायनकरे निराशीहोय अयाचितह
त्तिहोय निवासस्थानकी रक्षारहितहोय यथेष्ट अनायासप्रा
प्तभोजनकरे मौनवृत्तिकरे जितेंद्रियहोवे ८

निराशीः स्या त्सर्वसमो निर्मोहो निर्विकारवान्
विप्रः क्षेमाश्रमं प्राप्तो गच्छत्यन्तर सान्ततामः ९

अयाचितवृत्तिहोय सर्वभूतोविषे समहोय भोगतृस्नारहितहो वे और कामसंकल्पादि विकाररहितहोवे ऐसा विप्रजोहै सो वेदोको अध्ययनकर्के वानप्रस्थ आश्रमप्राप्तभयाहै अक्षरसा म्यताजोहै ब्रह्मसायुज्यता उसको प्राप्तहोताहै ९

अधीतवेदः कृतसर्वकृत्यः संतानमुत्पाद्य सुखा नियुक्ता समाहितः प्रचरेत् दुश्चरंयो गार्हस्थ्यध र्मं मुनिधर्मजुष्टं १० ॥

हे राजन् अब गृहस्थको मोक्षप्राप्तिकहतेहै गृहस्थजोहै सो वे दोको अध्ययनकर्के गृहस्थधर्मके सर्वकृत्यका करके संतानको उत्पन्नकर्के और भोगसंपदाकोभी भोगकर्के निस्कामकर्मयोग युक्तहोवे इसप्रकार गृहस्थधर्मको करताहै कैसाहै गृहस्थध र्म उत्तममुनिजनोकर्के सेवितहै १०

स्वदारतुष्ट ऋतुकालगामी नियोगसेवी नश ठोन जिह्मः मिताशनो देवरतः कृतज्ञः सत्यो मृदुश्चा नृशंसः क्षमावान ११

वहोउ कैसाहै गृहस्थ अपनी दारा युक्तहै ऋतुकालविषे दारा विषे गमनकरणेहाराहै गुरुनियोगको सेवनेहारा यथोक्त गुरुशास्त्र आज्ञकारीहै नशठधूर्तहोय नकपटीहोय स्वल्पा हारहोय देवपूजारतहोय और कृतज्ञहोय और सत्यवक्ता होय मृदुवचनभाषीहोय [illegible]ंस दयावान क्षमावानहोय

दांतो विधेयो हव्यकव्ये प्रमत्तो ह्यन्नस्य दाता स ततं द्विजेभ्यः अमत्सरी सर्वलिंगि प्रदाता वै तान नित्यश्च गृहाश्रमीस्यात् १२

दांतहोय जितचित्तहोय हव्यकव्यमो देवपितृकार्यमो सा वधानहोय और अपने गृहसे ब्राह्मणोको अन्नदाताहोय अ मत्सर अक्रोध सर्वप्रकारके अतिथीजनोको दानदाताहोय और वेदविधीके श्रौतकर्मकर्ता नित्यहोय ऐसा गृहस्थाश्रमी होय सोभी अक्षरसात्म्यताको ब्रह्मसायुज्यताको प्राप्तहोताहै

अत्राप्य नारायण गीतमाहु महर्षय स्तातमहा नुभावा महार्हं मत्यंततमः प्रयुक्तं तदुच्यमा

श्री॰
रा॰प॰
टी॰
२२१

ते हि मया निबोध १३

हे राजन् ऐसे इस गृहाश्रमविषे नारायण मुखका एक गीतको महानुभाव ऋषिकहतेहे कैसा सो गीतहे महाश्रेष्ठ अर्थकी निष्टावालाहे अत्यंततपोयुक्तहे जिसको मैं तेरे प्रतिकहताहूं उसको तमभी विचार गोचरकरो १३

सत्या र्जवे चा तिथिपूजने च धर्म स्तथार्थे श्वरति स्वदारैः निषेवितव्यानि सुखानि लोके ह्यस्मिन् परेचैव मतं ममैतत् १४ ॥

गृहस्थ धर्मविषे सत्यबोलना और अतिथिपूजना करणा धर्मकर्मकरणा स्वदारारतहोना और शास्त्रविचारके अनुकूल सुख इसलोकविषे सेवनकरणे तब इसलोकविषे परलोक विषे अखंड आनंद होताहे यह हमारा परमश्रेष्ठ मतहे १४

भरणं पुत्र दाराणां वेदानां धारणं तथा वसता माश्रम श्रेष्टं वदंति परमर्षयः १५

गृहस्थ धर्ममो पुत्रदारादिसंबंधिजनोका पोषणकरणा वेदोक्त कर्मोका व्रतधारण करणा ऐसे गृहवास करणेहारेको यह आश्रम परम उत्तमहे ऐसे महाऋषी कहतेहे १५

एवं हि यो ब्राह्मणो यज्ञशीलो गार्हस्थ्य मध्या वसति यथावत् गृहस्थ वृत्तिं प्रविशोध्य सम्यक् स्वर्गे विशुद्धं फलमाप्नुते सः १६

हे राजन् इसप्रकार जो ब्राह्मण यज्ञशीलहोय गृहस्थधर्मविषे यथाविधि गृहविषे वसे और गृहस्थ वृत्तिको पवित्र विधीकरके शुद्धकरलेवे सो ब्राह्मणस्वर्गविषे शुद्धफलको प्राप्तहोताहे १६

तस्य देह परित्यागा दिष्टाः कामाक्षया मताः आनंत्या योप तिष्टंति सर्वतो क्षिशिरो मुखाः १७

उसका देहत्याग जो होताहे अपने प्रारब्धभोगके अंतमो होताहे परलोकविषे अक्षयकामभोग प्राप्तहोतेहे अनंतफल होने जिसको सर्वदिशाविषे नेत्रशिर मुखहोतेहे अर्थ यह हे सभही कामना उसको किंकर जैसी वश्यहोतीहे जैसा जिसकालविषे संकल्पकरे सो तत्काल सिद्धक होताहे

ब्रह्मलोकसे भी कुईगती प्राप्त होतीहै १७

समं त्रेको जप त्रेकः सर्वास्त्रेको युधिष्ठिर
एकस्मिन्नेव चाचार्ये शुश्रूषु र्मल पंकवान् १८

अब ब्रह्मचारी कोभी कैवल्य मुक्तिकहतेहैं सर्वदेवतारूप गुरुसे
वा करणेद्वारा ब्रह्मचारी स्मरन् कालविषे एक निष्ठावान् हो
य जपकालविषेभी एकरूपहोय सर्वदेवताके सन्ध्याकालमें
भी एकनिष्ठावान होताहै अथवा एकआचार्यविषेही एक नि
ष्ठाहोकर शुश्रूषा करताहै ऐसी निष्ठावाला ब्रह्मचारी अप
ने शरीरको वस्त्रभूषणादि संस्कारनहीकरे मलपंकयुक्त
जैसाहोवे १८ ॥

ब्रह्मचारी व्रती नित्यं नित्यं दीक्षा परो वशी
परिचर्यो तथा वेदं कृत्यं कुर्वन्वसे त्सदा १९

नित्यही ब्रह्मचर्य व्रतवालाहोवे नित्यदीक्षा नियमसंयुक्तहो
वे गुरोकी परिचर्याको तथा वेद वेदांतके अभ्यासको ऐसा
कृत्यको करताहुआ इसप्रकार गुरुसमीपही सदावसे १९

शुश्रूषां सततं कुर्व न्गुरोः स प्रणमेत् च
षट् कर्मस्व निवृत्त श्च न प्रवृत्त श्च सर्वशः २०

गुरुशुश्रूषाको सदाकरताहै गुरोको सदा प्रणामकरे षट्
कर्म जोहैं यजन याजन दान प्रतिग्रह अध्ययन अध्यापन अ
थवा प्राणायाम प्रत्याहार ध्यान धारणा तर्क समाधि यह
षट् कर्महैं तिन्हो विषे सदा निवृत्त नहोवे सदा प्रवृत्तभी न
होवे गुरोकी आज्ञाकरके निवृत्तहोवे औरे गुरोकी आज्ञासे
प्रवृत्तभी होवे २०

न चरत्यधिकारेण सेवेत द्विषतेन च
एषाश्रमपदं स्तात ब्रह्मचारिण इष्यते २१
इति शांतौ राजधर्मे चतुराश्रमधर्मः ६१

निग्रह अनुग्रह अधिकार करके सो ब्रह्मचारी नहीं विचरता जो
गुरु द्वेषभी तोभी सदाही सेवाकरे इसप्रकार कर्मबंधसे शु
द्ध होताहै हे राजन् ऐसा ब्रह्मचारीका आश्रमसोक्षमार्गवा
सते चाहीताहै २१ इति श्री महाभारते शांतिपर्वणि रा
जधर्मे चतुराश्रमधर्म एकषष्ठितमोध्यायः ॥ ६१ ॥

युधिष्ठिर उ॰ शिवा न्सुखा न्महोदर्का न हिंस्रां लोकसंमतान् ब्रूहि धर्मा न्सुखो पाया न्मद्विधानां सुखावहान् १ ॥ युधिष्ठिर उवाच हे पितामहजी मोको अब ऐसे धर्म कहो आरंभ कालविषे कल्याणरूप होवे और कर्तव्य कालविषे सुखकारी होवे और परिणाम कालमो अत्यंत सुखकारी होवे और हिंसारहित होवे और लोकविषे निंदाविना संमत होवे और मेरे जैसे अधिकारीको सुखोपाय होवे १

भीष्म उवाच ब्राह्मणस्य तु चत्वार स्त्वाश्रमा विहिता प्रभो वर्णा स्तान नुवर्तंते त्रयो भरत सत्तम २

भीष्म उवाच हे प्रभो ब्राह्मणको चारो आश्रम कहे है और तीन जो वर्ण है क्षत्रियादिक सो ब्राह्मण अनुसार आश्रम धर्मो विषे प्रवृत्त होते है जो धर्म ब्राह्मणोने किये है अथवा करे है जो धर्म है उन्हके अनुसार तीनवर्ण धर्मोविषे प्रवृत्त होते है ब्राह्मण गृहस्थभी होए उसको हिंसा प्रधान यज्ञादि दंडनीत्यादि धर्म कामचार है विधिप्रोक्त नही है २

उक्तानि कर्माणि बहूनि राजन् स्वर्ग्याणि राजन्य परायणानि इमानि दृष्टांत विधौ स्मृतानि क्षात्रे हि सर्वं विहितं यथावत् ३

हे राजन् गृहस्थके धर्मकर्म यज्ञादिक बहोत स्वर्गकामना वाले करे है सो धर्म कर्म क्षत्रिय परायण है यह यज्ञादिक धर्म कर्म गृहस्थमात्रके दृष्टांतरूप नही है क्षत्रधर्मविषे हि संपूर्ण गृहस्थधर्म बना है ३

क्षात्राणि वैश्यानि च सेवमानः शौद्राणि कर्माणि च ब्राह्मणः सन् अस्मिंल्लोके निंदितो मंदचेताः परे च लोके निरयं प्रयाति ४

जोनसा ब्रह्मकर्मका अधिकारी गृहस्थ ब्राह्मण गृहस्थधर्म मात्र जानकर्के क्षत्री गृहस्थके वैश्य गृहस्थके शूद्रगृहस्थके धर्म कर्मको करता है सो कामादि रागवासनाकर्के मूढचित्त है इसलोकविषे निंदाको प्राप्त होता है परलोकविषे नरकको जाता है ४

या संज्ञा विहिता लोके दासे शुनि वृके पशौ
विकर्मणि स्थिते विप्रे सैव संज्ञा च पांडव ५

हे भारत जोनसी नाम संज्ञा इसलोकविषे शूद्रकी किरातभी लोकी और पशुमृगोंकी प्रसिद्ध होतीहे सो नामसंज्ञा विपरीत कर्मनिष्ठावाले ब्राह्मणकी होतीहे अर्थात सो ब्राह्मण शूद्र चंडाल पशुमृग समान होताहे ५

षट्कर्म संप्रवृत्तस्य आश्रमेषु चतुर्ष्वपि
सर्वधर्मोपपन्नस्य संवृत्तस्य कृतात्मनः ६

हे राजन् जो ब्राह्मण योगमार्गके षट्कर्म जोहे प्राणायाम प्रत्याहार ध्यान धारणा तर्क समाधि इन्होंविषे प्रवृत्त भयाहे और यज्ञादिक जो षट्कर्म हे सो ब्रह्मचर्यादि आश्रमांतरोंविषे प्रवृत्तहे सो भी गृहस्थ ब्राह्मणको कहेहें प्राणायामादि षट्कर्म संपूर्ण आश्रमोके बनेहे ताते चारोआश्रमोके सर्वधर्म संपन्न होवे और अहिंसा धर्म संयुक्त होवे स्थिरवृत्ति होवे कृतात्मा होवे जितहोवे ६

ब्राह्मणस्य विशुद्धस्य तपस्यभिरतस्य च
निराशिषो वदान्यस्य लोका ह्यक्षर संमिताः ७

ऐसा शुद्ध आचारणवाला होवे तपस्यारत होवे और भोगवांछा रहित होवे और नित्यदान रत होवे ऐसे ब्राह्मण गृहस्थको अक्षयलोक होतेहे ७ ॥

यो यस्मिन्कुरुते कर्म यादृशं येन यत्र च
तादृशं तादृशेनैव स गुणं प्रतिपद्यते ८

हे राजन् ब्राह्मण गृहस्थको ऐसी निंदा वृत्तिकाहेतु आपसनाजो पुरुष जैसी जैसी देशकालकी अवस्थाविषे जैसे फलकी वांछा करके जोजो शुभ अशुभ कर्म करताहे उसको सोई कर्म शुभ दृष्ट होताहे आप जब विचार जानतेहे यह कर्म मोको निंदहे तब विपरीत कर्मसे निवृत्त होताहे ८

वृद्ध्या कृषि वणिक्त्वेन जीवसंजीवनेन च
वेत्तुमर्हसि राजेंद्र स्वाध्याय गणितं महत् ९

व्याज वृद्धिका जीवन करके वाणिज्यकरके कृषिकरके जीवहिंसा के जीविनकरके जीविका चाहताहे उसजीविका कर्मको अपने

विचारमो वेदाभ्यास जैसे उत्तम मानताहै ९

कालसंचोदितः कालः कालपर्याय निश्चितः
उत्तमाधम मध्यानि कर्माणि कुरुते वशः ९

यह पुरुषभावी कालकर्के प्रेरितहोताहै भावीकार्यके काल कर्के कर्मकरणे निश्चयवान होताहै उत्तम अधम मध्यम कर्मको भावीकार्य कालके वशहोकर्के उत्तमाधम मध्यम कर्मको करताहै कालवश होकर्के निंद्यकर्मको करताहै ९

अंतवंति प्रधानानि पुराश्रेयस्कराणि च
स्वकर्म निरतो लोको ह्यक्षरः सर्वतो मुखः ११

इति श्रीशां॰ राजधर्मेषु द्विषष्टितमोध्यायः ६२

हे राजन् भाविकालमो फलकरणेहारे प्राचीन पुण्य अपुण्य देह आरंभक कर्महै सोजब अंतकालवाले होतेहै तब देहकाभी अंतहोताहै देहसंबंधिजो सुख दुःखहै सो सभको अनिवार्य्यहै उस बिना शुभाशुभ प्रवृत्तिमो समर्थनही होता उसीकर्के यह पुरुष अपने इच्छाके अभीष्ट कर्मको प्रवृत्तहोताहै उसीसे सर्वतोमुखहोताहै प्रवृत्ति निवृत्तिमो स्वतंत्र प्रवृत्तहोताहै विधि निषेध शास्त्रको नहीमानता ९

इतिश्री राजधर्मे द्विषष्टितमोध्यायः ॥ ६२ ॥

भीष्मउवाच ज्याकर्षणं शत्रु निवर्हणं च कृषि र्वणिज्या पशुपालनं च शुश्रूषणं चापि तथार्थ हेतो रकार्य मेतत्परमं द्विजस्य १ ॥

भीष्मउवाच हे राजन् गृहस्थ ब्राह्मणको यहे अकर्म अकार्य है सो क्या है सनुष्यकी ज्याका आकर्षण और शत्रुमारणऔर कृषीकर्म और वाणिज्य और पशुरक्षा और द्रव्यप्राप्ति निमित्त सेवाकरण यह ब्राह्मण गृहस्थको परम अकार्यहै और क्षत्रियादि त्रिवर्णको अवश्यकार्यहै १

सेव्यं तु ब्रह्मषट्कर्म गृहस्थेन मनीषिणा
कृत कृत्यस्य चारण्ये वासो विप्रस्य शस्यते २

ब्राह्मण गृहस्थको प्राणायामादि षट्कर्म अथवा यज्ञादिषट्कर्म प्रवृत्ति निवृत्ति परहोकर सेवनीयहै ऐसे ब्राह्मण गृहस्थको कुटुंबादि पालनेमे कृत कृत्य भयाहै उसको वानप्रस्थहोक

रण अरण्यवासकरणा अभक्षकहाहे २

राज्य प्रेष्यं कृषि धनं जीवनं च वणिकाथा
कौटिल्यं च कौटिलेयं कुसीदं च विवर्जयेत् ३

राजसेवाका धन कृषीकर्मका धन जीवन और द्रव्यके ऋणदान प्रयोगकर्के वृद्धि जीवन और वाणिज्यमार्ग और कुलटास्त्री प्रसंगवाला परदारा प्रसंग कर्मकर्के जारधर्म कुटिलवृत्ति कौटिलेया मात्सर्या और धनप्रयोगका वृद्धिकर्म अवश्य त्याग करणे योग्यहे ३ ॥

शूद्रो राजन् भवति ब्रह्मबंधु दुश्चारित्रो यश्च धर्मा
दपेतः वृषली पतिः पिशुनो नर्तनश्च ग्रामप्रे
ष्यो यश्च भवेद्विकर्मा ४

जो ब्रह्मबंधु ब्राह्मण गृहस्थहे सो ऐसे कर्मकरणे कर्के शूद्र होताहे जिसका ऐसा दुश्चरित्रहे सो अपने धर्मसे चलित भयाहे जौनसा शूद्रवृत्तिका उपजीवीहे परदोषवक्ताहे नृत्यादि वृत्तिसे जीवताहे और ग्रामवासी जनोंका सेवक हे सो ब्रह्मवृत्तिके विरोधी कर्मवालाहे ४

जपं वेदान जपंश्चैव राजन् समः शूद्रैर्दासवच्चापि
भोज्यः एते सर्वे शूद्रसमा भवंति सर्वानेता
न्वर्जये देवकृत्ये ॥५॥

हे राजन् सो विप्र वेदभी पढे तोभी शूद्रोंके साथ पंक्तिमो शूद्रके समान भोजनीयहे ऐसी वृत्तिवाले ब्राह्मण शूद्रसमानहोतेहे इन्हको देवकृत्य मो वर्जदेवे ५

निर्मयादे यो शुचो क्रूरवृत्तो हिंसात्मके त्यक्तधर्म
स्ववृत्ते हव्यं कव्यं यानि चान्यानि राजन् न्देयान्यदेया
नि भवंति चास्मे ६ जो ब्राह्मण अपने ब्रह्मकर्म मर्यादसे रहितहे अशुद्ध आचारवालाहे क्रूरवृत्तिहे हिंसाकर्मपरायणहे अपने धर्मकी स्ववृत्ति जिसने त्यागकीनीहे उसविषे हव्यकव्य देव पितृकार्य और देवकर्मके योग्य अन्नदानादिकजोहे सो अदेय होतेहे ६

दमः शौच मार्जवं चा
न्तस्या धर्मो विहितो ब्राह्मणस्य

पि राजन् तथा विप्रस्याश्रमाः सर्व एव ग्रहा राजन्ब्र
ह्मणा वै विसृष्टाः ॥ ७ ॥
ताते हे राजन् ब्राह्मणका यही मुख्यधर्म है दम शौच आर्जव
प्रधान धर्म है तैसे ही ब्राह्मणको चार आश्रम सभही कहे हैं
ब्रह्माजीने प्रथमही रचे हैं ७

यः स्याद्दान्तः सोमप आर्यशीलः सानुक्रोशः सर्व
सहो निराशीः ऋजुर्मृदुरनृशंसः क्षमावान्सवै
विप्रो नेतरः पापकर्मा ८ जौनसा ब्राह्मण दांतहोवे
दमशीलहोवे सोमयाग करणे करावणे वाराहोवे और ऋजुशी
लहोवे भूतदयावालाहोवे सर्वप्रकारसे क्रोध लोभादि सहार
णेहारा होवे याचनादि आशारहितहोवे ऋजुहोवे कपटकुटि
लता रहितहोवे आचार विचारकरके मृदुभाषीहोवे और परद्रो
ह निंदा रहितहोवे और सदा क्षमा शीलहोवे सो विप्र है इतर
पापकर्मा विप्रनहीं है ८ ॥

शूद्रं वैश्यं राजपुत्रं च राजन् लोकाः सर्वे संश्रिताः ध
र्मकामाः तस्माद्वर्णान्शांतिधर्मेष्वसक्तान्मत्वा
विष्णुर्नेच्छति पांडुपुत्र ९
हे राजन् धर्मकर्म जोनसे कामवासनावाले हैं शूद्रको वैश्यको
राजपुत्रको यज्ञादि साध्य स्वर्गलोक इन्द्र तीनो वर्णोंको आश्रि
त है ताते ब्राह्मण वर्णजो है तिन्हको विष्णुभगवान शांतिध
र्मयुक्तको आत्मरूपजानते हैं और जो कामभोगकी वासनाक
री मदमत्त जो है तिन्हको आत्मरूप जैसे नहीं मानते ९

लोके वेदे सर्वलोकस्य न स्याच्चातुर्वर्ण्यं वेदवादाश्च
नस्युः सर्वाश्चेज्याः सर्वलोकक्रियाश्च सद्यः सर्वे
चाश्रमस्था नवै स्युः १० जो विष्णुभगवान ब्राह्मणादि
वर्णोंको स्वधर्म निष्ठावालेको नहीं चाहे तो सर्वलोकको चा
रवर्ण मर्यादा न होवे वेदवादके ज्ञानभी न होवे संपूर्ण य
ज्ञयागादि वेदोक्तमार्गभी न होवे और भी लोकधर्मकी कर्म
कांड क्रियाभी न होवे और सभही आश्रमधर्म निष्फलहोवे

यश्च त्रयाणां वर्णानामिच्छेदाश्रमसेवनम
चातुराश्रम्यदृष्टांश्च धर्मांस्तान्शृणु पांडव ॥

हे राजन् पांडव यो राजा ब्राह्मण वैश्य शूद्रोको अपने राज्य आश्रम धर्मका सेवनचाहे उसको चार आश्रमोके धर्मज्ञान चहे इस हेतुसे आश्रमोके धर्मको तुम श्रवणकरो ११

शुश्रूषा कृतकार्यस्य कृत संतान कर्मणः
अभ्यनुज्ञात राज्यस्य शूद्रस्य जगती पते १२

प्रथम शूद्रके आश्रम धर्म कहतेहे जिस शूद्रने तीनवर्णो की शुश्रूषाकीतीही सो वेद वेदांतके अध्ययनका अधिकारी नहीहे पुराणादि द्वारसे आत्मज्ञानके श्रवणकिया चाहता हे जब लग शरीर विद्यमानहे तबलग त्रिवर्ण सेवा जिस ने कीनीहे पुत्र संतान वृद्धिसे कृतकृत्य भयाहे राजाकी आज्ञाको प्राप्तभयाहे १२

अल्पांतरगतस्यापि दशधर्मगतस्य वा
आश्रमा विहिताः सर्वे वर्जयित्वा निराशिषं १३

अपनी आचार निष्ठासे त्रिवर्णोके समान आत्मज्ञानश्रवणका अधिकारी भयाहे और मत्त प्रमत्त उन्मत्त श्रांत क्रुद्ध बुभुक्षित त्वरमाण भीरु कामी लुब्ध इस प्रकारके दशधर्म रहितहे ऐसे शूद्रको सबही आश्रमकहेहे सो भी दंड ग्रहणादि संन्यास विनाकहेहे १३

भैक्ष्यचर्या ततः प्राहुः स्तस्य तद्धर्मचारिणः
तथा वैश्यस्य राजेंद्र राजपुत्रस्य चैव हि १४

ऐसे मोक्षमार्गकी प्रवृत्तिवाला शूद्रको केवल भिक्षाटनमात्र ब्रह्मचर्य निष्ठाकहीहै जैसे वैश्यको और राजपुत्रको वानप्रस्थ आश्रमकहाहे जैसे शूद्रकोभी कहाहे सो य तिधर्म विना कहाहे सो भी अपनी शूद्रजातिका गो पनकर्के शिष्य संप्रदाय वृद्धिको नहीकरे १४

कृतकृत्यो वयोतीतो राज्ञः कृतपरिश्रमः
वैश्यो गच्छेदनुज्ञातो नृपेणाश्रम संश्रयम्

अब वैश्यको भी आश्रम चारोके धर्म चर्या कहतेहे वैश्य जोहे सो भी अपने वैश्यवृत्तिकर्के पुत्रसंतानादि पोषणसे कृतकृत्यभयाहे राजसेवामे परिश्रम कियाहे सो राजासे आज्ञा लेकर मोक्षमार्गके निपुण आश्रम धर्मको ग्रहणकरे १५

श्री॰
रा॰ध॰
टी॰
२२५

225

वेदानधीत्य धर्मेण राजशास्त्राणि चाऽनघ
संतानादीनि कर्माणि कृत्वा सोमं निषेव्य च १६

हे राजन् अब तत्वीको मोक्ष मार्गके धर्म कहतेहैं वेदोंको धर्मशास्त्र विधीकर्के अध्ययनकर्के राजधर्मके शास्त्रोंकोभी पढकर्के और जो संतान यागादिकर्म तिन्हकोभी कर्के सोमयागादिको विषे सोमपानकर्के १६

पालयित्वा प्रजाः सर्वा धर्मेण वदतां वर
राजसूयाश्वमेधादीन्मखानन्यांस्तथैव च १७

हे वदतांवर दानदाताजनोविषे श्रेष्ठप्रजाको धर्मसे पालनकर्के राजसूय अश्वमेधादि और यज्ञोंकोभी करलेवे १७

आनयित्वा यथापाठं विप्रेभ्यो दत्तदक्षिणः
संग्रामे विजयं प्राप्य तथाल्पं यदि वा बहु १८

और यथापाठ विधिसे ब्राह्मणोंको वेदाध्ययन कराकर्के यज्ञयागादिकोविषे ब्राह्मणोंको दक्षिणादेवे और संग्रामविषे विजयको पाइकर अल्प अथवा वहोत कोशावजानेको संग्रहभी दंडकरसे करलेवे १८ ॥

स्थापयित्वा प्रजापालं पुत्रं राज्ये च पांडव
अन्यगोत्रं प्रशस्तं च क्षत्रियं क्षत्रियर्षभ १९

हे पांडव अपने राज्यविषे प्रजापालनेको अपने पुत्रको अपने गोत्रके और अधिकारीको अभिषेक विधिकर्के स्थापनकर्के १९ ॥

अर्चयित्वा पितॄन्सम्यक्पितृयज्ञैर्यथाविधि
देवान्यज्ञैरृषीन्वेदैरर्चयित्वाऽथ यत्नतः २०

पितृयज्ञोंकी विधिकर्के पितरोंकी अर्चनकर्के देवतागणके देवयज्ञोंकर्के तृप्तकरे और वेदाध्ययन विधीकर्के ब्राह्मणोंकोभी तृप्तकरे २० ॥

अंतकाले च संप्राप्ते य इच्छेदाश्रमांतरम्
सोऽनुपूर्व्याश्रमान्राजन्गत्वा सिद्धिमाप्नुयात् २१

जब अंतकाल प्राप्तहोवे तब जो अपने हितको वांछाकरे तोक्रमकर्के आश्रमांतरको ग्रहणकरे तब सिद्धीको प्राप्तहोताहै २१ ॥ ॥

राजर्षित्वेन राजेंद्र भैक्ष्यचर्यान सेवया
अपेत गृहधर्मोपि चरेजीवित काम्यया २२
हे राजेंद्र राजऋषी होके मार्गकर्के शास्त्रश्रवणकर्के भिक्षाचर्या कर्के सेवाकर्के भिक्षाचर्यानकरे शास्त्रश्रवण भिक्षाचर्यानकरे २२
नचैत नैष्ठिकं धर्मं त्यागाणां भूरिदक्षिण
चतुर्णां राजशार्दूल प्राहुराश्रम वासिनो २३
हे भूरिदक्षिण देनेहारे युधिष्ठिर संन्यास निष्ठावाला सर्वकर्मत्यागरूप यतिव्रत राजादि तीन वर्णोंको नहीहै चित्तविक्षेपकारी कामना फलवाले कर्मोंका त्यागकरणा कहाहै सो तो चारो आश्रमोविषे उचितहै २३
वाह्वायत्तं क्षत्रिये मानवानां लोकश्रेष्ठं धर्ममासेवमानैः सर्वे धर्माः सोपधर्मा स्त्रयाणां राज्ञो धर्मा दितिवेदान् शृणोमि २४ हे राजशार्दूल क्षत्रीलोक जोहै सो अपने भुजावलके अधीन होर मानुषोंके विषे श्रेष्ठ अपने धर्मकोसेवनकरतीहै ऐसे राजधर्मविषे सभही वर्णधर्म होर उपजोहै आश्रमधर्म सो सभही राजधर्मसे प्रसिद्धहोतेहै २४
यथाराजन् हस्तिपदे पदानि संलीयंते सर्वसत्त्वानि एवं धर्मा राजधर्मेषु सर्वा स्सर्वावस्थाः संप्रलीना निवोध २५ हे राजन् जैसे हस्ती पादमो संपूर्ण जीवोंके पाद सभही लीन होजातीहै ऐसेही सर्वधर्मोंको राजधर्मोविषे लीनभयेको तमजानलेवो २५
अल्पाश्रया नल्पफला न्वदंति धर्मानन्या न्धर्मविदो मनुष्याः महाश्रयं बहुकल्याणरूपं क्षात्रं धर्मं नेतरं प्राहुरार्याः २६ जोनसे धर्मवेत्ता जानहै सो होर धर्मोको स्वल्पश्रमकर्के साध्य होर स्वल्पवालेको कहतेहै जिसका सर्वधर्मोंको महाआश्रयहै होर वहोतकल्याणरूप जिसका फलहै ऐसे राजधर्मोकोही आचार्यलोक कहतेहै होर धर्मको इसप्रकार श्रेष्ठनही मानते २६
सर्वे धर्मा राजधर्म प्रधानाः सर्वे वर्णाः पाल्यमाना भवंति सर्वे त्यागा राजमूला स्तथाहु स्त्यागं धर्मं चाहुरग्र्यं पुराणम् २७

धर्मः

हे राजन् सभही धर्म राजधर्मकी प्रधानता वालेही जिसक
कें सभही वर्णधर्म पाल्यमानहे और सभही त्यागधर्म राज
धर्म मोही हे ताते सर्वधर्मों विषे राजधर्मही पुरातन श्रेष्ट
बनाहे २७

सज्जेत्रयी दंडनीतौ हतायां सर्वेधर्माः प्रक्षयेयुर्विबु
द्धाः सर्वेधर्माः श्राश्रमाणां हताः स्युः क्षात्रे त्यक्ते राज
धर्मे पुराणे २८ जो राजधर्मकी दंडनीति हत होजावे वे
दत्रयी जोहे सो अपने धर्मसंयुक्त अधर्म समुद्रमो डूबजावे
और जेते वर्णधर्म प्रसिद्धहे सो सभकी क्षयको प्राप्तहोजावे और
सभही आश्रमोके धर्मकी हतहोजावे जो क्षत्रियोका पुरातन
राजधर्म नष्टहोवेतो २८

सर्वे त्यागा राजधर्मेषु दृष्टाः सर्वे दीक्षा राजधर्मेषु चो
क्ताः सर्वाविद्या राजधर्मे प्रविष्टाः सर्वे लोका राजध
र्मे प्रदिष्टाः २९ ॥ सभही त्याग हमने राजधर्ममो देखेहे
और सभही यज्ञव्रतादिदीक्षा राजधर्म विषे कहीहे और सभही
वियाभेद राजधर्मविषे युक्तहे और सभही लोकमर्यादाके ध
र्म राजधर्मविषेही प्रतिष्ठितभयेहे २९

यथा जीवाः प्राकृतै र्वध्यमाना धर्मश्रुतानामुपपी
डनाय एवं धर्मा राजधर्मै र्वियुक्ताः संचिन्वंतो ना
द्रियंते स्वधर्मं ३० इति राजधर्मे त्रिषष्टितमोध्यायः

हे राजन् जैसे मृगादिक जीवजोहे नीचलोकोंकरके मारेजाते
हे हिंसाकरणेहारेके धर्मकर्मशास्त्रश्रवणादिकजोहे तिन्ह
के नाशकारी होतेहे इसी प्रकार राजधर्मजोहे दंडनीति आ
दिक उसके विनाशकरके जो स्वर्गादिक धर्मजोहे अग्निहोत्रादिक
सो भी धर्म कर्मके कर्तालोक जोहे तिन्हको ढूंडतेहे उन्हके
कर्ताजोहे धर्मकर्म करणेको स्वस्थ नही होते उन्हके धर्म
कर्मके शुभ फल उन्हको नही प्राप्तहोते ताते संपूर्ण धर्म
कर्मोका मूल राजधर्मही हे सोई श्रेष्ठधर्महे ३०

इति श्री महाभारते शतसाहस्र्यां संहितायां वैयासिक्यां शां
तिपर्वणि राजधर्मे त्रिषष्टितमोध्यायः ॥ ६३ ॥

भीष्मउवाच चत्वराश्रम धर्माश्च यति धर्माश्च पांडव
लोके वेदोत्तराश्चैव क्षात्रधर्मे समाहिताः १

भीष्मउवाच हे पांडव चारोआश्रमोके धर्मजोहे और यति धर्म जोहे लोकप्रसिद्ध और लोकप्रसिद्ध और वेदोक्त सो सभही क्षत्रधर्ममो स्थितहै १॥

सर्वाण्येतानि कर्माणि क्षात्रे भरत सत्तम
निराशिषां जीवलोकाः क्षत्रधर्मव्यवस्थिते २

ताते हे भरतश्रेष्ट जेते यहधर्म करमहे सो सभही क्षात्रधर्ममोहे और जेते निर्वासन जीवलोकके जीवनमुक्तोके धर्महै सोभी क्षत्रधर्मकी व्यवस्थामो होतेहै २

अप्रत्यक्षं बहुद्वारं धर्ममाश्रमवासिनाम्
प्रकोपयंति तद्भाव मागमै रेव शाश्वतम् ३

और आश्रमवासीयोंका जो धर्महे सो बहुद्वारहै उसमो जेते इंद्रियद्वारहै सो सभही उसधर्मको क्षोभकरतेहे उन्हकाफल अप्रत्यक्षहे उन्हके विरोधी अनेकशास्त्रमत बनेहे तिन्होकर्के और तीन आश्रमोके धर्मसाथ विरोध सदावनाहे ३

अपरे वचनैः पुण्यैः वादिनो लोक निश्चयम्
अनिश्च यज्ञा धर्माणा मदृष्टांते परेहताः ४

जिसका दृष्टांत प्रत्यक्ष दृष्टनहीहोता ऐसे परमअव्यक्तधर्मविषे जिन्हके बुद्धिहत होतीहे ऐसे नष्टबुद्धि जो बुद्धिवादीजनहै अपनेकथताके पुण्यवचनोंकर्के धर्मनिश्चयको नहीजानते सो अव्यक्त धर्मके निश्चयको विगाडदेतेहे ४

प्रत्यक्षं सुखं भूयिष्ट मात्म साक्षिक मछलम्
सर्वलोकहितं धर्मं क्षत्रियेषु प्रतिष्टितम् ५

और यह जो क्षत्रियधर्महे सो प्रत्यक्ष फलको सिद्धकरताहे प्रत्यक्ष हर्षमानसहाय साधन सामग्रीकर्के सुखरूपहे इसमो अहंपना आत्माभी प्रत्यक्षसाधनसाक्षीहे और इसमो छलकपटकी प्रधानता नहीहे और धर्ममर्यादाकी पालनासे सर्वलोकहितहै ताते सभही धर्म क्षत्रधर्मोविषे प्रतिष्ठितभयाहै ५

धर्माश्रमे व्यावसिनां ब्राह्मणानां युधिष्टिर

यथा त्रयाणां वर्णानां संख्यातोपश्रुतिः पुरा ८

जैसे स्वधर्मप्रधान गृहस्थाश्रमविषे तीनोवर्णोके धर्मोका अं तर्भावबनाहै तैसे वनवास व्रतादि निष्ठावाले वानप्रस्थयति ब्रह्मचारि ब्राह्मणोके धर्मोका अंतर्भाव लोकधर्मोके साथ अंतर्भाव बनाहै ८

राजधर्मेष्वंतर्भावा लोकाः स्वचरितैः सह
उदाहृतं ते राजेंद्र यथाविष्णुं महौजसम् ७

राजधर्मविषे सभही लोक अपने धर्मचारोकर्के सहित स्थि रभयेहै हे राजेंद्र यह निश्चय हमने तोको पूर्वलेकथा प्रस ंगमो विरजाके प्रादुर्भावमो कहाहै जिसप्रकार महाप्रभाव युक्तजो विष्णुभगवानजी तिन्हका धर्मसिद्धांत श्रवणोको सभ ही देवताऋषी राजालोक उपासना करतेभये ७

सर्वभूतेश्वरं देवं प्रभुं नारायणं पुरा
जग्मुः सुबहुशः शूरा राजानो दंडनीतये ८

कैसेहै विष्णुभगवानजी सर्वभूतोके ईश्वरहै सर्वजगतके प्र भुहै ऐसे नारायणदेवको बहोत शूरमा राजालोक दंड नीतिकी जिज्ञासावास्ते जातेभये ८

एकैकमात्मनः कर्म तुलयित्वाश्रमं पुरा
राजानः पर्युपासंते दृष्टांतवचने स्थिताः ९

एकैक आश्रमके धर्मको राजधर्मके साथ प्रथम तुलता कर तेभये दृष्टांतवचनोके निश्चयमो स्थितहोकर राजालोक राज धर्मको उपासन करतेहै ९

साध्या देवा वसवश्चाश्विनौ च रुद्राश्च विश्वे मरुतां ग णाश्च सृष्टाः पुरा आदिदेवेन देवाः क्षात्रधर्मे वर्तयंते च सिद्धाः १०

हे राजन साध्यदेवता वसुदेवता अश्विनी कु मार और एकादशरुद्र इन्हाविश्वेदेव और मरुतोंके गण यह स भही देवता आदिदेव भगवान प्रजापतीने जेते यह देवता प्रथम सृष्टिकालमो सृजेहै सो सभही क्षत्रधर्ममो वर्तमानभ ये तब अपने अपने अधिकारमों प्रसिद्धभयेहै १०

अत्रते कथयिष्यामि धर्ममर्थविनिश्चयम्

निर्मर्यादे वर्तमाने दानवै कार्णवे पुरा ॥ ११

हे राजन् अब तुमको अर्थ सिद्धि निश्चयके धर्मरहस्यकोकह तेहैं पूर्व एक समयमों जब जगत निर्मर्याद धर्मके एक समुद्रमों प्रवृत्तभया ११

बभूव राजा राजेंद्र मांधाता नामवीर्यवान्

पुरा वसुमती पालो यज्ञं चक्रे दिदृक्षया १२

तब हे राजेंद्र मांधाता नामकर्के प्रसिद्ध महावीर्यवान राजा होताभया सो राजा प्रथम समयमों विष्णुभगवानजीकी ध्यानवांछाकर्के यज्ञको करताभया १२

अनादि मध्य निधनं देवं नारायणं प्रभुम्

सराजा राजशार्दूल मांधाता परमेश्वरम् १३

विष्णुभगवान अनादि निधनहे आदि देवहै साक्षात नारायण प्रभुजी परमेश्वरको दर्शनकरणेकी वांछाकरता भया १३

जग्राह शिरसा पादौ यज्ञे विष्णो र्महात्मनः

दर्शयामास तं विष्णू रूपमास्थाय वासवं १४

तब सो राजा मांधाता यज्ञविषे विष्णुभगवानजीके चरणेको ध्यानकर्के शिरकर्के ग्रहणकरताभया भगवानजी उस महात्माराजाको इंद्रके स्वरूपको धारकर्के राजाको दर्शन प्रत्यक्षदेतेभये १४

स पार्थिवै र्वृतः सद्भि रर्चयामास तं प्रभुं

तस्य पार्थिव सिंहस्य तस्य चैव महात्मनः १५

सो राजा मांधाता यज्ञशालामो जेते उत्तम राजालोकहै तिन्हकर्के संयुक्त इंद्ररूपी भगवानजीको विधिकर्के पूजनकरताभया तब उस महात्मा राजाके साथ महातेजके प्रभाव संयुक्त विष्णुभगवानजीके दर्शनवांछा निमित्त इंद्ररूप विष्णुकासंवाद होताभया १५

संवादोयं महानासी द्विष्णुंप्रति महाद्युते

इंद्रउवाच किमिष्यते धर्मभृतां वरिष्ठ यद्द्रष्टुकामोसितमप्रमेयं अनंतमाया मितमंत्रवीर्यं नारायणं ह्यादिदेवं पुराणम् ॥ १६ ॥

इंद्रउवाच हे धर्मधारी राजा लोकोंविषे श्रेष्ठ मांधाता हे राजन् तू अमित अप्रमेयरूप विष्णुको क्यों देष्याचाहताहै विष्णुतो अनंतमायावानहै अमित मंत्रवीर्यसंयुक्तहै सो नारायण आदि देवहै ॥ १६ ॥

नासौ देवो विश्वरूपो मयापि शक्यो द्रष्टुं ब्रह्मणा वापि साक्षात् येऽन्ये कामा स्तव राजन् हृदिस्था दास्ये चैतां स्त्वं हि मर्त्येषु राजा १७

सो विश्वरूप नारायण देव मेंनेभी दर्शन करणेको शक्यनही है ब्रह्मानेभी दर्शन करणेको अशक्यहै तू क्यों साक्षात् दर्शनकिया चाहताहै जो तेरे हृदयमो ओर कामना स्थित है इन्हको मैंहीदाताहै तू मनुष्यलोकोंविषे आपराजाहै तो को ओर क्या कामना बाकीहै जिसवास्ते तू विष्णुको साक्षात् दर्शन किया चाहताहै १७

समेस्थितो धर्मपरो जितेंद्रियः शूरो दृढं प्रीतिरतः सुराणां बुद्ध्या भक्त्या चोत्तमः श्रद्धयाच ततस्तेऽहं दद्मिवरा न्यथेष्टम् १८

हे राजन् ऐसा तू राजाहै धर्मपरायणहै जितेंद्रियहै ओर महासूरमाहै ओर देवतागणोकी प्रीतिमो रतहै उत्तम बुद्धी करके संयुक्तहै ओर श्रद्धाकरके संयुक्तहै ताते जो तेरे मनमो कामनाहै सो मेरेसेवांछाकर मे तेरेको यथेष्टवरोंको देताहूं १८

मांधाताउवाच असंशयं भगवा न्नादिदेवं द्रक्ष्यामि त्वां शिरसा संप्रसाद्य त्यक्ता कामा न्धर्मकामो ह्यरण्य मिच्छेगंतुं सत्पथं लोक दृष्टं १९ मांधातोवाच हे भगवन् मे तो साक्षात् आदिदेव नारायण तोकोही जानकर शिर करके प्रणामकर्के ओर प्रसन्नकरके संपूर्ण कामनात्यागकर्के धर्मतत्वको ज्ञानवास्ते अरण्यको यात्राकरे चाहताहुं ओन सो संतजनोका मार्गलोकमों देखाहै १९

क्षात्राधर्मा विपुला दप्रमेया लोकाः प्राप्ताः स्थापितं संयशश्च धर्मोयोसा वादिदेवा त्प्रवृत्तो लोकश्रेष्ठं तं नजानामि कर्तुम् २०

यह क्षत्रियोंका धर्म अप्रमेयहै इससे मोकों अप्रमेय लो
कप्राप्त भये है इसीकर्के मेने यशूभी लोकविषे स्थापनकिया
है इस क्षत्रधर्मसे जोनसा औेर जो धर्म आदिदेव भगवानसे
प्रवृत्तभयाहै ऐसे लोकविषे श्रेष्टधर्मको मेनहीकरजान
ता तिसधर्मकर्के धर्मभगवानमेरेविषे प्रसन्नहोवे २०
इंद्रउवाच असैनिका धर्म परास्त्रधर्मे परांगतिं नव्र
जंतेहियुक्ते क्षात्रो धर्मो ह्यादिदेवात्प्रवृत्तः पश्चा
दन्ये शेषभूताश्च धर्माः २१ इंद्रउवाच हेराजन् राजध
र्मसे इतरजो धर्महे राजधर्मके सहायविना परमगतिको पुरु
षको नहीप्राप्तकरसकते राजालोक जोहे सो विधिसंयुक्त नि
जधर्मके प्रयोगकर्के आपही परमगतिको जातेहे ताते यह
राजधर्महीं प्रथम आदिदेवभगवानसे प्रवृत्तभयोहे पश्चात्
औेर धर्म प्रवृत्तभयेहे सो राजधर्मके अंगभूतहे २१
शक्याः स्रष्टा ह्यंतवंतो ह्यनंताः सुप्रस्थानाः क्षात्रध
र्मा विशिष्टाः अस्मिन्धर्मे सर्वधर्माः प्रविष्टास्तस्मा
द्धर्मं श्रेष्टमिमं वदंति २२
औेर धर्मजो स्रष्टकियेहे सो संन्यासधर्म संयुक्त सभही विप्रप्र
संगसे अंतवंतफलवालेहे क्षात्रधर्मसे सभही अवशिष्टहे
असारहे इसधर्मविषे सभही अंतर्भूतहे ताते इसी क्षात्रध
र्मको सर्वधर्मोविषे श्रेष्टकहतेहे २२
कर्मणा वै पुरा देवा ऋषयश्चामितौजसः
त्राताः सर्वे प्रसह्यारीन् क्षत्रधर्मेण विष्णुना २३
हे राजन् विष्णुभगवानजीने रणक्रियाकर्के अतिबलजो
शत्रुगण असुर उन्हको जीतकर सभही देवता ऋषिगण
अपने बलसे प्रथमरक्षितकियेहे २३
यदिह्यसौ भगवान्नाहनिष्यद्रिपून् सर्वान्वसुमान
प्रमेयः न ब्राह्मणा नच लोकादिकर्ता न सद्धर्मा ना
दिधर्मा भविष्यन् २४ जो भगवान विष्णु रणक्रियारूप इस
क्षत्रधर्मकर्के अमितबल शत्रुभूत असुरोंको नही मारते तो
न ब्राह्मणोंके धर्मबाकी रहते न लोक धर्मबाकी रहते न औेर

संन्यासादि धर्मवाकी रहते २४

इमामुर्वी नाजय द्विक्रमेण देवः श्रेष्ठः साधवा मा दिदेवः चातुर्वर्ण्यं चातुराश्रम्यधर्माः सर्वेनस्युर्ब्री ह्मणानां विनाशात् २५

जो आदिदेव भगवान् असुरगण संयुक्त इस पृथिवीको अप ने विक्रमकर्के नहीं जयकरते तो चारवर्ण ऊर चार आश्रम वाकीनहीरहते ऊर इन्हके धर्मभी वाकीनहीरहती सभही धर्म क्षत्रधर्मविना ब्राह्मणोके विनाशसे नष्टहोजाते २५

नष्टाधर्माः शतधा साश्वतास्ते क्षात्रेण धर्मेण पुनःप्र वृद्धाः युगेयुगे ह्यादिधर्माः प्रवृत्ताः लोकाज्येष्ठं क्षात्र धर्मं वदंति २६ जव जोनसे प्रासक्से प्रवृत्तभये लोक है वर्णाश्रमधर्म नष्टहोगये तव सोई धर्म क्षत्रधर्मकर्के पुन प्रवृत्तभयेहे जोजो युगविषे आदसनातन धर्मप्रवृत्तभयेहे सो सो क्षत्रधर्मकी प्रवृत्तिसे स्थितभयेहें ताते लोकविषेश्रेष्ट धर्म क्षत्रधर्मकोही कहतेहे २६

आत्मत्यागः सर्वभूतानुकंपा लोकज्ञानं पालनं मोक्षणं च विसंमानं मोक्षणं पीडितानां क्षात्रेधर्मे विद्यते पार्थिवानां २७ हे राजन् क्षत्रधर्मविषे यह महा विचित्रफलहे अपने शरीरआदिके त्यागमात्रसे सर्वभूतोविषे दयाहोतीहे लोकव्यवहारका ज्ञानहोताहे ऊर लोक जो आ पदापीडितहोतीहे उन्हकी आपदाका मोक्षणहोतीहे यह स भहीफल क्षत्रधर्मविषे राजालोकोकोहोताहे २७

निर्मर्यादाः काममन्यु प्रवृत्ता भीता राज्ञो नाधिगच्छं तिपापं शिष्टाश्चान्ये सर्वधर्मोपपन्नाः साधाचा राः साधुधर्मं वदंति २८

जो लोकधर्ममर्यादाज्ञानसे रहितहे सो कामक्रोधविषे प्रवृ त्तहोतेहे सोभी राजाके भयसे पापकर्मको नहीकरते ऊर जेतेशिष्टलोकहे सोभी अपनी अपनी धर्ममर्यादासे पन्न साधुआचार निष्टावाले राजाकी पालनासे होतीहे इसी हेतुसे राजधर्मको श्रेष्टजानतेहो २८

पुत्रवत्पाल्यमानानि राजधर्मेण पार्थिवैः
लोके भूतानि सर्वाणि चरंते नात्र संशयः २९
जेते इस पृथिवीविषे भूतहै सो राजा लोकोने राजधर्मकर्के पुत्र
के समान पालनकियेहुए सुखसे विचरतेहै इसमोंसंशयनही
है २९ सर्वधर्मपरं क्षात्रं लोकश्रेष्ठं सनातनम्
शाश्वदक्षरपर्यंतं मक्षरं सर्वतोमुखम् ३०
इतिशांतौ राजधर्मे चतुःषष्टितमोध्यायः ६४
सर्वधर्मोका मूल क्षात्रधर्महै लोकविषे उहीश्रेष्टहै औरसना
तनहै सदाप्रवृत्तहै और अक्षरगतीजो मोक्षप्राप्ती उसकोंअं
तकालमों करदेताहै इसकारणसे अविनाशीहै सर्वप्रकार
से सर्वधर्मोकी रक्षामो मुख्यहै ३० इतिश्रीमहाभारते शां
तिपर्वणि राजधर्मे चतुःषष्टितमोध्यायः ॥ ६४ ॥
इंद्रउवाच एवंवीर्यः सर्वधर्मोपपन्नः क्षात्रः श्रेष्ठः सर्व
धर्मेषुधर्मः पाल्योयुष्माभिर्लोकहितैरुदारैः विप
र्यये स्यादभवः प्रजानां १
इंद्रउवाच हे मांधाता हेराजन् यह क्षात्रधर्म ऐसी सामर्थ्य
युक्तहै ताते सर्वधर्मोविषे क्षात्रधर्महै श्रेष्टधर्महै सो आपजै
से उदार राजालोकोने सदापालनीयहै इसके विनाशमो स
र्वप्रजालोकोंका विनाशहोजाताहै १
भूसंस्कारं राजसंस्कारयोगमभैक्ष्यचर्यां पालनं प्रजानां
विद्याद्राजा सर्वभूतानुकंपी देहत्यागं चाहवे धर्ममग्र्यम् २
पृथिवीमो अन्नसंपदाका जो संस्कारहै और राजसूय अश्वमे
धादियज्ञोंका राजसंस्कारयोगजोहै औरसंन्यासयोगकी भिक्षा
चर्याजोहै और प्रजाका पालनजोहै इन्होंकोराजा सर्वभूतोवि
षे दयाकरणेहारा राजधर्मसेही सिद्धजाने और अपना देह
त्याग जो धर्महै उसको रणविषेही उत्तमधर्मजाने २
त्यागंश्रेष्ठं मुनयोवै वदंति सर्वश्रेष्ठं यच्छरीरंत्यजेन
नित्यं युक्ता राजधर्मेषु सर्वे प्रवृत्तंते भूमिपाला यथैव ३
हेराजन् सभही मुनिलोक सर्वत्यागको जो श्रेष्ठमानते सो

230

सर्वत्यागसे अपने शरीरका त्यागही परमश्रेष्ठत्यागहै इसी
हेतुसे जो राजधर्मविषे श्रेष्ठराजालोकहै सो तलवारे सन्मुख
ही राजधर्मके योगकर्के रणविषे शरीरत्यागको करते देखेहै ३

वेदाञ्छ्रुत्वा गुरुशुश्रूषया च परस्परा: संहननाद्वदंति
नित्यं धर्मं क्षत्रियो ब्रह्मचारी चरेदेको ह्याश्रमं धर्मकाम: ४

वहोत शास्त्रश्रवणकर्के और आर्यलोकोकी सेवाकर्के परस्प
रसंवादके विचारसे यह क्षत्रधर्म सभ उत्तमजनोने नित्य
धर्मनिष्ठावाला मानाहै ताते जो एकधर्म निष्ठावालाहै और
ब्रह्मकर्मको वेदधर्मको ब्रह्मचारी जैसा धर्मरक्षाकी कामना
वाला अपने धर्मको सदा आचरणकरे ४

सामान्यार्थे व्यवहारे प्रवृत्ते प्रियाप्रिये वर्जयन्नेव यत्नात्
चातुर्वर्ण्यस्थापना पालनाच्च तैस्तैर्योगैर्नियमैरौरसैश्च ५

जो सर्वजीवोके समान अर्थवाले प्रजापालनरूपी व्यवहारवि
षे प्रवृत्तहोवे तो अपने शरीरके प्रियअप्रियको यत्नसे त्यागक
रे चारवर्णोके धर्ममर्यादा स्थापनसे और पालनेसे जो जो राजा
धर्मके उपयोगहै तिन्होकर्के अपने हृदयके विश्वासी अमात्या
दिपुरुषोकर्के राजधर्मकोही राजा आचरणकरे ५

सर्वायोगै राश्रमं धर्ममाहु: क्षात्रं श्रेष्ठं सर्वधर्मोपपन्नं
स्वंस्वं धर्मं येन चरंति वर्णास्तांस्तान्धर्मान्नन्यथार्थान्व
दंति ६ ॥ इस क्षात्रधर्मको सर्वप्रकारके प्रयत्नोकर्के स
र्वधर्मोविषे सर्वधर्मोका मूलधर्म श्रेष्ठकहतेहै जिसकी
रक्षाबलसे सभही वर्ण अपने अपने धर्मको आचरणक
रतेहै इसकी मर्यादाविना सभही वर्ण अपने अपने धर्मो
कोही अन्यथाकल्पनाकरके अन्यथाही कहदेतेहै ६

निर्मर्यादा नित्यमर्थे निविष्टा नाहु: क्षात्रं पशुभूता
मनुष्यान् यथानीतिं गमयत्यर्थयोगाच्छ्रेयस्तस्मादा
श्रमात्क्षात्रधर्म: ॥ ७ जो जो धर्म अपने अपने धर्मोको अन्य
था अन्यथा कहतेहै केवल भोगसंपदाके सो आप धर्ममर्यादा
से रहितहोतेहै केवल भोगसंपदाके अर्थमो प्रविष्टहोतेहै
मनुष्यरूपसे पशुभूतहै ऐसे लोकोको यह राजधर्म अपने
यथार्थ दंडनीतिके योगसे नीतिमार्गमो युक्तकरदेताहै ताते

संपूर्ण आश्रम धर्मोसे क्षात्रधर्मही परमश्रेष्टहे ७

त्रैविद्यानां या गतिर्ब्राह्मणानां येचैवोक्ता आश्रमा ब्राह्मणानां एतत्कर्म ब्राह्मणस्याऽकरिष्यन् मन्यु क्रुर्व शूद्रवच्छस्त्रवध्यः ८ हे राजन् जोनसी गती वेदत्रयी धर्मकर्मयुक्त ब्राह्मणोकोहोतीहे और जोनसे ब्रह्मचर्यादि आश्रमोविषे ब्राह्मणोके बनेहे सोइ दोनो ब्राह्मणोको उत्तमकर्म कहेहे इन्हसो भिन्नजो और धर्म कर्मको करताहे सो शूद्रकी न्याई दंडयोग्य होताहे ८ ॥

चातुराश्रम धर्माश्च वेदधर्माश्च पार्थिव
ब्राह्मणेनानुगंतव्या नान्यो विद्यात्कदाचन ९

चारवर्णोकीधर्म और वेदत्रयीके धर्म जो हे तिन्हको ब्राह्मणही पावे और कदापिनही पावेगा ९

अन्यथा वर्तमानस्य नासो वृत्तिः प्रकल्प्यते
कर्मणा वर्धते धर्मो यथा धर्मस्तथैव सः १०

ब्राह्मण अन्यथा धर्ममो प्रवृत्तहोवे उसको ब्रह्मवृत्तिकी कल्पना नही बनती वेदोक्त कर्मोकर्के धर्मवृद्धिहोतीहे जेसे धर्मकरे तेसाही सो पुरुषहोताहे १०

यो विकर्म स्थितो विप्रो न स संमान मर्हति
कर्मस्वेनोपसंज्ञान मविश्वास्यः स्मृतो विदः ११

जो ब्राह्मण विपरीत कर्ममो स्थितहे सो विप्रताके संमानको योग्यनहीहे अपने वर्तमान कर्ममो जेसा प्रकटभयाहे सो तेसाहीहे उसका विश्वासकरणा योग्यनहीहे ११

एतेधर्माः सर्ववर्णेषुलीना उत्क्रष्टव्या क्षत्रियैरेषधर्माः
तस्माज्ज्येष्ठा राजधर्मा न चान्ये वीर्यज्येष्ठा वीरधर्मा मता मे

जेते वर्णधर्महे सो क्षत्रधर्मकी मर्यादाविना सर्ववर्णोविषेलीन होजातेहे सो क्षत्रियोने राजधर्मकर्के वहोउ उद्धारकरके यथायोग्य व्यवस्थासे स्थापनकरणेयोग्यहे ताते क्षत्रियोने एही धर्मकरणेयोग्यहे क्षत्रियोके सबही धर्मज्येष्टहे श्रेष्टहे और धर्म राजधर्मोसे श्रेष्टनहीहे हेवीर हे राजन् यह तुम्हारे धर्मवीरताकर्के ज्येष्टहे ताते एही वीरधर्म मेनेमानेहे १२

सांधारनाऽकवाच यवनाः किराता गांधाराः चीनाः शबर

१२

श्री॰
रा॰प॰
टी॰
२३१

231

बर्बराः शाकास्तुषाराः कंकाश्च पल्हवाश्चांद्र मद्रकाः ॥१३॥
मांधातोवाच हेदेव अपने राज्यमो वर्तमान यवनजोहे किरात जोहे गांधारजोहे चीनदेशजोहे शावरजोहे बर्बरजोहे शाक जोहे तुषारजोहे कांबोजजोहे पल्हवजोहे अंध्रजोहे मद्रकजोहे ॥१३॥

पौंड्राः पुलिंदार मटाः कांबोजाश्चैव सर्वशः
ब्रह्मक्षत्र प्रसूताश्च वैश्याः शूद्राश्च मानवाः ॥१४॥
और पौंड्रकजोहे पुलिंदजोहे मटजोहे और क्षत्रियोनिके व्यभिचार से प्रसूतभये जो वैश्यशूद्र जातिसमानहे ॥१४॥

कथं धर्मांश्चरिष्यंति सर्वे विषय वासिनः
कथं स्थाप्या मद्विधैश्च सर्वे वै दस्युजीविनः ॥१५॥
यह सभही हमारे राज्यदेशके निवासीहे यह कैसे धर्मोको आ चरणकरेंगे और मेरे जैसे मनुष्यलोकके राजाने धर्ममर्यासे स्था पनकरणेहे यह सभही धर्मकर्म चोरवृत्तिवालेहे ॥१५॥

एत दिच्छाम्यहं श्रोतं भगवं स्तद्ब्रवीहि मे
त्वंबंधुभूतो ह्यस्माकं क्षत्रियाणां सुरेश्वर ॥१६॥
हे भगवन् यह मे सुनाचाहताहूं आपसेको व्यवस्थासे कहो हे सुरेश्वर तू हमजैसे क्षत्रिलोकोंको साक्षात् बंधुरूपहे ॥१६॥

इंद्रउवाच माता पित्रोश्च कर्तव्या शुश्रूषा सर्वदस्युभिः
आचार्य गुरु शुश्रूषा तथैवाश्रम वासिनाम् ॥१७॥
इंद्रउवाच हेराजन् जो ऐसे धर्मकी चोरीवृत्तिवाले विपरीत वर्णहे तिन्होने अपने मातापिताकी सेवाकर्तव्यहे आचार्योकी सेवा गुरोकीसेवा और आश्रमवासी तपस्वी जनोंकी सेवाकर्तव्यहे ॥१७॥

भूमिपानां च शुश्रूषा कर्तव्या सर्वदस्युभिः
वेद धर्म क्रिया श्चैव तेषां धर्मो विधीयते ॥१८॥
और राजालोकोंके सेवा अवश्यकर्तव्यहे ऐसे चोरवृत्तिवाले ज नोंको राजसेवाविना और धर्मकर्म नहीहे और देशकालके अ नुसार दानभी दातव्यहे और वेदोक्त धर्मक्रियाभी इन्हको धर्म जानकर्के कर्तव्यहे ॥१८॥

पितृयज्ञास्तथा कूपाः प्रपाश्च शयनानि च
दानानि च यथाकालं द्विजेभ्यो विसृजेत्सदा ॥१९॥
पितृयज्ञ कर्तव्यहे कूपादिजलाशयकर्तव्यहे और जलपान की निवासकी अन्नदानकी धर्मशालाकर्तव्यहे और यथाका

ले पाइकर ब्राह्मणोको दानभी दातव्यहे १९

अहिंसा सत्यमक्रोधो ह्यनिदायाञ्च पालनं
भरणं पुत्रदाराणां शौचमद्रोह एव च २०

अहिंसा ओर सत्य अक्रोधभी कर्तव्य ओर दीनदुःखी जनोका पालन कर्तव्यहे ओर अपने पुत्रदारादि संबंधिजनोका पोषण कर्तव्यहे ओर शौच ओर अक्रोधभी कर्तव्यहे २०

दक्षिणा सर्वयज्ञानां दातव्या भूति मिच्छता
पाकयज्ञा महार्घाश्च दातव्याः सर्वदस्युभिः २१

ओर दक्षिणाभी सर्वयज्ञोकी दातव्यहे अपनी कल्याण संपदाकी वांछावास्ते पाकयज्ञ निमित्त ब्राह्मणोको धनदेना ओर श्राद्ध विषे ग्रामअन्न तथा सुवर्णादि दक्षिणादातव्यहे महासंपदा श्रद्धावासते जेते यह धर्मकर्मके चोरह्मलोक हे तिन्होने महादानभी अवश्य दातव्यहे २१

एतान्येव प्रकारेण विहितानि पुरानघ
सर्वलोकस्य कर्माणि कर्तव्यानीह पार्थिव २२

यह एतेही धर्मकर्मके प्रकार पुराकालमो सर्वलोकके हितवास्ते विधिसे कल्पित कियेहे हे अनघ हे राजन् एही तेनेभी कर्तव्यहे २२

मांधातोवाच दृश्यंते मानुषे लोके सर्ववर्णेषु दस्यवः लिंगांतरे वर्तमाना आश्रमेषु चतुर्ष्वपि २३

मांधातोवाच हे देव इस मनुष्यलोकविषे सर्ववर्णोविषे अपने धर्ममर्यादाकी चोरीसे अनेक एसी चोरहत्तिवाले दृष्ट होतेहे सो अनेक धर्म चिन्होकर्के वर्तमान संपूर्ण आश्रमोविषेभी दृष्ट होतेहे इन्हकी उत्पत्तीका हेतु क्याहे उसको कहो २३

इंद्रउवाच विनष्टायां दंडनीतो राजधर्मे निराकृते संप्रमुह्यंति भूतानि राजदोरात्म्यतो नच २४

इंद्रउवाच हे अनघ हे राजन् जब राजाकी दंडनीति नष्ट होतीहे राजधर्मका लोप होजातेहे तब सभही भूत अपने धर्मके मोहको प्राप्त होताहे इसका हेतु राजाके दुष्टिसे होताहे २४

असंख्याता भविष्यंति भिक्षवो लिंगिन स्तथा
आश्रमाणां विकल्पाश्च निवृत्तेस्मि न्कृते युगे २५

जो ऐसा राजनीतिका राजधर्मरूपी सत्ययुग निवृत्तभया
तो असंख्यात ऐसे धर्मलिंगी पाखंडरूपी अनेक भिक्षुक
मवाले होवेगें यही राजकृत दोषबनाहै २५

अक्षुण्वानाः पुराणानि धर्माणां परमागतीः
उत्पथं प्रतिपत्स्यंते काममन्यु समीरिता २६

जोनसी प्रत्यक्ष पुरातन धर्मोका मर्यादासे सो सभही काम।
क्रोधके पवन वेगकर्कै उलटी गतिको प्राप्तहोजावेगी २६

यदा निवर्तते पापो दंडनीत्या महात्मभिः
तदा धर्मो न चलति सद्भूतः शाश्वतः परः २७

हे राजन् जब आपजैसे महात्मा राजा लोकोने दंडनीतिक
कै पाप पाखंडकर्कै धर्मको निवृत्तकिया तव सत्यभूत अ
खंड सनातन परमधर्म अपनी मर्यादासे नहीचलता सदा
स्थिर् बनारहताहै २७

सर्व लोकगुरुं चैव राजानं योव मन्यते
नतस्य दत्तं न हुतं न श्राद्धं फलते क्वचित् २८

हे राजन् राजाकी आज्ञाविना कोईधर्म सफलनहीहोता
राजसर्वलोकका गुरुहै उसकोजो वियादानादि मदक
कै अवमानकरताहै अज्ञानहीमानता उसका दानहो
म श्राद्धादि धर्मकर्मकदापिनही फलकोदेता २८

मनुष्याणा मधिपतिं देवभूतं सनातनं
देवापि नावमन्यंते धर्मकामं नरेश्वरम् २९

मनुष्योका अधिपति सनातन देवभूत राजाहै ऐसे धर्म
पालना कामना वाले पर्जन्य सूर्यादि देवताभी अवमान
नहीकरते उसकी आज्ञाकर्कै प्रतिवृष्टि अनावृष्टि दुर्भिक्ष
उत्पात रोगोकोभी निवृत्तकरदेतेहै २९

प्रजापति र्हि भगवा न्सर्वं चैवा सृज ज्जगत्
स प्रवृत्ति निवृत्त्यर्थं धर्माणां तत्र भिक्षताम् ३०

प्रजापति भगवान जोहै सो सृष्टिकालमें सर्वजगतको स
जताभया सोई प्रजापति धर्म धर्मोकी प्रवृत्ति निवृत्ति

नियमवाले क्षत्रधर्मको रुजने चाहताहे ३०

प्रवृत्तस्य हि धर्मस्य बुद्ध्या यः स्मरते गतिं स मे मान्यश्च पूज्यश्च तत्र क्षत्रं प्रतिष्ठितं ३१ प्रजापति भगवानभी ऐसी विचार करताहे मेने जो यह धर्म कर्म प्रजाके हितवास्ते रुजाहे इसकी दृढगतीको जो राजा अपनी बुद्धिकरके स्मरण करता सो मेरा मान्यहे और पूज्यहे ऐसी धर्मबुद्धिमो राजधर्मही प्रतिष्ठितहे ३१

भीष्मउवाच एवमुक्त्वा स भगवान्मरुद्गणवृतः प्रभुः जगाम भवनं विस्नो रक्षरं शाश्वतं पदं ३२ भीष्मउवाच हे राजन् युधिष्ठिर सो भगवान् राजा मांधाताको ऐसे कहिकर मरुतगणोकरके युक्त जगतका प्रभु विस्नुभगवानके अक्षर शाश्वत परमधामको जाताभया ३२

एवं प्रवर्तिते धर्मे पुनः सुचरिते न च कः क्षत्रमवमन्येत चेतनावान्बहुश्रुतः ३३ इसप्रकार यह क्षत्रधर्म प्रवृत्तभयाहे पुराणे लोकोने शुद्धजानकर आदसे आदसे आचरण कियाहे ऐसे धर्मवाले राजाको चेतनावान् बहुश्रुतहोकर कौन पुरुष अवमान करताहे ३३

अन्यायेन प्रवृत्तानि निवृत्तानि तथैव च
अंतरा विलयं यांति यथा पथि विचक्षुषः ३४
यह सभही भूत राजधर्म विना अन्यायविषे प्रवृत्तहोतेहे और धर्ममार्गसे निवृत्तहोजातेहे जैसे मार्गविषे नेत्रहीन भूत कुमार्गगतीकरके वनमाही भूलकर विनाशको प्राप्त होजातेहे तैसे राजाकी रक्षाबिना विनाशको प्राप्तहोतेहे ३४

आदौ प्रवर्तिते चक्रे तथैवादिपरायणे
वर्तस्व पुरुषव्याघ्र संविजानामि तेऽनघ ३५
इति शांतौ राजधर्मे पंचषष्टितमोऽध्यायः ६५
हे अनघ युधिष्ठिर इसप्रकार यह जगतका चक्र राजधर्मसे आदसे प्रवृत्तभयाहे तूभी सर्वभूतोकी शरणभूत क्षत्रधर्मविषे संप्रवृत्तहो तोको पुरुषश्रेष्ठ सर्वसामान्य संपन्नसे जानताहु ३५ इति श्री महाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मे पंचषष्टितमोऽध्यायः ६५

युधिष्ठिरउवाच श्रुतामे कथिता सर्वे चत्वा
रो मानवाश्रमाः आश्रमान यित्वाख्यान मेत
द्वा चत्व पृच्छतः १ ॥ युधिष्ठिरउवाच
हे पितामहजी मेने आपसे मनुष्यमात्रके चारआश्रम
श्रवण कियेहे ऐसे श्रवणकर्के मोको संशय भयाहे
आपने अधमजाती जनोकोभी चार आश्रमोके धर्मकहे
हे मे इसको विस्तार व्याख्यानकर्के सुनाचाहताहूं आप
को इसीवास्ते पृछाकरताहूं इसनिर्णयको आपमेरे प्र
तिकहो १ ॥ भीष्मउवाच
विदिताः सर्व एवेह धर्मास्तव युधिष्ठिर
यथा मम महाबाहो विदिताः साधुसंमताः २
भीष्मउवाच हे युधिष्ठिर हे महाबाहो जोनसे साधुजनो
के संमतिवाले उत्तम धर्महे सो जेसे मोको सभही विदि
तहे तैसे तोकोभी साधुसंमतसभही विदितहे २
यत्तुलिंगांतर गते पृछसे मां युधिष्ठिर
धर्मं धर्मभृतां श्रेष्ट तन्निबोध जनाधिप ३
जो तूं लिंगशरीरके अंतर्गत सूक्ष्मज्ञानको कारणभूत ह्र
दयाकाशविषे बुद्धिज्ञान संपन्न अधिक सर्वज्ञ मानताहे
तो धर्मभृतां श्रेष्ट धर्मज्ञानधारी जनोविषे श्रेष्टराजन् जो
तूं अतिधर्म रहस्यको मोसे श्रवणकर ३
सर्वाण्येतानि कौंतेय विद्यंते मनुजर्षभ ॥
साध्वाचार प्रवृत्तानां चातुराश्रम्य कारिणां ४
हे सर्व मनुष्यो विषे श्रेष्ट जेते यह चार आश्रमोके धर्मका
मेके लक्षण गुणहे सो सभही साधुआचार प्रवृत्तिवाले
राजधर्मोविषे विद्यमानहे ४
इन्होविषे जोनसा जिस जिस आश्रमका अहिंसा अक्रोध
जित विनादि साधर्महे सो साधर्म जिस किसी आश्र
मविषे और जेसी केसी कोई जातिविषे जहां विद्यमानहे
सो पुरुष अवश्य उस आश्रम धर्मके प्राप्यस्थानको
प्राप्तहोताहे उत्तमपद प्राप्तिमो और उत्तमाधम जाति

का और आश्रम विशेषका प्रतिबंध नहीहै यही क्रम को व्याख्या विस्तारकर्के कहतेहै ४

अकाम द्वेष युक्तस्य दंडनीत्या युधिष्ठिर
समदर्शिनो भूतेषु भैक्ष्याश्रम पदंभवेत् ५

प्रथम क्रम अपने धर्मविषेही श्रवणकरो जो राजा काम राग द्वेष रहित दंडनीतिकर्के प्रजापालन करता है सर्वभूतो विषे समदर्शीहै उसके जोनसा भिक्षावर्षावाले संन्यास आश्रमकर्के ब्रह्मलोक प्राप्ति और ब्रह्मलोकता प्राप्तिफलहै सो फल अवश्य होताहै ५

वेत्तिज्ञानं विसर्गं च निग्रहा नुग्रहं तथा
यथोक्तकारिणो धीरस्य हेमाश्रम पदंभवेत् ६

हे राजन् जोनसा गृहस्थ संसारके बंधको ज्ञानको जानता है संसारबंधके मोक्षज्ञानकोभी जानताहै और सर्वभूतोविषे निग्रह अनुग्रहके दोषको गुणकोभी जानता अपने वर्णधर्ममेो यथोचित्त हर्तिहै ऐसे स्वस्थदुःखेषु भिसे महाधीर पुरुषजो गृहस्थाश्रमी मोक्षफलको देताहै ६ ॥

यथा न्नजयतो नित्यं संविभागेन पांडव
सर्वत स्तस्य कौंतेय भैक्ष्याश्रमपदं भवेत्

हे कौंतेय जो गृहस्थ देवता पितर अतिथि स्वकुटुंब इन्को यथा योग्य स्नानदान आहारादि पोषण विभागसे अन्नवस्त्र देकर पालन करता उसको स्वदार गमनादि गृहस्थकर्म प्रथम भिक्षाचर्यावाले ब्रह्मचर्यके मोक्षपदके मोक्षपदको देताहै ७ ॥

तपदके मोक्षपदको देताहै ७ ॥

ज्ञाति संबंध मित्राणि आपन्नानि युधिष्ठिर
समभ्युद्धर माणस्य दीक्षाश्रमपदं भवेत् ८

हे युधिष्ठिर जो गृहस्थ अपनी ज्ञाति संबंधी जनोको और मित्रोको अवर दीनरोगी दुःखी जनोको आपदाकी पीडासे उद्धार करताहै तहां शत्रु मित्र भावनहीमानता उसका गृहस्थाश्रम वानप्रस्थ धर्मके मोक्षपदको देताहै ८

शा॰ प॰
टी॰
२३५

234

लोकमुख्येषु सत्कारं लिंगमुख्येषु वासकृत्
कुर्वन् तस्य कौंतेय वन्याश्रमपदं भवेत् ९
जो गृहस्थ सर्वलोकोंकी सुखदर्शनसे मधुरवचन
करके अन्नपान दानकरके ओर ऐसे धर्मलिंगवाले सं
न्यासी ब्रह्मचारी आदिलोकोंके सुखदर्शनसेभी य
थोचित सुखसंस्कारको प्रसन्नमनहोकरके उसकोभी
गृहस्थधर्म वानप्रस्थपदको करताहै ९
आह्निकं पितृयज्ञांश्च भूतयज्ञान् समाचरन्
कुर्वतः पार्थ विपुला वन्याश्रमपदं भवेत् १०
जो गृहस्थ आह्निक पितृयज्ञोंको मनुष्ययज्ञोंको देवयज्ञ
को विधिसत्कार श्रद्धासे विस्तारकरके करताहै उ
सको गृहस्थकर्म वानप्रस्थपदके फलको करताहै १०
संविभागेन भूतानामतिथीनां तथार्चनात्
देवयज्ञैश्च राजेंद्र वन्याश्रमपदं भवेत् ११
जो गृहस्थ सर्वभूतोंको विभागकरके ओर अतिथिजनो
को विभागकरके देवयज्ञोंकरके पूजनकरतेहै हे
राजेंद्र ऐसे गृहस्थको वानप्रस्थ पदका फलहोताहै ११
मर्दनं परराष्ट्राणां शिष्टार्थं सत्यविक्रम
कुर्वतः पुरुषव्याघ्र वन्याश्रमपदं भवेत्
हे पुरुषव्याघ्र शिष्टरक्षावास्ते पराए राष्ट्रदेशोंको व
नकी औषधी जैसा तुच्छजानकर मर्दनकरताहै ओर र
णविषे अपने सत्य प्रतिज्ञाके पराक्रमको करताहै
ऐसे राजाको गृहस्थधर्म वानप्रस्थ आश्रमके फलको
देताहै १२ ॥
पालना सर्वभूतानां स्वराष्ट्रपरिपालनात्
दीक्षाबहुविधा राजन् संन्यासाश्रमपदं भवेत् १३
हे राजन् जोनसाराजा सर्वभूतोंकी पालना अपने रा
ष्ट्रदेशको पालनकरताहै ओर बहोत यज्ञोंकी अनेक
प्रकारकी दीक्षाव्रतधारणकरताहै संन्यासपदको
ब्रह्मलोकगति फलहोताहै १३ ॥

वेदाध्ययन नित्यत्वं क्षमाथाचार्य पूजनम्।
अथो,पाध्याय शुश्रूषा ब्रह्माश्रमपदं भवेत्
जो गृहस्थ वेदाध्ययन नित्यकरताहै ओर क्षमाकरताहै ओर आचार्यपूजा करताहै ओर अपने याजक उपाध्याय की शुश्रूषा विधिसे करताहै उसकोभी गृहस्थधर्म ब्रह्मचर्य पदके फलको करताहै १४

आह्निकं जपमानस्य देवान्सं यजतः सदा
धर्मेण पुरुषव्याघ्र धर्माश्रमपदं भवेत् १५
जो गृहस्थ अपने आह्निक स्वाध्यायको जपकरताहै ओर स्वधर्मकरके देवगणोंको पूजाकरताहै उसको गृहस्थाश्रम संपूर्ण आश्रम धर्मोंके पदको देताहै १५

मृत्युर्वा रक्षणं चेति यस्य राज्ञो विनिश्चयः
प्राणद्यूते नत स्तस्य ब्रह्माश्रमपदं भवेत्
हे राजन् जिसराजाको प्राणोंका द्यूतजो रणक्रीडा उसमें यह निश्चय होवहे जो रणमें मृत्युभीहै ओर प्राणरक्षाभी अपने युद्धधर्मसे होतीहै ऐसे जानकर जो रणविषे धीरहै उसको गृहस्थाश्रम संन्यास आश्रमके पदको देताहै ॥ १६

अजिह्म,मशठं मार्गं वर्तमानस्य भारत
सर्वदा सर्वभूतेषु ब्रह्माश्रमपदं भवेत् १७
जो गृहस्थ सदा सर्वदा सर्वभूतोंविषे कपटरहित वा क्रचल रहित मार्गको प्रवर्तमानहै उसको गृहस्थ धर्म ब्रह्मगती करणेहारे वानप्रस्थाश्रमके पदकोकरताहै

१२

वानप्रस्थेषु विप्रेषु त्रैविद्येषु च भारत ॥
प्रयच्छते,र्थो न्विपुला न्वन्याश्रमपदं भवेत् १८
जो गृहस्थ वानप्रस्थविषे वेदत्रयीकी विद्यासंपन्न ब्राह्मणोंविषे बहोत सत्वकारी धनसंपदाको श्रद्धाप्रीतिसे देताहै उसको गृहस्थधर्म वानप्रस्थआश्रमको पदको देताहै १८ ॥

सर्वभूतेषु,च्चाक्रोशं कुर्वत स्तस्य भारत।
आनृशंस्य प्रवृत्तस्य सर्वावस्थंपदं भवेत् १९

गी॰प॰
टी॰
२३५

235

जो गृहस्थ सर्वभूतोंविषे दयाकरणेमें प्रसन्नभयाहै और कू
रताकोंत्यागकरताहै उसका गृहस्थधर्म सकल आश्रमोंके
धर्मपदको करताहै १९ ॥

बालवृद्धेषु कौंतेय सर्वावस्थं युधिष्ठिर
अनुकूलक्रियापार्थ सर्वावस्थे पदंभवेत् २०

हे पार्थ हे कौंतेय जोगृहस्थ बालावृद्ध दीनदुखी जनोंविषे
सर्वप्रकारकी अवस्थामें सदादयाकरताहै उसका गृह
स्थधर्म सर्वआश्रमो धर्मकर्मकी सकलअवस्थाकेपदको
देताहै २० बलात्कृतेषु भूतेषु परित्राणंकुरुद्व ।

ह शरणागतेषु कौरव्य कुर्वन् गार्हस्थ्य मावसेत् २१

हे कुरुवंशके कुरुशार्दूल यह पुरुष बलात्कारसे कष्ट
को प्राप्तभये शरणागत भूतोंविषे परित्राण रक्षाकर
ताहै सो गृहस्थ धर्मरूपी तीर्थविषे वासकरे २१

चराचराणां भूतानां रक्षणंचापि सर्वशः ॥

यथार्हं पूजां च तथा कुर्वन् गार्हस्थ्य मावसेत् २२

और चर अचरजो भूतहै उनकी सर्वदारक्षाकरे और अन्नादि
दानभीकरे सो गृहस्थ धर्मरूपी तीर्थविषे निवासकरे २२

ज्येष्ठानुज्येष्ठपत्नीनां भ्रातृणां पुत्र नप्तृणाम्
निग्रहा नुग्रहो पार्थ गार्हस्थ्ये तप उत्तमः २३

हे राजन् अपने ज्येष्ठभ्राताकी पत्नीको और उसके पश्चा
त् अपनी ज्येष्ठभ्राताकी इसीप्रकार और अपने ज्येष्ठकनि
ष्ठभ्राता जनोंको पत्नीयोंको और पुत्र पौत्र जोहै और उ
न्हकीभी पत्नीयोंको निग्रह अनुग्रहको यथार्थकरता
है उसका गृहस्थधर्म महानतपजैसा फलकारीहै २३

साधूनां अर्चनीयानां पूजाच विदितात्मनां
पालनं पुरुषव्याघ्र गृहाश्रमपदं भवेत् २४

जो पुरुष पूजनीय साधुजनोंको पूजामें विधिज्ञान संपन्न
है उन्हके पालनकरताहै हे पुरुषव्याघ्र उसका गृहाश्र
मपदका यथार्थ फलहोताहै २४ ॥

आश्रमस्थानि भूतानि यस्तु वेश्मनि भारत
आददीते ह भोज्येन तद्गार्हस्थ्यं युधिष्ठिर २५

हे युधिष्ठिर हे भारत जो पुरुष अपने यथोक्त आश्रम स्थि
तभूतोंको भोजनदानकर्के अपने गृहविषे लेआवताहै उ
सका गृहस्थधर्म सफलवनाहै २५

यः स्थितः पुरुषो धर्मे धात्रा सृष्टे यथार्थवत्
आश्रमाणां हि सर्वेषां फलंप्राप्नोत्यनामयम्

जो पुरुष विधाताने सृष्टकिये अपने वर्णधर्मविषे यथार्थ
स्थितहै सो पुरुष संपूर्ण आश्रमोंके धर्मकर्मका अक्षय
फलको प्राप्तहोताहै २६

यस्मिन्न नश्यन्ति गुणाः कौंतेय पुरुषे सदा
आश्रमस्थं तमप्याहु र्नरश्रेष्ठं युधिष्ठिर २७

हे युधिष्ठिर जिसविषे अपने वर्णोंके धर्मगुण नष्टनहीहो
तेहैं ऐसे श्रेष्ठनरकोभी आश्रमधर्मविषेहि स्थितकहतेहैं २७

स्थानमानं कुलेमानं वयोमानं तथैवच
कुर्वन्वसति सर्वेषु ह्याश्रमेषु युधिष्ठिर २८

हे युधिष्ठिर जो पुरुषधर्मकर्मके प्रतिपुण्यकारी गंगातीरा
दि उत्तमस्थानके मानको करताहै और वेदविद्याके स्वधर्मस्थ
कुलके मानको करताहै और वालवृद्ध ज्ञानवृद्धादि अवस्था
विशेषके मानको करताहै सो सर्वआश्रमोंके धर्ममें स्थि
रवास करताहै २८

देशधर्मांश्च कौंतेय कुलधर्मांस्तथैवच।
पालयन्पुरुषव्याघ्र राजा सर्वाश्रमी भवेत् २९

हे कौंतेय हेपुरुषव्याघ्र जो राजा देशधर्मोंको और धर्मोंको
दंडनीतिसे पालनकरताहै सो राजा संपूर्ण आश्रमधर्मों
का आपआश्रम जैसा आश्रयभूतहोताहै २९

काले विभूतिं भूतानां मुपहारांस्तथैवच
अर्हयेत् पुरुषव्याघ्र साधूना माश्रमेवसेत् ३०

हे पुरुषव्याघ्र जो राजा आपदादिकालमें सर्वभूतोंको सं
पदाको अन्नपान भक्ष्यभोज्यादि दानकर्के पूजाकरता
है सो राजा सकलसाधुधर्मवाले आश्रमधर्मोंका आ
श्रमहोताहै ३०

दशधर्मगत श्चापि यो धर्मं प्रत्यवेक्षते ॥

रा.प.
टी.
२३८

सर्वलोकस्य कौंतेय राजा भवति सो ऽपि भी ३१
हे कौंतेय जो राजा आपमत्त प्रमत्तादि दशप्रकारके आ
पदा धर्मोंको आश्रभयाहे तोभी सर्वलोकके ज्ञानधर्मो
को सदाचिंताकर्के देषताहे सो राजा सर्वाश्रमधर्मोंके
फलका यशभागी होताहे ३१

येधर्मकुशला लोके धर्मं कुर्वंति मानवाः
पालिता यस्य विषये धर्मांश स्तस्य भूपतेः ३२
हे भारत जोनसे धर्मकुशललोक अपने धर्मको यथा
विधि आचरणको करतेहे ऐसे धर्मकर्मवाले लोकजि
सकी पालनाकर्के जिसके देशमो सुखवासको करतेहे
उन्हके धर्मकर्मके फलका सकल अंशभागी राजाहोताहे ३२

धर्मारामा न्धर्मपरा न्ये न रक्षंति मानवान्
पार्थिवाः पुरुषव्याघ्र तेषां पापं हरंति ते ३३
हे पुरुषव्याघ्र जोनसा राजालोक धर्मकर्मकी प्रीतिवाले
स्वधर्म परायण मनुष्योंको अधर्मबाधासे नहीरक्षाकर
ते ऐसे राजालोक संपूर्ण लोकोंकी अधर्मपीडाके पाप
को आपलेतेहे ३३

ये चा प्यत्र सहाया स्युः पार्थिवानां युधिष्टिर
ते चैवां शहराः सर्वे धर्मे परकृतेन च ॥ ३४
और हे युधिष्ठिर जोनसे राजालोक धर्मकारी लोकोंके
धर्मको रक्षाकरतेहे जो पुरुष धर्मपालकराजाको ध
र्मज्ञलोकोंकी पालनामों सहायकरतेहे सोभी पर
कृत धर्मकर्केभी अंशभागीहोतेहे ३४

सर्वाश्रमपदे प्याहु र्गार्हस्थ्यंदीप्त निर्णयम्
पावनं पुरुषव्याघ्र यं धर्मं पर्युपासहे ३५
हे पुरुषव्याघ्र जेते संपूर्णआश्रमोके उत्तमपदहे तिन्होंवि
षे गृहस्थाश्रमपद प्रत्यक्षप्रकाश निर्णयवालाहे इसके
सरीखा और आश्रमपदपवित्रनहीहे जोनसे गृहस्थाश्रम
धर्मको अहंता ममताके अपवित्रहहोकर्केभी उपास
नकरतेभये ३५ ॥

आत्मोपम स्तु भूतेषु यो वै भवति मानवः

त्यक्तदंडो जितक्रोधः प्रेत्य च लभते सुखम् ३६
ताते हे राजन् जो पुरुष सर्वभूतोविषे अपने सुखदुःखे
की प्रिय अप्रियकी उपमाको तुल्यताको मानताहै सो
पुरुष अपने अभिमानदंडको त्यागकर जितक्रोधहोताहै
इहलोकमो परलोकमोभी अविउसुखको प्राप्तहोताहै ३६
धर्मे स्थिता सत्ववीर्या धर्मसेतु वटारकाः ।।
त्यागवाता धर्मशीघ्रा नौ र्हि संतारयिष्यति ३७
हे राजन युधिष्ठिर यह राजधर्मकी महाउत्तम नौकाहै
सो प्रजापालनारूपी धर्मसमुद्रमों स्थितभईहै इसको
अपने धर्मकर्मका दृढप्रयत्नकी धीरताही कर्णधारकाके
वटकावलहै और धर्मशास्त्रका श्रवणविचार इसकीबंधा
नरज्जुहै जिसकालमो अपने सुखदुःखादित्यागरूपी वात
कैवेगकर्के शीघ्रगतीवाली होतीहै सो संपूर्णजगतया
त्राके वर्णाश्रमधर्मके पथिकजोहै तिन्हको यथोचितदंड
नीतिवाले राजाके साथ दुःखसंसारसमुद्रसे पारउतार
देतीहै ।। ३७ ।।
यदा निवृत्तः सर्वस्मात्कामो यो स्य हृदि स्थितः
तदा भवति सत्वस्थस्ततो ब्रह्म समश्नुते ३८
जब इस पुरुषके हृदयस्थ कामभोगाके दृढसंकल्प निवृ
त्तहोतेहै तब यह पुरुष अद्वैज्ञानवाली केवलविचारबुद्धि
मों स्थितहोताहै वहोउब्रह्मभावमात्रको अनुभवकरताहै
सुप्रसन्नस्तु भावेन योगेन च नराधिप
धर्मं पुरुषशार्दूल प्राप्स्यसे पालने रतः ३९
हे नराधिप ऐसा पुरुष चित्तके निरोध योगकर्के शुद्धज्ञान
के प्रभावकर्के सदासुखी सदाप्रसन्नहोता है ऐसा राजाप्र
जापालनविषे रतहोताहै सो मोक्षधर्मको प्राप्तहोताहै ३९
वेदाध्ययनशीलानां विप्राणां साधुकर्मणाम्
पालने यत्नमास्तिष्ठ सर्वलोकस्य चैव ह ४०
हे राजन् ताते तुम जोनसे वेदाध्ययन शीलब्राह्मणहै सा
धुवृत्तिवाले धर्मकर्मरत उन्हके पालनमो और सर्वलोको
के धर्मकर्म पालनमो यदा यत्नमो स्थितहोवो ४०

रा॰ध॰
टी॰
२३७

वने चरंति ये धर्म माश्रमेषु च भारत ॥
रक्षणा तच्छतगुणं धर्मं प्राप्नोति पार्थिवः ४१
हे भारत जो तपस्वी जनवनमें आचरण करतेहैं और चारों आश्रमोंविषे जो सर्वलोक धर्मकर्म करतेहैं उस काशतगुण पुण्यकाधर्म सभकी रक्षासे राजाको प्राप्तहो ताहै ४१ ॥

एष ते विविधो धर्मः पांडवश्रेष्ठ कीर्तितः
अनुतिष्ठ त्वमेवैतं पूर्वदृष्टं सनातनम् ४२
हे पांडव विविधप्रकारका धर्मतोको हमने कीर्तनकर्के कहाहै तूंभी इसके अनुष्ठानकर्यो यह पूर्वसृष्टीसे सना तन प्रवृत्तहोवाहै ४२

चातुराश्रम्य मेकाग्रे चातुर्वर्ण्यं च पांडव
धर्मं पुरुषशार्दूल प्राप्स्यसे पालने रतः ४३
इतिश्री राजधर्मे चातुराश्रम्यविधिः षष्टि तमोध्यायः ॥ ६६॥

हे पुरुषश्रेष्ठ हे पांडव जैसा चार आश्रमोके धर्मोका एकाग्रसार धर्मफलहै और जैसा चारवर्णोंके धर्मोका एकाग्रसार सर्वस्वधर्महै उसका संपूर्ण धर्मफलको तूंही प्रजापालनरतहोकर पावेंगा ४३ ॥ इतिश्री महाभारते शांतिपर्वणि राजधर्मे चतुराश्रमधर्मविधिः षट्षष्टित मोध्यायः ॥ ६६

युधिष्ठिरउवाच चातुराश्रम्य मुक्तं मे चातुर्वर्ण्यं तथैव च राष्ट्रस्य यत्कृत्यतमं तत्तो ब्रूहि पितामह १
युधिष्ठिरउवाच हे पितामहजी तुमने मोको चारआश्रमों को धर्मकर्म कहाहै और चारोंवर्णोंकाभी धर्म कर्म समग्र कहाहै अबजो राजाके राज्य निवासी लोकोंके कृत्यहै तिन्होंको आपमेरे प्रतिकहो १ ॥

भीष्मउवाच राष्ट्रस्यै तत् कृत्यतमं राज्ञ एवा,भि षेचनं अनिंद्र मबलं राष्ट्रं दस्यवोभि भवंत्युत २
भीष्मउवाच हे भारत राजाके राज्यका प्रथमही कृत्यहै जो प्रथमराजाको अभिषेक करनाहै राजा केवल बिना

राज्यकार्य सब निर्बलहोताहै उसको चोरादि दुष्टलोक उ
जाडदेतेहैं ॥ २ ॥

अराजकेषु राष्ट्रेषु धर्मो न व्यवतिष्ठते परस्परं
च खादंति सर्वथा धिग राजकम् ३

अराजक राज्यमो धर्म कर्मकी व्यवस्थानही स्थितहोतीहै
परस्पर प्रजाके लोकबलकर्के खोलतेहै ताते अराजको
देशको धिगहै ३ ॥

इद्रमेव प्रवृणते यद्राजान मिति श्रुतिः ॥
यथैवेंद्रस्तथा राजा संपूज्यो भूति मिच्छता ४

राज्यमो राजाको सर्वलोक इंद्रलोक कर्के मानतेहै जैसे
इंद्र त्रिलोकीमो पूज्यहै तैसी राजाभी अपने कल्याणवास्ते
इंद्रके समान पूजनीयहै ४

नाराजकेषु राष्ट्रेषु हव्य मग्नि र्वहत्यु त
नाराजकेषु राष्ट्रेषु बलम मिति रोचये ५

अराजके देशमो वासकर्तव्य नहीहै इसप्रकार मे सर्वलो
कोकेरुचिजानताहै अराजक लोकोविषे अग्निभी होम
द्रव्यको ग्रहणनही करता उसी द्रव्यकर्के उलटा शांतहो
जाताहै ॥५ ॥

अथ चेदभिवर्तेत राज्यार्थी बलवत्तरः ॥
अराजकानि राष्ट्राणि हतवीर्याणि वा पुनः ६

अथचेत् यदिकोई बलवान पुरुष अराजक देशविषे
राज्यार्थी होकर बलवानयत्नकरे तब सोभी उसदेश
के लोकोने पूजनीयहै जोनसे देश अराजकहै सो ह
तबल होतेहै निर्बलहोतेहै ६ ॥

प्रत्युद्गम्या, भिपूज्यः स्या देतद,त्र सुमंत्रितम्
न हि पापा त्परतर मस्ति किंचिदराजकात् ७

ताते जो बलवान् पुरुष राज्यकरणेको उद्यमकरे उस
को समीप जाकर पूजाकरे यह निश्चय कर्तव्यहै जोन
सा अराजकदेशमो निवासकरणा ऐसी पापसे परम
और और पापफलनहीहै ७

स चे त्समनु पश्येत समग्रं कुशलं भवेत्

रा.प.
टी.
२२६

९३८

बलवान् हि प्रकुपितः कुर्यात् निःशेषतामपि ८

जो तो सो पुरुष राजा होकर प्रसन्नतासे क्रोधसे देशमें शुभ अशुभ जैसा कराचाहे सो सभही उसकालविषे कुशलमानना जो बलवान् कुपित होताहै सो सभा को निःशेषभी करताहै ८

भूयांसं लभते क्लेशं या गौर्भवति दुर्दुहा
अथ या सुदुहा राजन्नैव तां वितुदन्त्यपि ९

जौनसी गौ दुःखसे दुधदेतीहै सो अधिककष्टकोहो तीहै अथवा जौनसी गौ सुखसे दोहनकरावलीहै उसको कोई दुःखनही देता ९

यदतप्तं प्रणमते नैनत्संताप मर्हति ॥
यत्स्वयं नमते दारु न तत्संताप मर्हति १०

जो काष्ठादिक अग्निसंतापविना नमजाताहै सो संतापन ही पावता जो काष्ठआप नमजाताहै उसको लोकसंता पनही देते १० ॥

एतयोपमया वीर संनमेत बलीयसे
इंद्राय स प्रणमते नमते यो बलीयसे ११

ऐसी दृष्टांत उपमाको देषकर बलवान वीर पुरुषको प्र णाम करके नम्रहोजावे इंद्रको सो प्रणाम करताहै जो इंद्रको सबल जानताहै ११

तस्माद्राजैव कर्तव्यः सततं भूतिमिच्छता
न धनार्थो न दारार्थस्तेषां येषामराजकं १२

ताते अराजदेश लोकने अपनी कल्याणवांछा करके राजा अपनी रक्षावासते राजा अपने देशमें आवश्यक कर्तव्यहै जिनकादेश अराजकहै उनको धनकी अर्थ सिद्धिनही है दारा कुटुंबकी अर्थसिद्धि नहीहै १२

प्रीयते हि हरन्पापः परवित्तमराजके ॥
यदास्य उद्धरन्त्यन्ये तदा राजानमिच्छति १३

अराजक देशमें पापीलोक परद्रव्य हरणेसे प्रसन्नहो ताहै जद उसपापीका दोर धन औरलोकलेलेंदेहै तब त हांका लोक अपनी रक्षावासे राजाकी वांछाको करताहै १३

पापाह्य पि नरा क्षेमं न लभंते कदाचन
एकस्य हि द्वौ हरतो द्वयोश्च बहवो परे १४

जो राजा नहा पापी लोकभी सुखको नही पावते एक पापीसे दो पापीधन हरलेतेहे दो पापी जोहे तिन्हसे ओर बहोत पापी एकत्र होकर धनको छीनलेजातेहे १४

अदासः क्रियते दासो ह्रियते च बलात्स्त्रियः
एतस्मात्कारणा देवाः प्रजापालं प्रचक्रिरे १५

नही दासभाव करनेवालेकोभी पापी दासकरलेतेहें ओर बलसे पापीलोक पराइस्त्रीकोभी हरलेजातेहे हे राजन् इसी कारणसे देवताजगत हितवास्ते प्रजापालनेहारे राजाकरलेतेभई १५ ॥

राजा चेन्न भवेल्लोके पृथिव्यां दंडधारकः
जले मत्स्यानिवाभक्ष्यन् दुर्बला बलवत्तराः १६

जो राजा पृथिवीविषे दंडधारक नही होइतो जैसे दुर्लभ मछीको बलवान मछ खालेतेहे तैसे दुर्बलोको बलवान् खालेतेहैं ॥ १६ ॥

अराजकाः प्रजाः पूर्वं विनेशुरिति नः श्रुतं
परस्परं भक्षयंतो मत्स्या इव जले कृशान् १७

हे राजन् हमने यह प्रथम सुनाहे अराजक प्रजा आदसृष्टिमो विनाशको प्राप्तभयेहे जैसे जलविषे बलवान मत्स्य दुर्बल मत्स्योको खालेतेहे तैसे दुर्बलप्रजाको सबललोक खालेतेभये १७ ॥

समेत्य तास्ततश्चक्रुः समया निति नः श्रुतं
वाक्शूरो दंडपरुषो यश्च स्यात्पारजायिकः १८

सो सभही प्रजालोक एकत्र होकर परस्पर मंत्र संमतिकरतेभये जो कोई हमारे मो वाणी वृथा कठोर कहे जो परशरीरमो दंडप्रहारकी कठोरताकरे जो परस्त्री गामीहुए

यः परस्वमथादद्यात्त्याज्या न स्तादृशा इति
विश्वासार्थं च सर्वेषां वर्णानामविशेषतः १९

और जो परद्रव्यको हरे ऐसे जो पुरुषहे सो अपने समाज

से त्यागदेना सभवर्णोंकेविश्वासवाले ऐसी संमतिकर्के स्थित होतेभये हे राजन् संमतिकर्केभी परस्पर मर्यादामों नहीं स्थित भये १९ ता स्तथा समयं कृत्वा समयेना वतस्थिरे ॥

सहिता स्ता स्तदा जग्मु रसुखार्ताः पितामहं २०

तब सभही दुःखकर्के पीडितभये एक समाजकर्के पितामह ब्रह्माजीकों वचन कहतेभये हे पितामह हम अनीश्वर होकर विनाशकों प्राप्तहोताहे आप हमको ईश्वर देवो जिसकर्के हम सुखसे वासकरें २०

अनीश्वरा विनश्यामो भगवन्नी श्वरं दिश

यं पूजयेम संभूय यश्च नः प्रतिपालयेत् २१

जिसकों हम सभ मिलकर पूजाकरें जो हमारेको पालनकरे हे राजन् तब ब्रह्माजी मनुप्रजापतिकों आज्ञादेताभया प्रजाकी रक्षा करणेको मनुप्रजापति प्रजापालनेकी नही मानताभया ब्रह्माजीको वचन कहताभया २१

ततो मनुं व्यादिदेश मनुर्नाभि ननंदताः

मनुरुवाच बिभेमि कर्मणः पापा द्राज्यं हि भृशदु

स्तरं विशेषतो मनुष्येषु मिथ्यावृत्तेषु नित्यदा २२

मनुरुवाच हे भगवन् मैं इसपापकर्मसे भयभीतहोताऊं राज्यकर्म पापकर्मसे अति दुस्करहे विशेषकर्के मनुष्योंविषे सदा मिथ्यावृत्ति पापप्रवृत्तिकर्के राज्यकर्मअतिदुस्करहे इसको मे वांछानहीकरता २२

भीष्मउवाच तमब्रुव न्प्रजामाभैः कर्तृनेनो गमिष्य

ति पशूना मधिपंचाशा द्धिरण्यस्य तथैव च २३

भीष्मउवाच ऐसा वचन सुनकर्के सकल प्रजा मनुप्रजापतिको वचनकहतीभई हे मनु महाराज आपभय मतकरो पापभी तुमरमानतेहो तो तुमको पालनेसे पापनहीं होवेगा पाप अपनेकर्ता लोकोंकोही प्राप्तहोवेगा पाप अपने कर्ता लोकोंकोभी प्राप्तहोवेगा हम तुमको पचाशपशुपालनेसे पचाशसे अधिक एकपशुदेवेंगे और सुवर्णसेभी पचाशसे अधिक एकदेवेंगे २३

धान्यस्य दशमं भागं दास्यामः कोश वर्धनं

कन्यां शुल्के चारुरूपां विवादे षूद्यतास्तु च २४

और धान्यसे दशमभागदेवे तो यह तुमलोगोंको शोवजानेकी बृ
द्धिवास्ते देवेंगे जहां कन्या मौल्यका प्रसंगहोवेगा तहां विवाह
की पणीभूत स्वरूपवती कन्या तोको देवेंगे जहां द्यूतक्रीडाका
विवादहोवेगा द्यूतकाभी पणीभूत कन्याइम देवेंगे २४

सुखेन शस्त्र पत्रेण ये मनुष्याः प्रधानतः
भवंते तेन यास्यंति महेंद्र मिव देवताः २५

जो प्रथमसेही शास्त्र यंत्रेवा तुमको श्रेष्ठहोवेगा सो भीलोक
कैं तोकोही प्राप्तहोवेगी जैसे देवता इंद्रको शास्त्रवाहनके
प्रधानतासे प्रथमहे सुखजानकर प्राप्तहोतेही २५

सत्वं ज्ञानबलो राजा दुष्प्रधर्षः प्रतापवान्
सर्वदास्यसिनः सर्वान् कुवेर इव नैर्ऋतान् २६

सो तूं सभकी प्रधानता पाइकर ज्ञानबल बल प्रधानताका
राजाभया तोतेरी आज्ञाको सभ मानेगे सभको दुसधर्षहोवे
गा प्रतापकर्के अजेय होवेगा तब हमारेको सुखदेवेगा
जैसे कुवेर अपने आज्ञाकारी यक्षराक्षसोंको सुखदेताहै २६

येन च धर्मं चरिष्यंति प्रजा राज्ञाभि रक्षिताः
चतुर्थं तस्य धर्मस्य त्वत्संस्थं वै भविष्यति २७

तुमने राज्यहोकर प्रजाको पालनकिया तुमारी रक्षाकर्के प्र
जासु रक्षितहोकर जो प्रजालोक धर्म कर्म करेंगे तिसका चतु
र्थभाग धर्मपुण्यका तुमको प्राप्तहोवेगा २७

तेन धर्मेण महता सुख लब्धेन भावितः
पाह्यस्मान्सर्वतो राजन् देवानिव शतक्रतुः २८

सो धर्म पुण्य तुमको अपनी कर्तव्यता सुखेनप्राप्तभया उस
की भावनाकर्के हमको समग्र पापभयसे रक्षाकरो जैसे दे
वगणोंको इंद्रपालन करताहै २८

विजयायहि निर्याहि प्रतपन्रश्मिवानिव
मानं विधम शत्रूणां धर्मानयतु नः सदा २९

और शत्रुविजयको इसप्रकारसे जावो जैसे रश्मिवान् सूर्यस
भको प्रकाशको तापको करताहै और शत्रुगणोंके मानको
विनाशकरो उसकर्के हमको धर्मकर्म सदा प्राप्तहोवे २९

स निर्ययौ महातेजा बलेन महतावृतः

श्री॰
रा॰प॰
टी॰
२४॰

२४०

महाभिजनसंपन्नस्तेजसा प्रज्वलन्निव ३०

हे राजन् सो मनुप्रजापति महातेजवान् भया महाबलवाली सेनाकर्के युक्तभया और महाशोभा संयुक्त परिवार समाज संपन्नभया तेजकर्के प्रचंडप्रतापवानसूर्य जैसा होकर प्रजा लोकके साथ जाताभया ३०

तस्य दृष्ट्वा महत्तेजो महेंद्रस्येव देवताः
अपतत्रसिरे सर्वे स्वधर्मे च दधुर्मनः ३१

हे राजन् मनु महाराजके महातेज प्रभाव देषकर्के सभही प्रजालोक इंद्रको देवतागण जैसे देषकर भयभीत होतेहैं तैसे सभही भयभीतभये तब सभही स्वधर्म विषे मनको एकाग्रदेतेभये ३१

ततो महीं परिययौ पर्जन्य इव वृष्टिमान्
शमयन् सर्वतः पापान् स्वकर्मसु च योजयन् ३२

तदनंतर सो मनुराजा जैसे पर्जन्यवृष्टि कर्ताहै तैसे सर्वप्रकारसे पापी जनोंकी पापवृत्ति शमनकरता और सभको स्वधर्म विषे स्थापनकरताहुआ पृथिवीको जाताभया ३२

एवं विभूतिमिच्छेयुः पृथिव्यां मानवाः क्वचित्
कुर्यू राजानमेवाग्रे प्रजानुग्रहकारणात् ३३

इसप्रकार मनुष्यलोक अपनेविषे विभूतिसे पदाकी वांछाकों करे सो पृथिवीविषे राजधानी कही नगरीविषे राजाको अभिषेककरे राजासे प्रजा अनुग्रह कारणसे ३३

नमस्येरंश्च तं भक्त्या शिष्या इव गुरुं सदा
देवा इव च देवेंद्रं तत्र राजानमंतिके ३४

राजाको नमस्कारकरे जैसे शिष्यगुरोंको पूजाकरतेहैं तैसे राजाकी पूजाकरे जैसे देवता इंद्रको सभाकी समीपसेवा करतेहैं तैसे राजाको समीपजाइकर सेवाकरे ३४

सत्कृतं स्वजनेनेह परोपि बहुमन्यते
स्वजनेन त्ववज्ञातं परे परिभवंत्युत ३५

जो पुरुष अपने स्वजन संबंधिजनोकर्के सत्कारको प्राप्तहोता है उसको इतर लोकभी बहुमानकरताहै जिसको स्वजनसंबंधी अवमानकरे उसको सर्वलोक अवमान करताहै ३५

राज्ञः परैः परिभवः सर्वेषामसुखावहः

तस्मा च्छत्रं च पत्रं च वाहानां भरणानि च

जहां राजाको परलोकोकर्के अनादरहै सो सभको दुःखदायी होताहै ताते राजाको उत्तमसुगन्ध उत्तम हाथी घोडा सवारीको देने योग्यहै उत्तमवस्त्रभूषणभी दातव्यहै ३९ ॥

भोज्यनान्यथ पेयानि राज्ञे दद्युर्गृहाणि च
आसनानि च शय्याश्च सर्वोपकरणानि च ३७

उत्तम भोजन पदार्थ और उत्तम गृहमंदिर उत्तमपानकरणेयोग्य स पदार्थ दातव्यहै उत्तम आसन उत्तमशय्या उत्तम उत्तम संपूर्ण राजचिन्होके सर्वोपकरणराजाको दातव्यहै ३७ ॥

गोप्ता तस्मा दुराधर्षः स्मित पूर्वाभि भाषितः
अभाषितश्च मधुरं प्रीत्याभावेन मानवान् ३८

ऐसी प्रजाकर्के राजा सभको रक्षाकरणे हाराहोताहै और असह्यप्रभाव होताहै और सभकाने पूर्वक मन्दवचन भाषीहोवे जो राजाको संभाषणकरे तिन्हको मधुर धीर भाषासे उत्तरकरे ३८ ॥

कृतज्ञो दृढ भक्तिः स्या त्संविभागी जितेंद्रियः
ईक्षितः प्रत्यवीक्षेत मृदुवल्गु च लक्ष्ण ३९

और राजा कार्यकारी पुरुषोंका कृतज्ञहोवे दृढभक्ति सभसे दानमानसे करावे और दान विभागकर्के सभकापोषणकर्के आपभोग भोक्ताहोवे जो पुरुष आपदृष्टकियेहै उन्होको मृदुवचन शुभवचन सुखकारी वचनकरे ३९ ॥ इति श्री महाभारते शतसहस्रसंहितायां शांतिपर्वणि राजधर्मे सप्तषष्टितमोध्यायः ६७

यह राजधर्मका पुस्तक श्रीमन्महाराजा साहिब रणवीरसिंह बहादुर जी सी एस आइ ईंद्र महेंद्र सिपर सलतनत । जंमू काश्मीर व तिब्बतादिपतिके पढनेकाहै ॥